



महापुत्र

## लेखक की अन्य रचनायें

### हिन्दी

लोक-साहित्य : १ बरती गादी हूँ, २ बीरे बहो, वंगा। ३ बैसा  
झूठे छापी रात ४ बाबत घाबे डोस ५ बिजों में भोरियाँ ।

कविता : बन्बनवार ।

कहानियाँ चट्टान से पृथ्वी, २ चाब का रंग ३ नये चाप  
से पहलवे ४ बकक नहीं बम्बूक ।

उपन्यास १ रथ के पहिये, २ कठपुतली ।

आत्मकथा चाँद-सुरज के बीरग ।

निबन्ध १ एक गुप्त एक प्रतीक २ ऐसाई बोल उठी ३  
बबा बोरी क्या छीबरी ।

रेखा-चित्र : कला के हस्ताक्षर ।

### पंजाबी

लोक-साहित्य १ पिडा २ बीबा बने छापी रात ।

कविता : १ बरती बीयाँ बाजी २ मुड़का ठे कणक, ३ कुड़ी  
नहीं बरती ।

कहानियाँ १ कुम बोस, २ सोना बाबी ३ देवता बिम्ब  
पिया ।

### उर्दू

लोक-साहित्य : १ ये हूँ खानाबदोश, २ नाये जा हिन्दुस्तान ।

कहानियाँ : १ नये देवता, २ छोर बाँसुरी बजती रही ।

### अंग्रेजी

लोक-साहित्य : Meet My People.





# ब्रह्मपुत्र

देवेन्द्र सत्यार्थी



एशिया  
प्रकाशन

एशिया प्रकाशन नई दिल्ली





# ब्रह्मपुत्र

देवेन्द्र सत्यार्थी



एशिया  
प्रकाशन

एशिया प्रकाशन नई दिल्ली



काली एण्ड  
१९५६

सात रुपये

प्रकाशक  
एशिया प्रकाशन  
१०० कैप्टेन रोड नई दिल्ली

मुख्य वितरक  
विश्वकर्मण प्रकाशन  
५ फ्रीड बाजार, दिल्ली

मुद्रक श्री बाबीताब मेठ नवीन प्रेस दिल्ली ।

ब्रह्मपुत्र की प्रजा के चरणों में



## लोक युग का नवी पुराण

**भाष्य** की नदियों का वर्णन करते हुए व्यास जी ने उन्हें 'विस्वस्य मातरः' कहा है। सचमुच नदियाँ सोन-माता ही हन्ती हैं। लेकिन सब नदियों को हम माता नहीं कहते। विस्वामित्र ने तमसा नदी को अपनी बहन कहा है। हमारे बीच की छोटी मार्कण्डी मेरी छोटी बहन है। हम बचपन में साथ बहुत खेलते हैं। यमुना नदी कास मनवान् यमराज की बहन है और गुजरात की ताप्ती या तपती नदी तो यमराज के पिता सूर्यमातराक्ष की पुत्री कही जाती है।

हिमालय के उस पार का पानी भी भारत का है यह सिद्ध करने के लिए सिन्धु और ब्रह्मपुत्र—ये हमारे वीरकाय नव मानसरोवर और पञ्चण्डव से निकलकर हिमालय की लम्बाई लपककर इस पार धाते हैं।

ब्रह्मपुत्र का वर्णन मैं ने छदिका और परशुरामकृष्ण (ब्रह्मकृष्ण) से लेकर नोवात्मन्तो तक और धार्वे जाकर पद्मा और मेघना के नाम से किया है। ब्रह्मपुत्र न बहन है न माता। वह तो सुजन और संहार की सीमा में मस्त एक देवता है। पृथ्वी के जूनाल भी ब्रह्मपुत्र की उसी सीमा में मग्न करते हैं। युद्ध-धर्म का उत्कर्ष बताने वाले क्षत्रियों का संहार करते-करते ब्राह्मणभी परशुराम को नहीं भी धाम्नि नहीं मिसती थी। उन्ने वह ब्रह्मपुत्र के किनारे मिसी और वहाँ पर उस ने धपने इत्पारे परशु का त्याग किया था।

ऐसे ब्रह्मपुत्र की सीमा का धाधार लेकर धर्मक्षय कथा और कहानी मारतवासियों को भिखनी चाहिए थी। पुरासकारों ने यथायति यथा शक्ति कई नवी-कथाएँ इन्हें दी हैं। ब्रह्मपुत्र के बारे में और सिन्धु के बारे में भी पौराणिक कथाएँ मिसती हों तो मैं नहीं जानता।

ब्रह्मपुत्र के किनारे प्रचलित एक लोक-कथा के आधार पर श्री हमार्पू कबीर ने 'अभी ओ नारी' के नाम से एक कथा लिखी है। ब्रह्मपुत्र के किनारे प्रथम प्रवेश में जो जोरु जीवन पाया जाता है, उसे व्यक्त करने वाली यह सुन्दर नवम कथा श्री वेवेन्द्र सत्यार्थी ने हमें भी है।

श्री वेवेन्द्र सत्यार्थी भारत के लोकगीतों के अनन्य उपासक हैं। उन की प्रकृति और उन की निष्ठा की धीरे महात्मा जी ने मेरा ध्यान खींचा था। अपनी समस्त बाड़ी के साथ कबीराना ङंग से उन्होंने सारे भारत का भ्रमण किया है और भारत के हर प्रांत के लोकगीत उन्होंने इकट्ठे किये हैं। उन का यह संग्रह एक सागर के जैसा हुआ है।

लोकगीतों द्वारा लोक-मानस का और लोक-जीवन का जो प्रभाव परिचय होता है उस का प्रतिबिम्ब इस उपन्यास में मिलता है।

हमारे पूर्वजों ने अपने ङंग से नदियों के स्तोत्र और नदियों के पुराण बनाये। अब हमारे जमाने के साहित्यकारों को चाहिए कि वे धार्मिक ङंग से नदियों के स्तोत्र और नदियों के पुराण हमें दें। 'सप्तसरिता' लोक-माता' और अब 'जीवन-जीता' द्वारा मने धार्मिक स्तोत्र बनाने का एक नम्र प्रारम्भ किया है। श्री वेवेन्द्र सत्यार्थी ने इस उपन्यास द्वारा नदी-मुक्तों के लोक-जीवन का पुराण प्रस्तुत किया है। हमारे संस्कृत पुराणों में ऋषि-मुनि राजा-महाराजा और देवी-देवताओं की भरमार होती है। अब लोक-मुन चुक हुआ है। अब तो हमारे पुराण लोक-जीवन को ही प्राधान्य दें। इस का प्रारम्भ हम 'ब्रह्मपुत्र' में पाते हैं।

मुझे विश्वास है कि सत्यार्थी जी के द्वारा भारतीय संस्कृति की ऐसी बहुत-कुछ सेवा होगी और भारत की जनता उन की एकनिष्ठ उपासना की कदर करेगी।

नई दिल्ली

—काका काबेराकर



हेनरी सायबोर्नी

[ श्री प्रवीरकुमार चक्रवर्ती द्वारा प्रकृत ]

## ब्रह्मपुत्र की भाषा

**ना**म पहले-पहल बचपन में मुना फिर स्कूल में मकद पर देखा ।

एक पठनी-सी रेखा दूसरी रेखाओं के बीच से यह निकलती सागर तक चली गई है यही ब्रह्मपुत्र है ।

एक चौथाई सताब्दी पूर्व सन् १९३० में, जब मेरी मामू मुस्लिम से बार्डस बर्ष की थी पहल-पहल असम जाने का व्यवहार मिला । यह यात्रा सोझागढ़ों के सम्बन्ध में भी थीर यह कोई एक वर्ष तक चली ।

ब्रह्मपुत्र में बार-बार स्नान किया । ब्रह्मपुत्र में मिलने वाली असंख्य नदियाँ देखीं । जल के अनेक बामीचे देखे । एक स्थान पर महीना भर मनेरिया से बीमार पड़ा रहा फिर भी भी बहास न हुआ । परशुराम कुण्ड में स्नान किया । सविता ब्रह्मण्ड धीर योद्घाटी से ही नहीं बुझीं शुचानपाका धीर तेजपुर से भी ब्रह्मपुत्र के दर्शन किये । शिवसागर के समीप बिर्ताममुख से ब्रह्मपुत्र की विशाल घाट देखकर सहसा मेरे मुख से निकल गया

बुझापा यही थाकर काटा जाम ।

बंजाल के सम्बन्ध में किसी का यह विचार पड़ा था कि वहाँ जाने के लिए तो कई प्रवेश-द्वार हैं पर बाहर जाने के लिए एक भी द्वार नहीं । जब लगा कि असम पर यह बोल धीर भी पूरा उतरता है । बचपन में सुनी हुई बात कल्पना को प्रेरणा देती कामाख्या कामरूप की परमसुन्दरी बाहर से जाने वाले यात्री को मेढ़ा बनाकर रख देती है । पर जब तो असम को जाहू-टोने का बेल कहना भूल होती ।

ब्रह्मपुत्र के बीच में है माम्बुली का द्वीप । दिसांगमुख में एक मार्ग दक्षक मिल गया जो मुझे नाव पर माम्बुली ले गया । वहाँ मैंने कमसा-बाड़ी बाट से उत्तर लखीमपुर जाने वाली सत्ताईस मील लम्बी सड़क पर यात्रा की । माम्बुली में चार प्रमुख बौद्ध स्तूप हैं कमसाबाड़ी दक्षिण पाट, घाटलियाटी और गड़ामूर । मैंने ये चारों स्तूप देखे और घसम के बौद्ध महापुरुष संकरदेव और उन के शिष्य माववदेव की प्रति-परम्परा का रस ग्रहण किया । माम्बुली में छी से ऊपर नाव होने । मैंने कुछ गाँव भी देखा जिन तक पहुँचने के लिए घनेक बार हमदस और हामी-बूबी घास के बीचों-बीच चलना पड़ा ।

कई बार मेरा ध्यान महाभारत युद्ध के घसम की ओर जाता जब इसे 'प्राम्बोतिष' कहते थे । यहाँ का राजा मगदत दस हजार हाथियों सहित अपनी किरात सेना लेकर कीरलों की ओर से पाण्डवों के साथ लड़ने के लिए कुम्भोज की रणभूमि में पहुँचा था । उस युद्ध के किरात घसम के घाटिवासी ही रहे होंगे या घाज भी वीरता के लिए प्रसिद्ध है । किरातों का उत्प्रेषण तो यमुबेद और घबबेद में भी मिसता है । कभी मेरी कल्पना में सातवीं सताब्दी ईस्वी का घसम जून जाता जब यहाँ के सम्राट् मास्कर बर्मा ने नासन्वा विष्वक्मित्रालय के प्राचार्य से प्रार्थना करके चीनी बागी ह्यूएन्त्सांग को आमन्त्रित किया था । कल्पना में ह्यूएन्त्सांग को ब्रह्मपुत्र में स्नान करते देखता । कभी घाटवी सताब्दी के घसम का ध्यान आ जाता जब 'राजतरंगिणी' के अनुसार 'कामरूप' के राजा क्षुमेन्द्र वर्मन की सुपुत्री समुत्प्रभा का विवाह काश्मीर के सम्राट् मेघबहन से हुआ था । कल्पना में समुत्प्रभा को काश्मीर से बचकर घसम में ब्रह्मपुत्र पर दूध-भरा मंगस-बट और नारियल बढ़ाते देखता । कभी सधिया के सुटिया राजवंश का स्मरण हो आता । सुटिया राजाओं ने एक भन्दिर बनवाकर उस में तान्त्रिक बर्मानुसार ताम्रेश्वरी देवी की मूर्ति की प्रतिष्ठा की थी । घसमिया भाषा की एक 'बुरंजी' (हस्तलिखित इतिहास-ग्रन्थ) के अनुसार राजा रत्नध्वज ने राजा भद्र



## ब्रह्मपुत्र की भाषा

**नाम** पहले-पहल बचपन में भुमा फिर स्कूल में मकस पर देखा ।

एक पतली-सी रेखा दूसरी रेखाओं के बीच से राह निकालती सागर तक जाती गई है यही ब्रह्मपुत्र है ।

एक बीसवीं सताब्दी पूर्व सन् १६३० में जब मेरी मायु मुमिकन से बार्डस बर्ग की थी पहले-पहल प्रसन्न जाने का व्यवहार मिला । यह नामा सोकवीतों के सम्बन्ध में थी और यह कोई एक वर्ष तक जाती ।

ब्रह्मपुत्र में बार-बार स्नान किया । ब्रह्मपुत्र में मिलने वाली प्रशस्त बरियाँ देखीं । नाम के अनेक बानीये देखे । एक स्थान पर महीना भर मनेरिया से बीमार पड़ा रहा फिर भी जी उबार न हुआ । परशुराम कुण्ड में स्नान किया । सुबिया हिबू पड़ और बीहाटी से ही नहीं, बुबकी भुषामपाड़ा और तेजपुर से भी ब्रह्मपुत्र क वर्धन किये । शिवसागर के समीप शिसोवनुख से ब्रह्मपुत्र की विद्याल धारा देखकर सहसा मेरे मुँह से निकल गया

‘मुझपा वहीं आकर काटा जाय ।’

बंगाल के सम्बन्ध में किसी का बहुविचार पड़ा था कि वहाँ जाने के लिए तो कई अवैध-द्वार हैं पर बाहर जाने के लिए एक ही द्वार नहीं । जब समा कि प्रथम पर यह बोम और भी बुरा उतरता है । बचपन में मुनी हुई बात कल्पना की प्रेरणा देती कामाख्या कामरूप की परममुन्दरी बाहर से जाने वाले बानी की पैदा बनाकर रक्त मैत्री है । पर जब तो प्रथम को जाबू-टोने का देश कहना भूल होती ।

ब्रह्मपुत्र के तीर में है माम्बुसी का द्वीप । विसाँवमुख में एक मार्ग दर्शक मिल गया जो मुझ भाव पर माम्बुसी ले गया । वहाँ मैं ने कमसा बाड़ी घाट से उत्तर लखीमपुर जाने वाली सत्ताईस मील लम्बी सड़क पर यात्रा की । माम्बुसी में चार प्रमुख बंधुग सज हैं कमसाबाड़ी दक्षिण घाट, घाठमियाटी और लड़ापूर । मैं ने ये चारों सज देखे और घसम के बंधुग महापुरुष टंकरदेव और उन के पिछ्छ भावबदेव की प्रतिम-परम्परा का रस ग्रहण किया । माम्बुसी में सी से ऊपर पाँच होंये । मैं ने कुछ मार्ग भी देखे जिन तक पहुँचन के लिए घनेक बार घसमल और हाथी-बूँदी घास के बीचों-बीच चलना पड़ा ।

कई बार मेरा ध्यान महाभारत युग के घसम की ओर जाता जाता जब इसे प्राग्बोधिष' कहते थे । यहाँ का राजा भगदत्त दत्त हजार हाथियों सहित अपनी किरात सेना लेकर कीर्यों की ओर से पाण्डवों के साथ लड़ने के लिए कुस्तन की रणरूमि में पहुँचा था । उस युग के किरात घसम के आदिवासी ही रहे होंये या बाद में बौरा के लिए प्रसिद्ध हैं । किरातों का उल्लेख तो यजुर्वेद और अथर्ववेद में भी मिलता है । कभी मेरी कल्पना में साठवीं सताईसी ईस्वी का घसम भूम जाता जब यहाँ के सम्राट् मास्कर बर्मा ने नासत्या विद्वज्जिज्ञासय के आचार्य से प्रार्थना करके बीनी यात्री ह्य एन्सलम को आमन्त्रित किया था । कल्पना में ह्य एन्सलम को ब्रह्मपुत्र में स्नान करते देखता । कभी घाठवीं सताईसी के घसम का ध्यान आ जाता जब 'राजतरंगिणी के अनुसार 'कामरूप' के राजा सुमेध बर्मा की धुपुनी अमृतप्रभा का विवाह काश्मीर के सम्राट् मेघवहन से हुआ था । कल्पना में अमृतप्रभा को काश्मीर से बचकर घसम में ब्रह्मपुत्र पर दूब-सरा मंगल-वट और मारियल बढ़ाते देखता । कभी सचिया के मुटिया राजवंश का स्मरण होता जाता । मुटिया राजाओं ने एक मन्दिर बनवाकर उस में ताम्रिक बर्मानुसार ताम्रेश्वरी देवी की मूर्ति की प्रतिष्ठा की थी । घसमिया भाषा की एक 'बुरंजी' (हस्तलिखित इतिहास-ग्रन्थ) के अनुसार राजा रत्नध्वज ने राजा भद्र

इस की प्रकृतिवत् रूप-माधुरी की प्रतीक है परन्तु संस्कृत में 'मू-हित' का 'बोहित' बनाकर यह सिद्ध करने की चेष्टा की गई कि इस की मातृ रक्तमय मधुका सातिमानवी है, जैसी कि वह वास्तव में नहीं है। सीमा (उत्तरी बनी) में मूहित 'जाउन' का कहमाती है। सदिया के समीप डि-हीम में इस के संयम से बोका ऊपर, मूहित में बजिलु दिशा से भाकर मिश्रती है बोया बिहिय और उत्तर दिशा से सिबाँन और सेस्तेरी प्राकर मधुमै होती है। मूहित और डि-हीम के संयम के पश्चात् मधुम में ब्रह्मपुत्र की महिमा प्रारम्भ होती है। भावे पश्चिम दिशा में चलकर इस के उत्तरी किनारे पर सुबबसीरी (स्वर्लोकी) बरेली यवसीरी (बनकी) बनसी मनास सोनकोप बरला और तीस्ता मिलती है तो पश्चिम किनारे पर बूही बिहिय दिशा में डि-मू जौनी बनसीरी बनती, और बिजीराम के संयम बिच में रंज भरते हैं।

सदिया से पचास मील पर है परसुराम कुछ जहाँ माय संभ्रमि के बिल दूर दूर के भाभी स्नान करने भाते हैं। मधुवी माता की हत्या के पश्चात् परसुराम को इसी कुछ में स्नान करके शान्ति प्राप्त हुई थी। महाभारत युग में इस प्रदेश में मुटिया राजवंश के पूर्ववर्ती राजाओं की राजधानी थी कुछ ही से रक्षितली को ले बने थे।

बिह मई तक पहुँचते ब्रह्मपुत्र का पाट बीच मील चौड़ा होने लगता है। पहले यहाँ डि-मू नदी मिलती है फिर बूही घुसी सुबबसीरी रंजा नदी दिफरेन बूही बिहिय और नई बिहिय नदिना ब्रह्मपुत्र में मिलती है। बफना और मौटी पर्वतों से होकर सुबबसीरी ब्रह्मपुत्र की ओरकटिया बाया में बिरती है यही से पश्चिमी ओरकटिया को मूहित करने लगते हैं। पटकोई पर्वत से निकलकर बूही बिहिय ब्रह्मपुत्र को अपनाती है यह कोई १५० मील लम्बी है। लापती पर्वत से निकलती है डि-मू नदी और नई बिहिय का जगमगान है निमी पर्वत। ब्रह्मपुत्र में बाबाम की घाकठि के डीप बनते-मिटते रहते हैं। बहुर-सी धाराएँ मूल बाया से बि-मू जाती हैं जो कई-कई मील तक एकाकिनी बनी रहने के

परचाट फिर मूलबारा में मिल जाती है। इन्हीं में से एक बारा है खीरकटिया सूटी जो मूल बारा से बिसग हो जाती है और बूढ़ी बिहिममुख के सामने की दिशा में बहती है। इस में सुबनसीरी की बारा आ मिलती है। यह बूझित नाम धारण करती है, और आगे जाकर बनसीरीमुख के दूसरी ओर मूल बारा में मिल जाती है। बहपुत्र को मूलबारा और बूझित के बीच में है यामुनी संसार की किसी भी नदी के बीच इतना बड़ा द्वीप नहीं मिलेगा। इस का लम्बाई कोई ४८३ वर्ग मील होया।

बहपुत्र की एक और बारा है जो रूपमविता मानिनी के समुद्र बिसग हो जाती है। इस का नाम है कर्कष। दरंग जिला में पश्चिमी किनारे से बिघनाब के स्थान पर जहाँ से धीरघाट घाट मिल रहा जाता है वह बारा बिहृष्टी है, और पश्चिम दिशा में केने हुए नीगाब बिसा के बीच से बहती हुई धीरघाटी से ऊपर ही बहपुत्र में आ मिलती है।

खीरकटिया बूझित नसीमपुर जिला को धिपसावर जिला से अलग करती है। दूसरी नदियाँ हैं बूढ़ी बिहिम रिखाय बि-सू नामदीग बाजी मोबरहोई, काकोडोंया और बनसीरी। इन की युक्ति बहपुत्र में मिलकर होती है। काकोडोंया और मोबरहोई मिलकर पेला बिस का रूप धारण करती है और यह मिसी-बुली बारा बहपुत्र में समा जाती है। बनसीरी नामा पक्क से चलती है, और एक ही मील की यात्रा के परचाट बहपुत्र में मिलती है। यानी नागा संस्कृति असमिया संस्कृति से घने मिल रही हो।

बहपुत्र के बायें किनारे बसा हुआ तेजपुर कमी सहसबाहु बाखामुर की राजधानी था। इस का प्राचीन नाम है सोखितपुर। 'सोखित' को असमिया भाषा में 'तेज' कहते हैं। तेजपुर के जमीन है धर्मिण्ड पर्वत जहाँ कमी बाखामुर की परम मुन्दरी पुनी जपा का प्रासाद था। छपा-धर्मिण्ड की प्रेम-गाथा तो बहपुत्र का भी अवश्य स्मरण होगी। धर्मिण्ड के प्रतिरिक्त धर्म्य पर्वतों के नाम भी असमिया संस्कृति के समर्थ और

ऊर्ध्वमुख त्रिचिह्नय न प्रतीक है अनुसूना धीमरी बाह्यली भैरवी  
 मोमोगापुरी वज्रपद धामधरा धीर धिमरी ये हैं इन पर्वतों के नाम।  
 उत्तर के पर्वतों से निकसने वाली नदियाँ हैं दुनिया धमका साठोई  
 बुरोई सरगाँव बूँडो गंग धीमाधारी धीर दिरुवाई, धमी यह होइ  
 सपाकर बसती है कि कीम पहले ब्रह्मपुत्र के यसे में जयमाला जाले।  
 धका पर्वत से बसती है भरली धीर पचमोई का बन्धस्याम है टोबाँम  
 पर्वत। उबर बेसलीरी भी टोबाँम पर्वत से ही बसती है। भरली  
 पंचतोई धीर बेसलीरी तीनों ब्रह्मपुत्र के नाम धपमा-धपना धाचम वाँम  
 सेटी है। दरंग जिला की उत्तरी सीमा से धाती है बर नदी यह -  
 जिला की पश्चिमी सीमा है धीर गीहाटी को दरंग से पूबक करती  
 उत्तर दिशा से ही धाती है मयनबोई। बर नदी धीर मयनबोई ३  
 ब्रह्मपुत्र में समा जाने में ही सीमाय्य मानती है।

कामरूप जिला ब्रह्मपुत्र के दोनों धीर कैला हुमा है। ब्रह्मपुत्र  
 बायें किनारे गीहाटी है इन का मुख्य स्थान। यहाँ ब्रह्मपुत्र की बीडा  
 कम ही गई है। बट्टानें धीर पर्वत ब्रह्मपुत्र के भीतर तक बसे गये हैं  
 प्राइ के दिनों में पानी कम हो जाने पर बहुत-सी बट्टानें धारा के बीच  
 से दिखाई देने लगती हैं। बघिण दिशा में कैली हुई बासिया पर्वत  
 श्रु कला के प्रतिरिक्त वहाँ-उहाँ कुछ धम्य मधु-धाकार टीसे धीर पर्वत  
 भी है जिस के नाम धसमिया संस्कृति की परम्परा को वर्षाभित्त करते  
 हैं—मीनाचल जिस पर गीहाटी में कामाख्या देवी का मन्दिर प्रतिष्ठित  
 है भरलीया नमग्रह भुवनेश्वरी मणिकर्णेश्वर धीर धमकाकलाठा  
 धाचि। बासिया पर्वत श्रु कला से बसती है धियाक भरमु कनही  
 धीर धिरा। ये चारों बहनें ब्रह्मपुत्र से मिले मिलती हैं। ऐसा नमर  
 है मानो बासी धाचिबासिया की संस्कृति धसमिया संस्कृति का धम  
 दे रही हो। उत्तर दिशा से धाती है मानाह पायनादिया पूठीमाठी  
 धीर बर नदी। ये तीनों बहनें भी ब्रह्मपुत्र के बरण सूती हैं। मानाह  
 नदी नूटान पर्वत के पूर्वी भाग से निकसती है धीर शुभाजपाड़ा जिला

की सीमा बनाती है। जधर वर नदी कामरूप धीर वरंग के बीच रेखा खींच देती है।

ब्रह्मपुत्र के बायें किनारे पर है गुवालपाड़ा, जहाँ बाढ़ के दिनों में जल का निकास प्रति सैकड़ पाँच लाख बन फूट की गति से होता है। गुवालपाड़ा जिले के दक्षिणी भाग में भारो पर्वत की साखाएँ घुस घाई हैं जिन में से कुछ ब्रह्मपुत्र के साथ-साथ बनी गई हैं। इन के नाम भी उठने ही सुन्दर हैं जिनकी मोहक है इन की कम-माधुरी टूटे-बटी धीसूर्य, राजसिन्धु, बोधीबोधा धीरध धीर बोधुमापी ये हैं कुछ नाम। बन्नाबती और सरलमंथा मृत्यम पर्वत से घाने वाली बहनें हैं इन्हें भी ब्रह्मपुत्र में मिलकर ही धामि मिलती है। हेइस धंथा धीर न जाने किस-किस नदी के मिलने के बनती है दिपकाई नाचती इठलाती वह भी बमरीबारी के सवीप मिलन का मयस-मान पाती ब्रह्मपुत्र के गले बस जाती है। जधर डोनकोच मूटान पर्वत से घाकर ब्रह्मपुत्र में मिलती है मानो मूटान की धात्मा ब्रह्मपुत्र में स्नान कर रही हो। भारो पर्वत से बसती हैं बार बहनें—बिबीराम जिनापी दूध नदी धीर इप्पा ये भी बारी-बारी ब्रह्मपुत्र की भारती उतारती हैं मानो पाछे संस्कृति का मयस-मान पूँज उठा हो।

ब्रह्मपुत्र के बायें किनारे बसी हैं बुबकी। किनारे के साथ-साथ पर्वत बने गये हैं इन की सीमा ब्रह्मपुत्र पर छत्र झुकाती है।

ब्रह्मपुत्र के किनारे बनते-बिगड़ते रहते हैं पर बिथनाथ चीनपाट ठेजपुर, धिबरी पर्वत कीहाटी हाथीमुका गुवालपाड़ा धीर बुबकी ऐसे स्थान हैं जहाँ बट्टाने धीर पर्वत धधक धडिग लड़े हैं।

नाइ धाठ सी मोल तक धधति मानसरोवर से लेकर पूर्व में ध्या मा-सिन्धु तक ब्रह्मपुत्र की खोज की जा चुकी है। यहाँ से धसम की सीमा डेढ़ सी मील रह जाती है। यह डेढ़ सी मील का मार्ग इतना दुबल है कि निरन्तर धाठ के साथ-साथ चलना सहज नहीं इस की पूरी खोज-खबर नहीं भी जा सकी।

तिब्बत में सान-थो की चारा इतनी बेगबती है कि नाव प्रवाह के विपरीत नहीं चलती। लकड़ी की नहीं चमड़े की नाव चलती है जो तिब्बती भाषा में 'बवा' कहलाती है। यह नय तथा छूटा है कि नाव का बेंदा पापाखों से न टकरा जाय। याक का चमड़ा पापाखों से टकरा कर भी फटता नहीं। तिब्बत का चराचल इतना ऊँचा है कि यहाँ नाव नहीं चल सकता। मानो सान-थो यही सोचकर धागे बड़ता है कि यह ऐसे पठार को जम्म देना जहाँ धाव-ही-धाव बहतावेना जहाँ उठ की चारा में 'बवा' के स्थान पर लकड़ी की नाव चलेगी—प्रवाह के साथ भी धीरे प्रवाह के विपरीत भी। असमिया नागरिया को तिब्बती माँझी के समान एक साथ दो-दो झँकट नहीं है कि कभी तो लकड़ी के डबे पर याक के चमड़े के टुकड़े फसकर नाव को पानी में डेस है धीरे कभी लकड़ी का डोचा धीरे चमड़े के टुकड़े प्रसव करके इन्हें बने पर धाववा घपने सिर पर लाकर पैदल ऊपर की ओर बहुत ऊपर, पहुँचे धीरे किसी घाट पर फिर से नाव तैयार करके नीचे की ओर से चले। असम की सीमा पार करते ही जब सान-थो नाव बदलकर दि-हींग बनता है, तो समझा है मानो कोई महाराजाधिराज एक महान् विजेता के रूप में चले धा रहे हैं धीरे मानो दोनों किमारों पर सड़े होकर सोच उन का स्वान्त कर रहे हैं धीरे सोच रहे हैं—यह कहाँ के महाराज हैं? इन का राजवंश कहाँ भारम्भ हुआ? इन की राजमावी कहाँ है? किस बात पर रीझते हैं? कौनसी बात इन्हें प्रसी नहीं लगती?

पहले यह धारणा थी कि तिब्बत का सान-थो ही बर्बा की इराबती का रूप धरता है, पर सन् १८८९ तक की खोज से यह निष्कर्ष निकला कि पान्थम सपथका में सवा के उत्तर में तो सान-थो की चारा की कल्पना भी नहीं की जा सकती। फिर यह कहा जाने लगा कि सवा से धागे बहने वाली नदी यह नहीं जो परधुराम कुण्ड के पवित्रम में सदिया तक बहती है। नीचम भड़ोपय ने पठा बताया कि सीमा के समीप बहने वाली धीरे सदिया से धागे बहने वाली एक ही नदी है। सन् १८८३ ८६

में वे सदिया से ऊपर की दिशा में ब्रह्मपुत्र की खोज करते समा के उत्तर में सीमा नामक गाँव तक जा पहुँचे थे। इस से आगे बढ़ कर इसी प्रदेश का एक पर्यटक प्या-आ-तिम्बाङ्ग के बसिए में जाया करता एक स्थान पर पहुँचा जहाँ से भीरी परबत घाट भील है। भीरी परबत से प्रसव का सीमान्त सँतानीय भील हाया। इस पर्यटक ने नीचम महोदय की स्थापना का समर्थन किया।

ब्रह्मपुत्र उपत्यका में बसिए-पश्चिम दिशा में साढ़े चार सौ मील की यात्रा के पश्चात् ब्रह्मपुत्र बसिएमुखी होकर पारो परबत का प्रक्षल घूने के लिए जानामिड हो जाता है और रंगपुर जिला में २२ ४० उत्तर और ८२ ४६ पूर्व प्रवेश करता है। प्रसव का प्रक्षल छोड़ने के पश्चात् इस के बायें किनारे मिलने वाली नदियों में मुख्य हैं परना और सीस्ता रंगपुर जिले में बिमबारी के बसिए-पश्चिम में कुछ मील की दूरी पर है सीस्ता का संगम। ब्रह्मपुत्र की बसिएमुखी बारा जमुना बनती है एक सौ पड़तासीस मील तक इस की यात्रा चलती है। मोबासम्बो के स्थान पर २३ २१ उत्तर और ८६ ४९ पूर्व जमुना अपनी बाया-बायाँछा पछा ( गंगा की मूल बारा ) को छीन लेती है। यह सम्मिलित बारा पछा के रूप में प्रप्रसर होती हुई काँवपुर के दूसरी और २३ १३ उत्तर और ६० ३३ पूर्व मेघना में जा मिलती है। किसी समय ब्रह्मपुत्र की मूल बारा मैमनसिंह जिला के बीचों-बीच बसिए-पूर्व दिशा में बहती थी फिर मेघना में जा मिलती थी। सन् १७८३ में रैनेज के सब के नक्षत्रों पर इस का यही मार्ग दिखलाया गया था पर उन्नीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ में इस का पाट ऊँचा उठता गया वेग जाता रहा यह अपनी बारा की मेघना में समाहित होने से न बचा सका साथ ही इस की दूसरी बारा पश्चिम में मोबासम्बो के समीप और दिबाङ्ग पछा में मिलने पर बाध्य हुई। इस के पुराने पाट का नाम जम रहा है यद्यपि उस में माटी-बामू भरना गया सन् १८६६ के भूकम्प ने इस प्रक्रिया को वेगवती बनाया।



ब्रह्मपुत्र का समूचा निचला भाग धनीक संघनित वारधों का विनपट है। इन में बहुत-सी बाधाएँ थीतकाल में सूख जाती हैं; वर्षाकाल में फिर इन का जल बहुतिक फैल जाता है। विस्तार कमजारा में घबेक होय बन जाते हैं। धनिकोय निरे रेत के टीसे माय होते हैं, जिम्हे घबसे वर्ष का वर्षाकालीन प्रवाह बहा ले जाता है। पथा धीर मेवना की सम्मिलित वारा मेवना के नाम से ही सापर की घोर बनती है।

सागर से डिब्रूगढ़ तक घाट सी मीन की माथा स्टीमर से की जा सकती है। गोवालनगो से बनकर स्टीमर साहे चार दिन में डिब्रूगढ़ पहुँच जाता है। लौटते समय तीन दिन से अधिक नहीं मयते। ऊपर की दिशा में जाते समय बायें किनारे सिराजपूर, बुबड़ी, वैजपुर और सिबसाम के प्रसिद्ध घाट हैं। बायें किनारे हैं गुवालपाड़ा मोहाटी, तीस-घाट और डिब्रूगढ़। इन के प्रतिरिक्त अन्य घाटों पर भी स्टीमर रुकता है। मोला घाट के लिए सिकाटी घाट पर, वाराहट के लिए काकितामुक घाट पर और सिबसामर के लिए दिसावमुक घाट पर उतरना पड़ता है।

प्रिन्सिपल आगामिराम बस्वा ने एक अनुमयी ज्योतिषी के समान प्रसन्न के कई नकसे पर मेरी प्रशुनी टिकाकर ब्रह्मपुत्र की बगलकुम्हमी से मेरा परिचय कराया और समझाया कि ब्रह्मपुत्र—मानहरोबर से बनकर पूर्वे पश्चिम उघट, दक्षिण समी दिशाओं में बहता—नूतन रचना का विनपट है।

**ब्रह्मपुत्र की माया मेरे मन के कलामवन में लाक-कया की**  
 ती वर्ष तक लोने वाली राजकुमारी के समान धोती रही।

सन् १९५० में प्रसन्न को बनकर भूकम्प और ब्रह्मपुत्र के दुनिवार जलज्वालन का सामना करना पड़ा। यह स्वाभाविक का कि मैं प्रसन्न की बेवना से व्यथित हो उठना। ब्रह्मपुत्र की माया लौक-कया की राज

कमारी के समान जाग उठी।

दिसम्बर १९१४ में दोबारा प्रसन्न गया तो अपने पुराने मित्र ब्रह्मपुत्र को मैं ने अपने सामने पाया। उस के मोह उस के नुमास उस के हैबर—सब मेरे जाने-पहुँचाने थे। भूकम्प और बस-ज्याबन के कारण प्रसन्न के चेहरे पर चारों ओर घाई थी। महिलाओं के हाते बहुत-कुछ बरस गये थे। परचुराम कुण्ड का पहला रूप लपट भप्ट हो गया था वहाँ फिर से जल की व्यवस्था की गई थी।

दिसांगमुख में ब्रह्मपुत्र के किनारे बड़े होकर पुराने बयोबुद्ध भाग बर्छा का स्मरण हो आया। इस बार मेरे साथ एक युवक मार्गदर्शक था और मैं साथ एक बीबाई घाटाड़ी पूर्व का युवक नहीं रह गया था समय की गर्मी-सर्दी मैं ने देख ली थी मेरी आँख के पुस के नीचे से पञ्चवीस बरस उस पार चले गये थे। दाढ़ी और सिर क बाल पक रहे थे। अब मेरे मन में स्थिरता आ गई थी।

इस बार भी माम्मुली की यादा की गई। यह भी पता चला कि दिसांगमुख वाले माम्मुली वालों को पिछड़ा हुआ समझते हैं और माम्मुली में बड़ी जानूति है। इस पर तो मैं तबिक भी सज्जित न था कि ब्रह्मपुत्र की भाषा समझने में इतने बरस लगे। घालिर ब्रह्मपुत्र को भी तो इस विद्याल पछार को बरस देते सड़कों बरस लगे थे। फिर भी मुझे यह स्वीकार करना पड़ा कि पिछली यादा मैं ने एक बालक ही था। यह समजूति वहाँ मुझे मेरी ही दृष्टि में छोटा बना रही थी वहाँ एक समुदाय का कारण भी बन रही थी क्योंकि मन और बुद्धि के पचरह कपाट खुल गये थे।

गौहाटी में डॉ॰ सुब्रह्मचर्य प्रोफेसरी का प्रतिष्ठान मिला प्रसमिया नाहित्य और इतिहास के गये संकेत प्राप्त हुए। प्रसमिया भाषा के आचार्य डॉ॰ विरिचिकमार बरुआ प्रसमिया लोक-साहित्य के धर्मपथ प्रफुल्लित मोस्वामी और महेश्वर नियोल से उपन्यास की कथावस्तु

ब्रह्मपुत्र का समूचा निचला भाग अनेक संवर्धित चाराघों का बिजपट है। इन में बहुत-सी चाराघें सीतकाल में सूख जाती हैं; वर्षाकाल में फिर इन का जल बहुतविक फैल जाता है। बिद्यास बनमारा में अनेक द्वीप बन जाते हैं। धनिकोंस निरे रेख के टीस भाग हाते हैं, जिन्हें धमसे बर्य का बर्योकासीन प्रवाह बहा ले जाता है। पया धीर मेवना की सम्मिश्रित चारा मेवना के नाम से ही साबर की ओर बगती है।

साबर से दिब्रूगढ़ तक बाठ सी भीम की धागा स्टीमर से की जा सकती है। पोबालम्बो से बगकर स्टीमर साठे चार दिन में दिब्रूगढ़ पहुँच जाता है। सौटते समय तीन दिन से धनिक नहीं सवते। अयर की बिद्या में जाते समय बायें किनारे सिराजवंज, बुबड़ी ठेकपुर धीर बिद्यानाथ के प्रसिद्ध घाट हैं। बायें किनारे हैं शुबालपाड़ा मोह्यटी, सीस घाट धीर दिब्रूगढ़। इन के प्रतिरिक्त धम्य भठारह घाटों पर भी स्टीमर रुकता है। मोला घाट के लिए सिकारी घाट पर, जोरहाट के लिए काकिनामुल घाट पर धीर धिनसागर के लिए बिसाबमुल घाट पर उतरना पड़ता है।

प्रिन्सिपल आनामिराम बक्सा ने एक अनुमयी ज्योतिषी के समान प्रथम के बड़े नक्षत्र पर मेरी धंहुसी टिकाकर ब्रह्मपुत्र की जम्मकुण्डली से मेरा परिचय कराया धीर समझाया कि ब्रह्मपुत्र—मानसरोवर से बसकर पूर्व पश्चिम उत्तर, दक्षिण सभी दिसाघों में बहता—नूतन रचना का बिजपट है।

**ब्रह्मपुत्र की माया** मेरे मन के कनामवन में नाक-कवा की सी बरब तक नीचे बामी राजकमारी के समान मोटी रही।

मन् १६३ में प्रथम की धरकर भूकम्प धीर ब्रह्मपुत्र के दुनिवार अतन्नावन का आयना करना पड़ा। यह स्वाभाविक था कि मैं प्रथम की बदना से ध्वनित हो उठना। ब्रह्मपुत्र की माया सीक-कवा की राज

गरी के समान जाग उठी।

दिसम्बर १९४४ में दोबारा घसम गया तो अपने पुराने मित्र  
ब्रह्मपुत्र को भी ने अपने सामने पाया। उस के मोड़ उस के घुमाव उस के  
दर—सब मेरे जाने-महजाने थे। मूकम्य और जल-प्लावन के कारण  
घसम के बेहरे पर कतों के धा गई थी नदियों के रास्ते बहुत-बूट बदल  
गये थे। परपुराम कुछ का पहला कन लपट भ्रष्ट हो गया था  
वहाँ फिर से जल की व्यवस्था की गई थी।

दिसांगमुख में ब्रह्मपुत्र के किनारे लड़े होकर पुराने बयोबुड मार्ग  
दर्शक का स्मरण हो आया। इस बार मेरे साथ एक पुबक मायबर्शक  
था और मैं सब एक बीघाई साठायी पूर्व का मुबक नहीं रह गया था  
समय की गर्मी-सर्दी में ने देख ली थी मेरी धायु के पुन के नीचे से  
पक्कीस बर्ष उस पार भले गये थे। बाढ़ी और सिर के बास पक रहे थे।  
सब मेरे मन में स्थिरता धा गई थी।

इस बार भी मामुली की यात्रा की गई। यह भी पता चला कि  
दिसांगमुख वाले मामुली वालों को पिछका हुआ समझते हैं और  
मामुली में बड़ी जागृति देखी। इस पर तो मैं तनिक भी लज्जित  
न था कि ब्रह्मपुत्र की यात्रा समझने में छलने बर्ष लगे। बाकिर ब्रह्मपुत्र  
को भी तो इस विद्याल पठार को जम्म बैठे सड़नों बर्ष लगे थे। फिर  
भी मुझे यह स्वीकार करना पड़ा कि पिछमी यात्रा में मैं एक बालक ही  
था। यह धनुमूति वहाँ मुझे मेरी ही बुद्धि में छोटा बना रही थी वहाँ  
एक सन्तोष का कारण भी बन रही थी क्योंकि मन और बुद्धि के  
धक्का-काट कम लगे थे।

गौहाटी में डॉ. सुर्वकमार भूषा का साहित्य मिला असमिया  
साहित्य और इतिहास के नये संकेत प्राप्त हुए। असमिया भाषा के  
धाचार्य डॉ. बिरिचिकमार बरवा असमिया लोच-साहित्य के धन्यपक  
प्रभुस्तदत मोस्वामी और महेश्वर नियोग स उपम्याम भी कमावस्तु

धीरे उस के मूर्खान्य अभिप्राय पर सोच-विचार हुआ।

फिर एक दिन पीहाटी में प्रिन्सिपस ज्ञानाभिराम बस्त्रा के वहाँ पहुँचा। वे बहुत कमजोर पड़ गये थे वे भी धन पहना मुनक न था। फिर भी उन्होंने मुझे पहचान लिया। धन के बहुत कम पर से निकलते थे जलमा-फिरगा कठिन था। हाथ में पुस्तक लिये बैठे थे। असम में नये रंग उभर रहे थे पर असम का यह सबकास-प्राप्त बनो-बूढ़ तपस्वी एकाकी रहना पसन्द करता था। वही तो उन की धामु का सफावा था। लपटा था वे इस समय की कुछ कम कमठ नहीं। उन की दृष्टि पीछे की ओर नहीं धावे की ओर थी। बोले "धन तक तो पता चल गया होगा कि ब्रह्मपुत्र नूतन रचना का विषय है?" इस का उत्तर मैं ने एक मुस्कास से दिया। ब्रह्मपुत्र पर उपगवास बोले "ब्रह्मपुत्र सबैक नहीं रचना करता था है।"

उन के साथ बहुत बातें हुई। ब्रह्मपुत्र की सहायक नदियों की बातें जो दोनों ओर से आकर मिलती हैं जो नदियाँ सीधी ब्रह्मपुत्र तक पहुँचने की समता नहीं रखतीं वे किसी बूझटी नहीं में मिलकर ब्रह्मपुत्र तक पहुँचकर सम लेती हैं। असम के पर्वतों की बातें। उन के नाम उन प्रादिवासी जातियों पर पड़े हैं जो वहाँ बसी हुई हैं। अपने अपने जगत्स्थान से होती हुई प्रत्येक छोटी-बड़ी नदी मानो अपने प्रवेष्ट की बोली ब्रह्मपुत्र तक पहुँचाती हैं वे बोनियाँ मिलकर ब्रह्मपुत्र की भाषा का जगत्स्थान से होती हुई प्रत्येक छोटी-बड़ी नदी मानो अपने प्रवेष्ट की बोली निर्माण करती हैं। असम के प्रादिवासियों की बातें। ब्रह्मपुत्र के बलिष्ठ में सिमप्रा नाया लासी जगत्स्थान लुधार्ड पारो काछारी धीर निकर बसे हुये हैं इन की संस्था प्यारह साल है। असम के प्रादिवासियों में किये जा रहे हैं ताई मिरनरियों के कार्य की बातें। अंग्रजी सरकार ने असम के प्रादिवासियों को असम-असम रहने की नीति पर जलाया। हैं ताई मिरनरियों को उन में काम करने की छूट थी। अंग्रजी-कास में हैं ताई मिरनरी धावे जैसे आस्कर बर्मा के युग में समय से लाहण धावे

होंने ह्यू एन्टर्साय को इसी लिए तो कहना पड़ा था कि असम की भाषा असम की भाषा से मिलती-जुलती है। ईसाई मिशनरियों ने जाने-अनजाने आदिवासियों की प्रगति में बाधा डे दी है। आदिवासियों को साथ लिये बिना हमारी प्रगति भी व्यर्थ है। असमिया भाषा के सम्बन्ध में बहुत बातें हुई हैं। जैसे यह भाषा असम में अन्य भाषा-भाषियों की अपेक्षा अल्प संख्यक लोगों की भाषा है पर यह किसी-न-किसी रूप में उन लोगों के उपयोग में भी आती है जिन की यह मातृभाषा नहीं है। मागा सोम छ-साठ उपजातियों में बँटे हुये हैं। एक उपजाति दूसरी उपजाति की बोली नहीं समझती आपस में बात करते समय उन्हें असमिया से काम चलाना पड़ता है। बहुत-सी पड़ोसी आदिवासी जातियाँ आपस में अन्तर्जातीय कार्यों के लिए असमिया माध्यम का प्रयोग करती हैं उसे ही उन की असमिया कितनी भी बिल्कुल क्यों न हो।

प्रिंसिपल जानाबिराम बरुवा बोले “सारा ज्ञान धाम के साथ आता है। जाने कितर-कितर से कील-कील-सी गरी आकर मिलती है फिर बाकर इस ब्रह्मपुत्र में डगनी समता पाती है कि सागर तक लम्बी यात्रा कर सके। ज्ञान धामे न धामे टिकट तो कटाना ही पड़ता है। जाते समय ठमी सन्तोष होता है जब कुछ करा-बरा हो।”

“आधीबाँद बीजिए !” मैं ने उन के बरण छू लिये।

“आधीबाँद माँगना निर्बलों का काम है।” वे बोले “यहाँ ह्यू एन्टर्साय भी आया था। उस ने तो किसी से आधीबाँद नहीं माँगा था। उस ने जो लिखा आज तक बीबित है। अपने यात्रा-विवरण में ह्यू एन्टर्साय आज भी बीसता है। मरी या बीघो एक रास्ता चुन लो।”

असम के पश्चात् पूर्वी पाकिस्तान जाने का कार्यक्रम बनाया।

गोबालन्दो में रेल से उतरकर स्टीमर पर सवार हुआ तो रात का समय था। अपने दिन ठगर की छत से जहा का दृश्य देखा सूरज उगने का फोटो लिया। इस विमान जलमार्ग पर यह देखना तो कठिन था

कि पद्मा में कीम-कीम-सी नदी मिल रही है। यमुना धीरे पद्मा का संगम तो राजि के धाम्धार में पीछे झूट गया था। साधू वाला माथी कहे जा रहा था प्राये प्रायिने मेघना। प्रायावेर मेघना होतो एकेवारै मेवेर रंगेर मठन। [प्राये प्रायेगी मेघना हमारी मेघना है एकदम मेघ के रंग के समान।]

स्टीमर की छपर की छत से हम फिर नीचे घा बैठे। साधू वाली सीट पर हाथोबानो ने घाईं खोलीं। उसे साधू वाले माथी से जो उस का बड़ा भाई था वह सिखायत थी कि सूरज उबने से पहले ही उसे क्यों नहीं कहा दिया था। हाथोबानो के भाई ने हाथोबानो का परि जब एक बाबिका के कम में दिया। वह झिझिकाकर ईस पड़ी। बड़ी मुस्किस्त से उसे एक बंगला गीत गाने के लिए तैयार किया जा सका। उस की आवाज बहुत सुरीली थी। उस के नीत की टेक थी—

एई नयने तोरे न बैचीसे,

कुबु मुखेर कबाय प्राखु बूड़े ना।

[इन नयनों से तुम्हें बेखे बिना खाली मुख की कबा से ही प्राणों की सृष्टि नहीं होती।]

ऐसा मगठा था मानो सब मेघ भिट पये बर्म के मेघ, घाघु के मेघ, बुद्धि के मेघ पाकिस्तान धीरे हिन्दुस्तान के मेघ।

हाफ्त में एम० मन्सूखीन से भेंट हुई, तो वे खुशी से उछल पड़े। उन्होंने मुझे अपने वहाँ ठहराया। गुरुदेव रबीन्द्रनाथ ठाकुर ने उन के बंनला सोकमीठ-संरक्षण 'हाफ्तखि' की भूमिका लिखी थी। उसी है हमारी मित्रता खली घाटी थी। पूर्वी पाकिस्तान में प्रसिद्ध बंनला कवि जसीमुद्दीन जिन से सर्वप्रथम कस्तकथा में भेंट हुई थी डाका से बाहर हीरे पर थे। बंगला कवि भुलाम मुस्तफा ने अपने घर पर एक रात संमीठ-पोष्ठी का प्रबन्ध किया। धम्मासुद्दीन महमद सबसे पर संघत कर रहे थे उन की साहबबाही भाटियाभी गा रही थी जिसे पूर्वी बंगाल के मांन्दी टिकी हुई रात में नदी के प्रवाह के साथ जाते समय जाते हैं। हम सभी

रूम उठे एम० मम्बुसहान गुलाम मुस्तफ़ा गवर्नमेन्ट इन्स्टीट्यूट फ़ॉर  
 प्राइमरी हाईस्कूल के प्रिंसिपल बंभुलाबहीम तबले पर संयत करने का  
 धम्मानुहीन प्रहमद धीरे धीरे बिना किसी बिसेप क्ल से प्रामत्नित किया  
 गया था। ओकिस-कण्ठी यादिका जब धरने स्वर को धावस्मकडानुसार  
 विस्तार प्रदान करते हुए किसी भीका के समान ही धामे से बसती तो  
 हमारी धाँके कल्पना में किसी पद्या या मेकना के साथ-साथ तैरने  
 लगती। फिर जब धम्मानुहीन प्रहमद ने अपनी सभी हुई धावाज में  
 माटियाली प्रस्तुत की तो पोछी का रंज धीरे धीरे जम गया।

“मुझे बीस वर्षों से ऊपर हो चले माटियाली गाते।” धम्मानुहीन  
 प्रहमद ने बताया “लगता है धमी ठक ‘धूर’ (धुर) नहीं मिला। दो  
 बीज देकर लगवाना है। नूर धीरे ‘धूर’। धारे संसार में नूर मरा है  
 पर्यु‘धूर’ मेरे को धमी ठक नहीं मिला। ‘धूर’ के लिए भटक रहा हूँ।

इस संगीत-पोछी में मेरे मन की बिम्बा को राह मिली। यहाँ  
 तो सभी को किसी-न-किसी बहूपुरुष ने पालन बना रखा था। जमुना  
 पद्या मेकना धीरे धीरे गंवा की लहरें इस संगीत-पोछी को छू रही  
 थीं। मेरी बिम्बा-बाधा प्रबहूपाल सरिता बनकर बस पड़ी।

हाका से सौंठे समय फिर विद्याल जलमार्ग पर सूर्यास्त का रूप  
 देखा।

पास बैठे धामी ने कहा “जो सूर्य अस्त होवे उसे कोई सूर्य उदय  
 होवे छ।” [ जो सूर्य अस्त होता है वही सूर्य उदय होता है। ]  
 मैं ने सोचा कि साथ ही सूर्य के समान है वह मिठ-नूतन है  
 साहित्य में भी यही सूर्य उदय चाहिए।

कलकत्ता में बंभला साहित्यकार महादेव साहू से घेंट होने पर इस  
 उपन्यास की बर्णनी बनी तो मैं बोले “यह उपन्यास तो बंभला में लिखा  
 जाना चाहिए।”

मैं ने बिरबाधपूर्वक कहा “हिन्दी भाषा धावस्मक पस्तु है।”  
 फिर बंभला उपन्यास ‘पद्यानधीर माँझी’ (पद्या बही का माँझी)



वे सेसक याणिक बम्बोपाध्याय से चेंट हुई तो वे बोले "भाभी पर मही के हातेर मूठोर भीतरे घानते चेष्टा करिनाम किन्तु ए मही ऐत बंजस, वे घामी किछुई करिते पारिनाम ना। घापनीघो बहपुन हातेर मूठोर भीतरे घानते चेष्टा करिते पारेन यदि पारेन।" [मैं पद्या मही को मुट्टी में लाने की चेष्टा की किन्तु यह मही तो इतना बंजस है कि मैं कुछ भी वहीं कर सका। घाप ही बहपुन को मुट्टी में लाने की चेष्टा कर देखें यदि कर सकें।]

त्रिभिन्नपक्ष जैनसाम्प्रदाय ने ड्राई जग से तैयार किया हुआ बहपुन के माँझी का एक स्केच प्रकाश किया था जिस ने जब इस उपन्यास में मुकेशिन्ध के रूप में मानो इस के माँचे पर तिलक लगा दिया।

जब यह उपन्यास लिखा जा रहा था, तो हिन्दी में एक असमिन्न मित्र को इस के कुछ खंड पढ़कर सुनावे। वे बोले "इस का रस त असमिन्न में ही जा सकता है।"

मेरे मन में यह प्रश्न उठा "तो क्या इसे ऐसी भाषा में नहीं लिखा जाना चाहिए था, जिस के माध्यम से सारा देश हमारी जम्मू भूमि के इस महान् वरदान से परिचित हो सके?" हिन्दी में तो तब बंगला क्या असमिया हमें सभी भाषाओं का महाभरत जाना चाहिए, उन की सुगन्धि उन की ओषध उन का रस इस में बीसा-का-बीसा जाना की आवश्यकता है।

दोबारा असम जाने से पूर्व सुप्रसिद्ध गुजराती साहित्यकार काक कासेतकर का आशीर्वाद प्राप्त कर चुका था। काका साहेब को येर यह विचार मिला कि बहपुन की प्रतिभा एक उपन्यास के रूप में प्रतिष्ठित की जाय। अपनी सुविख्यात रचना 'भोकमाता' में काक साहेब ने भारत की सभी नदियों के शब्द-विनय संकलित किये हैं।

'जब 'भोकमाता' लिखी गई, तो मैं सभी असम-भाषा पर नहीं जा सका था। इसमिए उस में बहपुन का शब्द-विनय छूट गया। कहते कहते काका साहेब थक गये।

इस उपमास का धामुक लिखकर काका साहब ने मुझे सपना  
 मिया है। 'लोकमाता' लिखकर जिन्होंने धनेक नदियों के प्रति प्रेम प्रकट  
 किया उन का धासीबाद तो 'ब्रह्मपुत्र' को मिलना ही चाहिए था।  
 अब 'ब्रह्मपुत्र' धाप के सामने है। पढ़िये धीर देखिये कि ब्रह्मपुत्र  
 की भाषा को लोक-भाषा की राजकुमारी के समान न जाने कब से पढ़ी  
 सो रही थी अब जान सखी है या नहीं।

कल्पना

३ सी/४६, रोहतक रोड, नई दिल्ली  
 २१ नवम्बर १९३६

देवेन्द्र सत्यार्थी



# ब्रह्मपुत्र

ब्रह्मपुत्र जानता है कि कपू  
कितना गहरा जाता है ।

—प्रसन्निका लोकोक्ति



ब्रह्मपुत्र ब्रह्माप्य शान्तनुकुलनन्दन ।  
अमोघवर्मसन्नुत पार्ष लौहित्य मे हर ॥

—ब्रह्मपुत्र का स्वयं-मन्त्र

[ हे ब्रह्मपुत्र ! हे महामाग ! हे शान्तनु-  
कुलनन्दन ! हे अमोघ गर्भ से बन्ने ! हे  
लौहित्य ! मेरे पाप हटो । ]

ब्रह्मपुत्र कानो ते बरहम्पूरी कुरी  
छामी कर लोरा जाई  
झूठाई लीजीबा, ब्रह्मपुत्र देखता,  
छामोल ही मनोता नाई ।

—अन्तर्धिया लोकगीत

[ ब्रह्मपुत्र के बिनारे हे बरहम्पूरी गाव बहाँ  
हम रूचन छाने जाते हैं । इसे लीला मत्त  
सेना, ब्रह्मपुत्र देखता । हम में इतनी भी  
घमता नहीं कि इरी सुपारी से ही सुन्हाय  
अर्चन करें । ]



ब्रह्मपुत्र महामाय शास्त्रमुक्तममृत ।  
अमोघगर्भसम्पुत पार्य लौकित्य मे हर ॥

—ब्रह्मपुत्र का स्तवन-मन्त्र

[ हे ब्रह्मपुत्र ! हे महामय ! हे शास्त्र-  
मुक्तममृत ! हे अमोघ गर्भ से बन्ने ! हे  
लौकित्य ! मेरे पाप हरो । ]

ब्रह्मपुत्र कानी ते बरहमपूरी जूपी  
झापी करत सोरा काई  
झूकाई नीमीचा ब्रह्मपुत्र देवता  
तामोल ही मनोता काई ।

—ब्रह्मनिचा जोमछीव

[ ब्रह्मपुत्र के फिनारे है बरहमपूरी गाछ, वहाँ  
हम रूकन खाने पाते हैं । इसे सीता मत्त  
सेना, ब्रह्मपुत्र देवता ! हम में इतनी भी  
घमसा नहीं कि इपी कुनापी से ही कुम्हाटा  
झपक करें । ]









## एक



बहुत पहले की बात है जब संसार की रचना हो रही थी। देवताओं ने देखा कि बौंद है, सूख है और बौंद-सूख की बोझी के साथ अनगिनत तारे हैं। फिर देवताओं ने बरती को रूप दिया, बरती पर पर्वत बनाये, नदें-नदें पैर उगाये। पैरों पर फूल लिले, फल लगे। देवताओं ने पशु बनाये, पंखी बनाये। किसी वस्तु की कमी फिर भी लक्ष्मी ही रही। और यही सोचकर देवताओं ने आत्मी की रचना की।

जब आत्मी के रूप में देवता बरती पर उतरने लगे। जब पक्षियों ने देवताओं को देखा तो उन्हें बहुत क्रोध आया।

एक पक्ष ने, जो उस में महाबली था, बरती पर सात चक्काई।

बरती फट गई और बलघात फूट निकली।

देवता-देवता तारा मैदान पानी में डूब गया।

देवताओं में भी एक देवता महाबली थे। वह थे हमारे भगवान् बुद्ध, जिन्होंने अनगिनत बार जन्म धारण किया। पर वह था हमारे भगवान् का पहला जन्म, पहला कर्म। तो जब हमारे भगवान् ने बल-बल एक होता देखा, वह नीचे उठे।

मीने उतरकर भगवान् ने बरती पर अपना भन्ना फेंका।

पानी को परे हटती, धौपल लैमासली, भुँह पर हाथ फेरती बरती बाहर निकल आई।

घरखी छँधी उठती गई। पानी नीचे रह गया। राक्षसी ने सात पाहा कि पानी छँधा उठकर भरती पर छा पाव, पर यह तो असम्भव था। घरखी छँधी थी, पानी नीचा था। अब मगवान् ने देखा कि वह शुभ घड़ी आ गई जब पानी को अपनी डगर पर चलने की आज्ञा दी जाय। मगवान् के संकेत करने-भर की बेर थी कि पानी अपनी डगर पर चल पड़ा। यही था हमारा ब्रह्मपुत्र।

उस समय तो ब्रह्मपुत्र ने मगवान् की बात मान ली और शान्त गति से अपनी डगर पर चल पड़ा। लेकिन अब तो हमारे मगवान् बच्चों पर विपश्चान नहीं हैं। इसलिए ब्रह्मपुत्र कभी-कभी राक्षसी की बत्ती में आकर बरपावो फैलाता है और महाकाली मगवान् की सन्तान से कटका सेता है।

ब्रह्मपुत्र की जन्म-कथा लिखत के बड़े बड़े ज्ञाता के गिर्द बैठकर सुनाते हैं। 'तान पो' कहो जाह ब्रह्मपुत्र, बात तो एक ही है। तान पो अर्थात् विशाल नदी। तान पो के सम्बन्ध में लिखत की एक दस्त-कथा यह भी तो है कि वह नदी हाथी के मुँह से निकलती है। मानसरोवर से तो चार नदियाँ निकलती हैं। कपाकर की कल्पना में इन चारों नदियों के लिए ही पवित्रता का प्रतीक उभरता है। उल्लुव पोड़े के मुँह से निकलता है तो सिन्ध बाप के मुँह से। उल्लुव, सिन्ध और ब्रह्मपुत्र के अतिरिक्त चौथी नदी भी तो है। उसके उद्गम की कल्पना मयूर के मुँह से की गई है।

जय ब्रह्मपुत्र ! जय चल देका ! शक्ति तुम्हारी, नाव हमारी। जल पय पिछाल, भरती जानकतो।

हमारा नमस्कार स्वीकार करो, देका ! अपना बरदहस्त बढ़ाओ।

तुम क्या हा और क्या नहीं हो, यह लोकत हमारी आयु बँट जाती है। आशा की नाव चलें युग-युग। तुम हमारे साथ हो। हम अकेले तो नहीं।

ओ मी गॉव तुम्हारे किनारे बसा, ठम पर तुम्हें बार बार ओप आया। ठमे बार-बार पीछे हटना पड़ा। वह बार-बार आवाह हुआ, बार-बार बरपाव हुआ। पेना ही गॉव है हमारे अलम का यह त्रितयिगुरु।

अहोम राजाओं की पुपनी राजधानी शिवसमार यहाँ से तेरह मील है।  
वेसिने न, यहाँ विसौग नदी ब्रह्मपुत्र में मिलती है, पर यहाँ हमारे ब्राह्मण  
भी मिलते हैं ब्रह्मपुत्र में। ऊपर से पानी का तपस्वन नीचे से ब्राह्मणों का  
तपस्वन।

ब्रह्मपुत्र हमारी माटी बरकरार हो जाता है तो हम कुछ बोस भी तो  
नहीं सकते। किसी प्रकार ब्रह्मपुत्र का श्रेष्ठ शान्त हो जाय, इसका कुछ उपाय  
हम ब्रह्मपुत्र करते हैं। ब्रह्मपुत्र पर किसी बार हम ने नारिकेल चढ़ाये,  
किसी बार वृष की मलमिर्बाँ मर-मरकर ब्रह्मपुत्र की भेंट की। इस पर भी  
ब्रह्मपुत्र की अपनी इच्छा है; वह हम पर कुछ रहे चाहे नसक।  
ब्रह्मपुत्र बहुत दयावान् भी है और बहुत बोधी भी। निरन्तर इसके  
किनारे दृष्टे हैं।

एक किनारे से दूसरा किनारा नजर नहीं आता।

बीच-बीच में खेत और माटी के द्वीप मौ बनते-मिटते रहते हैं। छोटे  
द्वीप को 'ठापरी' कहते हैं, बड़े को मामुली। मामुली तो बस एक ही है।  
ठापरियों की तो यह ब्रह्मपुत्र है कि आब है, कल नहीं है क्योंकि बनाने  
विगाने के लेख पर ही कुछ रहता है ब्रह्मपुत्र। एक ओर से माटी बरकरार  
है ब्रह्मपुत्र दूसरी ओर या बीच बीच में ठापरियों के रूप में नद माटी को  
रक्न देता रहता है।

मामुली के बीच का किनारा हमारे दिखसिमुख से बहुत दूर नहीं। ओर  
माट-सतर मील लम्बी है मामुली और दस-एक मील चौड़ी। बड़ा श्रेष्ठ में  
ब्रह्मपुत्र मदानक रूप धारण करता है तो मामुली का आकार बढ़ता हो  
जाता है, पर हमने तो मुझ है कि मामुली के ठग छोटे आकार की बरकरार  
करने वाला द्वीप भी किसी बूमरे देश की किसी नदी में नहीं है। हम में बहुत  
से गाँव बसे हुए हैं और अरुम के पार बड़े कण्ठ सब भी इसी मामुली  
में हैं, जहाँ दूर-छोप के मक लोग हर श्रेष्ठ में पहुँचते रहते हैं।

बड़ा श्रेष्ठ में, जब ब्रह्मपुत्र में उल्टा आधिक होता है, नाव को धक्के में  
मामुली के किनारे ला लगती है। बड़ा के परम्परा, जब नद-पुपनी ठापरियों  
ब्रह्मपुत्र।

ब्रह्मपुत्र के बीचों-बीच फिर उठाये खड़ी रहती हैं, नाव को काफ़ी झुंकर जाना पड़ता है। उस दशा में दिर्गोत्तम की नाव को मामुल्की के किनारे लगाने में दुशुना सम्म बाहिर।

दिर्गोत्तम की नाव-घाट तो नये-मुपने बेहरी की संगम टहल। पर सभ से अधिक पहल-पहल तो हल-बाजार वाले दिन ही नकर काफ़ी है, सब दूर-दूर की नौकरों इस बाट पर आकर लगती है। आर-पार जाने-जाने के लिए नाव सम्म-सम्म पर तैयार मिलती है। दिर्गोत्तम की तो प्रत्येक नाविया नाव कलाने में कुशल है।

दिर्गोत्तम की स्टीमर-घाट भी प्रसिद्ध है। आज से पौने दो सौ वर्ष पूर्व अंग्रेजों की पहला स्टीमर इसी घाट पर आकर लगा था। गोंव के बड़े-बड़े आदमी यह कहानी से बैठते हैं। जिस बगल आजकल बेलगाँव बसा हुआ है, वहाँ अंग्रेजों ने अपना पहला जेल खड़ा किया था। यह जेल की जेल था—बॉस की बन्ने-बड़ी होवारे, बॉस के बड़े बड़े दरवाजे। उस जेल से कोई कैदी भाग नहीं सकता था। फिर जब असम पर अंग्रेजों का चौकूट अधिकार हो गया और शिक्कागर में एक जेल बन गया तो बॉस के जेल को समाप्त कर दिया गया। वहाँ बेलगाँव बस गया। यह स्टीमर-घाट पहले इतना प्रसिद्ध न था। पहले तो कलकत्ता से आकर स्टीमर टिगू तक जाता था। जब असम में रेल की पटरी नहीं बिछाई गई थी कलकत्ता की सवारियों और दूर-अमीर के यात्री स्टीमर के रास्ते ही आते-जाते थे। अब टिगू तक बड़ा स्टीमर नहीं जा सकता। ब्रह्मपुत्र की घाट दिर्गोत्तम से अगर कितना चौड़ा होता जाता है, उतना ही पानी कम गहरा हो गया है। अब तो गैर छोटा स्टीमर अगर टिगू तक जा भी सकता है, फिर शायद वह भी न जा सके। असम की राजने शासन ने स्टीमर की पुरानी किराया कम नहीं रहने दी, पर यहाँ के पाय-बागानों से बाय की पैदलों बाहर भेजने के लिए दिर्गोत्तम के स्टीमर-घाट पर पहुँचाने वाली है। शिक्कागर और टिगू के बीच ही तो हमारे असम के अन्ध-अन्ध बाय बागान हैं। हर पाय बागान वाले दिर्गोत्तम का आम जानते हैं तो

हमारे स्टीमर बाट के कारण। हमें तो अपने स्टीमर-बाट पर गर्व है।  
- किन्ती को भी मकनूरी की आवश्यकता पड़े, तो उसे हमारे स्टीमर-बाट पर  
काम मिल सकता है।

दिसाँगमुल से शिकनागर जाने वाली कच्ची सड़क पहले-पहल उन्हीं  
अप्रेक्ष सिपाहियों ने बनाई थी जो ईस्ट इण्डिया कम्पनी की ओर से ब्रह्म  
मेले गये थे। पहले इस प्रदेश में बहुत बड़ा बंगला था और लोग पॉन्च-पॉन्च  
रस-रस की टोसियों में ही शिकनागर पहुँचते थे। अब तो अकेला ब्राह्मी  
भी मजे से आना-जा सकता है।

उत्त बंगाल का अब कहीं नाम निशान तक नजर नहीं आता। दूर-दूर  
तक चले गये हैं हमारे क्षेत्र। हमारी चट्टी बहुत अच्छी है, बाल-ही-बाल  
हो जाता है। नया बान भर आने पर किन्ती कानु की कमी नहीं रहती।

किन्ती-किन्ती वर्ष ब्रह्मपुत्र की बाढ़ मयानक रूप धारण कर लेती है तो  
सही फलें नष्ट हो जाती हैं। पर हमारे क्षेत्र तो दूर-दूर तक चले गये हैं।  
बहुत दूर तक तो ब्रह्मपुत्र का पानी मार नहीं करता। ब्रह्मपुत्र माटी करता  
है अक्षय पर इतना भी तो कुछ दिवाण रहता है। भोड़ी-भोने करके ही  
माटी करता है ब्रह्मपुत्र जैसे ब्राह्मी की आगु भी पल-पल चट्टी रहती  
है। यही सोचकर हमें ब्रह्मपुत्र पर कमी श्रेष्ठ नहीं होता। दिसाँग नदी में  
भी आती है बाढ़, पर बाढ़ के तो अब हम ब्रह्मपुत्र हो गये हैं।

हमारी नाव कम ही डूबती है। दिसाँगमुल में ऐसा ब्राह्मी गुरिअन  
से मिलेगा जो वैपक न हो। जैसे ता हमारे यहाँ बड़ी-बड़ी नौकाएँ भी  
निकलती हैं, पर गुरिया नाव की कोर गुलना नहीं। वेन के छे को बीच से  
खील-खीलकर बना जाता है गुरिया नाव। ठेगा भी होता है कि गुरिया  
नाव बीच नहीं में ठसत बाध। हमारा प्रफन ग्रा यही रहता है कि पानी  
में गिरकर भी नाव का बिगाड़ पकड़ नहीं। कच्ची-म-कच्ची प्रभर हम रोनाथ  
गान में बटन में सफल हो जाते हैं और नाव फिर चलन लगती है।  
ब्रह्मपुत्र पर तो हम अपना अधिकार ममकने हैं। नाव क्षेत्र हुए हमें  
ग्राह आनन्द मिलता है। कच्ची-कच्ची हम सोचते हैं कि दिसाँगमुल में ब्रह्मपुत्र

ब्रह्मपुत्र।



न होता तो हम बिलने उदास रहते । हमें ब्रह्मपुत्र का यह किनारा भी प्रिय है जिसे हम देख सकते हैं । हमें ब्रह्मपुत्र का वह किनारा भी प्रिय है जिसे हम वहाँ से देख नहीं सकते । हमारे जीवन के सब से मधुर क्षण वही होते हैं जब हमारी नाव ब्रह्मपुत्र की विशाल जलधारा का झोंकल घामे झरो बहती है ।

ब्रह्मपुत्र के किनारे जन्म हुआ हमारा । हम तो बहुत भाग्यवान हैं ।

## दो



"बच्चों ने खड़े दिये नहीं कि मरु सोय आ पहुँचे ।"—हिउँमिमुल के योंग-बूझा नीलमणि का वह मन्त्र तो चलता ही रहता है । अपने हंगोत्रिये मित्र कल्पस्थ मगत पर ध्येय करने में उसे आनन्द आता है । यह हैवारे मयत भी हैं कि हरि नाम की वाहर ओले सुखयते रहते हैं । क्या मन्त्र

नीलमणि की बात का बुरा मना जायें । मगत भी तो न अपने को हाथ लगाते हैं, न मौल-मन्त्र के समीप जाते हैं । मामुन्नी के आठनिवाटी तब के गुनार को से मन्त्र से रसा है । पूरे वैष्णव हैं । वैष्णव धर्म का पालन उनके मुख से सुनते ही बनता है । वह तो नीलमणि पर भी खेर हासते हैं कि अब रुकना करें । एक दिन आठनिवाटी तब की यात्रा की जाय । गुनार को तो महापुरुष हैं । श्रुत्येव को बासी पूरी नहीं तो बासी उन्हें परठम है । हासों के अपने अपने शलाक बनके ब्रह्म में कियबमान हैं । आठनिवाटी तब तो तीव-स्थान है । प्रति बप बुर-बुर के वैष्णव वहाँ पहुँचते हैं । एक बात तो पहले से समझ लानी होगी । लम्बा वैष्णव नहीं नहीं को अरुण-मन्त्र की और मौल-मन्त्र से बुर मागता है; लम्बे वैष्णव को तो पचाह पीड़ा को जानना होता है, पचाह पीड़ा को अपनी पीड़ा मन्त्र कर बनना होता है । नीलमणि और कल्पस्थ मगत की नाल एक ही जगह बसाद गर होगी । लमी तो उन में इतनी गाड़ी सुनतो है । यह और बात है कि मगत की कामी तब नीलमणि का वैष्णव-धर्म की दीक्षा नहीं गिला सके ।

“समय बीत रहा है, जीवन का अन्त नहीं।”—भगवत जी हमेशा यही रट लगाते रहते हैं। अब भगवत जी तो बड़े-बड़े तीर्थ देख आये हैं। गया, अरुण, प्रयागराज, पुरी, रामेश्वरम्—उन जगह हो आये हैं। यात्रा की क्यार्र तो उन से थकौं मुनते रहो। नीलमणि ने तो एक भी तीर्थ नहीं देख—उन ने तो आउनियाड़ी सत्र भी नहीं देखा जो इतना समीप है।

नीलमणि सक्की मलाह चाहता है, इतना तो भगवत जी भी जानते हैं। नहीं तो वे नीलमणि का इतना सम्मान क्यों करते ? गाँव-बूझा तो प्रत्यक्ष बहुत बुरा होता है—बात करते-करते आप को देव डाले और आप को फटा भी न बले, पर नीलमणि को तो किसी प्रकार का छल-कपट कुछ नहीं गया। वह तो तिन-रुठ दिर्घांगमुख की किन्ता ही में मग्न रहता है। वह भी तो एक प्रकार की मक्ति है। पूरा नहीं तो आपा वैष्णव तो अक्षय्य है नीलमणि। दिर्घांगमुख को तो कई बस्तियाँ हैं, वह भी अलग अलग। हर बस्ती का अलग नाम है, फिर भी सक्क नाम है दिर्घांगमुख। आलीखीमा बस्तों का यह नाम अक्षय्य है कि असलो दिर्घांगमुख यही बस्ती है। नीलमणि के लिए तो सभी बस्तियों की मलाई आवश्यक है। उसका अपना घर तो आलीखीमा में है—भगवत जी के पड़ोस में पर वह तो पूरे दिर्घांगमुख का गाँव बूझा है, पूरे दिर्घांगमुख की पीडा को अपनी पीडा मानना उसका धर्म है। यही तो वैष्णव धर्म भी कहता है। एक काम और करे नीलमणि, अण्डा-मछली और मीठ से भुँह मोड़ ले—मन्त्रि को तो वह पहले ही भुँह नहीं लगाता—फिर चाहे वह किसी भी तीर्थ की यात्रा न करे, चाहे आउनियाड़ी सत्र भी न जाय, परवाह नहीं। एक दिन वह बात नीलमण को समझ में अक्षय्य का जानगी कि सात्विक विचारों के लिए नास्तिक मोहन भी आवश्यक है। लठोगुण, रजोगुण, तमोगुण—शस्त्रों में ये तीन गुण मने गये हैं। स्तोगुण सर्वोत्तम है। अब यह तो अगम्य है कि मीठ मछली का सेवन करते हुए मनुष्य पर भी चाहे कि वह रजोगुण और तमोगुण ने बचा रहे। तमोगुण ने बचने के लिए तो लाल मिर्च भी छोड़नी पानी है। बलिप कोर्द बल नहीं। कभी तो नीलमणि की समझ में यह

बात आ ही जायगी। नीलमणि का देटा हं अगुल। अगुल को तो मेरी  
 बात में विरवास है। यह भी हो सकता है कि पिता से पहले पुत्र वैष्णव  
 बन जाय। वैष्णव धर्म यह तो नहीं कहता कि घर छोड़कर किसी तीर्थ पर  
 जा देने। हमारे आठनियाटी सत्र के गुसाईं भी तो सत्र में आकर रहने  
 बासीं ही अपने-ठा ठन मछी को अधिक सम्मान देते हैं जो घर पर रहकर  
 हरिनाम अपने के साथ-साथ घर का काम भी करते हैं। स्नेतो-किमाती तो बुरी  
 नहीं। बछी माता का बरदान मिलता रहे। आठमी इस बालूतों की कमाई  
 लाकर किये किसी पर मार न बने। अनेन्द्रिया और अनेन्द्रिया का मार  
 अपने-आप होवे। इस में तो कोई गुपड़ नहीं पर सात्विक विचारों के लिए  
 सात्विक मोक्ष तो आवश्यक है।

बनसिंह पाव वाले और रतन बापित को दुष्मन आसो-सोया में पास  
 पास हैं। डिर्गामुल का तो ले-बेकर यहाँ एक बाजार है। बनसिंह की  
 दुष्मन दुर्गामुल-मर को सत्रों पर टोक-दिप्यशी करने के लिए बहुत बड़ा  
 अड़ा है। यहाँ मगत को मो आते हैं और नीलमणि भी। बोस-बोस में रतन  
 गालि की बगल में देवी की तरह बगती रहती है।

बरमानन्दी मधुआ और अम्बुलघादिर भी बनसिंह की बातों के रसिया हैं।  
 मधुलघादिर किसान है। बरमानन्दी कहता है कि उसकी स्नेती बल पर  
 तो ह वहाँ उसके बाल में छोड़ी-बड़ी मछलियाँ आ पहुँचती हैं। अम्बुल  
 घादिर है कि उने एक ही पित्ता पाने का रही है। मगत को इतने दोषों  
 पात्रा कर आये पर वह आज तक हब करने नहीं आ सध। मगत की  
 मित्रों में सबसे बड़े हैं—पचास से कम तो क्या होगे। उन से सल-क  
 से उतरकर हैं गाँव-बूढ़ा नीलमणि और अम्बुलघादिर। बरमानन्दी तीनों  
 का है, बचाये बनसिंह का विचार है कि वह तो मगत को से मो  
 है, महीने कमर ही होगा।

गालिय बायी निम आज इकठे हो गये। बनसिंह एक-एक गिलास  
 पय देते हुए कहता है, "बैच पर बैठकर पीजिये।"  
 न बापित अपनी दुष्मन से मिलकर कहता है :

पुत्र।

“बोहा हरिनाम हमारे लिए भी बप सेवा, भगत की !”

धर्मनिन्दी हँसकर कहता है :

“या तो हमारे साथ बैठकर पाम पिया या फिर अपनी बुद्धि में बाध किसी गाइक की बाध बोहो । तुम मेरी इनामत यहाँ नहीं बना सकते !”

“धनसिंह की पाम हम से कौन दूर है ? तुम बताओ, कम्प मन्त्रियों तुम्हारे बाला में कैसे ॥ इन्धर तो नहीं करती ?”

“इन्धर करके कहाँ चारोंगी ब्रह्मपुत्र की मन्त्रियों ?” धर्मनिन्दी गम्भीर होकर कहता है, “सब पूछो तो मन्त्रियों पकड़ना भी हरिनाम अपने से कुछ कम कठिन नहीं । क्यों, मियों अम्बुलधर ?”

मात की अम्बुलधर के कम के समीप पहुँच ले बाध करते हैं

“एक बार हम तो अवश्य कर आओ, मियों की !”

अम्बुलधर की आँखों में एक नई ही चमक आ जाती है । वह पहल तीनों मित्रों की ओर देखता है, और फिर धनसिंह और एतन की ओर, जैसे चली चली सब से पूछ रहा हो कि यदि वह इस बर्ग हम को जाने की तैयारी कर ले तो निर्दोषमुक्त बान्धे उसकी कहाँ तक महाकला कर सकते हैं । निरामास सब की ओर से कहता है :

“मियों की, अब तक तुम हम को नहीं आ सकते, निर्दोषमुक्त ही को क्या सम्मन हो । हम तो इसे करती मान बैठ हैं ।”

हीतकाल अब सूर्य जैसे भी देर से बिजलता है । आज कुछ बात कम है । चारों मित्र पाम पीकर सन्ध के मोड़ की ओर चले जाते हैं । धनसिंह और एतन पीछे से उन्हें देखते रहते हैं अब तक कि वे पुनः की बाध में लो नहीं जात ।

एतन अपनी बुद्धि में पला जाता है । वह जानता है कि धनसिंह न केवली में पानी मरकर इसे दोषाध आग पर रखा है । इतने में धनसिंह की आशाब आती है :

“पाम पियोसे ?”

एतन उत्तर देता है

“वनसिंह माह, कटोरी-मर गरम पानी हमारे लिए रख लेना जरूर ।  
चाप अभी नहीं चाहिए ।”

वनसिंह सोचता है — आखिर रखन अपना पड़ोसी है । वह हँसकर  
कहता है

“वे आर्यों तो पुन्ध मे लो गये । अब कौन आयेगा हजामत बनवाने ?  
गरम पानी तो बरतना चाहें तो । हमारे शूक ने तो यही बताया था कि  
वेद दूसरों के काम आने से कमी न बूझना ।”

रत्न अपनी बुझल से निश्चलकर कहता है :

“अच्छा तो चाप पिस्तौल !”

वनसिंह चाप बजाते हुए रत्न की ओर की देखता है जैसे बहरी  
अपने नववधू शिशु को ओर निहाएँ है । ऐसे होठों पर खिल फेरे हुए  
कहता है

“कलकला से जाता है हिम्मा लिपटन का । यह समझ कि लड़की  
समुपल से दोबारा मायके में आए ।”

“बाह, वनसिंह माह ! अच्छा रुक जाँया है । असम की चाप पहले  
कलकला जाती है, फिर कलकला से अनेक कम्पनी हिम्मा में मरकर मेकती  
है बगह-बगह । अच्छा तो लाओ चाप का गिलास ।”

चाप का गिलास वनसिंह के हाथ से लेकर रत्न बेर तक उसे घूँट से  
नहीं लगा पाया । माप उठ रहो है । वनसिंह कहता है :

“धमाकनी की लड़की है न छाछी वह अपने पिता से कम नहीं ।  
पिता बाल डाले ब्रह्मपुत्र में, पुत्री बाल डाले रिचिंगमुन के हाव-बाजार में ।”

चाप का गिलास बेंच पर टिकाकर रत्न एक हाथ की छेंगुली दूसरे  
हाथ की हथेली पर ठगुरा तेज करने के अन्दाज में पलाते हुए कहता है :

“छोरो, छोरो, दिन मेरा सह-सुहान का दिया । गल कछा है, कद  
सगाभा है ।”

वनसिंह कोर उत्तर नहीं देता । पुन्ध की मीनी बाहर बनी होने लगती  
है । इस आशय मे बेहरे निहालकर अगुण और बेबकान्त का निकलते हैं ।

देवकान्त कहता है :

“कलदी बताओ, चाय पिये या पहले हजामत बनवायें ?”

अगुल अपनी ठोड़ी पर हाथ फेरकर कहता है :

“तुम्हारा मतलब है दिन में बस दो काम ही होंगे ?”

एतन एक ही संस में चाय का गिलास बढ़ा जाता है ।

देवकान्त गम्भीर होकर कहता है :

“अपना काम तो सागा को इन्क़ा करता है । लोग इन्क़े हो गये तो उनके सामने कोई कटिनाह नहीं रहे चायमयी ।”

अगुल हँसकर कहता है :

“हम स तो वह मागा लाइको गुरदास्तो हो तेब निक्कतो मले ही फिरंगी ने उस पकड़कर जेल में डाल दिया—”

एतन बीच में बात उटता है :

“फिरंगी का ता कोई क्या बिगाड़ेगा ? अपने हाथों में हथकड़ी और पैरों में बड़ी पकड़ डलवा सकता है ।”

जनसिंह की आँखों के कानों में सरासत सिमट जाती है । हवा में हाथ उछालकर कहता है :

“अब बोलो, देवकान्त माह ! अच्छा तो पहले एतन से हजामत बनवा आओ, मैं नह पनो डालकर चाय तैयार करता हूँ ।”

जनसिंह की बात समझकर एतन आठ अपनी कुर्कान में चला जाता है । पीछे-पीछे अगुल और देवकान्त भी चले जाते हैं ।

देवकान्त के चेहरे पर सानुम लगाते हुए एतन कहता है :

“फिरंगी से ता बड़े-बड़े रेशमक भी मच लाते हैं । गुरदास्तो ने समझा होगा कि स्वतन्त्रता का अर्थ उठाने मर की जरूर है, फिरंगी मैदान छोड़कर भाग जायगा । फिरंगी का श्रेष्ठ था गया । उस ने वह मागा गाँव बना डाले । लूट करता लाया । और गुरदास्तो का भी पकड़ लिया ।”

अगुल हँसकर कहता है :

“तो वह करो कि एक आर में अक्षुण्ण गरा अस्त रहा है, बुलदी और

से फिरगी। गुरुदासो से तो मिल चुक है देवादास। गुरुदासो तो नहीं इसकी तक ही पड़ी हुई है और हमारा देवदास तो बी० ए० पास कर चुक है। वह तो फिरगी की बात झन्की तरह समझता है। वह फिरगी को मरपुत्र के समान गरा नहीं धरने देगा।”  
 खन खड़ा मुन्करता रहता है और देवदास के चेहरे पर जोरे जोरे ठसुरा बसाता है।

वह तो निर्दोशमुक्त में सभी बालते हैं कि मरपुत्र को गण धरने में ही आनन्द आता है। यों के बड़े-बूढ़े कहते हैं—छिती सम्य शिवसंगार यहाँ से सोलाह मील बा, आप रह गया सोलाह का तेरह मील। तीन मील मन्दी का गढ़। बड़े-बूढ़े तो यह भी कहते हैं कि आत्मीयोग की वर्तमान बत्ती आब से बीच रात पहले अपनी बगह से हटाकर इस बगह बगार गर थी। पुजने आत्मीयोगा बालो बगह ता कपो की पत्नी में बा चुकी है। ठसुरा बलाते-बलाते खन कहता है

‘आत्मीयोगा भी छिती ने क्या सोचकर बाम रखा है इस बत्ती का।’,  
 आकुल कहता जाहता है—‘ठीक तो है, आत्मीयोगा अपात्र हूँ और

इस। यह आत्मी तो मरपुत्र की बाड़ में न जाने छिती बार हूँ, न जाने तनी बार पीछे हटा’ गर यह कहो।

“हाय बचाकर खन मार। कट मत लगाना।”  
 खन और भी बहो-बहो हाय बलाते हुए कहता है :

“हरि का नाम लो, यहाँ तो नहीं-वहीं की इबास्त बना बत्ती। कट लग बत्त, तो हमारे पास इसका उपाय भी तो रहता है।”  
 मरपुत्र मर्मग बलकर कहता है :

“दत्तोमा की सेलमी भी तो मरपुत्र की कपचाप की तरह गण बाखी है। कट कर यह समाचार सुनने ने आपा कि नापमण दापेगा को बोधी से हटा दिया बापगा, पर वह तो अपनी बगह पर ही हटा हुआ है बेसे यह हमारा निर्दोशमुक्त बापमण समझने लगा है कि मरपुत्र की लापत करन और उर्ध्व नहीं-वहीं गातिपाँ बेने से ही सरधार चुप

मरपुत्र।



रहती है।”

बेबकान्त के चेहरे से सामुन पौछकर खन फिटफिटि लगाते हुए हैंसकर कहा है :

“हमारे लिए तो जैसे सरकारी अफसर जैसे ही पब्लिक के लोग !”

मुन्ध की चादर पहने से घनी हो यह है । खन की दुकान से निकल कर दोनों मित्र बनसिंह की दुकान पर जमकर बैठ जाते हैं ।

दोनों गाइकों के हाथ में प्याज के गिलास लेकर बनसिंह कहता है

“बर्मालन्दी अपना बाल डालने से पहले तब बही कहा है—सावधान, मछुलियो ! पर खोलिए बर्मालन्दी की बात । कहते हैं हाथी बिठना खाता है उसना बोम्ब होता है । हम अपना बाल डालने से पहले इसना भी नहीं कहते—सावधान गाइको ! पत्तो रहने से । बर्मालन्दी की लड़की आखी एक-न-एक दिन अकस्म माय जायगी, यदि बर्मालन्दी ने उस के लिए सोम्व बर न हूँ ब तिया ।

अतुल गम्भीर होकर कहता है :

“मछुए की लड़की के लिए तो लोय कहते हैं मछुए का अण्ड बन बाला कैवर्त ना डोम कर ही चाहिए, पर वह कोई आवश्यक तो नहीं ।”

बनसिंह कहता है

“आवश्यक कैसे नहीं ! ठिसोंगमुन्ध में आये तो मीरी रहते हैं, जो अपने मीरी लोगों में ही विवाह करते हैं । एक चौपार हैं हम नेपाली लोग और शोप रह गये एक चौपार अस्य असमिया लोग, जिन में फिसानी के अतिथि नाबरिया और मछुए भी हैं । अब वह तो पुजनी रीति टहरी—नेपाली का विवाह नेपाली लड़की से ही होमा, असमिया का असमिया से; यहाँ तक कि मछुए और नाबरिया भी हमेशा अपनी अपनी जाति में ही विवाह करते हैं । आप लोग प्याज पीने आ जाते हैं, किन प्रकर भयवाद हूँ ! बनबाल की नाव तो रेत पर भी चल जाती है, पर निर्धन की नाव बछपुत्र में भी नहीं चलती ।”

बेबकान्त प्रथम बदलकर कहता है :

“ब्रह्मपुत्र जानता है कि यशू छिछा गइय जाता है।”

ब्रह्मपुत्र ब्रह्म ताल छोड़ता है :

“आदमी के पदों वहाँ भी पड़ते हैं। उठ भावी के स्वभाव को तो बात ही सेते हैं। अपने गाँव को भी इसीलिए आदमी का से अधिक जानता है। निर्योग्यता हमारी बन्धुता है। इसकी मर्यादा हम सदा चाहते हैं।”

ब्रह्मपुत्र हँसकर कहता है :

“निर्दोषता की मर्यादा तो इसमें है कि हमारे लक्ष्यों को सुन्दर ब्रह्मपुत्र मिले और हमारी लक्ष्यों को योग्य कर। ब्रह्मपुत्र का दम्मा ऐसे ही बनता है। बेचारे की परबाली तो मगधपुत्र के सुँह में बली गई थी। कोई-कोई यह भी कहता है कि ब्रह्मपुत्र की परबाली घर से निकली ही इस विचार से थी कि इस जीवन से ब्रह्मपुत्र पा ले।”

ब्रह्मपुत्र कहता है :

“यह बात तो मेरे सुने में भी आई है। ब्रह्मपुत्र अपनी परबाली को यह कहकर बिछाता रहता था कि उस ने बेटी को क्यों बन्ध दिया जब कि उसकी तो बेटी का नाम बनने की इच्छा थी। कहते हैं उस निरी आँखी वृष भीली बन्धी ही थी। उस को फिर प्रकाश पालकर पडा दिया, यह लक्ष-पुत्र ब्रह्मपुत्र का ही नाम है। यह चाहता तो ब्रह्मपुत्र बिछाद कर लेता पर—”

ब्रह्मपुत्र कहता है :

“कर लेता ब्रह्मपुत्र बिछाद, और भी दुखी होता। शानी तो ब्रह्म की होती है। यह ब्रह्म एक बार ही ब्रह्मती है आज पर। बैठे तो चाहे बिछादी बार ब्रह्म माछे रहा। अब तो आँखी स्याली हो गई। ब्रह्मपुत्र चाहता है कि गाँव में ही उसका बिछाद हो बात बिछ ने आँखी लडा उसकी आँखों में लम्बने रहे।”

ब्रह्मपुत्र कहता है :

“क्या ब्रह्म हो रही हैं ! पुत्र ने तो ब्रह्म ब्रह्म कर दिया। ब्रह्म का वहाँ ब्रह्म-निर्वास वहाँ। वहाँ से आली है इसकी पुत्र।”

ब्रह्मपुत्र अपनी बगल में उठकर कहता है :

“मने से बैठो, रतन ! अब कोई गाहक नहीं आयेगा। हों तो बस बस रही थी धर्मनन्दी की लड़की आखी की।”

रतन अपनी ही हँसता है :

“धनसिंह भाह, तुम्हें इतनी क्या किन्ता है आखी की ! धर्मनन्दी तो परकमार हैं ब रहा है, वह उसे आज नहीं तो कल मिला ही जायगा।”

धनसिंह बल्ल की तरह सिर ठठाकर कहता है :

“वह झूठ है। परकमार तो कलकल भगत को जादिय अपनी कुन्ताप के लिए। उनके कंठे मुबीर का तो पिछले साल विवाह हो गया, अब रह गई कुन्ताप। बड़ी सुपड़ लड़की है—कितने घर जावगी उसके घर चोंद बड़ जावगा और तारे भी कमरने लगेंगे।”

अनुस जाहता है कि वहाँ से उठकर बस दे। इसी विचार से वह बार-बार बेकान्त की ओर देखता है। वह सोचता है कि बेकान्त को भी इन बातों में रख नहीं आ रहा होगा। अब यह भी कोई बात हुई। कुन्ताप तो बड़ा साधारण नाम है। यह कौन नहीं जानता कि सून चों को कहते हैं और ताप तो ताप ही है। बात को सीनकर कहीं-से-कहीं ले जाते हैं। बात तो यह हो रही थी कि विसंगानुस की मलाई फि में है, तान आकर दूरी आखी और कुन्ताप पर। गाँव में और मो तो लड़कियों हैं, आखी और कुन्ताप में ही ऐसी कोकनी बिनाय बात है।

धनसिंह और रतन इस बात पर अलमल जाते हैं कि आखी और कुन्ताप में सुन्दरता के कपूर फि को अधिक दिने खर्ये। अनुस फिर बेकान्त के मुक की ओर देखता है कि वह इन्हीं दोन कयी नहीं देता ! किपर-से किपर बात को सीनका आ रहा है। कयी कहते हैं—आखी तो लड़के से भी अधिक सेवा कर रही है अपने बापू की, कयी कहते हैं—अब आखी का विवाह हो जायगा तो धर्मनन्दी क्या करेगा ! धर्मनन्दी अकेला रह जावगा और वह उदास रहा होगा ! पर यह बीन नहीं समझ सकता कि लड़की तो पराया मन है। कमार इसलिय आता है कि समुर अपना धूय बुध दे, पर कमार कन्या भी क्या इतना सहज है ! उन की भी तो परीक्षा हो

कटी है और यदि ठग की गॉठ खाती हो, तो बर मिलती है बुलहर ! यह ठग बल्लना होमा, बदलकर बिल्लना होगा ।

देवघन्त कहता है :

“कित साध में हुए गये, अमुन ! रत्न की बात भी सुनी—बुलहार अपने कपड़े पर बहुत अभ्युक्त करवा चुकती है ।”

“मैंने वो बात कही वह सुनी-सुनाइ बस नहीं ।” रत्न हवा में हाथ उछालकर कहता है “यह तो पुण्या पति है । जो लड़की करवा चुकता नहीं कान्ती उनके लिए बर नहीं मिलता ।”

“कोई शर्त तो लड़के के लिए भी हानी चाहिए ।” बनसिंह पिन्ने बस ठमेने के अन्तर्गत में कहता है, “लड़के के लिए तो एक ही शर्त है कि वह मनुष्य बने और मनुष्य को अपने बाल में पैना कर ही दम ले ।”

“बैसे तो मनुष्य नापक्य होवेगा भी हुआ ।” बल्लुल बस का बस मोड़ने का बल करता है, “आज ही सोचिये । अरपबी को कैताने के लिए उस बैठा बाल कोइ क्या हुन लकेगा ? बल की बात है—मैं रिक्तामर स आ रहा था, पल्ले में नापक्य होवेगा भिन्न गया । वह पूछने लगा—‘तुम देवघन्त के साथ क्यों बूझते रहते हो ?’ मैंने कहा—‘मैं देवघन्त के साथ नहीं बूझता, देवघन्त ही मेरे साथ बूझा है और इतनी दुपार ॥ क्या है ?’ वह अन्तर्गत मुँह लेकर रह गया ।”

“बात तो ठीक कही तुम ने ।” बनसिंह हाथ उछालकर कहता है “कोई पिन्ने के साथ बूझता है तो नापक्य होवेगा का क्या लेता है ?”

रत्न एक हाथ की बँगली दूसरे हाथ की हथेली पर उल्टा ठेक करने के अन्तर्गत में बल्लते हुए कहता है, “सुनिश्च यह पूछ मकती है । उस को यह पूछने से कोइ नहीं रोक सकता ।”

“एक मकते हैं ।” देवघन्त बाय में चाकर करता है, “लोप भिन्न बर इच्छा ही कर्ये तो वे अक्षय एक सकते हैं । यह बात मैंने गुरुदत्तो से भी कही थी, वह एक बार बल्लना न जाने के बात कोहिना में मेरी उस से भेद हुए थी । फिर वह गुरुदत्तो न स्मरणना का भ्रष्टा ठगवा, तो उस

ने अपने लोगों को वही आवाज दी कि वे मिलकर इकट्ठे हो जायें ।”

“वह तो कठिन बात है ।” अतुल बागडोर सँभासता है, “रतन कह सकता है कि लोग कभी मिलकर इकट्ठे न होंगे, पर मैं कहता हूँ कि जब तक लोग इकट्ठे नहीं होते, कोई तो ऐसा मौका लास निश्चय ही मुहब्बतों के समान अन्वेषण से ढूँढ़ ले ।”

“वही तो मैं भी कहता हूँ ।” बेकअन्त खोर देता है ।

“तो तुम दोनों एक ही बात कह रहे हो !” रतन हँसता है ।

“पुलिस दारोगा पर तो वह बात ठीक खटखटी है ।” बेकअन्त अपना हाथ अतुल के कंधे पर रखकर कहता है, “मेरा केस खराब बनेगा तो मुझे सिर के बालों से पकड़कर बीच डगर में लट्ठी कर लेगा । मैं तो समझता हूँ कि नारायण दारोगा ने मारत माता को सिर के बालों से पकड़कर बीच डगर में लट्ठी कर रखा है ।”

“तुम्हारा क्या विचार है, अतुल ?” रतन गम्भीर होकर पूछता है ।

“मारत माता की बात मैं नहीं जानता ।” अतुल कहता है, “मैं तो दिवौंगमुल की बात कहता हूँ । दिवौंगमुल का अपमान करने से मैं नारायण दारोगा का हाथ अवश्य रोक सकता हूँ, चाहे वह मेरे हथकड़ी ही क्यों न लगावे ।”

कनसिंह हँसकर कहता है, “तुम तो गोंद-बूड़ा के छि टहरे, अतुल ! जैसे नारायण दारोगा चाहे तो कुम्ह के भी हथकड़ी पहनावे । आज तो कुम्ह ने कमाल कर दिया । चाहे का मौतम ही ऐसा है । हाँ, तो आज एक-एक गिलास गरम-गरम चाय !”

## तीन



धर्मानन्दी ही उस से अधिक हाट-बाजार की बात बोहता है। कुछ और शुद्ध के बीच का पड़ाव है इहस्पितहाट। हाट-बाजार के लिए यही दिन क्यों चुना गया, धर्मानन्दी के पास इसका कोई उत्तर नहीं। हाट-बाजार वाले दिन उस से अधिक मच्छसियों बही देखता है। शिखागर की ओर से आने वाली

तइक वहाँ ब्रह्मपुत्र के सम्मान्यार कूम्ही है, वहाँ मोह के समीप कूम्ही बनाह है। वहाँ से हाट-बाजार इत्ती बगइ लगता है, बीस वर्ष पूर्व अक्षय अक्षी आगे लगता होगा। वह बनाह तो अब ब्रह्मपुत्र में पसी गई। वहाँ तो अब धर्मानन्दी मच्छसियों पकड़ता है। वहाँ बैठकर वो वह मच्छसियों देखता है। धर्मानन्दी के साथ बैठती है आखी।

आखी बान्सी है कि एतन और बनमिह में पुण्या सम्मन्धैता है। वहाँ धर्मानन्दी हाट-बाजार के गिन मच्छसियों बेचने बैठता है उल्लेख सम्मने एतन और बनमिह दुखन सबाकर बैठते हैं। आखी तो गिनकर बता सक्ती है कि बनमिह ने कितने गिलास चाय बेची या एतन ने कितने आदामियों की हकमत बनाह। यह यह भी बान्सी है कि एतन और बनमिह पाई तो गिनकर भी यह नहीं बता सक्ते कि धर्मानन्दी ने कितनी मच्छसियों बेची।

आखी ऐसे उठती जाती है। धर्मानन्दी अपने हाथ से मच्छसियों तोलता है। लोने की तरह तो तोलने में रहा, मुझता पलड़ा रक्ता है। गाइक मुश रहे, बादे एक आय हदोंक अधिक ही कभी बाय मच्छसी।

साब-साथ मच्छली की प्रशंसा भी करता जाता है धमनन्दी। कभी-कभी कल्याण मगल की बात खेड़ बेता है : 'मैंने पूछा—मगल भी, जब लोग मिरामिष खाने लयेंगे, तो मच्छलियाँ कहाँ जाएँगी ? वह बोले—ब्रह्मपुत्र में ही रहेंगी मच्छलियाँ और कहाँ जाएँगी ? ' कभी-कभी धमनन्दी हँसकर मनसिंह और एतन की बात सुनाने लगता है कि किस तरह दोनों न एक दूसरे की प्रशंसा करने की शपथ ले रहीं हैं ।

नीलमणि को यह बात प्यारी है कि अगला हाट-बाजार के दिन भी बैकुण्ठ का पीछा न छोड़े। बैकुण्ठ तो कलकत्ता से पहुँचकर आया है। आब नहीं तो कल, उसे शिखागर में कोई नौकरी मिल जायगी। साँगी को इच्छा करने की बात यह कहता है अकरब, पर यह काम वह नहीं करेगा। बापू उसे बैकुण्ठ को तरक्का भर गया। अब घर में बुद्धियाँ मौ हैं। मौ का और अपना पैठ पालना तो आवश्यक है। वह बार वह बैकुण्ठ को सलाह दे चुका है कि वह हाट-बाजार के दिन छोटी-मोटी दुकान ही लगा दिया करे, पर उनकी समझ में यह बात नहीं आती।

हाट बाजार की रौक तो येन्ही ही बन्ती है। मोर से पहले ही दूर दूर की नौकाएँ, रिखींगसुख के नाव-भाट पर आ लगती हैं। सब अपनी अपनी किन्ही की पीले लाते हैं। बत्तनों से लो। छुमियों भी हाकिर हैं। मक्खनियों और कछुए भी पड़े हैं। कबूतर ले लो। सुअर ले लो। अरखों से मरी दूर दोधरियों भी झट्टी-झट्टी ग्लाती हो रही हैं। मृगा के बान भी बिक रहे हैं। अरखी की बानों का सौदा हो रहा है। बाँठ की नरम लपखियों से बने घेलों में सुअर बन्द हैं। बड़े बड़े मुरखों में से सुअर नहर आ रहे हैं। उनके आगे और पीछे के पैर कम्पक बाँव दिये गये हैं। घोंने बन्द छिये पड़े हैं घेलों के अन्दर से छोटे बड़े सुअर। छोटे घेलों में सुअरियों के दूध-पीते बन्धे बन्द हैं। उनके बिरोध गाहक आत हैं। कमी-कमी सुअर की आवाज एक भीतर की तरफ मुनार्द ये जाती है। कमी दोधरी में बन्द कबूतरों और बत्तनों की आवाज हाट बाजार के बातावरण में गुँब उठती है।

नीलमणि देवदत्त को रोकर कहता है, “कुछ तो गुम भी देव ही सकते हो हाथ-बाजार के दिन। एक दिन में पूरे सप्ताह का लूट निकल सकता है। मैं तो कहता हूँ कि अगुश भी तुम्हारे साथ मिलाकर कुछ-न कुछ बचे और लाम उगाये।”

“अम्माह के लिए तो चाटी आयु पड़ी है, बापू!” अगुल मर चुकी लेता है।

तेलों मित्र भीड़ में गुम हो जाते हैं।

तो कलकत्ता केम्ने का कुम्हार मिलाकुल इएना नहीं!” देवदत्त पलते-बलते पूछता है।

किरकुल नहीं।” अगुल मुस्कुराता है।

“कलकत्ता में तुम्हें नीरद से मिलाऊँगा।”

“कौन नीरद?”

“उसका बापू विष्णु बला गया कलकत्ता छोड़कर, वहाँ वह ग्वापार करता है।”

“और नीरद क्या करता है?”

“उसके पैर में पत्थर है। दुनिया केम्ने का शौक है। कहता है कि वह जब अगह काप्पा, दुनिया केसेगा और फिर जैसे मधु-मस्तिष्कों बना बनती हैं गय-किरगे फूली में रस कुम्हार, वेसे ही वह भी पेसी पेची सिन आपसा कि रहती दुनिया तक उसका नाम अजर-अमर रहेगा।”

“तो उसे यही बुझा लो ना।”

“मैं कहता हूँ कि जब तक गुम एक बार कलकत्ता नहीं हो जाते, गुम मनम ही नहीं सकते कि माछा मत्ता किने कहते हैं। जब तक पोंप्स के मरक बने रहोगे? देने हाथ बाजार के दिन आसन्न के गाँवों के पहरे देमकर गुम निर्गोपमुक्त के लागों को मजो मौजि लमक सके हो, बैन ही एक बार बाहर जाकर गुम अजन को अच्युती तरह मनम सक्ता। और फिर य तो गुम स्वयं हा कह चुके हो कि जब तक मर लोम निरुद्ध रहक नहीं हो जाते तब तक किसी एक आत्मी को ही मरु म्हादकर



करने पहुँचे सच्चा और स्वतन्त्रता की आवाज पर दृष्टे रहने के लिए । फिर तैयार हो जाओ । कलकत्ता दिलाने के लिए तुम्हें तुम्ह से अपेक्षा पर प्रदर्शन वृत्त नहीं मिलेगा ।”

“एक बात ब्रह्म, कुछ तो नहीं मानोगे !”

“कहो, कहो ।”

“एक दिन मगत भी भित्री पोथी का प्रमाण देकर कह रहे थे कि कलकत्ता देने वाला मेरा हो ता मुझे बालों का धर्म हो जाता है कि सुपचाप मेरा भी महात्मा का स्वागत सुनते हैं । तुम मेरी बात समझना ही नहीं चाहते, बेकान्त ! तुम्हारे दिमाग पर कलकत्ता का सकार है ।”

“कलकत्ता ने आरम्भ किने जाने वाले कार्य से भी दिवसामुख को ला पहुँचेगा ।”

“और दिवसामुख से ही कार्य आरम्भ करने से क्या दिवसामुख हानि पहुँचेगी ? तैर छोड़ो । पल्लो सच मगत भी को देखें कि कि प्रदर्शन परादरों के रहे हैं ।”

“भारत की का तो कहना है । मैं एक समझता हूँ । याद है कलकत्ता उन दिन कलकत्ता की लम्बी आरती पर तन ताड़ता रहा, फिर वह मगत की की लम्बी कलकत्ता की गाथा से बैठा । क्या पोतर के मेरा इस प्रकार बातें करते हैं । जब सामने कोर बड़ी बात न हो तो आदमी छोड़ बात करने पर मजबूर होता है । कलकत्ता में ऐसे-ऐसे होना हैं, बह दिवसामुखियों को मुझे की जाता नहीं । ब्रह्मों की को मुझी आका है कि अपने कुर्ती को भी ले जायें । इसी प्रकार का आपमान-मरा व्यवहार देखना ही ता मीरद का बापू सिगत पला गया । उम ने सीगन्ध ली कि जब तब देश स्वतन्त्र नहीं हो जाता, वह लौटकर देश में नहीं आयेगा ।”

एक बन्दर, दो बन्दर, तीन बन्दर । आमुल और बेकान्त आरम्भ पननिह की बुद्धन पर आकर धाव पीने लगत हैं । नामने धर्मालम्बी की लम्बी आरती पैने गिन-गिनकर राखी जाती है कभी-कभी मगर मरकर

ने लक्ष्मी है कि बिजने गारक पाय पी रह हैं। एक गिलास, दो  
तास, तीन गिलास—लक्ष्मी को शायद यह हिलास भी रक्ता पड़ता है।

यस पास ठं फड़ा है, "पीकस दे पीकस।"

"तो निकालो लक्ष्मी बाल।" कसिह हँसा है।

"तुम्हारी चाल में कोरे मरा नहीं।" यस खेर खेर करता है,  
'तुम लाल लक्ष्मी पास की प्रस्ता करते रहो। चाल में कोरे पाने की  
सीक है।"

'तो शुरू कर दिया लक्ष्मी का म्रम।" कसिह पास का गिलास यस  
के हाथ में धरे हुए करता है, "शुरू कर ही हकमत। तुम शुरू कर लगे  
हो। तुम से तो हस्त हकमत बनाने में भी बाधे का मौका है।"

लौक उतर रही है। हाथ-बाहर का रोक पट रही है। यस को की  
रानी हुई कसिहों छेदने के लिए हकमत बनी का।

"रहे जी" कई दा हाथ, दा दोनों कई।" देहकत कसुन क हाथ में  
करता है, 'मेरी मला। मर के कसिह में लक्ष्मी की न हँसा। मर  
का हाथ लगे, बरी कुपनी कसिह—मेरा क्या हाथ कसिह दा तुम मर  
के कसिहों से पकड़कर बच कसिह में लगी कर लेता। हँ, दा लक्ष्मी लक्ष्मी  
को इस कसिह में बचता हला।"

कसुन तुम रहता है। हकमत कसिहों का लक्ष्मी लक्ष्मी का की  
कोर न रही है।

करने पढ़ेंगे सच्चाई और स्वतन्त्रता की आवाज पा रहे रहने के लिए । तो फिर तैयार हो जाओ । कलकत्ता टिकाने के लिए तुम्हें मुझ से अच्छा पत्र प्रसारण वृत्त नहीं मिलेगा ।”

“एक बात कहूँ, बुध तो नहीं मानोगे ?”

“कहो, कहो ।”

“एक दिन भगत भी किसी पोषी का प्रमाण देकर कह रहे थे कि जब म्याक्सवेल देने वाला मेक हो तो सुनने वालों का धर्म हो जाता है कि वे बुधवाप मेक की महारत का म्याक्सवेल सुनते हैं । तुम मेरी बात तो समझना ही नहीं चाहते, देवदत्त ! तुम्हारे दिमाग पर कलकत्ता कहीं सवार है ।”

“कलकत्ता से आरम्भ किये जाने वाले कार्य से मी दिसॉगमुल का लाभ पहुँचेगा ।”

“और दिसॉगमुल से ही कार्य आरम्भ करने से क्या दिसॉगमुल को हानि पहुँचेगी ! लैर छोड़ो । असो जब भगत भी को देखें कि किस प्रकार बदमाशों नेव रहे हैं ।”

“भगत भी का तो बहाना है । मैं लख समझता हूँ । बात है फर्निह उस दिन कमलम्दी की लड़की आखी पर लाल लोड़ता रहा, फिर वह भगत भी की लखी मूलाप की गाथा ले बैठा । कम पोस्तर के मेक इसी प्रकार चले करते हैं । जब लम्ने कोई बड़ी बात न हो तो आदमी छोटी बात करने पर मचलू होता है । कलकत्ता में ऐसे-ऐसे होटल हैं, वहाँ हिन्दुस्तानियों को भुजन की आवाज नहीं । अंग्रेजों का मुली आवाज है कि वे अपने कुर्तों को भी ले जाएँ । इसी प्रकार का अपमान-भय व्यवहार देखकर ही तो भीरद का शायु तिन्तल पला गया । उस न सौमन्य लख भी कि जब ठक बेरा स्वतन्त्र नहीं हो जाता, वह लौटकर बेरा में नहीं आयेगा ।”

एक बसकर, दो बसकर, तीन बसकर । अटुल और देवदत्त आन्ध्र फर्निह की बुझल पर आकर शाय पीने लगते हैं । लम्ने कमलम्दी की लड़की आखी पीते गिर गिरकर रन्गी जाती है; कमी-कमी बस मरकर

देखने लगती है कि कितने गाइक साथ पी रहे हैं। एक गिलास, गिलास, तीन गिलास—आखिरी को खाकर यह हिसाब भी रखना पड़ता है।  
एक पास से कहता है “पीतल है पीतल।”  
“तो मित्रों मक्खली बाल !” बनसिंह हँसता है।  
“दुम्हायी साथ में कोई मशा यहीं !” एक जोर देकर कहता है

“दुम साल अपनी साथ की प्रशंसा करते रहो। साथ ही कोई पीने की चीज है।”

“तो शुरू कर दिया शत्रु का मारा !” बनसिंह साथ का गिलास एक के हाथ में देते हुए कहता है, “शुरू कर दी हवास्त। तुम बहुत बड़ लगाते हो। तुम से तो मुक्त हवास्त बनवाने में भी बाने का सौदा है।”  
तौल उठर रही है। हल-बाजार की रौलक बट रही है। मारा की की बनी हुए बराहरी समेटने के लिए बूझाए पत्नी आह।

“इसे बौद बौ या ताप या होनी कई !” देखकर शत्रु के बाल में कहता है, “मेरी मनी। कम के बसकर मैं भूलकर भी न बँसना। मेरी बात बाद रलो, बही पुपली बहास्त—मेरा क्या पना बनेगा तो मुझे सिर के बालों से पकड़कर पीस सड़क में छोड़ी कर लेगा। हाँ, तो माया मारा को इत बपमान से बचाना होगा।”  
भरुल पुप रहता है। बूझाए बराहरी का बराहल उठाकर पर की मोर का रही है।

# चार



ब्रह्मपुत्र के किनारे मछलियों ने एक समा बुलाई। सैसी मछलियों भी आई और बड़ी मछलियों भी। समा में बहुत शोर था। रोऊ, बरछी, सोल, काबई, और गोरोह बैठी बगुर मछलियों से लेकर दोरीबोला बैनी एकजम मूर्ख मछलियों भी एक-एक करके समा में आ बैठी।

सब ने एकमत होकर गंडी बुनिया गोरोह को समा की तुलिया बुना। समा का काम चलाने का कार्य नदरत बंगेली को सौंपा गया। बंगेली ने बीतल से प्रार्थना की कि यह समा के सम्मुख अपने विचार रख।

बीतल ने हाथ खोड़कर सब को प्रणाम किया और अपना मारवा प्रारम्भ किया—'बहनो और माइयो, हमारे शत्रु तो बहुत हैं, पर उन में मनुष्य नाम का प्राणी ही सब से दुष्ट है। हमें पकड़ने के लिए उस ने अनेक प्रकार के जाल बना रखे हैं। लकड़ी, लौंगी और चुकुरा जैसे बड़े बड़े जाल तो वह लगाया ही है, साथ ही पोम्पों में बांधेर, पलाह, बालनी और पचा जैसे शेरकी की भोली के जालों में भी वह हमें पकड़ा रहता है। हमें पकड़कर मरता है मनुष्य। कभी कभी तो हमें मरता है तो कभी आय में भूनकर ला जाता है। यह सब उपाय मनुष्य ही बनता है और छोड़ नहीं। हमें अपने बचाव का उपाय सोचना चाहिए।'

समा में आरुहु मछलियों ने गुरा होकर बीतल की सब बातें। बहुत शोर हुआ। सभी की बुनिया गंडी बुनिया गोरोह और समा का काम

जलाने वाली नटकर प्रयोगी ने बड़ी मुश्किल से शोर बन्द करवा और पीतल से कहा गया कि वह बहरी-बहरी अपना माथवा समाप्त करे। हाँ, तो पीतल ने कहना आरम्भ किया— मनुष्य भी कभी बहरे रहे होंगे।

एक साथ कई बहरे सुनन्द हुए।

एक ने कहा, “बहरी तो अच्छी है।”

“पर कहानी है मूठी।” दूसरे ने कहा, “मला देखा भी हो सकता है कभी।”

धर्मावन्ती ने गम्भीर होकर कहा :

“अगुल पर क्याथा मयत क प्रभाव पड़ गया। वह सब को मस्त बनावा चाहता है। सब लोग मयत कैसे बन सकते हैं ?”

“पूरी कहानी तो सुन लो।” अगुल मुस्कुराया।

“सुनाओ, सुनाओ।” धर्मावन्ती ने लौटकर कहा।

‘हाँ तो जब पीतल ने अपने माथवा में कहा कि मनुष्य भी कभी बहरे रहे होंगे तो मनुषियों की समा में बहुत शोर हुआ। जब शोर समा तो पीतल ने बताया— मनुष्य को तो संसार में सब की सेवा के लिए भेजा गया था। इसीलिए तो वह गाय, बैल, बैल, बकरी, भेड़ा, हाथी—सभी की सेवा करता है उन्हें पालता है, खाने को देता है, गोबर और छीद उटता है। बकरी की मँगनी तक साफ करता है। पर जब वह हमें पकड़ता है, तो हमें पालने की बख्श लाता है। सब पशुओं में बच्चा भों के रूप पर बीठा है। आप ने देखा होगा कि मनुष्य गाय का रूप पीता है। इस हिसाब से मनुष्य बहरी ही तो हुआ। बुद्धि में मनुष्य गाय से बढ़कर नहीं हो सकता। इसलिए—”

फिर एक साथ बहरे सुनन्द हुए। एक ने कहा, “यह बिल्कुल मनपहन्त कहानी है।”

दूसरे ने कहा, “कहानियों तो मनपहन्त ही होती हैं। जब पूरी कहानी कहीं न सुन ली आप ?”

अगुल ने खोर देकर कहा

“इस में एक बात भी सूनी नहीं है। वह कहानी उतनी ही सची है जितनी सची बात है ब्रह्मपुत्र का दिर्गममुक्त के पास से बहना। तुम इसे खर नहीं मानते, न माना।”

“सुनो, सुनो।” बर्माबन्दी ने पुनरावृत्ति की।

“हाँ, तो जब पीतल ने बताया कि बुद्धि में मनुष्य गाय से बढ़कर नहीं हो सकता, गाँगा ने मूढ़ उठकर कहा—‘मैं चाहूँ तो मनुष्य को अपनी उगलियों पर सजा सकती हूँ।’ सिंगी ने यह सुझाव रखा कि बाबू गेदगोदी को बुलाया जाय जो न जाने किस बात पर क्रुद्ध होकर समा में नहीं आरंभ थी। इस बात पर तो समा की मुत्तिया सची बुद्धिवा गोरोदी को भी सहमत होना पड़ा कि मनुष्य ने छुटकारा पाने का उपाय गेदगोदी ही बता सकती है। यह बात तो छोटी-बड़ी सभी मनुष्यों को सुन चुकी थी कि जब तिब्बत और अरुम में पहली बार कुछ हुआ था तो एक अरुम अस्त्री कपड़े-सिक्की योद्धाओं में से एक अरुम योद्धाओं को बाबू गेदगोदी अकेली ही लिगत गई थी। हाँ, तो बड़ी मुश्किल से बाबू गेदगोदी को बुलाया गया। गेदगोदी बहुत लुग थी। वह कुछ कम बात भी तो न थी। पहले मुत्तिया की आँख से पंगोली को भेजा गया कि वह गेदगोदी को बुलाकर लाये, पर पंगोली ने गेदगोदी को कुछ इस प्रकार पुछा कि उस ने जाने से इन्कार कर दिया, फिर जब पीतल को भेजा गया तो उस ने बाबू गेदगोदी को भी कबलमती करके लुग कर दिया। गेदगोदी अभी समा में आरंभ ही थी और मुत्तिया ने अभी उस से कुछ करने के लिए प्रार्थना की ही थी कि पीतल का पैर फूलकर फुप्पा होठे-होठे फट गया। पैर फटने की आवाज से छोटी-बड़ी मनुष्यों टर गईं। उन्होंने समझा कि न जाने क्या हो गया और मनुष्य भी बाल उठाये जा रहा होगा ब्रह्मपुत्र की ओर। सब मनुष्यों बेम्बने-बेम्बने पानी में डुब हो गईं।”

एक लाभ कई कहकहे जुलान हुए। एक ने कहा, “तुम भरती पर उगे थे या अम्बर तो उतरकर आ रहे हो, अतुल।”

दूत ने कहा, “अब पलोगे भी या चारों ही करते रहोगे।”

धर्मनन्दी हैसकर बोला, "तो ठठाओ बाल, अब चलना चाहिए।" मछलियों ठठाने से चले आ रहे थे। बाताबरख में मछलियों की गाय रही हुए थी। ब्रह्मपुत्र की ओर से आने वाली हवा उन्हें थपथिपों से छोटी थी।

धर्मनन्दी ने चलाते-चलाते कहा :

"ब्रह्म, हम तुम्हारी बात मान लें तो हमारा विनाश ही न हो जाय। फिर हम क्यों क्या ? हमारे पास क्या कहें हैं ? पुरुषार्थों से यही हमारा क्या है। मरदान ने हमें इसीलिए बनाया है। हमारी ऐसी इसी से बँध ही है।"

एक नवयुवक ने चुपकी सी

"ब्रह्म, हम ने धानियों बहुत अच्छी अच्छी बाँध कर रखी हैं। हर ऐसी आँखा करो। हम मछलियों पकड़ते-पकड़ते बच जाते हैं, हम और धान की कुता पिया करो।"

ब्रह्म ने गम्भीर होकर कहा :

"न मानो मेरी बात। तुम तो लो। तुम मछलियों पकड़ते हो, वह अच्छा नहीं करते। लो मछलियों ब्रह्मपुत्र ने पाली हैं। ब्रह्मा का वह मछल देव उन के साथ लहरों में ले जाता है और अपना भी बहता है। यही मछलियों ठठकी लप-कुछ हैं। तुम उन्हें पकड़कर बाजार में बेच सकते हो। तुम उन्हें खाते हो। इसी से तो ब्रह्मा का पुत्र तुम से भिदा रहता है। बीच में आकर वह हमारी ऐसी नष्ट कर डालता है, हमारे घरों को बहा ले जाता है, फिर भी तुम नहीं मानते। तुम ब्रह्मपुत्र की भाव नमस्ते ही नहीं। वह बाव और बरानी ही तो ब्रह्मपुत्र की भाव है।"

ब्रह्मपुत्र पीछे रह गया था। ब्रह्म की बात भी बहुत पीछे छूट गई थी। प्रत्येक मछुप की ध्वनियाँ में बूझते से ठठता हुआ धुआँ उभर रहा था। बूझते पर सुधी हुए परवासी का चेहरा ही इस समय हर किसी के लिए लप से बड़ा आकाश था। धर्मनन्दी की परवासी तो पक्षोंक सिवार गई



अट्टल, वहीं से वह उटती बबली और मक्ति-रस की वह झोंक । माइ बाइ, यह भी क्या समाया है ।”

ठीसरी आवाज आई, “क्या करे अट्टल बेबाब !”

अट्टल ने कुछ कहने का मल किया, पर एक साथ बहुत से आदमियों के हँसने का आवाज बातावरस में भुलकर रह गई ।

## पाँच



निर्मोसुख की पाँच बस्तियाँ थी—आलीसीगा की भीरी बस्ती, आलीसीगा की सुखसमान बस्ती, बलमा, बिलासिया और डेलगाँव। कुछ लोग आलीसीगा को एक ही बस्ती गिनते थे। घमान्नी का घर निर्मोस नदी के किनारे बलमा में था। अमूल अदिर आलीसीगा की सुखसमान बस्ती के इधर वाले किनारे

पर रहता था, वहाँ से बनसिंह और एहन की दुकानें बहुत दूर न थीं। मोपी बस्ती और सुखसमान बस्ती के बीच नीलमखि और बज्ज्याण मात के घर आम्ने-ताम्ने थे। बीच से सड़क गुजरती थी, जो ब्रह्मपुत्र के समानान्तर बाहर आते से ब्रह्मपुत्र की ओर मुड़कर स्पीमर-बास तक जाती जाती थी।

ब्रह्मपुत्र गाँव के उत्तर में था। नक्षिण में डेलगाँव से आते सड़क सिध समर की ओर जाती यर्र की ओर इस सड़क के किनारे दोनों ओर मोड़े मोड़े अन्तर पर घर गाँव आबाद थे। पूरब में निर्मोस नदी के छत पार ब्रह्मपुत्र के समानान्तर बिलासिया बस्ती थी, वहाँ अधिकांश नेपाली बसते रहते थे। पश्चिम की ओर था मिलीशारी गाँव, वहाँ मोपी लोगों की सख्या अधिक थी।

निर्मोस नदी के छत पार टीक बलमा गाँव के ताम्ने बलमा मील थी, जिस 'बलमा मिला' कहते थे। बलमा मिला और बिलासिया के बीच थी अकुली मिला। इस मील का पैदा बलमा से भी कहा था। दोनों मीलों के पश्चिमिक पक्ष बंगल था। दोनों मीलों से मधुप मधुलियाँ पकड़त थ।

बिचर बॉस का बहुत बड़ा झुंज था। बॉस-कुंज के पीछे या पोखर, जिन में बचलें बैठी रहती थीं। कुंजते सूख के प्रकाश में बैठी हुई बचलें और भी मली प्रतीत होती थीं।

सल-सल गाते बैठी थीं गोहाली में; पॉच छोड़ी बैल थे। नीलमणि के पास बारह पुष माटी थी। इतना पन्नार था कि सोना उगलता था। फिर इतना बड़ा बागीचा था, जिस में एक ओर ताम्बूल के पेड़ों की पॉच थी, जिन पर पान की केलें बड़ी हुई थीं, दूसरी ओर केलें के पेड़ खले गये थे। आम और कटहल के पेड़ों की ठी अलग अलग पॉचें भी बहुत गुची हुई थीं।

मछुली और नाबालीयों से बात करने का नीलमणि को बहुत भाव था। जब भी वह सान्नी टेकता हुआ नाब-बाद की ओर जाने लगता, पीछे से ठठकी परबाली सोनपाही पुकारकर कहती, “ठठार डंगोरी और पल पड़े नाब-बाद की ओर। वहाँ क्या रखा है तुम्हारे लिए।” नीलमणि भी कब रुकने बांझा था। बलते-बलते सोचता—अगुल को तो कुछ नहीं करती, पाहे देवचन्द के साथ बूमता रहे, पाहे घमान्नी की मछुलियों की बात खँपता फिर। जैसे तो वह मछुली को हाथ नहीं लगाता, फिर भी घमान्नी के पास क्या करने जाता है। जैसे तो अगुल बॉस के डरडे-बिठा केन्द्र है। बीम बर्प का हो गया। दस बर्प का तो है इमाध मल्ला, बां स्कूत में पढ़ने जाता है। छः बर्प की है इमारी रेणु, जो अब तक तोहसी बलें करती है। घर में किसी कम्पु की कमी नहीं—न दूध की, न पूर की; फिर भी सोनपाही का रंग पीला क्यों पड़ता जा रहा है। माँ ने भी क्या सोचकर नाम रखा होगा—सोनपाही अर्थात् सोने का फूल, जैसे किसी न चन्दन का सेप गुन पर पात दिया हो। सुँह की कड़वी है। लाल मिर्च ही तो है। जैसे ही कष्ट करती है। उसे इस घर में आये बाहर लाल हो गये, पर वह अब तक मुझे नहीं समझ मची। कहती है—ठठार डंगोरी और पल पड़े नाब-बाद की ओर। वहाँ क्या रखा है तुम्हारे लिए।

नाब बाद की ओर जाते हुए पहले पानी पार पड़ता था। पनहाजिनी

भी बुझें नीलमणि को बचानी नहीं। एक-दूसरी पर खड़े उठाने  
 के उन के स्वभाव से नीलमणि को क्या सेना-बना था। नाव-घाट की ओर  
 बढ़ते हुए वह एक क्षण के लिए भी पानी-घाट पर नहीं रुकता था।  
 फनहारियों की आपस की झेड़झड़ तो उन का निजी मामला था। नाव-घाट  
 पर पहुँचकर नीलमणि को याद आता कि यहाँ वह पहले-पहल अपने पिता  
 के साथ आया था। तब भी ब्रह्मपुत्र इसी प्रकार बहता था। ब्रह्मपुत्र के  
 किनारे बगे पैर चलने में उस समय बिना आनन्द मिलता था। वह तो  
 चालीस सय पूर की बात थी, जब वह मुश्किल से पॉन्-बूझा बप का रहा  
 होगा। उसका ही बिल्ली अब उसकी बेनी ऐशु थी। उस ने अपने पिता से  
 कहा था कि उस के लिए एक नाव बनवा दे। पिता ने बपन तो दे दिया था,  
 पर इसे पूरा नहीं किया था। यह तो चालीस सय पूर की बात थी, फिर भी  
 उसको याद तो ताजा थी—पूरा की तरह ताजा। याद का पूरा तो सिला  
 रहता है हमेशा। इसकी कुल्लु रिपर रहती है। केला-केला में नीलमणि ने  
 मसरी की नाव बना ली थी। इस नाव को उस ने घर के पोखर में चलाकर  
 देखने की लगी थी। कभी कुल्लुवर आ गया था—उसका पिता कुल्लुवर  
 को उन भिनी विर्गाकुल्लु का पॉन्-बूझा था। हाँ, तो गॉन्-बूझा कुल्लुवर  
 न हँसकर कहा था—केदा नीलमणि, तू इतना ही पयला रहेगा, तो तू  
 मेरे ललान एक दिन गॉन्-बूझा बैठे बनेगा। अरे बगले, कभी पानी में  
 मसरी की नाव भी चली है। हाँ तो बापू का कहना मानकर मैं अपनी  
 मसरी की नाव पोखर में नहीं डाली थी और उहाँने कठ की नाव बनवा दी  
 थी। उस घाट की नाव को एक दिन को बपना उठाकर ले गया। फिर  
 ईदने पर भी वह हाथ न लगा। ये बपन के दिन तो बहुत पीछे हुए  
 गये थे।

नाव घाट पर पहुँचकर नीलमणि देखता कि कोई नाव से उतर रहा  
 है, और वह रहा है। बीकन तो यात्रा है, वह लायता, मयम-यात्रा  
 हो चारों बल-यात्रा। नाव-घाट की यात्रा ही नीलमणि के बपन की तरह  
 से बनी याद थी। बपन की याद तो देर तक प्रिय लगती है, जैसे मनु

जिंदगी बॉस का बहुत बड़ा कुब था। बॉस-कुब के पीछे था पोस्टर, जिस में बतलें ठहरती रहती थी। जूते सूख के प्रकाश में ठहरती हुई बतलें और भी मस्ती प्रतीत होती थी।

छात्र-छात्र मार्गें बैठी थीं गोहाली में पॉप छोड़ी बैल थे। नीलमणि के पास बारह पुरा माटी थी। इतना पठार था कि सोना उगासता था। फिर इतना बड़ा बागीचा था, जिस में एक ओर ताम्बूल के पेड़ों की पंक्ति थी, जिस पर पान की केलें लगी हुई थीं, दूसरी ओर केले के पेड़ लगे गये थे। आम और कटहल के पेड़ों की दो अलग-अलग पंक्तियाँ भी बहुत लंबी हुई थीं।

मछुआरी और नाबालकों से बात करने का नीलमणि को बहुत प्यार था। वह भी वह लाठी टेकता हुआ नाब-बाट की ओर जाने लगता, पीछे से ठठकी भरवाली सोनपाही पुकारकर कहती, “ठठार डंगोरी और बल पड़े नाब-बाट की ओर ! वहाँ क्या रखा है तुम्हारे लिए ?” नीलमणि भी कब रुकने वाला था। पलटते-पलटते लांघता—अगुल को तो कुछ नहीं कहती, बाहे बेबअमर के साथ घूमता रहे, बाहे बमानन्दी की मछुआरी की बात सुँघता फिर ! जैसे तो वह मछुआरी को हाथ नहीं लगाता, फिर भी बमानन्दी के पास क्या करने जाता है ! जैसे तो अगुल बॉस के शयाने-बैठा सेटा है। नील बर्ष का हो गया। दस बर्ष का तो है हमारा मस्लना, बा स्कूल में पढ़ने जाता है। दस बर्ष की है हमारी शू, जो अब तक सोलनी बार्तें करती है। घर में किसी बलु की कमी नहीं—न दूध की, न घृत की फिर भी सोनपाही का रंग पीला कभी पड़ता था रहा है ! माँ ने भी क्या सोचकर नाम रखा होगा—सोनपाही अर्थात् सोन का फूल, जिस किसी ने चमदन का सेप मुझ पर पोत दिया हो। सुँह की कड़वी है। लाल मिर्च ही तो है। जैसे ही काट करती है। उसे इस घर में आये चारस साल हो गये, पर वह अब तक मुझे नहीं समझ सकी। कहती है—ठठार डंगोरी और बल पड़े नाब-बाट की ओर ! वहाँ क्या रखा है तुम्हारे लिए ?

नाब बाट की ओर जाते हुए पहले पानी पात्र पड़ता था। पनहाली

की बुझें नीलमणि को बन्धी लगती थीं। एक-दूसरी पर छींटे ठानने के उन के स्वभाव से नीलमणि को क्या सेना-देना था ? नाव-बाट की ओर कसे हुए वह एक क्षण के लिए भी पानी-बाट पर नहीं रुकता था। फलहारियों की आपस की झेड़झड़ तो उन का निजी मामला था। नाव-बाट पर पहुँचकर नीलमणि को याद आता कि वहाँ वह पहले-पहल अपने पिता के साथ आया था। तब भी ब्रह्मपुत्र इसी प्रकार बहता था। ब्रह्मपुत्र के किनारे बंगे पैर चलने में उस समय कितना आनन्द मिलता था। वह तो बाल्यक कप पूरा की बात थी, जब वह मुम्बई से पाँच-छह वर्ष का रहा होगा। उसका ही कितना अब ठकड़ी बेटी रेणु थी। उस ने अपने पिता से कहा था कि उस के लिए एक नाम बनवा दे। पिता ने बचन ठाँव दे दिया था, पर उसे पूरा नहीं किया था। वह तो बाल्यक कप पूरा की बात थी, फिर भी उसमें बाप तो दाया थी—पूछ की तरह दाया। बाप का पूछ तो कितना रहता है हमेशा। इसकी सुगन्ध स्थिर रहती है। लेल-लेल में नीलमणि ने माटी की नाव बना ली थी। इस नाव को उस ने घर के पोखर में पछाकर देखने की ठानी थी। कभी कुलवर आ गया था—उसका पिता कुलवर को उन दिनों ठिठौसमुख का गाँव-बूढ़ा था। हाँ, तो गाँव-बूढ़ा कुलवर न हँसकर क्या था—बेटा नीलमणि, तू इतना ही पगछा रहेगा, तो तू मेरे कमान एक दिन गाँव-बूढ़ा कैसे बनेगा ! आरे पगछे, कभी पानी में माटी को नाव भी चली है ! हाँ, तो बापू का कहना म्यानकर मैं अपनी माटी की नाव पोखर में नहीं डाली थी और उन्होंने बरत की नाव बनवा दी थी। उस काट की नाव को एक दिन को बन्धा टगाकर ले गया। फिर बूढ़े ने पर भी वह हाथ न लगाई 'बे बचपन के दिन तो बहुत पीछे दूर गये थे।

नाव बाट पर पहुँचकर नीलमणि देखता कि कोई नाव से उतर रहा है, ओर बाँध रहा है। बोकन तो आया है, वह मोक्ता, स्पल-यात्रा हो पादे बल-यात्रा। नाव-बाट की बात ही नीलमणि के बचपन की तब ने बड़ी याद थी। बचपन की नाव तो देर तक भिय लगती है, जैसे म्मु

बितना भी पुपना हो उठना ही मीठा होता है। जो नावरिया सीने में ब्रत नहीं कर सकता, उसे तो नाव चलाने का काम छोड़कर और और काम कर लेना चाहिए। नावरिया को तो बहुत शास्त्र स्वभाव का होना चाहिए। जो नावरिया नाव में बैठने वाली के साथ दुष्कृत करे, या बोरे की तरह दिनदिनाभे, या मूर्ख की तरह दाँत निभसे, उस के साथ ब्रत करना भी अपमान है। और किता से ब्रत करने की आवश्यकता ही क्या है ! बीता रहे अपना बादल नावरिया !

मन्हुए और नावरिया गाँव-बूढ़ा का बहुत सम्मान करते थे। उस के साथ हो बोले बोलने से जैसे और बहुतमूल्य वस्तु उन के हाथ आ जाती। एक-दो मन्हुवियों के लिए तो बाद मन्हुआ नीलमणि क मुँह न आता। बार भी नावरिया इसे अपना सौमन्य सम्मन्ता कि गाँव-बूढ़ा उस को नाव में बैठा है, पर यह तो सभी जानते थे कि नीलमणि तो बालक से हो पत्ते करने के लिए आता है।

बादल ने ही बचपन में नीलमणि की आठ की नाव चुपार की। उस को वह मात्री की नाव तो किसी बच्चे ने चुपाने की आवश्यकता अनुभव न की थी।

आज से बीस वर्ष पूर्व नीलमणि को एक सपना आता था। यह उन दिनों की बात थी, जब अजुल का जन्म हुआ था और वह केवल सात दिन का ही था। नीलमणि का पिता अमी बीकित था। अजुल के तिर पर हाथ फेरते हुए नीलमणि के पिता ने आशीर्वाद दिया था कि जैसे उसका देव उस के सामने गाँव-बूढ़ा बना, वैसे ही उस के बेटे के सामने उसका पोता भी गाँव-बूढ़ा बन। यह कहते-कहते बड़े कुलधर को धौलौ में धौलू आ गये थे, क्योंकि यह जानता था कि वह तो पन्नाल ने अमर का हाँ गया और वह उस समय तक तो अशानित जीवित न रह सके। बड़ी बात हुई। अजुल अमी सुरिकल से लव बप का रहा होगा, जब बूढ़ा कुलधर पैंसठ बप की आयु में त्रितोगमुल ने निरा हो गया था।

कुलधर गाँव बूढ़ा तो पला गया था। अब तो नीलमणि गाँव-बूढ़ा

मी सोच रहा था कि न मान कर बुलावा आ जाय और दिसांगमुख से विदा होना पड़े। कभी-कभी वह सोचता कि यह विचार तो अभी से नहीं आना चाहिए। जब बापू को बुलावा आया तो उन्होंने इस वर्ष के पोते को देखते-देखते ही झोंझें बन् की रीं। तो फिर मैं भी तो इतना मामूली हूँ कि जब बुलावा आये तो अतृप्त गँग-बूझ बन् बुका हो, बल्कि मेरे सामने मेरा पोता भी खड़ा हो।

बीस वर्ष पूर्व बेला हुआ सपना नीलमणि की स्मृति को सुदृशान्त लगता। वह सपना कितना विचित्र था। सपने में नीलमणि ने बेला था कि उस की माटी की नाव ब्रह्मपुत्र में चला निकली है। वह अपने बापू को आवाज दे रहा था कि नहे नावरिया की माटी की नाव पर वह भी आ बैठे। खेरे झोंझें कुलने पर उस ने बेला कि वह तो अपने बिस्तर पर खड़ा हुआ है और उसका बापू अपने सठ दिन के पोते के सिर पर हाथ फेर कर आशीर्वाद दे रहा है। वह अपना सपना बापू को बताये किना नहीं रह सकता था। जब उस ने बापू को बताया था कि सपने में उस की माटी की नाव चला निकली थी, तो बापू ने हँसकर कहा था, “आज तो मेरा पोता सठ दिन का हो गया, नीलमणि! अब तो अवश्य चलेगी हमारी नाव, अवश्य चलेगी ब्रह्मपुत्र में हमारी नाव! जिस घर में बेटे का जन्म होता है, उसको नाव तो करी नहीं सकती।” इस बात को तो बीस वर्ष हो गये।

बीस वर्ष पूर्व का समय नीलमणि की कल्पना में चूस गया, अब वह इसी बल-शक्त पर अतृप्त के जन्म की कुशी में नारियल चटाने आया था। एक मन्त्री बूब मी था उस ने ब्रह्मपुत्र की में किया था। नीलमणि जानता था कि उस के अपने जन्म पर भी तो बापू न इसी प्रकार ब्रह्मपुत्र में नारियल और दूध चान्हा होगा। दिसांगमुख का तो प्रत्येक बालक ब्रह्मपुत्र का करदाम था।

जानस नावरिया ने ही कल्पन में उस को अट की नाव छुपाने की, वह नहीं-गी निमीना नाव—यह विचार नीलमणि को छतने लगा। बचपन के दिन तो बहुत पोते रह गये थे। जानस कहीं मकर नहीं आ रहा



था। वह नाव लेकर उस पार गया था। नीलमणि की कल्पना में बागल का मंग बड़ ग शरीर भूम गया। वस्त्र के नाम पर बादल एक चोरी पहनता था—चौड़ी बलिष्ठ हड्डियों, तरबूज जैसा सिर, घोंस बड़ी बड़ी और चमकीली। बागल नायरिया को ब्रह्मपुत्र को ही अपनी स्त्री समझता था। उसका तो जल-मात नाव ही से बैठा रहता था, जैसे चर्मोन्मदी भ्रूण के दाल-मात का मछली-बागल से अटूट बांधा था।

सूर्यास्त से पहले ही बादल उस पार से नाव लेकर आ गया। एक एक करके सब सवारियों उतर गईं, तो वह दोनों बौहे पैशावर नीलमणि से लिपट गया।

“कहो गौब-बूड़ा जी, कैसे आना हुआ !”

“बागल ने मैं बैठे-बैठे भी तो दिल नहीं लगाया।” नीलमणि ने हँसने का प्रयत्न किया। “ब्रह्मपुत्र की माँ पीछे से लाख वोट करे, जैन मुनता है उसकी बात ? बचपन के मित्र कहाँ धरे हैं ? क्यों बादल, कभी तुम्हें भी बात आते हैं बचपन के दिन ?”

“बचपन में वह दोड़ा-दौड़ी तो न थी। अब तो नाव केटे-केटे ही मारी फुटानी निकल जाती है, बेकत !”

“यह तो अपना अपना धम्मा है बादल ! जो स्त्री करता है, उसे भी तो माटी के साथ माटी होना पड़ता है। यह और बात है कि अपने दिसोंगमुन की माटी तो पूरी सोना माटी है। धरे और क्या होती है सोना माटी, बादल ? जिस में सोना छो, वही सोना माटी है !”

“आप तो माम्बराल हैं, बेकत ! क्या आपका बापू गाँव बूड़ा था, या आप गाँव-बूड़ा हैं, क्या ब्रह्मपुत्र हमारा गाँव-बूड़ा—रुपर भी थी मैं, ठगर भी थी मैं ! पर हमारी जो थोड़ी-बहुत मान-प्रतिष्ठा है, वह तो रानी ब्रह्मपुत्र से है। जिस दिन आर-बार बार पूरे लगा हूँ, दाल-मात मिल जाता है। और जिस दिन मे हजम साहब ने दमिज वाली नाव का डेढ़ लेकर वेतन को खाना कर दिया है मेरे सम्मुख, उस दिन मे तो पं पागला भी बटिन हो गया है !”

“केतन की नाव में तो तुम्हारी सवारियों बैठ सकती हैं, इसलिए भाड़ा भी आधा लगता है। पार लगने में समय भी थोड़ा ही चाहिए। फिर भी तुम्हारे यादों को तुम्हारे ही हैं, बालक ! चक्करों क्यों हो ?”

“चक्करों ऐसे क्यों, देखता ? वह लेता है पक्की, मैं लेता हूँ अम्मी। अन्न प्रतिनाह तो यह है कि मैं तो अपनी नाव के लिए यात्रियों को ठीकी कनम पुकार सकता हूँ, जब बहुत नागरिका इन्हीं वाली नाव को भरकर जा चुकता होता है। केतन के साथ तो बस एक ही आदमी होता है जो इन्हीं पत्थरों और बन्द करना चाहता है, और मरे साथ तो गे-गे चीन-चीन आदमी रहते हैं। अन्न क्या मैं खा हूँ और क्या उन्हें हूँ लाने के लिए ? जब अपना ही पेट न मरे तो साथियों को पासन ऐसे किया जाय ?”

इसने मैं धमिलनी भी अपनी नाव लेकर आ गया। उस ने दूर से आवाज दी, ‘चील्ल हूँ या कपली, बॉक-बुझाओ ! अपने पास और क्या मिलेगा ? सिंगी और गागल तो आब हाथ नहीं लगी !”

बालक से हाथ हटाकर नीलमणि मूट कमानदी के सामने आकर खड़ा हो गया।



मील निर्मल आकाश पर सारसों की स्केट पंक्ति उड़ी ब  
रही थी। पानी-बाद पर पानी मछली कुमारियों ने उ  
बेला, तो उन्हें बचपन का स्नेह याद आ गया। उ  
में सुनताप भी थी। अपना-अपना कलमा घाट प  
रलकर कुमारियों बाँह-में बाँह डाले बचपन का स्नेह  
लेलने लगीं। स्वर-में-स्वर मिलाकर वे गा रही थीं—

‘सास, सास, कहाँ चले ?’

सहरें किनारे को छू रही थी, बेचे सहरें भी यही कह रही थीं—  
‘सास, सास, कहाँ चले ?’ यौवन समने पा, बचपन बहुत पीछे छूट चक  
पा। आकाश पर सारस उड़े आ रहे थे।

सहसा पुरतियों नाचते-नाचते रुक गईं। किसी ने सुनताप के कम में  
कहा, ‘बद रहा तेरा सारस !’

सुनताप ने देखा कि अगुल बला आ रहा है। सारस तो बने गये  
थे। नीले आकाश पर अब स्केट छावनी का कहाँ आसमान भी न हो सक  
पा।

अगुल एक ओर लड़ा दूर से सुनताप को मारन का लज लेकने देखा  
रहा। पर यह स्नेह हीम समाप्त हो गया। पुरतियों ने एक-दूसरी की पीर  
छोड़ दी। पानी से मछ कुआ अपना अपना कलमा उठाया और वे गाँव की  
ओर चल पड़ी।

अगुल के पाल में सुनते हुए किसी भी पुरती को हैंडन का नादल ब

हूमा। सुन्ताप ने श्वेत 'मेखला' पहन रखी थी। जैसे सहज बॉया जाता है, उस से बोझा ऊपर की ओर खींचकर मुपतियाँ मेखला बाँधती थीं। श्वेत मेखला के साथ श्वेत ही जैंगिया पहनती थी सुन्ताप। श्वेत जैंगिया और मेखला से मेखला खाली हुए श्वेत पान्तर कपड़ों पर। सुन्ताप का बेश सच सक्तियों में विनिष्ट था। शेष कपड़ों में से तो किसी-किसी ने सास, नीली या पीली मेखला पहन रखी थी। किसी-किसी ने तो बाब जैंगिया पहनने की आत्मसम्भ्रता अनुभव न की थी। सुन्ताप को श्वेत वस्त्र ही अधिक प्रिय थे। महारकेता बनने की प्रेरणा उसे सास से ही प्राप्त हुई है, यह सोचकर अनुज ने सुन्ताप की अभिरुचि की सराहना की।

फिर उस न अपने श्वेत कपड़ों की ओर रेंगा। अनुज: वह किसी सास से कम न था। वह अपने स्थान पर खड़ा रहा, जैसे उस ने अभी-अभी एक सपना देखा हो। सासों पर मुग्ध होने वाला सुन्ताप! वह भी तो अपनी सक्तियों की पॉल के साथ ठड़ यह। किसी गम्भीर नजर आ रही थी, जैसे मुग्ध से कोई पारंपरिक ही न हो। मैं तो उसे नित्यप्रति देखता हूँ। हमारे बानीने के सामने ही तो है मातृ की का बानीया। मम्य की के बानीने का पिछड़ाया प्रत्युत की ओर है। पानी-वात की ओर आता होता है, तो वह पिछड़ाये ही से उतर जाती है। डेढ़ मीन ने तो क्या कम हागा यहाँ स आलीसीगा, पर सक्तियों साथ ही तो यह माय शायद बड़ा है।

उस की कल्पना में सुन्ताप मूमती-मामती पानी का रही थी, जैसे उस को बड़ी-बड़ी आँखों का मदक अनुप्राण उसे सहज ही लू रहा था। सुन्ताप की टोड़ी पर एक बाल-सा तिथि भी तो था, जैसे इतनी दूर से वह तिल भी उसे अपनी ओर खींच रहा हो। सुन्ताप को तो वह बचपन से ही देखना आता था। उस के गले में मूँगी की माला रहती थी। माला पहनने की यह अभिरुचि भी सुन्ताप ने सास से सी होमी, यह सोचकर अनुज मुग्धप्राय। दोनों हाथों से खींचें मगकर उस ने ध्यान से देखा, जैसे वह सुन्ताप की मुग्धहृदि एक बार अभ्यस देखा लेना चाहता हो।

शौचकाल में सास भीसे ऊपर आते थे और प्राण आरम्भ होते ही

फिर लैने पर्यंती की ओर सीट बात थ । देवकान्त ने बालुन को बताया था कि छाछ तो सिम्बल से आते हैं, वहाँ उस के मित्र बीरद के पिता विपिन योग ध्याना करत थ । देवकान्त ने यह भी तो बताया था कि छाछ तो क्वाचित् और भी परे से आते हैं । लैने हिम-महिष्ठ शिल्लों को पार करतें कमी किसी छाछ की निमोनिया न होला था ।

वैले किसी ने बालुन के पैर पोंच दिये हों । उस की कल्पना में दपल के सम्मुख बैठी कुन्ताय का बिग उमप—गाल मुखमच्छल, किराल नयन, छोटा माया, ठोड़ी पर बड़ा-सा तिल । जब वह मुक्कपत्ती है ता बैत ठलकी ठोड़ी का तिल भी मुक्कपने लगता है । कुन्ताय गर्पल के सामने बैठी बेशी की हो मोटो-मोटी पट्टियाँ बना रही है । ऐसा रूप किम्बा होगा ! कमी तो रूप में फेन ठटेमा, वैले नाम के नये पूहे गये वृक्ष में फेन उठता है । गर्पल में अपना मुखमच्छल देकर कमी-कमी तो कुन्ताय स्वयं लबा जाती होगी ! उस की कल्पना में जोर का मल्लका लगा, वैने देवकान्त पुकार-पुकारकर कह रहा हो—कलकता बसो मरे लाय, बालुन ! बिसोंगामुन में पड़े क्या कर रहे हो ! देवकान्त तो कनेला ही कलकता बसा गया था । बार-बार महीने के लिए कहकर गया था । जब तो ठने गये पूप एक रूप हो गया । पला नहीं वह क्या कर रहा होगा । देवकान्त ने उसे बालिब्रिबियों की कपारें मुगार ली, और उस कबाखी के उत्तर में उस न देवकान्त के सम्मुख बारन मल्लकी का रत्नन किया था । बारन मल्लकी का ता रूपक दिया था उस ने । बात कुछ हल पधार लखी थी कि कुछ गिरिया ककनतपीका होती हैं का आयु लल जाने पर बूढ़ा नहीं लगती । कुन्ताय के सम्बन्ध में उस ने देवकान्त के सम्मुख यही बिचार रत्न था कि वह कमी बूढ़ा नहीं होगी । देवकान्त न पूछ लिया था कि ऐसी क्या बात है जो स्त्री को बूढ़ा होने से बचाये रखती है । कलकता के बीरम का अल्लेन करते हुए देवकान्त न स्वयं ही तो बताया था कि वहाँ का बीरम तो माम-नौद का बीरम है । वहाँ की लोहा-लोड़ी में आदमी के भीतर न जाने किना ईश्वर बल-बलकर समात होता रहता है । ईश्वर अपने के

पाय-साब आदमी की शक्ति का हास भी होता रहता है। वहाँ मित्र में आदमी कर-कर बार लाता है। यादी-भोड़ी देर का फिर भूख लग जाती है। जो दशा मित्र के समय होती है, उस के समय वहाँ होती क्योंकि उस को आदमी आदम से पता रहता है। उस को आदमी के भोतर रोकने के लिये नहीं चलता, किन्तु के समय से दिन में चलता है। इस के उतर में ही तो मैं ने कछ भ्रमानी से कुनो दुःख का मन मङ्गली की बात उल्लस की थी। मैं ने कहा था कि बार मङ्गली दलदल के मीतर पॉय-पॉय लू लू मात्र तक ऐसे चली रहती है जबकि छपर से दलदल सुनकर निकल कर हो जाता है। अगली कठिनाई तक बार मङ्गली ऐसे ही पड़ी रहती है, जैसे जोर योगी समाधि में बैठा रहता है न शक्ति का हास होता है न नये ईश्वर की आवश्यकता पड़ती है। ऐसे ही अनन्तपौकसा स्त्री की बात है। उस के रूप का ईश्वर बहुत ही कम चलता है, रूप की शक्ति बनी रहती है।

अब सीमा हो रही थी।

अनुता की बचपन में करे पर बैठी सुन्ताप का चित्र उभरा। अन्तर्गत सुन्ताप बल बन रही है। उस के हाथ में जो कला है, वह और किसी कला के हाथ में न होगी। इसका बल किस के लिए बन रही है सुन्ताप ? पहले ही बोल-का कम रूप बन रहा है ? और उस बाद का क्या रूप ? गत वर्ष उस ने बचन दिया था कि मेरे लिए सबकी की बाद बनकर रहेगी। मगर भी के सम्मुख ही तो सुन्ताप ने बचन दिया था ! पल से मगर भी ने भी अपनी आवाज मिला ली थी। पर सुन्ताप उस दिव की बात भूल गई। मैं ने भी तो उसे स्मरण नहीं करा वह बात। ठक—ठक—ठक !—सुन्ताप का करण चल रहा था। वह के लिये सुन्ताप हाथ पला रही थी। वह देर तक कल्पना के कला-माल में सुन्ताप को देखता रहा।

वह नार-पार की ओर जाता जा रहा था, पर वहाँ गई-गई ही इतनी देर हो गई थी। नार-पार तो पानी-पार से भी आगे था। उस के पद पर

को झोर उठ गये ।

दूर से कोर ध्वनि उसे झाली झोर झाला दिखाई दिया । उस ने  
वही प्याल से पहचानने का प्रयत्न किया । वह तेज-तेज हवा मरने लगा ।  
यह तो विद्याप्रसाद का रहा है । झोर तो है ? “कहो मास्टर जी, कितर  
बले ?” उस ने आगे बढ़कर पूछा ।

“बालो, नाच-नाच तक धुमा लाऊँ ?”

“अब तो घर बाँटो, मास्टर जी ?”

“कुम्हार वह देख्यस्त कितर बला गया ? अब फिर आयेया या  
बला गया लडा के लिए ? मैं कहता हूँ उस से बचकर रहना । स्वयं तो  
पैसेया, तुम्हें भी पैसेया ।”

अनुस को देख्यस्त की बुपार झण्डी न लगी । यदि उसे इस बला  
का सम्मान न होता कि विद्याप्रसाद से ही उस ने तीन वर्ष तक स्कूल में  
शिक्षा पाई है, तो वह सामने स बाल उठता । बिना कुछ कहे-सुने ही वह  
घर की झोर पग उठाने लगा ।

विद्याप्रसाद भी आगे बढ़ गया । फिर पीछे से आवाज देकर उस ने  
अनुस को पुछ्यः “एक बात सुनते आओ अनुस ।”

अनुस आवाज सीरकर विद्याप्रसाद के पास गया तो वह बोला, “वह  
बाल्यन्दी है न ? आज वह न जाने कहीं से एक सारत पकड़ लाया । अब  
हम मूर्खों को बौन सम्झ्य कि मारण तो पति में उड़न वाला पक्षी है, उसे  
पकड़ना तो महा अभ्यास्यार है ।”

## सात



आप्ली का विचार था कि झुनताप उसे मूढ़ अपने मन की बात बता देगी, पर झुनताप तो नाक पर मक्खी नहीं बैठने देना चाहती थी। बाती-बाती में आप्ली बहुत-कुछ कह गई। दूर से बात को सुमाकर साती और फिर तिल से उस निश्चयने का पता चली। पहले वह परी-क्या के उस राजकुमार की ओर संकेत

करती रही, जो एक बार किसी की ओर मुस्कुराकर देल लेता था तो वह कन्या उस पर मुग्ध हो जाती थी; फिर वह फूली में ठुलने वाली राजकन्या की क्या से बैठी, जिस ने वह निर्णय कर रखा था कि वह तो उसी से विवाह करेगी जो उसके प्रसनों का उत्तर दे सकेगा। आप्ली का विचार था कि जीवन में ठीक वैसे ही नहीं होता, बैठे कमा-करानियों में होता है।

झुनताप ने जोर देकर कहा, “हृदय तो हृदय ही रहेगा। इसका काम है पढ़ना, तो इसे पढ़ने से क्यों रोका जाय ? पहले जौने रोमती है, फिर स्नेह की छाव लागती है मन पर। आसु-मर्यन्त क्या माता-पिता के घर भी बैसे बैठी रह सकती है ? पहेली कीर लाइली पुत्री का जन्म भी पछमे घर जाने के लिए ही होता है। जो हम से बड़ी है, वे कभी की कभी गई अपने-अपने छावन के घर। हम रह गई। एक दिन तो हमारी बाती भी जाकर रहेगी। यह तो बग-नीला है, झुनताप ! नाव को पार उगाने से काम। मुहामी पठ जाती है, तो फूल अपने आप खिलता है।”

“पर जोर जगदस्ती से तो फूल भी नहीं खिलता !” झुनताप मुस्कुराकर और उगने आप्ली की गरदन में हाथ डालकर उसे मजबूर दिया।



“अटुल को रेलवा या आवा ?”

“ये ही रेलवा हैं।”

“तो तेरे मन का द्वार इसी प्रकार बन्द रहेगा ?”

“आज तू कैसी बातें कर रही है, आखी ?”

सुनताप चाहती थी कि आखी कोई दूसरी बात करे। वह तो वह विवाह करवेगी, वहाँ माता पिता चाहेंगे। कई बार वह आखी से कहा चुकी थी कि उसका बापू तो उसे मामुली के किसी गोंब में ब्याहना चाहता है। आखी ने सदा इस पर व्यर्थ कहा था। मामुली तो गँवारों का रेलवा है। मामुली वाली को तो वह भी पता नहीं कि नमक और मिर्ची की दस्तियों में कैसे पहचान की जाती है। चलकर तो हर कोई बता सकता है। बात तो यह है कि केवल रेलकर बतावा जाय। उनका तो गुन मी नहीं बता सकता। किसी मामुली वाले के साथ गोंब दिया गया तैय आँखों तो आयु-पर्यन्त बैठी अपने माय को कोसेगी। तू अपने बापू से चुनकर वह क्यों नहीं देती, सुनताप ! अब बंद मत कर। चक्क-चक्क कह दे कि वे व्यर्थ ही मामुली में भूम-भूमकर अपनी दस्तियों न दिखायें। अरी इतना दूर जाने की आवश्यकता ही क्या है, जब काम इतना समीप बन सकता है ! इस में लाभ शरम की तो कोई बात ही नहीं। अपना घर तो स्वयं ही चुनना चाहिए। मेरा बापू तो कभी यह नहीं करेगा। वह तो मुझ से ही कहेगा—टोक-बजाकर अपनी आँखों से रेल ले, आखी ! कन्वही बनने से भी काम नहीं चलेगा। दूल्हे के सामने तो जाना ही होता है, तब चक्कर। यही संसार की रीति है। इस में अनहोनी तो कुछ भी नहीं। आखी न जाने ऐसी-ऐसी किस्ती बातें कह गई। सुनताप ने चुटकी ली, “आज तू भग पीकर ता नहीं आर, आखी ?”

आखी थी कि अपनी ही कहे जा रही थी, “विवाह तो कम-सीमा है। हमारे पुरखाओं ने विवाह न किया होता, तो आज हम भी न हात। विवाह तो पाप नहीं; जब पाप नहीं तो शरम भी क्या है ! भुरे से बँपन की बजाय तो अच्छे से बैधवा ही शुभ है। एक बार की भूल पूरे जीवन को नष्ट करती है।

छदे-सीसे, लाल-नीले, हरे-सलेटी लगी रंग हैं। बाव तो अपने मनपसन्द रंग की है। मैं जानती हूँ तुम्हें उकेर ही तब से अधिक माता है। फिर दूर जाने की क्या आवश्यकता? बापू से यहाँ कह सकती है तो माँ से कह दे। तुम्हें लाल लागती हो, तो मैं कह दूँ।”

“ब ! ब ! न !” कुन्ताए ने आरती के मुँह पर हाथ रखकर कहा।

आरती कुन्ताए की पतली-पतली डँगलियों को अपने हाथ से सहसाती रही और उसके सीसी बितपन बिहाली रही।

“अपनी बात तो तू कभी कहेगी नहीं। तुम्हें भी तो एक दिन पिछी की आरती उठानी होगी।”

“मैं कब कहती हूँ कि नहीं उठाऊँगी।”

एक-दो बार आरती ने कुन्ताए की नाक की छीब करी हुई माँग पर अपनी डँगलियों के टिपें, बैठे बह कहना चाहती हो कि अब वे दिन दूर नहीं जब यहाँ अमर मुहाग का सिन्दूर मय बाग़गा।

“बाबो आरती, तुम्हें बेर हो रही है।”

“बही बात।”

कैसे के कुन्ता में दोनों लड़कियाँ बैठी थीं। एक-दो बार आरती ने छमसे वाले बर्गाने के दरिस्त के पैरों की ओर डँगली ठठार। कुन्ताए उसके भाव समझ गई, पर उस ने प्रसन्न उस आर न मुझने दिया।

कुन्ताए बाबली की कि बुद्धि में आरती उस से कहीं अधिक तेज है। आरती की माँ जीवित होती, तो उस पर होकर उत्तरदायित्व न था पड़ता। इस उत्तरदायित्व ने ही उसके बुद्धि को बलका दिया था। उनका पुत्र पर तो बलमा में था, दिवंग नदी के किनारे; पर जब से आरती की माँ ममलम्ब के मुँह में बनी गई थी, बलमा ने पुत्र पर का दृष्ट पर बहुत बनी मात्र पर एक भीपरी कम ली थी। इस बात का वह पानी-पात और बाव-पात के बीच वाले स्थान पर बहता था। बाव पर बनी भीपरी आरती की पत्नी थी। मैं एक बिच्छी बरी की ओर गुलती थी। अबकाय निम्न म

सिङ्घी में बैठी रहती थी। कई बार जूनताप को भी वह अपनी मीप में हुला लाती और दोनों छलियाँ सिङ्घी में बैठकर दूर तक फैले ब्रह्मपुत्र को देखती और न जाने किस-किस प्रसंग पर बिचार करने लगतीं। आखी की नाव में सदा जूनताप की नाव से अधिक बचन होता था।

कल रात बर्मनन्दी ने आखी को बताया था कि वह ब्रह्मपुत्र बर्मसिमा छापरी के पास से गुजर रहा था जब उस ने दूर से आखी की पॉल को वहाँ बैठे देखा। पॉल तो उड़ गई, पर एक सारत व उड़ सका उस ने उड़ जाने की बहुत चेष्टा की। वह कदाचित् बीमार था। जूनताप से पीछे से जाकर बर्मनन्दी ने उस सारत को पकड़ लिया था। सारत को पकड़कर वह धूला व लमाया था, क्योंकि बहुत दिनों से जूनताप की मौत थी कि कब उसके लिए एक सारत ला दे। बर्मनन्दी ने आखी को बताया कि उसके बी में तो आया था कि पहले इस सारत को लाकर आखी को दिखावे, पर उसे मय था कि कहीं आखी ही इसे अपनी पास रखने की चिन्त न करने लगे। इसीलिए वह अपनी मय को बाध-बाध और पानी-बाध के बीच बाले स्थान पर मीपड़ी बाली गड के साथ लमाया की बहाय दिहांग नदी के पस्ते ऊपर की ओर ले गया था, और वहाँ हाट-बाजार वाले स्थान पर उतर कर सीधा जूनताप के घर चला गया और उसे उसकी सौगात पहुँचा दी थी।

आज सबेरे-सबेरे जूनताप के घर जाकर आखी ने उस सारत को देखा था, जिस उसका बाधा कल रात व मया था। सारत बीमार था, इसलिये वह मरुद्ध जमीन पर डाले पड़ा था। सारत के बंधों में जूनताप ने रस्ते बोंधकर उसे एक लूँड़ी से बाँध रखा था। उसकी रक्षा के लिए उसके चारों ओर गॉस की लारभियाँ व छाया-ला सिंघप बना दिया था।

फैले के कुछ व से वह स्थान साफ़ मकर आ रहा था, वहाँ बीमार सारत को रखा गया था।

आखी ने मम्मीर होकर कहा, “एक बार कबना मैं तुम्ह भी वह स्थान दिखाया था, वहाँ ब्रह्मपुत्र के बीच बर्मसिमा छापरी पर सारतों की पों

अपपर उतरती है। और भी बहुत से बल-पक्षी वहाँ उतरते हैं। शिखरियों की बन्दूकें भी वहाँ अचिन्त-से-अचिन्त कायर करने के लिए तैयार रहती हैं, पर ये शिखरी सग बाहर से आते हैं। विसाँगमुख या आठगल के किसी दीप का धोर शिखरी इन परसेही पक्षियों पर हाथ नहीं उठाना। सोर बीमार या दुर्बल पक्षी उड़ने से यह बाल, तो पतल ठसे छेड़कर उड़ जाती है। बापसी पर यह पक्षी फिर उस पतल के साथ मिल जाता है।”

शुक्लाय बोली, ‘अब यह ताल तो यही खोगा। मैं उसे रिक्त छोड़ी।’

‘यह तो पतल का पक्षी है, शुक्लाय! पतल के बिना तो यह मर जायगा।’

“हैसे तो हम सब पतल के पक्षी हैं। हम कैसे पतल के बिना जीवित हैं?”

दोनों लकड़ियों कठक कारल के पास बाहर लगी हो गई। यह उड़ी प्रकार मरुत कम्पन पर मिश्रमे पड़ा था। यह कहकर कठिन या कि उसे क्या कह है। कदाचन उसे सब से कहा कह यही था कि यह पतल से निवृत्त मर।

शुक्लाय लपक कर एक चौड़े मुँह वाली मछली में पानी भर लाह और निबरे का मुँह उठाकर यह मछली उस ने ताल के मुल के पास रल दी।

आली ने अपने हाथ से कारल का सिर उठाकर उसकी पतल मछली के पानी में डुबी दी। शुक्लाय की झुरी की नीर लीन ब रही, जब उस ने देखा कि कारल पानी पी रहा है।

चोड़ी रेर बाह दोनों लकड़ियों फिर परसे स्थान पर आ बैठी। शुक्लाय उदात्त थी, क्योंकि कारल बीमार था।

आली ने गम्भीर होकर कहा, “यह तो कहते हैं शुक्लाय कि प्रतिपत्त का पप में बीन-रिगाह के जाने ने साथ साथ माना में ही बीनता है, यह बात यहाँ तक सत्य है।”

“यह तो मेरा बापू की मानता है। निवृत्ती बार बापू पुरी में था, जब

उसे प्रतिपदा का पौर्णिमा दिखाने दिया । फिर वही हुआ वो होगा था । पूरा मास बापू बाबा में रहा ।”

फिर आरती ने भीषण लोगों की दबूर-पूजा की बात खेद की । “दबूर पूजा वर्ष में दो बार कभी होती है ।”

“एक बार की पूजा न माने देवता, तो दो बार करनी ही पड़ेगी पूजा ।”

“क्या यह ठीक है कि दबूर और इन्द्र एक ही देवता के नाम हैं ?”

“मेरे बापू का तो यही कहना है कि दबूर और इन्द्र एक ही हैं । यह कहता है कि दूसरे देशों में, जहाँ बना कम होती है, इन्द्र की पूजा करते हैं जिससे इन्द्र देवता मेघों के साथ आम्बर पर आम्बर दर्शन हैं; और जहाँ हमारे अलग देश में तो पहले ही वर्षा बहुत अधिक होती है जहाँ तो इन्द्र देवता से यह प्रार्थना की जाती है कि मेघों को थोड़ा ठीक कर लें । जब कई-कई दिन सूखेबाजार बात होती है, तो तब की औपनिषद् के मीतर पानी टपकने लगता है ।”

“और फिर लक्षण में किसी किसी औपनिषद् की कृत ही उक्त जाती है । हमारे साथ भी तो पिछले वर्ष यही हुआ था । नाक पर कभी औपनिषद् की कृत उद्धरण करने कहीं कभी आई, इत्यादि पता ही न लग सका ।”

“मैं जानती हूँ । मेरे बापू ने ही तो कृष्ण के लिए पूरा मित्रबाबा का ।”

“एक बात है, सुनताप । दबूर-पूजा वर्ष में दो बार करते हैं भीषण लोग । यह तो अच्छा करते हैं, पर एक बात बहुत भुली करते हैं ।”

“वही न आरती, कि पूजा आरम्भ होने पर किसी को बत्ती में नहीं जलाने देते; कोई जलता भी है तो उस के हाथ-पैर बाँधकर उसे वहाँ बल्ले हैं, वहाँ सुगर बंधे रहते हैं ।”

“कितनी भुली बात है ।”

“बहुत ही अपमान की बात है । इन्द्र कहो जादे दबूर, ये क्या केवल भीषण लोगों के ही देवता हैं ?”

“बापू का कभी-कभी कहता है कि देवता-देवता कोई नहीं होता । ये

छत्र कहने की बातें हैं। बापू का सो कहना है कि पेट ही छत्र कपटा है। पेट भर हो ता गांध-गांधा भी अच्छा लगता है, पूजा भी करते रहो बैठकर पर जब पेट ही खाली हो, तो बेक्ता के गुण-गान से भी पेट नहीं भरता।”

“भूखा नाच रहा करता है।” भूखाप ने खोर देकर कहा, “मैं यह मानती हूँ।”

आप्ली ने मुँहलाकर कहा, “जब कई-कई दिन तक बर्षा नहीं धमती, बिकली कड़कती है, बड़े-बड़े पेड़ वृक्षान में जड़ से उलट जाते हैं और नदी में भी बाढ़ आ जाती है, मैं पूछती हूँ, उस समय मीरी खोशों के बहूर और हमारे इन्द्र बेक्ता कहाँ होते हैं। दोनों एक हैं या दो, इस विवाद में पड़ने की बजाय हम जब यह तो सोचें कि उस समय बेक्ता को अपने मछली का प्याल क्यों नहीं आता।”

भूखाप ठठकर ताख के समीप पत्ती गई।

आप्ली अपने स्थान पर बैठी रही।

दूर से आप्ली ने देखा कि बालीने के फरक से अटुल मीतर आ रहा है। उस ने पास आकर पूछा, “भूखाप कहाँ है।”

आप्ली ने हाथ का संकेत किया। अटुल तपक कर भूखाप के पास पत्ता गया।

“ताख को पकड़कर रखना तो ठीक नहीं।” अटुल ने वसपूर्वक कहा।

“यह ठीक है या नहीं,” भूखाप ने मुँहलाकर कहा, “यह देखना मेरा काम है।”

“पॉत का पक्षी पॉत के बिना मर जाएगा।”

“परबाह नहीं।”

“तो तुम्हारे हृदय में तबिक भी हवा-भाव नहीं है।”

“यही समझ तो।”

“मैं ताख को मरने नहीं दूँगा। तुम्हें ताख को छोड़ना पड़ेगा। मैं ने चर्मालन्दी काष्ठ से कह दिया है। काष्ठ माल गये हैं। हम इसे चर्मलिया सापरी पर छोड़ आयेगे, वहाँ से काका ने इसे उठाया था।”

“मैं साएब नहीं हूँगी।”  
“तो मैं क्या हूँगी?”

“तो मैं बर्मानम्ही काय से कहूँ ?”

“अहो १३३”

“एक बार फिर रोने लगी।”  
“रोने लगी।”

“ठोक लिया।”

आखी सब सुन रही थी, पर उस ने दोनों के बीच में बोलना उक्ति समझा। जब अगुस बला गया तो आखी बोली, "तुम ने अच्छा किया, दुःखदा। सारा बीमार है। यहाँ बह अच्छा नहीं हो सकेगा। हम ने भी भूल की जो उसे कमलिया सापरी से उठा लाये। अब उसे बह करव छोड़ जाना होगा; आब नहीं तो कल।"

"यह देखना मेरा काम है।"

"तो तुम आब ने"

"तो तुम बहुत से इतनी बड़ कहीं हो ?"

“तुम ने देखा कहीं या कि...”

“तुम ने देखा नहीं था कि वह कैसे रोना लगा था, कैसे मैं बोर्ड छूटती देख रहा हूँ। होगा बहुत अपने पर, खुदवाप कभी किसी से करने वाली नहीं। वह मेरा और काका का मामला है। बहुत और होगा बीच में बोलने वाला।”

आपसी के खोर देन पर खुदवाप

आपसी के खोर देन पर दुस्ताप मान गई, पर वह बचपन से ही  
 बचपन पर खोर देती रही, "अमुल को खोई अपिभार नहीं था कि आकर  
 उसे बचाया। दिवंगतुल में और लड़के भी तो हैं, देखा ही एक अमुल भी  
 नहीं, मले ही वह उनका पड़ोसी है और गाँव-बूझा का पुत्र है। पर इसका  
 ह मरला तो बही कि वह एक शिष्टाचार से भी हाथ जो धेरे।"  
 दुस्ताप ने मारत को अपनी बाँही में उठा रखा था।  
 आपसी बार-बार मारत के हाथ पर हाथ रखे।  
 नौ मारत की बाँही में...

नीं सारस की बस्तियों में झोंकने का यत्न करती रहतीं। फिर दमनी

दी काया से निर्यात करती बली का बलि करती रही। फिर दान

दा काया से मिलना चाहती थी।

भारती न इन्द्राय मे । भारती न इन्द्राय मे । भारती न इन्द्राय मे ।

नियत अच्छी नहीं।

अच्छ ने आखी और कून्ताप को आते देखा, तो वह खुशी से नाच  
ठा। उस ने कून्ताप के हाथ से सारस को ले लिया। उस ने बताया कि  
से रात-भर झुरे-झुरे सपने आते रहे थे। वह सारस को कमलिया सापटी  
र छोड़ आना चाहता था।

अब सारस आखी की बाँहों में था।

अच्छ ने मूढ़ नाच तैयार की। आखी और कून्ताप नाच में आ  
ठी। अच्छ नाच को कमलिया सापटी की ओर ले जाता।

“सारस के पंख बिछने सुन्दर हैं।” अच्छ ने बप्पू बसाते हुए कहा,  
“अपनी कम्ममूमि से कितनी दूर आ जाता है सारस सल-के-सल, और फिर  
घुड़ बदलने पर सौट जाता है। कमी-कमी सीतकमल में सारस की पंख  
कमलिया सापटी पर उतरती है, तो मैं कहता हूँ—यही रहो, आगे बगल  
ही ओर क्या मिलेगा। वहीं बिनाम करो, यही से सौट जाना प्रीत्य  
प्रारम्भ होने पर। अच्छ, यदि आगे जाना ही है तो बोका प्रारम्भ  
कर लो।”

दोनों सलियों हँसती रहीं और सारस के सुन्दर पंखों को छुदगुदती रहीं।  
“कून्ताप को सारस मिलने की उतनी प्रसन्नता नहीं होगी,” कर्मान्दी  
बोला, “कितना दुःख उसे सारस से बिछुड़ने पर होगा। पर वह तो पंख  
का पक्षी है, पंख के बिना तो बैठे ही मर जाएगा।”

“तुम तो सब पक्षियों की बोलियों जानते हो, अच्छ।” कून्ताप  
सुम्बरदा।

“अच्छ तो पक्षियों की बोलियों बोलकर उड़ते पक्षियों को नीचे उतार  
सकते हैं।” आखी ने गम्भीर होकर कहा, “और वह काम कोई बिज्जा  
मनुष्य ही कर सकता है।”

“सब प्रेम की बात है।” कर्मान्दी सुम्बरदा। “प्रेम की भाषा  
ही ऐसी है। पक्षी भी समझते हैं प्रेम की भाषा।”

कमलिया सापटी पर पहुँचकर कर्मान्दी सारस को एक झड़ी के समीप



रक्त जाया और लौट कर उस ने गाव को पानी में डेल दिया ।

दो से छारलौ की पौत ठही का रही थी ।

काका ने गाव को वहीं रोक सिया ।

छारलौ की पौत सापरी पर उतर आई । जब दोनसठ बह पौत ठहने लगी तो वह बीमार तारल मी पूछ चोर लगा कर उड़ा और एक-दा छुटे बन्दर कलकल पौत में मिला गया । जब छारलौ की पौत मील-निर्मल आकाश पर ठही का रही थी । काका ने मी गाव का मुँह दिछोनासुन की ओर मोड़ दिया ।

बापरी पर कातुल को कोच में साल-पीला देलकर चमाम्बी छिल दिक्का कर हँस पड़ा ।

## आठ



अपने गोंब में सुखों की तरह बँसो, तमुपल में सुखी की तरह कड़कड़ाओ !—गोंब के इस पुणने बोल पर अमुल किसना मी बिचार करता, उसे उठनी ही हँसी जाती। वह सोचता कि किसकी तमुपल गोंब में ही हो वह क्या करे। वह पुणना बोल दिखोगमुल की तीनों मायाओं में मिलता था और वह

कहना सहज न था कि सर्वप्रथम वह बोल किस माया से शिखा गया था। अब तो इस बोल पर तीनों मायाओं की छाप थी।

लेट में काम करते-करते अमुल को कई बार सारस की बटना का स्मरण हो जाता। वह सोचता कि अन्त में भूखाप ने उसकी बात मान ली थी और वह धर्मानन्दी काका के साथ बाहर सारस को कमलिया सापरी पर छोड़ आर थी, वहाँ से काका उसे उठा लाया था। बसो अम्मा हुआ, पंति का पक्षी पंति में मिल गया। पर जब उसे इस बात का ध्यान आता कि धर्मानन्दी काका सापरी पर उसे क्रोध में लाल-पीला देखकर सिलसिला कर बैठ पड़े थे, तो उसे धर्मानन्दी पर ही नहीं आती और भूखाप पर भी क्रोध आने लगता। अभी वह सोचता कि सारी मूल तो उसी की थी। जब वह आरम्भ में भूखाप के घर बाहर उलसे यह करने लगा था कि वह पावन और बीमार सारस को छोड़ना स्वीकार कर ले, तो उसे तनिक नयनी से बोलना आदिष्ट था; सुखों की तरह बौंग देने की तो कोर आन सम्भल न थी।

देवघान्त को गये बहुत दिन हो गये थे। बार-बार महीने के लिए  
 गया था, आज तो एक वर्ष से ऊपर हो गया था। जिस दिन सातस बाली  
 पटना हुई थी, उस दिन देवघान्त को भी रहना चाहिए था। ब्रह्मन्वी ने  
 आज ने तो हैसकर मेघ कोष उतारने का मन किया था और आज ही ने  
 अपनी ही बात छोड़ दी थी। आज ही ने बहरा बोल दोहरा दिया था, जिस  
 पर देवघान्त न जाने कितनी बार हैस पुन्य होगा—‘ब्रह्म भूषण आज है  
 तो आज ही नहीं कौपती, ब्रह्मपुत्र भी कौपता है ब्रह्मपुत्र की पीठ  
 में कौपती है, कितनी पीठ में कौपते-ही-कौपते होते हैं, और पीठ  
 के पेट में आज भी कौपते हैं।’ इस बोल के सम्बन्ध में भी ब्रह्म का  
 यही किन्तार था कि ब्रह्मन्वी, मीरी और नेपाली तीनों भावनों में इसे  
 कल लिखा गया है और कितनी एक भाषा को वह ब्रह्मन्वी नहीं कि वह  
 इसे अपना ही बोल मनवाने पर बल है। इस लुकि में तो पूरा विश्वास  
 हुआ बोलता था। पर देवघान्त था कि इसे लोगों के मीलों-तन्ने मन का  
 प्रतीक ब्याकर इस लुकि का उपहास करता था। वह करता था कि वह  
 मन समाप्त होना चाहिए। वह बड़ी कुशलता से भूषण का हल कान्ति  
 की ओर मोड़कर करता था कि कान्ति से भयभीत होने की तो तनिक भी  
 आवश्यकता नहीं।

उसके रोज के पाठ ही आज भी मीरी का लेख था। उस से अगा  
 लेख साधन मीरी का था। आज का ब्रह्मन्वी कल कहकर पुनः  
 था पर साधन तो उनका ब्रह्मन्वी का मित्र था। मीरी लोगों की उन  
 परम्परा ब्रह्मन्वी को विशेष रूप से प्रिय थी। वह परम्परा ब्रह्मन्वी के  
 सम्बन्ध में थी। वह बहुत ही प्रगल्भाई बार पर मुसुदा के रूप में आज  
 मिली थी, ब्रह्मन्वी बार-बार पुनः ने उड़कर लुन पर आ बैठती थी, तो मीरी  
 लोग मना यह अनुमान लगाते थे कि उनके पुरानाओं की आज्ञाओं को वह  
 हो रहा है। प्रगल्भाओं को याद दिलाया जाता था ताकि पुरानाओं का वह  
 हो जाय। इस परम्परा का सदाय लेकर ब्रह्मन्वी इस बात पर बल  
 था कि केवल प्रगल्भाओं को याद दिला देने में काम नहीं चल सकता।

क्योंकि झगड़ायें तो दूसरे-तीसरे रात फिर आकर उसी प्रकार छत पर गिरने लगती हैं। आश्चर्यवश तो इस बात भी है कि दिर्गमसुख के लोभ आपस के भगड़े संग के लिए समाप्त कर हैं और 'एक शरीर एक आत्मा' होकर रहें। साधारण-सी बात पर भी सिर-पुटौदल की बीष्य आ जाती है। छुहमा कचहरी में पहुँचता है। दोनों ओर से कपया बह किया जाता है। कचहरी में इस छीछोटेदर का क्या काम ! प्रवृत्ताएँ तो बन्दूता बेस्स मीरी होगी के पुरखणों का बह बताने ही बहीं जातीं, वे तो असमिया और नेपाली लोगों के पुरखणों का बह भी बतानी हैं।

कुछ दिनों से साधन मीरी शरण पर मुत्ता हुआ था, क्योंकि वह बात-बात में अमुक से उलझता पारता था। वह तो वह बार यहाँ तक कह चुका था कि दिर्गमसुख का गोंब-बुड़ा अकरम बाह मीरी ही होना चाहिए। अब इसका ठसर तो अमुक के पास न था। वह चुप रहता। एक बार उस ने यहाँ तक कह दिया, "देखो साधन, अब जब क्या गोंब-बुड़ा मुत्ता चापगा, तो मैं छुहारे पक्ष में मरूँगा।" पर लगता था कि साधन प्रतीक्षा करने के लिए तैयार नहीं, और वह शीज-से-शीज शरण का पीर को देना चाहता है।

एक बार अमुक आवाज से कहता, "देखो आचार काका ! अपने साधन को समझाओ। असमिया, नेपाली और मीरी घरों में अपनी अपनी भाव ही क्यों न बोझते हों, जब वे आपस में मिलते हैं तो असमिया से ही काम चलता है।"

पास से साधन कहता, "यही बात तो मेरी समझ में नहीं आती कि आपस में मिलते समय असमिया क्यों बालानी पड़ती है। हमारी मीरी भाव भी तो इस काम के लिए बुरी नहीं।"

इस पर आधार कुछ असमिया का ही पक्ष लेता। बात ठाढ़ थी। मले ही दिर्गमसुख में असमिया बोझने वाले सुशिक्षित से रुपये में बार आने थे, पर अलगात क बुनरे गोंब भी तो वे बहीं असमिया बोझी जाती थी। मीरी और नेपाली बाहर एक-दूसरे से मिलने पर असमिया ही

बेसठे थे। बहुत दिनों से बही होता आया था। अब इसे कैसे बरसा था सचता था ?

उस से आश्चर्य की बात तो यह थी कि चित्ताप्रसाद भी साक्ष्य भीरी की हॉ-में-हॉ मिलाने लगा था। वह बात तो समझ में आ सकती थी कि चित्ताप्रसाद को भीलमण्डि से पुरानी शिक्षा है। जब चित्ताप्रसाद पलाश बाड़ी से दिर्गोत्तम का निष्ठा का, तो उसी ने भीलमण्डि को सलाह दी थी कि अब तक सरकार को यहाँ स्कूल खोलने का ध्यान नहीं आया क्योंकि व सोमा मिलकर अपनी ओर से एक स्कूल खोलें हैं। यह स्कूल खोल दिया गया था और इसी स्कूल में तीन वर्ष तक अतुल ने भी शिक्षा पाई थी। अतुल के स्कूल छोड़ने के एक वर्ष पश्चात् ही चित्ताप्रसाद को स्कूल से पूछकर दिया गया था। चित्ताप्रसाद के विरुद्ध यह रिफाफ्त को कि उन ने लड़की की फीस के हिसाब में गड़बड़ की थी। स्कूल से पूछकर चित्ताप्रसाद को अनेक बर्षों का सामना करना पड़ा था। अब तो गत छः-साठ वर्ष से चित्ताप्रसाद का कार्य अच्छा चल निष्ठा था। वह रेशम का प्रयास करने लगा था और अब दिर्गोत्तम के लड़के-बेटे लोगों में उसकी गिनती थी। साक्ष्य भीरी की हॉ-में हॉ मिलकर वह भीलमण्डि को भीला निष्ठा पर मुला हुआ था।

“दिर्गोत्तम का क्या बनेगा, आचार क्या ?” अतुल कह बार पूछता। आचार यही उत्तर देता, “उत्साह को आ जाने दो, उस ठीक हो आया।”

उत्साह भी भीरी था। उसकी उस से बड़ी विरोधा यही थी कि उन-ने अब तक विवाह नहीं किया था। उस से वह बॉरिहरी के बंगला में सरकारी मौकर हो गया था, मुदिचम से आठ-अध बार दिर्गोत्तम आया था। विद्वानों बार वह उन समय दिर्गोत्तम आया था, जब अतुल का छोटा भाई मन्ना तीन बर का था।

अतुल का पार था कि मन्ना दिन-भर उत्साह बाध की गोड में रहता था। अतुल की छोटी बहन रेलु का तो अभी कम भी बही

हुआ था।

जब भी मल्लाह और रेणु अटुल की टोंगी से निपट जाते, वह उन्हें रास्ताल काफ़ से मुझी दूर हाथियों की अशानियों सुनने का वक़्त देकर छुड़ी जाता। रेणु ने तो रास्ताल काफ़ को देखा तक न था मल्लाह को भी रास्ताल काफ़ की कोह या न थी।

घर में रास्ताल काफ़ का नाम इतनी बार लिया जाने लगा था कि लगता था सब से अधिक मल्लाह ही रास्ताल काफ़ की बात कोहने लगा है। रास्ताल के बोझों से रियर होकर रिशॉगमुल जाने की सूचना गोपमणि को पहुँच चुकी थी, और इस समाचार से वह बहुत बुरा था, क्योंकि साकन मीरी दूर के बाँटे से रास्ताल का मंत्री था। यह आया की का सचती थी कि वह रास्ताल के समझने पर समझ जायगा और रिशॉगमुल के बोझ में कट्टा जाने की चेष्टा नहीं करेगा।

साकन मीरी को यह बात कैदने में न जाने क्या आनन्द आता था कि सब से पहले मीरी लोग ही आकर रिशॉगमुल में बसे थे। यह बात तो बहुत से पड़े-लिये लोग कहते सुने गये थे कि आरम्भ में अचोर लोगों के समाज मीरी भी सदिया के उठ पर अचोर पहचानों में रहते थे। अचोर और मीरी मायों बहुत एक ही माया की दो बोलियाँ थीं। इस से अचोर और मीरी के पुत्रों सम्बन्धों पर कुछ प्रकाश पड़ता था। पर साकन के कहने का ता बूझ ही माय था वह तो हर फ़िरो से यह कहता फ़िरा था, "पहले वहाँ बंगल ही-बंगल था। मीरी लोगों ने इतनी दूर से आकर बंगल को अपने कुम्हारों से लाक किया, और जब भूमि खेती के योग्य हो गई, तो अहोम राजाओं ने अपनी बौत बसा कर वहाँ कुछ अहमिया लोगों का भी ला बताया, फिर मैं फ़िरानों के अतिरिक्त नायरिया और मधुप भी थे। आगे चलकर अहमिया बोलने वाले मुगलमानों की आबादा भी यहाँ इतनी हो गई कि आलीलीया की एक बस्ती मुगलमान बस्ती के नाम से प्रसिद्ध । अहमिया मुगलमानों के सम्बन्ध में यह कहना ठीक ही है कि वे उन मुगलमानों को सन्तान हैं जिन्हें अहोम राजाओं ने

अतुल सोचता—अस, रास्ताल काका अभी का करते ! 'ऊसकी कल्पना में रास्ताल काका के आगे और पीछे हाथी ही-हाथी उमरने लगते; इन हाथियों में उन के बच्चे भी होते, हथिनियाँ भी होती—मों बनने वाली हथिनियाँ भी । वह देखता कि काका मुक-मुक कर, उमर उमर कर हाथी का अक्का-का बच्चा डूँढ़ रहे हैं—कोई ऐसा बच्चा का बहुत ही प्यार प्रतीत हो रहा हो ।

अपनी मों से भी अतुल रास्ताल काका के आने की बात पूछने लगता । वह हँसकर कहती, "मैं ने तो सीली बही ओलिया बिचा, अतुल ! रास्ताल काका कर आलेंग, मैं कैसे बताऊँ ।"

पास से नीलमणि हँसकर कहता, 'अतुल तो क्या चितो-न-चितो की बात सोचता रहेगा—कमी देवचान्त की, कमी रास्ताल की । अपने-आप का बापका किस ने आना होगा आने वाला सदा बता कर तो आता नहीं ।"

अतुल के हृदय पर गहरी चोट लगती वह सोचता कि और चितो को रास्ताल काका की याद इतनी क्यों नहीं छूता ।

बड़े बड़े अममिया अक्षरों में मक्का गुड़ लिख रहा होता तो अतुल उसकी अपनी लेकर उस पर हाथी का चित्र बनाने लगता ।

# नौ



उत्त आधी इधर थी और आधी उधर, जब देवचान्त न आकर अटुल को बगाया। देवचान्त ने अटुल के कान में कुछ कहा। अटुल बोला, “तो अभी चलते हैं।”

वे बाहर निकले। कल्याण मगत के घर की बग़ल से जो पगहण्डी सड़क से नीचे उतर गई थी वे उन्हीं पगहण्डी पर हो लिये। इस पगहण्डी पर वे बहुत बार पड़े थे। यह पगहण्डी बहुत खानी-बहानी थी। चलते-चलते देवचान्त अपने दायें कन्धे को सहलान लगता। उसके कन्धे पर सस्त चोट आर भी। अब तो यह चोट अफ़्फ़ी हो गई थी, फिर भी थोड़ी तबखीक़ बाकी थी।

“अच्छा होता कि तुम अपनी माँ से मिल लिये होते।” अटुल ने एक बग़ल बंद कर कहा।

“कमय कहाँ है।” कहते हुए देवचान्त आगे बढ़ गया।

“माय्य माता की बात करते हो और अपनी माँ से मिलन के लिए मुझे कमय नहीं मिलता। बार महीने के लिए बंद गये थे, पूरे डेढ़ बर्ष के पदपात्र आये हो।”

“तुम माँ को लमझ देना।”

“बह तुमवर रोवेगी।”

“अब एक ही बात हो सकती है—माय्य माता के अँगूँ पोंटूँ या ल। माँ के एक साथ दो कार्य नहीं हो सकते। तुम्हें तो पहला कार्य ही



अधिक आवश्यक प्रतीत होता है ।”

“किस मों ने तुम्हें बन्म दिया, बुझाये में उठकी सेवा तक न कर सके, इसका तुम्हें क्या भी दुःख नहीं । जैसे वह बेचारी रेशम के कीड़े पाल्नी है और अपने करपे पर रेशम के थान बुन-बुन कर विद्याप्रसाद के हाथ बेच डालती है । तुम ये बर्ष के परचात् लौटकर उस से मिलने के लिए दो मित्र न बिकाल सके । कितनी क्या हैंसार्ह होगी, जब लोग सुनेंगे ।”

“परचाह नहीं ।”

अतुल फिर रुक गया । वह देवचन्त के मुल की ओर देखने लगा । अर्धरात्रि के सन्नाटे में उसे लगा कि देवचन्त ने उसे घाली दे डाली ।

“मों का आशीर्वाद लिये बिना क्या माया माया की सेवा सम्भव है ।”

“क्यों नहीं ।”

“मेरी सम्म में तो आती नहीं तुम्हारी बात ।”

“कमी तो का बायमी । सम्म लगता है । अपनी अपनी सम्म की बात है ।”

वे फिर चलने लगे । अतुल को लग रहा था कि उठकी पत्नियों एक धके हुए बैल के समान दह कर रही हैं । चौदनी में मी घिनी कुम्भ थी ।

“एक बात पूछूँ, देवचन्त ! जिस कोल स आत्मी का बन्म हुआ, उसे कैसे मुलात्मा का सकना है ।”

“पहले तो माया माया की कोल है । क्या वह भूत है ।”

हवा में शीतकण्ठ की ठण्ठक की, चौदनी में मों का हुलार था, फिर मी चौदनी छरमों की तपह चुम रही थी । चौदनी रात में लम्बी परछाईयाँ बड़े-बड़े धनी के समान प्रतीत हो रही थीं, जैसे मोह दाह के लिये बैठा हुआ बड़े बड़े लड़कों से बातें सी रहा हो, या कोई मनुष्य अपना काज पैनाय देख रहा हो कि कहीं-कहीं मरम्मत की आवश्यकता है ।

“जो मास तक मों का कोल में रहती है ।”

“तो क्या हुआ ।”

“मायल माता वाली बात अपने पास ही रखे रहो, मैं तो किसी मायल माता को नहीं जानता मैं तो अपनी माँ को ही जानता हूँ। माँ के रूप का मोल तो कभी नहीं चुकाया जा सकता।”

“तुम्हें बाहर की हवा नहीं लगती लग जाती तो तुम भी मेरे ही कमल सोफते, फिर तुम मायल माता को अच्छे पढ़ाना। मायल माता तो माँ की भी माँ हूँ। तुम मेरे साथ चलकरता गये होते तो मैं ने तुम्हें उन लोगों से मिलाना होता बिन्दौने मुझे मायल माता का चेहरा दिखाया। कितना उदास है मायल माता का चेहरा—हाथ में हथकड़ी, पैरों में बेड़ी मायल माता बिर-उदासिनी है।”

“और तुम्हारे माँ का उदासिनी है ? चित्तप्रसाद उसे हर रोच ठगता है। क्या इसीलिए तुम्हें नौ मास तक पेट में रखा था माँ ने कि तुम बुझाये मैं भी उसकी सेवा न करो ?”

बेचबन्त एक सिनके की नोक से बॉल कुदे रहा था। ठेक डग मर्या हुआ वह आगे बढ़ा पला बा रहा था और पीछे-पीछे अटुल।

“मैं तो कहूँगा कि अब भी मान जाओ। माँ से मिल जाओ। रक्त बहुत है। मोर से पहले-पहले तो हम बर्माबन्दी काय से हर हालत में मिल सकेंगे।”

“अब तो समय नहीं।”

“माँ से मेट करने के लिए भी समय नहीं ? मरना है तो क्या बचना ? मारामर्य हावेगा से तुम इतना डर जाओगे, यह मैं पहले नहीं जानता था।”

“मरना तो है एक-न-एक दिन—आगे या पीछे। मैं कौसी की एसी पर मूल बजैगा हँसते हँसते, और मरने से पहले मायल माता की हथकड़ी और बड़ी कितनी भी बोली कर सऊँ, उतना ही अच्छा है।”

“बुलिया तुम्हें मगोडा कहेगी।”

“कहती है तो कहे।”

“एक बात पूछूँ ? भागकर तुम निसिंगमुख ही क्यों आये ? तुम तो

कहा करता ये कि जिसीगमुन की सेवा भी वूर से ही करना चाहते हो।”  
 “एक बार मामुली पहुँचा वे मुझे धर्मनगदी काफ़, फिर तो नाउपय  
 हायेगा का बाप भी मुझे नहीं पकड़ सकेगा। बौली की रस्ती पर भूखने से  
 पहले मैं मामुली के लोगों को तैयार करना चाहता हूँ। अपनेला जिसीगमुन  
 तो फिरगी से सहारा नहीं लाइ सकता।”  
 बालते-बालते अतुल रुक गया। वेकामत का कच्चा पकड़कर उस ने  
 उसे रोक लिया।

“बह विद्याप्रसाद है न, उस ने हहसन साहब को पता लिखा है। मैं  
 ने तो सुना है कि हहसन साहब को भी बह देशम के बन्ने में से हिस्सा देना  
 है। विद्याप्रसाद ने पहले-पहल विष्णुधाम देवदरम के हाउस साहब को पता  
 या। मुझे तब पता चला गया। अरुणी और मृगा के बो हो यान उन ने  
 ले बाहर पहले-पहल साहब को लिखे, वे तुम्हारी माँ के ही बुने हुए थे।  
 एक आदमी ने मुझे हहसन साहब की बेटी लिखी की बात भी बता दी।  
 लिखी ने बह बार अपने डैडी को ताना दिया कि अब मेह इन इकलैय”  
 का आदर्श कहाँ चला गया। लिखी भी हमारे बिबद प्रसिद्ध होती है।  
 इसीलिए अब परती विष्णुधाम मुझे लिखी की भेजी हुए पुस्तक लाकर देने  
 लगा तो मैं ने जेन से इन्कार कर दिया। अरुमिया बाइबिल की पोषी माँ।  
 मुझे बही चाहिए जिनी की बाइबिल। मैं जानता हूँ, उस में क्या लिखा  
 होगा। अपनी माँ ही अपनी माँ होती है, यह तो उस में अवश्य लिखा  
 होगा, और वह मैं पहले से जानता हूँ।”

‘बैर हो रही है, चलना चाहिए।’  
 “और सुना विद्याप्रसाद तुम्हारी माँ से हर समय बही करता है—  
 ‘आदमी की छुक्ति इसी में है कि देशम के बीड़े के लमान बम करते-करते ही  
 मर जाय।’ यह मच डगने के लिए करता है विद्याप्रसाद। तुम्हारी माँ एक  
 रुपये का बम करती है, तो सुरिधम ने अरुणी उनके हाथ लगती है;  
 बाकी अरुणी में मे दो जाने हहसन साहब के और नः जाने विद्याप्रसाद  
 के। विद्याप्रसाद ने अपना ‘अरुणी-मृगा नदहारी नंदमल’ इसी प्रकार पढ़ा

| अष्टपुत्र

किया है ।”

“मैं जानता हूँ । पहले वह लड़कों को पढ़ाता था, तो लड़कों की फीस लाता रहा वह महीनों तक । पर फीस के बितने रुपये ला गया होगा आकर !”

“बितने मी हो, प्रभु तो लाने का है । फीस के रुपये उस ने क्वी लाने । इसीलिए तो बापू ने उसे स्कूल से निकलवा दिया था । बापू ने तो वह लम्बी से खार खाता है ।”

‘ सैर छोड़ो वे बातें देर हो रही है ।’

वे लसे का रहे थे । बॉन्नी में बड़े बड़े पत्थे अब कहीं-कहीं गड्ढे हो रहे थे ।

बनारसी को बगावा गया तो वह अट ठठ बैठा । “अमी तो मोर होने में बहुत देर है ।” काका ने हँसकर कहा ।

अनुप ने काका के बदन में कुत्तु कहा ।

“किन की मजाल है कि हमारे देवदत्त को हाथ लगा लके ? मैं उसे मासुली पहुँचा दूँगा ।” काका ने बसपूषक कहा ।

आखी वाय बचने लगी यह तोचकर वह झुनी बही लगा कि देवदत्त अब कमकता नहीं आकरा और रिशमिमुख में ही रहेगा । उस ने पूछ दी तो लिया, ‘तो फिर मासुली क्या करने का रहे हो ?’

“ऐसी ही बात है, आखी ।” अनुप ने गम्भीर हाँकर कहा, “हमारा देवदत्त तो अपनी माँ से भी मिलने नहीं आ सका । मैं तो रहा था जब उस ने आकर मुझे बताया । आज लोग भी तो रहे थे जब हम ने आकर बताया ही ।”

नाम पर क्वी दूर मौनही की लिङ्गही से ब्रह्मपुत्र की ओर देखते हुए अनुप ने कहा, “ब्रह्मपुत्र हमारा लार्ही रहेगा काका । देवदत्त से हमारा भगण बही है कि वह अपनी कास्तबिक माँ का भूलकर माय माता का रह क्यों लगाना है । यह माय माता कहाँ है, मैं तो आज तक नहीं देख सका, काका । देवदत्त करता है कमकता में रहती है माय माता । क्या यह टीक

हे, क्या ?”

“मैं भी क्या करता करता ! मैं ने भी क्या देखा माया माता को ?”

देवचन्द खामोश बैठा था ।

“पहले बताओ, माया माता क्या खाती है और क्या पहनती है ?”

आपत्ती ने पाठ आकर कहा, “फिर मिलेगा पाप का गिलास ! मैं पूछती हूँ क्या माया माता भी पीती है पाप सबेरे-सबेरे ! चाहे मैं तो माया माता भी पाप पीती होगी ।”

देवचन्द कुछ न बोला ।

“कुछ तो कहो, देवचन्द !” चर्मालन्बी हँस पड़ा, “नहीं बताओगे, तो मैं भी नहीं ले जाऊँगा उस पार ।”

“बताओ, बताओ ।” आतुल भी चुप न रह सका ।

देवचन्द ने कहना आरम्भ किया :

“कलकत्ता में रहती है माया माता । वह बहुत भूली है, बहुत दुबली हो गई है । गाने कराती है तो गीत भी उसके कपट में ही दूढ़ करता है । उसके चारों ओर सौंप के समान समान्य लहरता है । उसके फेफड़े पावल पक्षियों के समान हैं । उसे चाँद, सितारे और सूरज कुछ भी अपना नहीं लगता । उसके फूलदान के सत्र पूज्य मुग्ध गये । उसके कटोरे में चाँदनी घुस नहीं उँडेसती । उस के काँ बेलों में खड़ रहे हैं । उसके बहुत-से बने घोंसी पर झूल गये । बेल में उसके फेटी को जो रोटी मिलती है, उस में रेत और कंकड़ मिले रहते हैं । उसके सामन वाल के नाम पर सूरज बना है पीला-पीला पानी । माया माता सब जानती है, सब समझती है । उसके हाँठ गुरदरे हैं । वह कभी हँसती नहीं, हँस सकती ही नहीं । उसके लिए अँसू, पूज्य और ओग एक ही गये; उसके लिए हर श्रुत एक समान है । उसके लिए बचन तो कभी जाता ही नहीं । उसके सत्र-के-सत्र के घोंसी पर लटक गये । सब स्नान समाप्त हो गया । उस के कटी की हाँडियाँ जूया बनार का रही हैं । उनके शरीर पर लहू की रेखाएँ हैं । वे सब अत्यन्त रहती है माया माता । फिर वह कैसे गा सकती है ! अत्यन्त

में बाढ़ आ रही है, फिरंगी का श्रेष्ठ माया माया के चेटी पर मेघ बन  
 कर पड़ता है; गोखियों की बर्त होती है माया माया के लाली पर !  
 की मैं तो आया था कि मैं कलकता में ही रह जाऊँ; वहीं पकड़ा जाऊँ, वहीं  
 जेली पर लटक जाऊँ । पर वहीं मुझे अटुल को बात सदा कौंटे की  
 तरह चुम्बने लगती थी—“कलकता में रहकर तुम दिर्घांगमुल का कार्य  
 कैसे कर सकते हो ?” दिर्घांगमुल का कार्य तो दिर्घांगमुल से ही आरम्भ  
 करना है । इसीलिए मैं यहाँ चला आया । जब मैं आया तो मेरे हाथें कन्धे  
 पर बहुत खूबसूरत लगी बहुत बदन निकला । किसी प्रकार मैं बच गया ।  
 मेरे कन्धे में अमी तक दर्द है, परवाह नहीं । सोचा, कुछ दिनों  
 मामुली में बिता सकूँ, कान्ति की आशा वहीं भी मझका सही तो आसपास  
 होगा । वहीं तो आप हैं अन्ध और हमसब अटुल भी है । पर मामुली  
 में तो कोई कान्ति का नाम नहीं जानता । वहीं तो हो ही प्रकार के मनुष्य  
 हैं—या तो वैष्णव सभी में हैं मऊ और मोहार्ह, जो लोक को भूलकर  
 ब्रह्मलोक का ध्यान करते हैं, या फिर निर्बल और अज्ञानों फितल, मनुष्य  
 और नाबालिग हैं । दिर्घांगमुल बसो ही नहीं, आसपास के गाँव वाले भी  
 तो मामुली वालों को मूर्ख ही नहीं महामूर्ख समझते हैं, अन्ध ! दिर्घांगमुल  
 बसो ही को लो, किसी को मूल करना चाहते हैं, तो उन्हें ‘मामुली से  
 आस हुमा’ कहकर पुकारते हैं । इसीलिए मैंने सोचा कि जेली पर मृत्यु  
 का आसिगन करने से पहले मामुली के गाँवों में रहूँ और उन्हें सच्चा  
 दिखाऊँ ।”

अटुल ने कहा, “माया माया को तुम कलकता में ही छोड़ आये ।”

अर्पणन्दी कुछ न बोली । देशभक्त भी चुप रहा ।

आरती पात आकर बोली, “भूतद पर बैठे-बैठे मैं ने सब सुन लिया ।  
 देशभक्त, यह तो बताओ कि माया माया का कलकता में ही छोड़ आये ।”

अटुल ने आरती के शपथ में कुछ कहा ।

आरती चमक रहा था ।

आरती ने आप के पार गिलास बनाये । एक-एक गिलास सब के हाथ

में था। आंखों ने भी अपना गिलास मुँह से लगा लिया; फिर उस ने पचपकर कहा, “बापू, तुम बलदी करो। मोर ने पहले ही नाब खोल केनी चाहिए मैं भी बलूँगी।”

अतुल बोला, “पर मेरा नाब खाना ठीक न होगा।”

“तुम नहीं खाओगे।” बेकान्त ने गम्भीर होकर कहा, “यह मैंने पहले ही सोच लिया था।”

“मास्त मास्त बलकता मे रह गइ।” अतुल ने हँसकर कहा, “निर्गमस्त मास्त तो बही है। अच्छा तुम हो आओ मामूली मास्त के पात, बेकान्त।”

वे सब मास्तार्थे एक हैं, अलग अलग नहीं।

बमान्नी बोला, “यह तो एक सामान रुपये की बात बही बेकान्त ने।”

फिर बनान्नी ने नाब तैयार की। बेकान्त और आंखों नाब में बा बैठे। नाब खली तो अतुल बेर तक लड़ा बेकता रहा। बर नाब आँख से ओम्हा हो गइ तो वह भी धीरे धीरे गाँव की ओर हो लिया।

उदा न आँखें मलकर आमी निर्गमस्त की ओर नहीं देना था।

## दस



प्रभुस का मस्तिष्क पृथ्वी रूप में एक बुद्ध का और वह काम करने में समर्थ था।

बात मिलनी लीची थी ठकनी ही बटिल मी।  
‘दिलगी का खोब भारत माना के केने पर दिल का  
मेघ बनकर बरसता है’—देवचन्द का यह बोला उनके  
मस्तिष्क से टकपटा रहा। मित्रता ही वह इतने भूलने

का फल करता ठकनी ही वह बिचार उसका पीछा करने लगता, देवचन्द ने  
यह भी तो कहा था—‘कलकत्ता में रहती है भारत माता। वह बहुत भूली  
है, बहुत दुबली हा गढ़ है। माने लगती है तो गरीब मी उनके करद में ही टूट  
जाता है।’ रहती होगी कलकत्ता में भारत माता। मैं तो कलकत्ता नहीं गया,  
मैं वहीं जाना मी नहीं चाहता। जाना होना तो देवचन्द के साथ हो जाता।  
मेरे लिए तो दिलीगसुन ही अच्छा है मैं तो दिलीगसुन के लिए बीना  
चाहता हूँ और दिलीगसुन के लिए ही मरना चाहता हूँ। मेरे लैल की माटी  
निद्रा में भी मेघ पीछा करती है। जिस माटी ने मेरा जन्म हुआ, मुझ पर  
तो उसी का श्रुत है। मुझे तो उसी का श्रुत चुकाना है। इसी माटी में  
मिल जायदा मेरा शरीर। तब श्रुत कुछ बाधगा। नहीं, नहीं, क्लिप्त  
नहीं। बीते की सुने कुछ करना होगा, कुछ कर के निश्चय होगा। बीते  
को।

मरत में क्या नाम मेरे हुए बहुत दिन हो गये थे। वह भारत के द्वार  
पर खड़ा था। एक-दो बार सखी मी ने आवाज देकर उसे धीतर बुलाया।



उस ने मों की आवाज अनमनी कर दी। मों के सम्बन्ध में देवचान्त से कही  
 ॥ वह जैसे उसे मार आ रही थी। टीक ही तो था। जो मों बन्म देती है,  
 जो मास पर्यन्त शिशु को पे में रखती है, वह मों क्या इतनी शीघ्र मुलाह  
 का करती है? इसीलिए तो मैं ने देवचान्त से कहा था—‘मों का आशीर्वाद  
 सिमे बिना क्या माछ माता की सेवा सम्भव है?’ जो माछ माता कलकला  
 में रहती है, उसे मैं नहीं जानता। वह चुपसी हो गई, तो मैं क्या करूँ?  
 उसका रीति कष्ट मैं ही दूट जाता है, तो मैं क्या करूँ? मुझे तो अपनी  
 ही मों प्रिय है।

मों की आवाज आई, “भीतर आओ, अगुल !”

उस ने मों की आवाज फिर अनमनी कर दी, पर उसके मस्तिष्क में  
 जोर का मन्दरप लगा।

मयल से बचकर नय धान की मुगन्ध आती रही।

यह जान उस ने अपने स्वेत में डगाया था, अपने हाथ से उगाया था  
 इसके लिए उस ने लहू-परीला एक किया था। निर्मोहमुन की जिननी  
 मुन्दरपा थी, उसके पीछे धान की वासियों मुन्दरपती थीं। धान ही जीवन  
 का तात्त्विक था। धान ही त्यौहारों का जीवन था। धान था तो गीत और  
 गाय अष्टक लगते थे। बरती की कोश से धान उमी प्रचार उगाता था, जिस  
 प्रकार निर्मोहमुन की स्त्रियों अपनी उत्तम को बन्म देती थीं।

मयल से हटकर अगुल गोहानी की ओर चला गया, वहाँ कपिला  
 गाय बैठी थी। कपिला के साथ पर का मंगल हुआ हुआ था। इस बार  
 कपिला का बड़ड़ा होगा जो बड़ा होकर इस में जुगगा। पचुनी बार भी  
 तो कपिला न बड़ड़े का ही बन्म दिया था। उनके पर में तो सात गावें  
 थीं गली में कपिला ही लक्ष में अच्छी थी। यह कपिला की आँखों में  
 भौंझा रहा, जैसे कपिला न पचुना चाहता हो कि मों और माछ मला  
 के सम्बन्ध में अगुल और देवचान्त में ने किन्हीं बात लक्ष है।

सामगरी ने बाहर आ कर कहा, “आज तुझे क्या हा गया, अगुल ?  
 तू अन्दर क्यों नहीं आता ? यहाँ राहा क्या कर रहा है ?”

इतने में मलना और रेणु आकर अगुल की टोंगी से लिपट गये। सोनपाही उन्हें बहावा बेती रही, “छोड़ना मत। ऐसे माँगो, मेवा की गोंड खोलो।”

अगुल ने गोंड खोलकर माई-बाबू को दो-दो ऐसे में टापी कर दिया। सोनपाही बोली, “आज सबेरे-सबेरे तुम कहाँ गये थे?”

“मर्मन्दी काय के घर।”

“वहाँ क्या था?”

“देवकान्त को पहुँचाने गया था।”

“आबी रत के समय? ऐसा क्या कार्य था? वह स्वयं नहीं था। सकता था?”

“बताऊँगा, माँ। ऐसा ही कुछ कार्य था। बेचाप कलकत्ता से सीधा हमारे घर आया। अपनी माँ से मिलने भी तो न था सच।”

“अब मिल लेगा। माँ की वह कौन परवाह करता है? कलकत्ता न उसे निमाड़ डाला। तेष बापू करता है कि देवकान्त आवाप हो गया। उस का बापू उसे देखने को लज्जता मर गया। अब इस कम में वह माँ की सेवा भी करने से रहा।”

“वह तो मत कहो, माँ।” अगुल सुस्वरपा, “वह तो पढ़ा-लिखा और बुद्धि-रिप सार्व है। मैं उस के साथ बूझा हूँ कि बाहर की बुद्धि तुम्हें भी आता है।”

“पर तेरे बापू को देवकान्त के साथ तेष बूझा अच्छा नहीं लगता। मेरी बात गोंड बीच ले। आज का दिन तो आज का दिन, आज से उस के साथ बसकर न बसना। और क्या उस दिन निपुण्य क्या लाया था?”

“सिली की मेरी हुई अलमिया बाहरिल की पोथी। वह मैंने बापस कर दी।”

“अच्छा किया। मेरे बेटे को क्रिस्ताल बनायेगी वह पुईल। हरि हरि सोनपाही भीतर पसी गए। मलना और रेणु मिटार साने के लिए बसपुत्र।

भनसिंह की बुद्धन की ओर भाग गये ।

अनुप ने कपिला की गोँलों में झूँक कर कहा—‘देवदत्त कहता है कि माछ माछा के फेंकड़े चाकल पक्षियों के समान हैं । उसे चाँद, तारे और सूर्य कुछ भी अच्छा नहीं लगता । क्यों कपिला मेरा, ठीक कहता है देवदत्त ?’ गाय ने सिर हिलाया । अनुप ने इच्छा यह भाव समझा कि गाय इन्कार में सिर हिला रही है । उसे बड़ी खुरी हुई । गाय ने उस का हाथ देकर सघबनीय कर्न किया । वह ठनकर खड़ा हो गया । मैं देवदत्त को बता दूँगा कि मैं न भी मर्त्य बीकन नहीं रिताया । मैं अचिक पक्ष सित नहीं लख, तो क्या हुआ । बापू से तो फिर भी अच्छा हूँ । बापू तो झेंपूटा ही लगा सछता हूँ, मैं तो अपना नाम भी सित सछता हूँ । बापू की सब से बड़ी इच्छा यही है कि मैं एक दिन उस के सम्मने ही गाँव-बूढ़ा बन जाऊँ मों भी तो यही चाहती है मों का आरुणवाद मिला तो मैं अक्षय बन जाऊँगा गाँव बूढ़ा । पर क्या गाँव बूढ़ा बनना मुझ रोमा देगा ? नापकस दापेगा कर बार लोगों को कुत्ता मझता है । साधारण से आपपय के बदले वह सटैव मर खोब का साम्हित करता है अपने बूट की ठोकर । बहुत बुरा करता है नापकस दापेगा । किन्तु वह बूट लगवाता है, वह बहुत पसिदा-चिल्लाता है । उस की बीखी बापू के स मुक्ता रहता है, उस के झोंख बापू के स देखा रहता है । पर अक्षर तो बापू यही कहता है कि उस ने नापकस दापेगा का यह अत्याचार किन्तुम नहीं देखा जाता । ता फिर वह नापकस दापेगा ने क्यों नहीं कहता यह बात ? अमी अगले ही दिन मगत की कह रहे थे कि मल, बासी और कम में अक्षर हाने में मनुष्य जीने-सी ही मर जाता है । हमने बापू के सम्मने यह बात क्यों नहीं आती ? नापकस दापेगा बापू के नामने किना अत्याचार करता है, उस बापू के स मद लेता है ? मैं ता यह सब नहीं मद लऊँगा । कपिला न फिर कुछ इस प्रकार सिर हिलाया जैसा यह अनुप को हों-मैं हों मिला नहीं हा । चाँदा सैमलकर अनुप ने कपिला के कम में कहा— देवदत्त कह रहा था, कपिला मेरा, कि माछ माछा के लिए चाँद, अल

और पूरा एक ही गये। भाऊ माता के लिए हर श्रुत एक समान है। उसने लिए वस्तु तो कभी जाता ही नहीं। उनके सब-के-सब पूरा धर्म पर मूल गये। मुन्हाय क्या बिचार है, कपिला मैया ! क्या देवदन्त टीका कह रहा था ? कपिला ने निम न दिखाया। अतुल बिलकुल न समझ सका कि कपिला देवदन्त से सहमत है या नहीं। कम ने दोबारा कपिला के कमरे में कहा— देवदन्त यदि हकता ही बीर है तो वह माय क्यों जाता ? यदि मायका था जाता था, तो गया ही क्यों था ? मन बसती और कम में अन्तर होने से यही दृष्टा होता है। इस से तो स्वयंसे प्रसन्न होते-ही पर जाता है। मैं ऐसा नहीं कहूँगा मैं गाँव जाता नहीं दूँगा। यदि मैं नापसन्द शत्रुका का अन्तःकार कम नहीं कर सकूँगा तो उसका साथ भी नहीं दूँगा यह भी नहीं कहूँगा कि मोर्छा कुछ और कम कुछ। मैं ने समझ लिया है कि संसार में महान काम ही कर सकता है जिस के मन बसती और कम में समझ भी अन्तर नहीं रहता। देवदन्त ने मुझे शिखरे की शान्तिधारियों की कहानियाँ सुनाई हैं वे पने ही आत्मी थे। वे माने से दृष्टे व थे जो सोचते थे वही कहते थे और वही करते भी थे। एक बात तो समझ में आती है कि कम पर न ही आत्मन किया जाता है। भाऊ माता के दृष्टि निमिषात्मा में ही किये जायें। भाऊ माता बलवत्ता में रहती है तो क्या निमिषात्मा में नहीं रहती भाऊ माता ?

हैं-हैं करते करने कभी पिछाड़े के पान्तर की ओर गली जाती, कम उबर से मागती हुए बाहर लड़क की ओर निकल जाती। अतुल अन्वन्तक ला होकर कमली की ओर देखने लगता कभी उसकी हाँस छटनारे पर बैठे बचपन की आद कभी जाती कभी उसकी कल्पना में शस्य-यमानता भूमि का पटार बस जाता था लाला उमलता आया था। एक बार फिर उसे रिफार आया कि पटार का माटी ला नित्रा में भी उमल पौछा करती है और उमल भूमिपट पर हस्तक लेती है बैन पूछ रहा हो—मुझे क्या कर तो नहीं पथ बाधामे ?

तबना उमे प्याम आया कि बैली को जात तो जाना हा नहीं। "ह"

## ग्यारह



“भगत बी, भगत बी !” नीलमणि न आवाज दी।  
 ‘मीठर से बारीक-सी आवाज आइ, कौन है !’  
 नीलमणि गिड़गिड़ाया “गौब की पगड़ी उतर गई।  
 तुम बैठे मरि कछे रहो। यह एक दिन होकर रहना  
 था। अब भी समय रहते हम कुछ तो कर सकते हैं।’  
 ‘कुछ बताओगे मो ?’

‘तुम छोड़े रहो हरि नाम की यादर। शिर्गोमणुन बिनो पारे मेरे,  
 तुम्हें क्या ?’  
 हाथ में लालनेन उठाये भगत बी बाहर बिछले। उनकी लम्ब में यह  
 बात बही आ रही थी कि शिर्गोमणुन पर देना क्या सब्र आ गया है।  
 नीलमणि कहे जा रहा था “झोर कर आधा तोर्य-यात्रा। कोर तीर्य  
 रह गया हो तो बहाँ भी हो आओ। यहाँ तो अपसी कशी नष्ट हो रही  
 है।”

‘यमी क्या बात हो गई ? भगत बी ने लालनेन उठाकर नीलमणि  
 के मुख पर प्रहार डाला ‘तुम्हारे बुझाओगे या कुछ बताओगे मो !’  
 “बनारसी और आली की हिरात में से लिया गया।” नीलमणि  
 की आवाज मरार डूर थी। “यह नष्ट नापस्य दारोगा का नया रोल है।  
 यह शिर्गोमणुन को पूरी तरह लांछित और अपमानित करने पर दण  
 गया है।”  
 भगत बी कुछ न समझ सके कि मामला क्या है तोच-विचार कर बोले,  
 [अधपुत्र

“वहाँ तक आखी की बात है, तो बेसी दुस्तारा वैसी ही आखी। पर  
धर्मनन्दी की बात दूसरी है। नाम है धर्मनन्दी, पाप करता है मोर लम्बरे।  
मछलियों का शाप तो लगना ही था एक-न-एक दिन।”

“और भी तो मछुप हैं, अकेला धर्मनन्दी ही तो मछलियों नहीं  
पकड़ता।”

“हमारे मुखेब कह गये हैं कि ऐसा युग आयेगा जब मछुप ही मछुप  
होने और मछुप ही मछलियों।”

“ये शून्य-ध्यान की बातें तो पीछे हो चार्यमी, भगत की। अभी याने  
बलना होगा। हम धर्मनन्दी और आखी को लुझकर लाएंगे। नापक्य  
हावेगा हम से बाहर भी तो नहीं था लकड़ा। उसकी बौबली हम नहीं  
बलने देंगे।”

“तुम हो आखो याने।”

“आप नहीं बलेंगे।”

“मैं वहाँ क्या करूँगा।”

मीलमधि की भगत की से यह उत्तर सुनने की आशा न थी। वह  
लोचने लगा—तो फिर भगत की लका यह दावा क्यों किया करते हैं कि  
सच्चा वैष्णव वही है जो पराह पीर जाने और पराये धर्म आवे।

यह अकेला ही बेलगाँव की ओर चल पड़ा, वहाँ दिखानुल का धान्य  
था। बार बार उसे ध्यान आ रहा था कि बेसी येहु देती आखी। अकेले  
धर्मनन्दी को नापक्य हावेगा ने हिपसत में लिया होता तो कदाचिद  
मीलमधि को इतना आश्चर्य न होता। ऐसी बटनार्थ तो प्राय होती आह  
थी। पुस्तिक का धर्म था शान्ति बनाये रखना, कानून की रक्षा करना।  
पुस्तिक के धर्म में राजा बटकाने का तो प्रसन्न हैं। नहीं उठता था। अपराध  
तो अपराध है। यह अपराध धर्मनन्दी करे पाहे कोई और। पर देवारी  
आखी के मुँह से तो अभी बूध की बू भी नहीं छूटी। बचपन में देवारी  
की माँ मर गई। मगधपक्ष के मुँह में बली गई थी उसकी माँ। धर्मनन्दी  
ने इतना तो अच्छा किया कि दोहाय विवाह न करवा। आखी को लौंतेली

मों के हाथों पलना पड़ता तो बेघारी की माफगारों बचपन से ही दुपत्ती वाली। बड़ी ही सयानी लड़की है। हाफ-बाजार के दिन कोद उसे धर्मनन्नी की लहाफता करते देखे। वह तो अपने बापू के लिए लड़का बनकर काम करती है। पर नापयण दादगा को वह क्या खूबी कि आखी को भी पकड़ कर ले गया।

वह शीमता से पलता था रहा था। उन न सोचा कि मगत की राय नहीं आये थे तो अम्मुलखदिर को ही ले लिया होता। अम्मुलखदिर तो शायद आयु में हम दोनों से बड़ा है। उसे मैं ने ही तो बताया था कि जब तक वह इन पर नहीं जाता रिशौंगमुन को ही काया मान ले। उस ने इन पर जाने का विचार ही छोड़ दिया है। लम्बा इधर तो अपना मन है। मन साफ़ हो तो सब ठीक हो जाता है। अगर उसे विचार आया कि अम्मुल को क्यों साथ न ले लिया। मरी आँखों के सामने वह देखे गौँ-बूड़ा बनेगा, यदि वह इन प्रकार के मान्यों को समझेगा नहीं? उसे पूरा विरहात था कि नापयण दादगा उनकी बात रत लेगा और अम्मानन्नी और आखी को छोड़ देगा।

अगले ही घण्टा उसे विचार आने लगा कि अब तक तो धनानन्नी की रूप विदार हो चुकी होती। पिदार करने में तो नापयण बहुत बहुत है। पिदाद के नये-नये उपाय निकालता है नापयण। उसका लहाफत मने मे नूँचे मिमा मिता कर लगवाने का इतना खौफ़ शायद ही किसी और दादोगा को हो। मैं धनानन्नी ने कहकर एक दोक़ा मछलियों मित्रता बूँदा, अपने घर मे दो बोरी बल्ल मित्रता बूँदा और एक बोरी कबूतर भी। धनमिह से कहकर तीन मछली बूँध भी मित्रता बूँदा। यदि वह नहीं भेजेता तो हमारे घर में भी तो तीन गाँवें बूँध देती हैं। जिम प्रकार मी हो, मैं नापयण का लुहा कर लूँगा। उनकी रत तो मेरे हाथ में है। आखिर मैं रिशौंगमुन का गौँ-बूड़ा हूँ। मरु बापू भी गौँ बूड़ा था और अब तीसरी पीढ़ी में भी गौँ-बूड़ा की परबी हमारे पास ही रहेगी। गौँ-बूड़ा की परबी के तो नौ लान हैं। गारे गौँ में अपना ही राब है। बा

मेरी ओर धौंस उठाकर भी नहीं देख सकता। मीरी, नेपासी और अठमिया—तीनों आपस में फिटना भी भगड़े, मेरी आवाज तो तीनों ही मानते हैं।

बल्लते-बल्लते वह लोबने लगा—मैं तो खाली हाथ हूँ। खासी हाथ में फिट्टी का काम बना है। पुलिख का तो किम्वद्व ही ऐसा है। ये लोग या तो नख नाचक्य चाहते हैं। फिर अण्णो-खाली बूँत—बोरे मुर्गी सुगर या कपूत-बल्ल। उनके भी मैं तो जाना कि उन्होंने पैरी लौटकर नाचक्य दायेगा के लिए एक मोटा-ठा सुगर ही उठवा लाये। सुफ्त में तो जाने मैं डाल गलने में रही। पर अब इतनी दूर आकर लौट जाना कठिन था। वह कलही-कलही काम करने लगा।

बह बह जाने के द्वार पर पहुँचा तो ठठ ने तारों को ओर देखा। अभी तो तीन बहे पठ थी।

ठठ ने अपने मन में कहा—मैं भी फिटना मूर्ख हूँ।

बह जाने के सामने टड़कता रहा। ठठके भी मैं तो जाना कि बेसगॉव में फिट्टी के घर बाहर आगम करे, या कहीं से नाचक्य दायेगा के लिए बोरी दक्षिणा ही लेता आये। पर ठठे आज इत कार्य के लिए साहस नहीं हो रहा था।

बीरे बीरे भार हुए। प्रतीक्षा की बहियाँ गिन-गिन कर सूरज निकला। पर जाने मैं अभी तक नाचक्य दायेगा के स्थान में हूँ।

पहरे वाले सिनाही से नीलमणि ने पूछा—अन्तर्मही और अम्ली को दायेगा भी क्या छोड़ रहे हैं।

सिनाही ने बिगाड़कर कहा, 'यह क्यों पूछ रहे हो।'

नीलमणि बोला, 'मैं गॉव-बुड़ा हूँ।'

सिनाही ने कहा—'ता फिर गॉव-बुड़ा होकर भी बूँत-पौते बन्ने के का रहे हो, मैंने कुछ मानून ही न हो। दायेगाभी को सभ पया पल गया है।'

'मैं तो अब से शिपनागर गया हुआ था। दायेगा भी को मेरे जाने



को खूना तो रे बो ।”

“हमारी बखिया !” सिपाही हँस पड़ा ।

भीलमणि ने जेब में हाथ डाला । जेब में कुछ न था ।

किसी प्रकार सिपाही ने दापोया भी तक गोंब-बूझा के आने की ह्द  
तो पहुँचा ही, पर दापोया भी में बाहर मँडक कर भी न देला ।

## बारह



बेसमर्थ और आत्मीयता के बीच का रास्ता जिस से  
 चले करते थे। नीलमणि की कल्पना में उस का  
 घर सम्पत्ता रहा।

स्तिमिदानी दिल्ली की तरह वह अपने बानीये  
 में पुष्पे बना तो पीछे से मगल की की आवाज आई,  
 "हुड़ा लाये बमाल्दी और धावो को!"

नीलमणि ने बोर उठर न दिया।

वह फिर उठकर अपने बानीये में चला गया।

सामने जालम में रोयनी में अटुल कुछ पढ़ रहा था।

'आ बरे, बानू!' अटुल ने उठकर नीलमणि का स्वागत किया।

नीलमणि ने मुँह फेर लिया, बेते किसी ने उसके चेहरे पर कागल  
 पत्र ही हो।

अटुल एक बरस में सब मीन गया।

नीलमणि कुछ न बोला। वह आज मरणा का रोमा के हाथों कुटी  
 तरह अरमानित होकर आया था। दारोमा की आज पल-पल बाद निरमिद  
 के कमान रव कभी चला रहे थे। जिस कालकर चले भी करते थे, धनधते  
 भी थे और पुनःचले भी थे। धनधन्नी से ऐसा क्या अपराध हो गया।  
 उने क्या मारुत था कि बेकान्त धमोदा है। यदि कलकता के किसी  
 कान्तिकारी दल के साथ उसका सम्बन्ध है और कलकता की पुलिस उसका  
 पीदा कर रही है, तो उसके माथे पर तो नहीं लिखा था कि वह मयोदा है।

यदि भ्रमलन्ती ने उसे अपनी माथ में उस पार लगा दिया तो बीन्हा  
अपराध किया ?

अतुल ने कहा, “भ्रमलन्ती काका की बहुत अधिक पियार तो वहीं की  
गई, बापू ! और आखी भी उलटी तो वहीं लटकाई गई ?”

नीलमणि कुछ न बोला । उस ने कुछ कहने का मन अवश्य किया,  
पर उसके अँधू निष्ठा आये, सिर में चक्कर आ गया । सिर का दोनों हाथों  
में घामकर नीलमणि ने कहा :

“बेटा, देवघन्त बलकला के किसी क्षेत्र में दूँग मया है, और अब वह  
मातकर आया है । उसकी जान संकट में है । वह अचोप है और बैसे ही  
तुम भी हो ।

“बस इतनी बात थी, बापू !”

“तुम मेरी बात कभी नहीं समझोगे ।”

“मालव ?”

‘मालव वहीं घेरा, कि मैंमलकर और घारे से पग उठाओ तो गिरन  
का मय कम रहता है, नहीं तो राहु बाती और पात लगाये बैठा है ।”

“कौन हमारा राहु है, बापू ! तुम तो स्वय ही पचय बात हो । देवघन्त  
की देवघन्त जान । भ्रमलन्ती काका और आखी को नाचयल दायेमा आब  
नहीं ता बल छोड़ देगा । उनके माथ कोर अपराध नहीं मका बा एक्ता ।”

नीलमणि मुमि पर बैठ गया । उस ने अपना सिर दोनों हाथों में घाम  
रना था ।

‘गोली छूटी है, पानी गले में !” नीलमणि ने दोनों हाथ आकार  
की ओर उठाकर कहा “राहु पात लगाये बैठा है ।”

“नारायण नारायण न अचरय ही कुछ कहा होगा, बापू ! दायेमा न  
क्या कहा है ?”

नीलमणि दोनों हाथों ने सिर घामे रहा और बलाबल बोला,  
‘देवघन्त का एक मगादा बनकर तिरा रहेगा ? नारायण दायेमा उस  
पकड़कर ही बिन लेगा । देवघन्त घाँसी पर मूल्य आदगा । रही उनसे

इच्छा थी थी। पर तुम अब मूलकर भी गाँव में दण्डान्त का नाम  
 न लेना, नहीं तो हमारी बहुत हानि होगी, बेटा। मेरी सब से बड़ी इच्छा  
 यही है कि तुम्हें अपनी आँखों के सामने गाँव-बूढ़ा की पदवी पाले देखकर  
 ही आँखें बन्द करूँ।”

आतुल ने कुछ उत्तर न दिया।

# तेरह



राजाल अथवा बासी यात्रियों के साथ वस से उठते  
पहले वह पोंगूनी ने घोड़ाही पहुँचे थे; फिर घोड़ा  
से चोरहाट के रास्ते शिकमागर की सन्ध यात्रा की  
तेरह मील का सफ़र अभी सामने था जिने का  
पैसा ही तय करना था। बड़े आपस से काफ़ी  
अपना विस्तर करने पर रमा।

यह सोच तो बहुत अधिक न था। काफ़ी ने केवल एक बार पोंगूनी  
मुझकर देखा। पुराने मॉडल की बर्तनी-ही वस वहाँ लड़ी थी। रास्ते-में  
इस ने चिटनी धूल उड़ाई थी चिटने पनके लगे थे चिटनी बार दा  
उलझते-उलझते बन गई थी, वह कहाँ भी बहुत लगती थी। रास्ते-में  
को यह कहानी तिल-तिल पाती थी। वह मन ही-मन हँस गया। यह  
भी कोई सवारियों में सवारी है। हम ने तो हाथियों की सवारी की है—  
एक बर नही, दो बर नहीं पूरे तीस बर—एक कम न एक अधिक, तीस  
बर, पूरे तीस बर।

यह शिकमागर से दिर्गमगुप्त जा रहा था। आज से तीस बर पहले  
भी यह सड़क कच्ची थी और आज भी वैसी ही है। पहले चिटने गड्ढे नहीं  
हैं। हमी महीने भर मिट्टी ढाली गई है। सरकार को प्यार तो है।

सड़क के दोनों ओर के पेड़ चिटने बरतल गये थे। चिटनी बार बर बर  
पोंगूनी के बंगल में निर्गमगुप्त आया था, हम बार को सड़क बर हो  
गया। सड़क के दोनों ओर के पेड़ काफ़ी की कटपना में कुछ टप-तप गये थे

अब वे फिर ठहर रहे थे ।

हर क्षम पर की ओर उठ रहा था । अपना घर जिसे प्रिय नहीं होता !  
अपने घर को अपने वाली सड़क जिसे प्रिय नहीं होती !

तीस वर्ष पहले उसका चौदहवीं बाने का संकल्प इतना ही दृढ़ था,  
जितना अब छोट बाने का था । सात ब— पहले भी वह दिखौंगमुन आया  
था । अपने गाँव आना जिसे अप्पन्न नहीं लगता ! अब तो वह सदा के  
लिए चौदहवीं से होट रहा था ।

दिखौंगमुन में कोई हाथी न होगा । बंगल तो दिखौंगमुन में भी है—  
बसमा बिल का बंगल और फकुली बिल का बंगल । दोनों मस्ती के चारों  
ओर बंगल-ही-बंगल है । बाघ तो हैं इस बंगल में हाथी नहीं हैं । हाथियों  
के लिए तो चौदहवीं ही सब से अधिक प्रसिद्ध है ।

इसी सड़क से वह पैदल शिकरागर पहुँचा था—तीस बर पहले ।  
तब वह बच्चा था । शिकरागर से गोहाटी और गोहाटी से चौदहवीं उस  
ने पैदल ही की थी वह बाह ली मील से ऊपर की यात्रा । उन दिनों उस ने  
यह यात्रा कोई बीस दिन में की थी । सरे से साँझ तक वह प्यता ही  
रहता था जो कगह बीमार भी तो हुआ था । अब तो वे दिन बहुत पीछे  
चुन गये थे ।

सड़क के दोनों ओर पेड़ थे । अब वह शिकरागर से बहुत दूर निकल  
आया था । सड़क के दोनों ओर थोड़े-थोड़े अन्तर पर कई गाँव थे । दोनों  
ओर दूर-दूर तक लेन चले गये थे । खुले पठार में चाल को लेती होती थी ।  
पर पठार तो दूर तक चला गया था ।

एकजान बाघ को चौदहवीं के विद्याल बंगल की यात्रा आ गई । वहाँ  
के हाथियों का ध्यान आते ही बाघ की कल्पना में नार्मन साहब का  
वेहरा उभरा । तीस बर पहले उस ने यह वेहरा पहली बार देखा था और  
वह नार्मन साहब ही का होकर रह गया था, जैसे वह दिखौंगमुन से  
पलकर चौदहवीं में नार्मन साहब ही को मिलने गया था । यह बात उस ने  
नार्मन साहब से भी कह दी थी । यह सुनकर नार्मन साहब आनन्द विमोह हा

छटे थे। उस समय रास्ता काका भी गुरो से फूला न समाया था। अब तो काका अपने गोंध को लौट रहा था। उसे उस निश से भी कहीं अधिक आनन्द आ रहा था। नामन साहब तो पिछले महीने अपने देश को लौट जाने का निश्चय कर चुके थे। अब काका को मालूम हुआ कि वे फेठमी रेल एक-दूतरे के साथ रहे थे।

यह जानते हुए भी कि अब रास्ता बितरा रह गया काका बेसे ही लक्ष्मी अपने-आपने बालों से पूछ लेता, “निर्धोगमुन् बिठनी दूर है।” इसका उत्तर तो यही होता, “पान ही तो है निर्धोगमुन्।” यह सुनकर काका को बिठनी गुरी होती थी। गुरी तो होती ही है। पर का रास्ता बिठना भी बंद जाय, पर बिठना भी समीप आ जाय, उसी ही उम्मीद बगती जाती है।

यह सन्तोष तो काका का सग ही रहेगा कि वह तीस बरस का सम्म विद्याल और बन बंगल में गुजारकर आ रहा है। काका को गुरी भी तो यही कि वह अपनी बन्धुमूमि को लौट रहा है, वहाँ दूर तक फैला हुआ शम्भु-श्यामल पठार है; वहाँ बचपन के चिर-परिचित लोग होंगे। हाथी मले ही न होंगे आठमी तो होंगे। क्या आठमी हाथियों ने अच्छे हाव हैं? अरे-बाबा, हाथी तो बहुत अच्छे होते हैं। बड़ बड़े काय करते हैं वे हाथी। शान्त गम्भीर और बचवान्, वे सब हाथी तो पीछे रह गये।

काका पुनः में मस्त पन्ना आ रहा था। पीठ पर विस्तर का बोझ कुछ कम न था। उसे ध्यान आया कि हाथी तो बहुत बान्ध दांठ हैं। हाथियों के हल गनी झिजारे पानी पीते हैं। ता ठगड़ी लम्बी परछाईयाँ अन्त जाने दूर के भाव परि के अन्धकार में बिलीन हो जाती हैं। एक स्थान पर रुक कर काका पीछे की ओर देखने लगा, जैसे लौंगूरी का बंगम वहाँ से अधिक दूर न हो और वह वहाँ लड़े-लड़े पानी पीत हाथियों का देग मचना हो।

काका चाहता था कि अगर ता उसे पहचानकर कर, “कहो पाणन काका, लौंगूरी न अब मने थ।” काका खनता था कि उसका आकार

प्रभर दूसरों से मिल है, उसका बोलचाल का साहस भी दूसरों से नहीं मिलता। जो आत्मी हाथियों के बीच तीसरा बिठाकर आ रहा है, वह दूसरों से मिल बैठे नहीं होगा। हाथी स्थिर बुद्धिमान होता है यह तो कोई मुझ से पूछे। हाथी में दोष भी होते हैं। क्या मनुष्य में दोष नहीं होते? हाथ-ही-नाथ बेलू यह तो मेरा धर्म नहीं है। मेरे गुरु ने तो यही सिखाया है कि पहले गुण देखो और पीछे दोष।

अब त्रिगुणधुर न था। यहाँ से कोई मील-भर होगा जेनगाँव को त्रिगुणधुर की पहली बस्ती थी। कुछ लोग जेनगाँव को त्रिगुणधुर से अलग गिनने लगे थे। अलग कहीं या जेनगाँव, यह तो त्रिगुणधुर की ही एक बस्ती थी। रामायण का काल का घर आलीखीगा को मीठी बस्ती में था। राम से पहले-पहले वह अपने घर के द्वार पर पहुँच जाना चाहता था। उसकी कल्पना में राम साहब का चेहरा उभरा। उस से तो मैं ने अच्छी अच्छी बातें सीखी, मल लगा कर धार्य करना सीखा। काय तो छोट्य नहीं होता। कार्य न करो तो मस्तिष्क को खंग लगा जाता है। खंग तो सोरे को भी काटता है। धार्य करना ही अच्छा है, कोई-सा भी धन क्यों न हो—यही तो कहा करते थे मानन साहब। यह भी ता कहा करते थे—‘बस एक बार निश्चय कर लो कि यह धार्य करना है, लो उस से पीछे न हटो।’ मैं आलीखीगा पहुँच जाऊँ, नार्मन साहब की बातें तो मैं सब का सुनऊँगा। जयपल मगत मुझे बोक कर कहेंगे—‘कोई दान प्यास की बात करो।’ पल से जमुनाधरिद अपनी ही बात छेड़ देगा। वह जानी तक हब को नहीं का सख होगा। मीलमणि गाँव जूना तो अज भी उस से दही बढ़ता जागा—‘मिर्दी भी, दब तक हब को नहीं का सखते त्रिगुणधुर को ही काया कमल लो।’ मिर्दी भी ऐसा नहीं कर सखते। मरने से पहले एक बार तो उन्हें हब पर हाँ जाना चाहिए। यह काय आवश्यक है ता इसे करने में रेर नहीं लगामी चाहिए। मगत भी ने तो कोई तीस नहीं छोड़ा होगा। पिछली बार मैं त्रिगुणधुर जाया था, तो मगत भी रमने-बर होकर आये थे। एक हमारा नीलनारि है कि त्रिगुणधुर को ही काशी मान बैठे है। अज-



सिंह का लक्ष्य है प्यास पिलाना । खान को हवामय बनवाने वाले चाहिये । नीलमणि का बड़ा बेय अमुल तो अब खान हो गया होगा । अमुल का छोटा भाई मन्ना भी अब एक-एक बर्ष का हो गया होगा तीन बर्ष का था, अब मैं पिछली बार दिखाने मुन्ना आया था । तब तो मेरी गोद से छटपटा ही न था । अब तो मुझे भूख गया होगा । नये सिरे ने पहचान जोड़नी होगी । मुन्ना है चित्तप्रसाद का भाय अम्मा क्या निश्चला है । सस्त भाव अम्मा और मुन्ना लपेटकर मँहमे भाव केन डालता है । अपना अपना धर्म है । धर्मालम्बी उसी प्रकार मनुष्यों एकता होगा । वेतन नागरिका और बाल नागरिका में उसी प्रकार अन्तर चलते होंगे । वेतन की नाब में तो इबिन लगा है, जो डोकल आकल से चलता है । वह नाब तो स्टीमर पाद के मैनेजर इहमन साहब की है । इन नाब में बुझी सवारियों बैठती हैं । बेतारे बादल साधारण का टीकल आकल तो उन की मुश्कलों में प्रवाहित होन वाला एक है । वह तो वेतन से आधी सवारियों ही चित्त सञ्चाल है । इसलिए वह वेतन की नाब से बुझा चित्त लेता है एक सवारी से एक फेरे का, तो कौन बुझ मानता है ? पर बेतारे बादल को वेतन की नाब चलन के पश्चात् ही तो कभी-कभी सवारियों मिल सञ्चाली हैं । इसी को लेकर कभी कभी दोनों में अन्तर हो जाता है । गाली बजने में तो पेट नहीं मट्टा । गिर-मुन्नाल में भी कहीं मरता है पेट ? पेट तो मेन मिलाप से कार्य करने पर ही मट्टा । मन्ना चाहिये । यह न हो कि कार्य ही न मिले । कार्य ही नहीं होगा तो मनुष्य क्यायेगा कहीं से ? और क्यायेगा नहीं तो क्यायेगा कहीं से ?

अन्तर्गत पीछे लूट गया था । अब तो नामने बचमा बल्ली नजर आ रही थी । उसे प्यास आया कि नामने साहब ने उन का पता तो चित्त लिया था । वह तो गये थे कि चित्तप्राप्त में चित्ती मिले । भूख तो न बर्तये । अन्तर्गत मगत को तो मैं मे पिछली बार भी नामने साहब की बर्तये सुनार थी । नामने ने मगत की 'हरि हरि हे माधव' की दर लगाने समते थे, वेने हरि मो कोर हापी हो । दूसरे कोयी और मगत को मैं बस इतना ही

अन्तर है कि मातृ की बात बात में 'हरि हरि हे माधव' कहते हैं, तो दूसरे लोग 'बड़ छिछकारी' की रट लगाते हैं। उन्हें हर काम बहुत बड़ी छिछकारी का अर्थ प्रतीत होता है। छिछकारी या कटिमार्द क्या है? वो काम करना ठहरा उसे तो करना ही होता है। मैं तो अभी 'बड़ छिछकारी' नहीं करता। मैं तो 'हरि हरि हे माधव' भी नहीं करता। हरि तो मला हाथी का कम कैसे धारण करेगा? पिछली बार मैं दिसाँगमुख आया था तो मातृ की न एक उखा की क्या सुनार् थी। वह उखा अगस्त्य ऋषि के हाथ से हाथी बन गया था वह क्यों एक बड़ बगल में घुमता रहा 'हरि हरि हे माधव' की रट लगाने से वह हाथी फिर मनुष्य-योनि में आ गया था। हाथी की योनि और मनुष्य की योनि—दोनों में अन्तर तो अक्षय है। हमारे नामन साहब तो हाथी को भी 'बेखलायेन' करते थे। अब बलमा बत्ती पीछे सूट गई थी। सूर्य अस्त होने में अभी ढेर थी।

बाबा के काम अब उठनी तेजी से नहीं उठ सकते थे। वह बहुत थक गया था।

आलीखीया बाबादर में अवसिंह और खन ने एकल को प्रणाम किया। फिर विद्याप्रसाद ने बाबा को भाव के लिए रोको, पर बाबा घर से लौट आने का वचन देकर आगे बढ़ गये।

हाट बाबादर वाले मोड़ पर अतुल मिला गया। उस ने कहा, 'प्रणाम बाबा।'

एकल ने अतुल के सिर पर प्यार का हाथ फेरकर पूछा, "गाँव में सब कुछ शान्ति तो है? हमारे गाँव-बूँडा के घर में तो सब कुशल ममल है?"

अतुल ने सुन्करले हुए बाबा का विस्तर अपने कंधे पर ले लिया।

"तुन बनो, अतुल!" बाबा ने कहा, "मैं ब्रह्मपुत्र बेकता से मिल आऊँ। देखा के दखन किने बिना मन मानता नहीं।"

अतुल पर की ओर बल दिया और एकल बाबा ब्रह्मपुत्र की ओर उतर गये।

सड़क से ब्रह्मपुत्र का अन्तर काका ने कोह साध धरने में तय किया ।  
आत्र काका बहुत थक गये थे । ब्रह्मपुत्र शान्त गति से बह रहा था ।

धुन्ने टेक कर काका ने दोनों हाथों ॥ बरती का सहारा लिया । फिर  
काका पूरे तरह मुक कर ब्रह्मपुत्र का पानी पीने लग गये । फिर दोनों हाथों से  
पानी शेकर काका पानी गिराने लगे ।

सूख अस्त हो रहा था । दो मेप-खरदों के बीच सूख कितना निम्न  
प्रतीत हो रहा था, जैसे सूर्य ने काका को पहचान लिया हो । आकाश पर  
एक नयनामिषम चित्र अंकित हो गया था—दो हाथी दोनों ओर से  
अपनी अपनी सूँठ उठा कर काका का आभेवादन कर रहे थे ।

# चौदह



कमान्नी और आखी अभी तक पुलिस की हिफाजत में थे। देवचन्द न जाने कहाँ छिप गया था। नाचण्ड्य दारोगा की पही ड्यूटी लगाइ गए थी कि वह देवचन्द की गिरफ्तार करके पेश करे। पुलिस को समझ था कि देवचन्द का सम्बन्ध बंगाल के एक आठकवादी दल से है और उस दल की ओर से उसे

कठन में सरकार के विरुद्ध कानून की आज्ञा मढ़वाने के लिए भेजा गया है।

एक-दो बार रामानन्द का भी नाचण्ड्य दारोगा के पास हो जाने से और दारोगा ने साफ-साफ कह दिया था कि जब तक देवचन्द हथ नहीं आ जाता कमान्नी और आखी को छोड़ना बंठन है।

तापन सीरी तो उलझ झुलझ को भी इस मामले में केंजाने की कितना में था। उस ने रामानन्द काय के सामने मना करने पर भी नाचण्ड्य दारोगा के नामने बंदर गवाही दी कि बहाँ तक उसे ज्ञान है अगुन ही देवचन्द को कमान्नी के पास ले गया था। यदि गाँव के कुछ लोगों ने दिन में पन्तिह अगुल कानून और कानून मगत के अतिरिक्त सम्बन्ध काय भी मन्विजित थे, बीच-बचाव न किया होता, तो बैठे-बिठाने नीजन्ति पर मुँह का पहाड़ टूट पड़ता।

तापन की विनम्र आशा न थी कि रामानन्द काय सीरी होकर नीजन्ति का साथ देगे। उस ने तो अगुल कानून को भी यह पही पन्ती ठुँक कर दी थी, “एक बंदर से सीरी और मुजममन का पैर हो सक्ता

है। जब मुसलमान और मीरी दोनों ही मुर्दे को दबाते हैं, फिर कौन कह सकता है कि मुसलमान तो अरमिया के ही समीप हैं। यह और बात है कि अरमिया और मुसलमान दोनों अरमिया बोलते हैं और इस दिखाव में मुसलमानों की गिफ्तो भी अरमिया में ही की जाती है।

उत्साल काका के यहाँ पहुँचने के तुरन्त दिन ही उनकी अनुपस्थिति में सावन उन्हें 'हाथी काका' कहकर उनका उपहास करने लगा और वह काका के लिए पुष्पों से सज्जित करने में भी न हिचकिचाया—'बह हाथी पुष्पों लिये आ रहा है और बीच इगार में बैंगनचोर को पकड़ना चाहता है।' सुनने वाली ने यह खबर उत्साल काका को भी का सुनाई, पर क्या मजाल कि उन के माथे पर एक भी बल पड़ा हो बल्कि मुन कर बैठने लगे।

उत्साल काका धीरे धीरे ऊर्ध्व करने के आम्बस्त थे। उनके बोलने के ढंग में हाथी को उठाने और बलाने का ढंग था। बात बल में हाथी का उल्लेख करना उन्हें बखिर था। उनका संस्करण दृढ़ था। वे विनोय का सहचर न थे। यद्यपि काका ने अपने आप को रिवाज के पहर से अलग ही रखा था। फिर भी उन का विश्वास था कि स्त्री को भी उसी प्रकार निधान की आवश्यकता है जैसे हथिनी को।

बमलन्दी और आखी किसी प्रकार पुलिस के कन्डे ने निष्कल आर्से, उत्साल काका को तो यही चिन्ता भाये आ रही थी। दिन दिन वे शिर्मासुग पहुँचे थे, बमलन्दी और आखी के इस कन्डे में कैंकने का यह तीनप दिन था। आब था पौनर्वाग्नि। काका ने कुछ स्थापन न दिया उन्हें अनुभव की प्रतीक्षा थी।

काका के पास तो बड़े-से-बड़े संकर के लिए भी हाथी को निधान ले चढ़कर दूरी उपमा न थी। यहाँ पहुँचने के पहले दिन ही ब्रह्मपुत्र बेपना के दशन करने के परनात् जब काका मीलमणि के घर पहुँच था, तो अनुभव न ही सप्रथम उन को बमलन्दी और आखी के संकर की बहानी सुनाई थी। उसी रात काका ने पान में बकर नाशान्ना दायमा ले बहा था, "बमलन्दी को आब मने हो पाह दिनने त्रि राँ, पर आखी थ तो अर

छोड़ देना चाहिए।" फिर काका ने कल्पपूर्वक कहा था, "लड़की को साने में साने का मामला तो बहुत देना है। इस में तो सारे गिराँगमुल के मान अप्रमन का प्रमन है।" पर नारायण कब सुनने वाला था ? काका ने नर्मन साहब की प्रशंसा आरम्भ कर दी, वे तो इतने मझे आदमी थे कि जब उन्हें पता चलता था कि बौद्धिक का अमुक हामी बीमार है, तो छत-छत मर जाते रहते थे।" नारायण ने हँसकर कहा था, "यह तो सरकार की पगड़ी पर हाथ डालने का मामला है। इस में तो नप्पी नहीं बप्पी का सक्ती।"

कल मी सारा दिन काका ने कुछ बर्ही खपा था। वह तो अपनी ही म्पीपड़ी में बाकर खमा चाहते थे, पर गाँव-बुढ़ा ने उन्हें बिसकुल न छोड़ा। अटुल मी बही इठ करता रहा था कि अभी वे यहीं रहे। उनके लिए पोस्टर के फिनारे बाली नर म्पीपड़ी लाली कर दी गई थी, वो अभी कुछ ही दिन पहले अटुल ने अपने लिए बनवाए थी। कल काका ने प्रातः और सायंकाल एक-एक गिलास चाय अक्षय पी थी, पर नीतिमणि और सोनपाही के बार-बार अनुरोध करने पर मी काका के मुँह में चास का एक मी दाना नहीं गया था। कम्पास मगत और अच्युल बाहिर मी दो-तीन बार मिलने आये थे। उन्हें मी काका के कुछ न खाने की बहुत चिन्ता थी पर वे जानते थे कि काका तो जब उसी समय अनशन तोड़ेंगे, जब बनानन्दी और आखी सुदकर आ जायेंगे, या कम-से-कम नारायण गतेगा आखी को ही अपन छन्दे से निकल देगा।

काका का विचार था कि नारायण गतेगा मी एक प्रकर का बंगली हापी है और दल करने से उसे अक्षय सिपाया का सक्ता है, पर नीतिमणि कल रात उन की इत बात पर देर तक हँसता रहा था। काका ने बहुत गम्भीर होकर कहा था, "बैठा हापी का संकट, बैठा ही मनुष्य का, लख टीक हो जायगा। बुद्धि चाहिए और समय भी।" पास से अटुल ने पूछ लिया था, "तो क्या आप ब्रह्मपुत्र के संकट को मी हापी का ही संकट कहेंगे, काका ?" इस के उत्तर में मी काका ने यही कहा था, "हाँ हाँ,

मेरे लिए तो ब्रह्मपुत्र की वाढ़ ऐसे ही है, जैसे तो हाथी माले जैसे आ रहे हैं। बड़ी वाढ़ के लिए पोंच तो हाथी की गिस्ती कर ला। महाफर चाहिए, फिर कुछ भी बठिनाइ नहीं रह जाती।”

आब अकल कहाँ पला गया ? बार-बार काफ़ अपने मन से पूछ रहा थे। थाने गया होगा। मुझे भी क्यों न ले गया ? उस ने सोचा होगा कि एक रात और एक दिन की भूल ने ही काफ़ को बहुत कमबोर कर दिया है और अब उन को आराम करना चाहिए, पर आराम करने के लिए तो हे ही नहीं यह बीकन। कुछ-न-कुछ तो करना ही होता है। नार्मन साहब तो यही कहा करते थे। अपने देश में पहुँचकर भी तो वे लात्ती हल नहीं बैठे होते। बलते समय नार्मन साहब न बताया तो था, “अब हम उखी नगर में आकर रहेंगे, वहाँ हमारा जन्म हुआ था; और वहाँ एक बन पड़ेगा, हम अपने लोगों की निष्काम सेवा करेंगे।” यहाँ मैं तो अब यही करूँगा। मुझे तो आते ही जय मिल गया। बित समय मैं यहाँ पहुँचा और फ़तनबी की गाथा सुनी, अपना मुन्ध-बैन सब भूल गया। यदि मायबस् इतोया मेरी बात मान लेता, तो उस का क्या पर जाता ? बमानन्दी को न छोड़ता तो न सही, आख़ती को तो छोड़ देता। आब तो मुझे गाँव के सौ-पचास आन्मी साथ लेकर जाना चाहिए। मैं देखूँगा कि नारामण कैसे आख़ती को नहीं छोड़ता। आब क्यपास ममत भी नहीं आये। अम्बुल काटिर भी नहीं आया। अवतिह और रतन तो क्या शकल दिमायेंगे ? उन्हें प्यास पिलान और इकामत करने से काम। काम तो आचार और साधन मीरी भी आये थे, आब ये भी नहीं आये। साधन तो शाद नाराज हो गया। अब मैं उनकी भीड़ में आकर क्या करूँगा ? अपना हा न छोड़ देता है न बेटी। साधन दूर के सम्बन्ध में मेरा भीतरा अक्य है, पर क्या रक का सम्बन्ध ही सब मे बड़ा सम्बन्ध इतना है ? अब मैं बमानन्दी की चिन्ता में डुबा जा रहा हूँ, ला हल में बीन ला रक का सम्बन्ध है ?

दोहरार का मगत भी आ निकले। ठण्ड पीढ़-पाह, गुरगुरी पर बर

सगला नीलमणि भी आ गया। बागीचे में बरछों की हैं-हैं ने एक स्वर ताक गोंब लगा था। कमी-कमी ये बरछें सामने बाले पोखर में धरने लगती।

मगत भी बोले, “बोहाग बिहू में सात दिन रह गये।”

“वैत के अन्तिम सात दिन शेष हैं।” नीलमणि ने गुड़गुड़ी पर कहा, “यह हिचान तो सीबा है। बोहाग बिहू में सात ही दिन तो रह गये।”

बोहाग बिहू से इतर बात कुछ प्रकार बगधाप्युटी की रच-यात्रा र बा पहुँची, इसका रास्ता को पता ही न लगा।

“अब अगली तीर्थ-यात्रा पर रास्ता को भी अपने साथ ले जाला, मगत भी।” नीलमणि ने हँसकर कहा।

“यदि तुम भी संकल्प कर लो तो साथ ही चल कर लें।” मगत भी गम्भीर होकर बोले, “अपका क्या है? सुनताप का विवाह बोहाग बिहू के पन्चास ही करने का विचार है। फिर तो हमें छुड़ी ही-छुड़ी है।”

“कोई लाइफ ठीक कर लिया?” नीलमणि ने गुड़गुड़ी को मुँह के पान लाकर कहा लगाया, “कहाँ ठीक किया लाइफ? मामुली के किसी गाँव में? लोग हँसेंगे ‘मामुली से आया हुआ’ जाला धम्म उस पर तो कुछ बैठा जेगा अपका महामूल। बात तो ठीक है। मामुली वाले अभी हम लोगों से तीन सौ रुप पीछे हैं। आप हैं कि केवल इसी कारण कि मामुली में चार बड़े बेप्यास घर विद्यमान हैं, सुनताप को मामुली में व्याहने का संकल्प कर चुके हैं। इस में तो रास्ता की सलाह अवश्य ले लो, मगत भी।”

“रास्ता को तो मामुली अग्रिम न होगी। क्यों, रास्ता मारें?” मान भी मुन्दराने।

रास्ता चुन रहा।

मगत भी ने अपने धेरे मुपीर की प्रशंसा आरम्भ कर दी। मुपीर का विवाह पिछले वर्ष हो गया था। पर मैं बड़ी समझदार बहू आह भी। शिकाटी गाँव की लाइफी थी। मामुली में शिकाटी गाँव तो मजिद था।



मयल की को शिखायी गोंब के साथ लगे हुए कीतायी गोंब में झुत्ताप के लिए एक लड़का ठीक होने की आशा की।

अचानक बत्तनों की बें-बें और पक्षियों की चबि के ऊपर उमरकर एक पतली-सी और अत्यन्त बेचा-भरी आवाज सुनाई देने लगी। नीलमणि ने छड़गुड़ी पर रफ्त हुए कहा, “अब मैं छड़गुड़ी को मुँह नहीं लगा सकता।”

“ऐसी क्या बात हो गई।” राजाल काका ने मूट पूछ लिया।

“बढ़ कोयल की बूक दे।” नीलमणि ने बालों के घेनों में अम्रपत्र और मुक्काम समेटते हुए कहा, “सुन नहीं रहे। कोयल बूक रही है। मैं तो अपने हृदय में कोई पुरानी बेरना बागते बेल रहा हूँ।”

“तो यह कहो कि जमी हृदय में यौवन की तरंगें दौर हैं। मयल की झुम्कपने।

बढ़ देर तक कोयल की बूक सुनते रह और फिर बातलार का कम न जाने किस-किस प्रसंग पर चिन्मत्ता रहा। राजाल काका अत्यन्त-ने हूँ हों करते रहे। उनके सामने तो एक ही प्रश्न था कि बारगल हटोमा को कैसे सिखाया जाय।

इतने में अचानक होझा हुआ आया।

पुलिन ने बर्मान्दी और आरती को छोड़ दिया था और बढ़ उन्हें पर पहुँचा आया था। वह बहुत खुश था।

उस वर प्रस्नी की बौझा होने लगी। वह बड़े धैर्य से उत्तर देता रहा; बैसे यह दिवंगिमूल्य की विजय हो, बीसे दिवंगिमूल्य का अचानक होने होने नब गया हो।

राजाल धीरे से उठकर बर्मान्दी से मिलने जाता गया।

बर्मान्दी अपना बाल उठाकर धर से निकलने वाला ही था कि राजाल वहाँ आ पहुँचा।

“आलो, दादा!” बर्मान्दी ने मुस्कुराते हुए स्वागत किया, “धार्दिकी से क्या आये?”

बर्मान्दी के मुख पर कोई पचपहच न थी आरती के मुग वर भी कोई

साब न थी। वो कुछ हुआ, उसका उन्हें तनिक भी खेद न था। वो कुछ उन्होंने किया, उस पर उन्हें गर्व था।

रामलाल यह देखकर बहुत प्रसन्न हुआ। बसों करते-करते वह दूर तक उनके साथ गया। ब्रह्मानन्दी ने गाब पानी में उखाड़ी, रामलाल बिमारे पर ही लड़ा रहा। बड़ी चपचापा, बड़ी पुपनी नाव आखती क हाथ में था चप्पू और ब्रह्मानन्दी के हाथ में था बाल, जो उनके जीवन का अक्षरान्वित था।

पुपनी नाव चंचल जहरों पर खिरछती आ रही थी। बुढ़ा रामलाल अपनी कमर को सीधा रखते हुए आश्चर्य की ओर देखने लगा जो ब्रह्म स्वयं ही अपनी नीलिमा पर मुकुरा रहा था फिर वह बायु में घनी हुई कुम्हार पर विचार करने लगा—वह तो नेपालियों की चितालिया बस्ती की ओर से आ रही है जिसके पीछे विर्ताग बनी के साथ-साथ दूर तक फड़फुड़ी बिल और कलमा फिल का बंगला बसा गया है। फिर वह रामलाल ने देखा कि ब्रह्मानन्दी की नाव झॉल से झोमला हो गई तो वह उस बड़ी नाव को निहारने लगा जिस पर ब्रह्मानन्दी ने झोपड़ी बना रखी थी। यह नाव सदा यहीं बंधी रहती थी। बलमा बस्ती में अपना घर छोड़कर बहुत दिनों से ब्रह्मानन्दी नाव पर बनी झोपड़ी में रहने लगा था।

वहाँ लड़े-लड़े रामलाल अपनी कल्पना के पट्टे उठाकर आब से सदा भर पहले का विश देखने लगा ब्रह्मानन्दी गम्भीर मुद्रा में आखती से कह रहा है—तू मेरी बेटी वहीं आखती, तू मेरा देहा है। फिर अपना तो कया ही देहा है, देहा। साथ विर्तागमुक्त एक ओर, तेरा बायू एक ओर। अपना तो वहीं विचार है, देहा। आखती सामन से कुछ नहीं बोलती। ब्रह्मानन्दी फिर कहता है—मधुए की बेटी किसी से दूरकर रहे, वह तो उनके कचे की दुधार नहीं है कय। आब से तू मेरे साथ चला कर। तेरे हाथ में चप्पू रहे, मेरे हाथ में बाल। हम देखेंगे, कैसे नहीं मिलती मद्धनियों मस्तिष्क को मद्धन-सा लगा, रामलाल ने गम्भीरकर सोचा—सदा भर बा आखती बेटी ही जन गार, बेसी एक मधुए की बेटी होनी चाहिए।

## पन्द्रह



अनुसूत जानता था कि ब्रह्मपुत्र की वाढ़ को भागते हुए हाथियों के मुख से उभरा देना ठीक नहीं, पर सोम के विरोध की वाढ़ तो बहुत कुछ बेसी ही थी। तब से पहले ब्रह्मपुत्र मगत के मुख से ही वह आकाश निकली—‘आब आखी धाने गर, कल गूँठार बापगी!’ फिर तो हर घेर अपनी डेरी का बदन का

नाम जोड़कर इस आपाक को आगे बढ़ाने लगा, और अब जब ब्रह्मपुत्र और आखी को लूटकर आगे बढ़ दिन हो चुके थे, सोम इस बात में ब्रह्मपुत्र निर्णय सजाकर इसे पैना रहे थे। ताकन मीरी को भी अपना मगदय सिद्ध करने का अवसर मिल गया। वह कह रहा था, ‘मीतर से बेवचन और अनुसूत होनी एक है। ब्रह्मपुत्री केपाए तो निर्दोश है। पर तो अनुसूत के बढ़ने पर ही बेवचन को उस पार छोड़ने गया था।’ मगत को ये तब ब्रह्मपुत्री और अनुसूत दोनों पर ही रोग मोल रह थे।

पन्द्रह की बुझान पर आखी का उल्लेख बनी फिर लिप्यार हाथनी के रूप में किया जाता, बनी ठाने ‘ब्रह्मपुत्री की हदनी’ बढ़कर बात उदनी जाती। लम्बी हाँकर आखी अपने पिता के साथ मगदयों बढ़ने का, पर बात लोनी को सुरी तरह गलतने लगी—‘आखी निर्दोशपुत्र का नाम टपानी। वह शिवनागर की लहकियों के नामान भाड़ी बनी पहनी है। पर फिर उदाहर बनी बनी है। बनी बनी के मुँह आगे वह लम्बि भी बनी नहीं लिप्यारती।’ एनी-देनी बातें आखी के फिर घेरकर बनेक

धन्य करे जाते, और अगले ही सुबह बात का इतना बदलकर कहा जाता, "यदि देवदत्त और अतुल जैसे छोड़ों को आपा पापी करने को छूट दी गई, तो सरकार हमारे बिच्छू हो जायगी। फिर पुलिस को अचरित मिल जायगा कि जैसे उस दिन आरती को याने में बुला मेवा था, वैसे ही दूसरों की बहु-बेरियों को हिरासत में लेकर मानने की पुष्टता करे।"

मगत भी न तो अतुल से बात करना मी छोड़ दिया था, वैसे अतुल पर सब से अधिक श्रेष्ठ मगत भी को ही आ रहा हो एकल काय के करने पर मी वे रुक-से-मल न हुए। गाँव में दूसरे लोगों से मी एकल काय ने बहुत कहा-सुना। मगत या कि कितने सहज माय से काका न बंगली हाथियों को सिखाया होगा, लोगों को सिखाना सम्भव नहीं।

घर में नौसमर्थि मी चुप रहने लगा था। मगत भी की बात उसे टीक प्रतीत होती थी। साथ ही वह सोचता था कि इस प्रकार तो सरकार में बनानी हो जायगी और अतुल को गाँव-बूढ़ा की पत्नी नहीं मिल सकेगी। नायक्य दायेगा के पास बाहर वह बहुत गिड़गिड़ाया कि वे अतुल को सम्मिल्यें।

एक दिन अतुल को याने में बुलाकर नायक्य दायेगा न पहले तो एक घण्टे तक उसे पूछा तक नहीं कि वह किस लेख की मूली है, फिर उसे मीतर बुलाकर पुचकारा, "तुम्हारा तो बाबा मी गाँव-बूढ़ा था। फिर गाँव बूढ़ा की पत्नी तुम्हारे बापू को मिली। अब तुम्हारा बापू चाहता है कि यह पत्नी तुम्हें मिल जाय। यह कुछ मी घटन नहीं। तुम देवदत्त का पता बता दो, तो हम देवदत्त को बिनाकुल पता नहीं बनने देंगे कि उस का भेद तुम ने ही बताया है।"

'तुम्हें देवदत्त का बिनाकुल पता नहीं।' अतुल ने बलपूर्वक कहा।

नायक्य ने दोषाध पुचकारा

"तो फिर बनानी को सम्मिल्यो कि यह सहायता करे। सरकार इनाम देगी। सरकार कोद मी हो, लोगों का काम है सरकार की आज्ञा मानना और अतुल का पालन करना। अतुल तो आकर-रुक दे। अतुल के

किंवा तो शांति स्थिर नहीं रह सकती। शांति न हो तो किसी वस्तु का ठिकाना ही न रहे। जब आहोम राजा थे, तब उनका कानून स्वतन्त्रता या अन्तर्देश का कानून है। बहुत सावधान बनाया गया है कानून। का मनुष्य कानून को उलट देना चाहता है कानून पर जिसी दुरा सरकार को समाप्त कर देना चाहता है, क्या कानून उसे कमी क्षम्य कर सकता है ?”

अनुसु कुक्ष न बोला।

राजपण्य न फिर कहा, ‘तुम चाहो तो तुम्हारे बापू की यह दृष्टि पूरी हो सकती है कि एक दिन उसके स्थान पर तुम गाँव-बूढ़ा बनो। केवल एक ही शर्त है कि देवकान्त का पता ज्ञान में सरकार को उदास्ता करो। देवकान्त हाथ लगे तो मरघ मी पर बड़ खप।”

अगले दिन अनुसुल न मों को बताता था वह बोली, ‘देवकान्त तो सरकार को जॉन में बॉटे की तरह चुम्का है। तुम कुछ दिन बचकर रहो। मैं तो कहती हूँ कि तुम घमानन्दी से मो न मिला कर, कुछ जिनों में बल दब जायगी। यदि देवकान्त ने सरकार का कुछ बिगाड़ा है, तो उनका दण्ड उसे अक्षय मिलेगा। तुम क्या मुझ में बदनाम होते हो ?”

अनुसुल न कुछ उत्तर न दिया। मों ने सम्झा कि उनकी बात से अनुसुल प्रभावित हुआ है उस ने बलपूर्वक कहा, “अपन बापू की आर देव और मेरी आर भी। नू हमें मुक्त देना चाहता है या कुल ? यह तो मैं मान ही नहीं सकती कि नू हमें मुक्त देना नहीं चाहता।”

पक्ष से राजपण्य काका ने बात आरम्भ कर दी, “सोच तो जागत है जो अनुसुल और घमानन्दी को दोष देता है। देवकान्त के माथे पर ता नदों लिगा हुआ था कि वह अपराधी है। देवकान्त न मनमुप कोर अपराध किता है। तो पुलिस का काम है कि उसे पकड़े और जमानती में ले जाय। अनुसुल और घमानन्दी का क्या दोष ? आरती का ता बिलकुल ही बोर दोष नहीं था। जब घमानन्दी देवकान्त को उस पार लाइन गया, तो आगो हर रोब की तरह नार का न्यू खपा रही होगी। अब यह तो ओर दरपण नहीं।”

“तो फिर अपराध किसका है ?” सोनपाही ने चकित होकर कहा।

“मुझे पूछो तो अपराध नापसण्ड हायोगा का है।” रामलाल ने खोर देकर कहा।

“हायोगा का क्या अपराध है ?” सोनपाही मुस्कराए।

“मैं उसे जानता हूँ। उस ने सैन्ना पर पाने का एहसास समझ लिया है। वह सग्रा ऐसे कार्य करने में ही साहस दिखाता है, जिसकी वजह सग्रा जैसे अधिकारियों तक का पहुँचती है। हाट-बाजार में या सड़क पर लोगों को नोकर भाँखे नापसण्ड हायोगा को तनिक भी संकोच नहीं होता। वह गन्गी से-गन्दी गाला बेता है, लोगों को बूट की टोकर मारता है और अपने अपराधों के बूटों के तख्ते सोखते और कपड़े हुए भी वह जप नहीं शय्यता।’

“हम तो अपनी बात करें, उसकी बात उनके साथ रही।’

“यह नहीं हो सकता। मुझे अपनी बात तो कहने दो। तिरपाही से इकलतार तो कहानी ही बन गया था नापसण्ड, पर इकलतार से हायोगा कन्त उसे बहुत डेर लगी। उसकी आराधना निम्नकर भीबता बन गई। यह भीबता उसे बैन नहीं सेने देती। उसे सदा यही दिखाई देता है कि दुनिया सरकार के बिच्छू परदम्न रूप रही है। उसके बूट की टोकर में बैन-बैन मद्र पुरुष साहित्य और अपमानित नहीं हुआ होगा। जब वह इकलतार था, तब से उसका यही काम रहा। इससे यही इनसम मिला कि उसे हायोगा बना दिया गया।”

इतने में नीलमणि भी बाग उठा। उस ने रामलाल की बातें सुनीं तो दोनों हाथों से फिर पकड़ लिया। सरेरे के स्र के अकार में रामलाल की मुस-मुस्रा बहुत गम्भीर दिखाई दे रही थी।

रामलाल का बुरा एहसास बाला था, वह कहता बना गया, “ये सीता, बा आर ध्यानमयी और अतुल को मुण कहते हैं स्वयं बैन से अष्ट हैं। देवकान्त का क्या अपराध है, वह मैं नहीं जानता। इसलिए देवकान्त के सम्बन्ध में अभी मैं चुप हूँ।”

अनुस ने कहा, "शिक्षागार में जो कुछ होता है काफ़ी, वह भी तो हम से थोड़ा बड़ी।"

"सुन से तो कुछ भी किया नहीं।" राजा ने हँसकर कहा, "जो-कुछ के बंगल में मैंने तीस बर्ष गुज़ार दिये, वह तो सब जानते हैं। मैं हाथियों के बीच रहा, इसलिये हाथियों की बात अधिक जानता हूँ। पर जब मैं वहाँ गया था। गाँव में साधारण झगड़ा होता है। फिर वह झगड़ा मार-पीट में बदल जाता है। जाने वाले सोचते हैं—हम किस लिए हैं? वे नहीं चाहते कि झगड़ा शान्त हो जाय। उनकी ओर से तो यही फल किया जाता है कि झगड़ा शिक्षागार की कचहरी में पहुँचे। म्याय का नामक आज़म होने से पहले दिवौंगमुन का यह सूत्र था—यह हमारा मापदण्ड टाटोगा—मंगलाचरण के साथ किसी की प्रशंसा करता है और संक्षेप में बड़ी कहानी दोहराता है जो कचहरी की मंजूमि पर इस से पहले हज़ार बार दोहराई जा चुकी होती है।"

नीलनखि ने मुँह झुकाकर कहा, "तुम अपनी वैद्य से हाथ धाकर रहते।"

"तुम्हीं बात कहने से वैद्य बाली है तो बाप।" राजा ने गर्मीर हाकर कहा, "तीस बर्ष तो हाथियों के बीच बिता दिये। अब थोड़े-से बर्ष मनुष्यों की सेवा में बिताने का विचार है। वह विचार मुझे नामन साहब से मिला। नामन साहब ने ही मुझे यह भी सीखा कि मजने से पहले मनुष्य अपनी कमजोरी की थोड़ी निष्क्रम सेवा अवश्य कर बाप। हाँ, तो मैं कह रहा था कि शिक्षागार की कचहरी में हर रोज़ सूत्र का नामक लेना जाता है। सूत्री माछी देने वाले बितने पारा मिल जायेंगे। हमारे दिवौंगमुन में भी ऐसे लोगों की कमी नहीं। किहें और कोर बाप नहीं, वे सूत्री साछी देने में ही भोगद बना मण्डूया बनने वाले बाले हैं। भूम के बिना तो नामक का पदा गिरता है म उगता है, इसलिए बगलों के जादे और रोचरी में घर-घर पर झरते शिक्षागार पहुँचाये बाले हैं।

। मण्डप

सुर्गियों और कबूतर, घुमर और मछलियों—इन्का तो कोर दिखाव ही नहीं रहता। घुस के साथ घुस, दही के साथ दही शिक्तागर का पेट ही नहीं मरता। पग-पग पर घुस बेकर ही मामला आगे बढ़ता है। घुस के लिए नये-नये शब्द गढ़े जाते हैं—दक्षिणा, मेट, अदा के पूजा—ऐसे-ऐसे न जाने किनेने शब्द घुस के लिए बरते जाते हैं।”

“वही तो देवधन्त भी करता है, क्या।” अतुल मुस्कय।

‘तो फिर वह ठीक करता है। वह बात करने से उसे कोर नहीं टोक सकता, यहाँ तक कि नाचक्य दापेगा भी। दापेगा के साथ जाने के लियेही ऐसे चलते हैं जैसे भूल बैताल। उन सब को दक्षिणा चाहिए। दही-घुस और मसलन ही नहीं इस, कबूतर और सुर्गी भी। नाचक्य दापेगा तो भूल-बैताल के देखा ठहरे। उसकी पूजा में चाहिए एक बीड़ा पनहंस। बाह रे बाह, फिरंगी राज। एक बार शिक्तागर का यह हाल मैं ने नामन साहब को भी सुनाया था। उन्हें विश्वास ही नहीं आया था। मैं ने तो निर्गोस्तु का हाल भी सुनाया था। एक बार हाथ में डाँसी हुए हथकड़ी को कुलबाने की दक्षिणा सी रुपये से एक दमड़ी कम नहीं लेते दापेगा की जैसे कम न बने तो अच्छा पानी मिचबाने की कमची हैं। लाख पोछो पोछो, लाख पैर पकड़ो। पगड़ी उतारकर उनके घरों पर रखो। बख़्खत् मसाम करो, चाहे देवता मानकर मंगलान्तरण पड़ो। ये देवता तो मुफ्त में पसीबने से रहे। कभी तो से उतरे भी, तो अस्ती पर आ बके। बात बात में दापेगा भी यही बोला मुँह पर कायेये—‘केल मुम्हारी यह देल रही है।’ कभी कहेंगे—‘केल का मात लाये बहुत दिन तो नहीं हो गये।’ अतुल, मैं तो यहो चूँगा कि केलगों का जाना सोंप का पिल है। सोंप का मन्त्र मान्य होने पर भी इस बिल में हाथ न डाला जाय, यही अच्छा है—”

“छाप उपदेश आब ही मुना जामागे।” नीलमणि ने पल्ला को दोका, “मुना नहीं, बीबार के भी कम होते हैं। ये बातें दापेगा की के कहीं तक आ पहुँची, तो लेने-दे-लेने पन् कायेये बैठे-बैठे सब मान-प्रतिष्ठा



अज्ञान ने कहा, “शिक्षागार में जो कुछ होता है काम, वह भी तो तुम से छिपा नहीं।”

“युक्त से तो कुछ भी छिपा नहीं।” उत्तराल ने हँसकर कहा, “जॉर्ज ह्यूजी के बंगला में मैंने तीस वर्ष गुजार दिये, यह तो सब जानते हैं। मैं हाथियों के बीच रहा, इसलिये हाथियों की बात अधिक जानता हूँ। पर अब मैं छत्त साल पहले लुई पर घर आया था, तो शिक्षागार का हाल मैंने अच्छी तरह देखा था। राँव में साधारण मगड़ा होता है। फिर यह मगड़ा मार-पीट में बखल जाता है। जाने वाले सोचते हैं—हम किस लिए हैं? वे नहीं चाहते कि मगड़ा शान्त हो जाय। उनकी ओर से तो यही फल किया जाता है कि मगड़ा शिक्षागार की कचहरी में पहुँचे। स्वयं का नाटक आरम्भ होने से पहले विसर्गमुक्त का यह सूत्रधार—यह हमारा नाट्यस्य व्योगा—मगजावरण के साथ फिरगी की प्रशंसा करता है और संक्षेप में वही कहानी दोहराता है जो कचहरी की राजमूमि पर इस से पहले हथार बार दोहराई जा चुकी होती है।”

नीलमणि ने मुँहझाकर कहा, “तुम अपनी पेंशन से हाथ जोकर रहाने।”

“तुम्हीं बात कहने से पेंशन जाती है तो जाय।” उत्तराल ने यन्मीर होकर कहा, “तीस वर्ष तो हाथियों के बीच बिता दिये। अब बोझे-से बर्ष मनुष्यों की सेवा में बिताने का विचार है। वह विचार मुझे बार्मेन साहब से मिला। बार्मेन साहब से ही मैंने यह भी सीखा कि मरने से पहले मुख्य अपनी कमरूम की बोड़ी विष्काम सेवा आकर कर जाय। हाँ, तो मैं कह रहा था कि शिक्षागार की कचहरी में हर रोज भूट का नाटक खेला जाता है। मूनी साक्षी देने वाले कितने पचास मिल जायेंगे। हमारे विसर्गमुक्त में भी ऐसे लोगों की कमी नहीं। किन्हीं और कोई कार्य नहीं, वे मूनी साक्षी देने में ही संतोष कहा उत्पन्न करते पले जाते हैं। बस के बिना तो नाटक का पर्दा गिरता है न उठता है, इसलिये बचलों के बोझे और डोकरी में मर-मर कर आये शिक्षागार पहुँचाये जाते हैं।

सुर्गियों और कबूतर, सुअर और मछलियों—इन्का तो कोर दिखान ही नहीं  
 रखा। वृष के साथ वृष, दही के साथ दही शिक्तागर का पैर ही नहीं  
 मखा। पग-पग पर घूस देकर ही मामला आगे बढ़ता है। घूस के लिए  
 नये-नये शब्द गढ़े जाते हैं—दक्षिणा, मेट, भद्रा के फूल—ऐसे-ऐसे न जाने  
 कितने शब्द घूस के लिए बरते जाते हैं।”

“यही तो देवदन्त की कहता है, काय्य।” अतुल मुस्कुराया।

“तो फिर बर ठीक कहता है। यह बात कहने से उसे कोर नहीं  
 ठेक लगता, यहाँ तक कि नाउम्य दायेगा भी। दायेगा के साथ जाने के  
 सिपाही ऐसे चलते हैं जैसे भूल बैठा। उन सब को दक्षिणा चाहिए।  
 दही-घूस और मक्खन ही नहीं, इस, कबूतर और सुर्गियों भी। नाउम्य  
 दायेगा तो भूल-बैठा के देकता ठहरे। उनकी पूजा में चाहिए एक छोड़ा  
 पकड़। बाइ रे बाइ, फिरेगी राब। एक बार शिक्तागर का यह हाल मैं ने  
 नाम्न साहब को भी सुनाया था। उन्हें बिजना ही नहीं आया था। मैं ने  
 तो विसौगुन्य का हाल भी सुनाया था। एक बार दान्य में डाही हुए  
 हवकड़ी को कुलवाने की दक्षिणा सी रुपये से एक हमड़ी कम नहीं लेते  
 दायेगा की जैसे कम न जाने तो कल्ला पानी मित्रवाने की कमकी देते हैं।  
 लाल पोओ-बोओ, लाल पैर पकड़ो। पगड़ी उतरकर ठबके चरखों पर  
 रण्ये। दण्डक मशाम करो, बाहे देकता मानकर मंगलान्तरण पड़ो। ये  
 देकता तो सुप्त में पसीकने से रहे। कमी लो से उतरे मो, ला अस्सी पर  
 आ रुके। बात बात में दायेगा की यही बात हुई पर लायेगे—बेल  
 गुन्हापी यह बेल रही है।” कमी कहेंगे—“बेल का मात राये बहुत दिन तो  
 नहीं हो गये।” अतुल, मैं तो यही कहूँगा कि बेलगाँव का याना लौप का  
 बिल है। लौप का मन्त्र मालूम होने पर भी इस बिल में हाथ न डालना  
 जान, यही अच्छा है—”

“धारा उपरेरा आब ही गुना डालोगे।” बीलनखि ने रस्ताल का  
 रोका, “गुना नहीं, बीबार के भी कम होते हैं। ये बातें दायेगा की के  
 कमी तक का पहुँची, तो लेने-दे-देने पर जायेंगे बेटे-बेट सब माल प्रतिष्ठा

जसी आयी ।”

“फिंगी राज को समाप्त करने की बात तो देवकान्त भी क्या है, क्या ।” अतुल ने गम्भीर होकर कहा, “पर क्या, वह तो अलग-थलग से मोर्चा आक्रमण करते दिशोगमुक्त से फिंगी राज समाप्त करना चाहता है और यह बात मैं नहीं मानता । दिशोगमुक्त का मोर्चा तो दिशोगमुक्त में ही समाप्त चाहिए ।”

“तुम सुर भी खोओ या नहीं, अतुल !” नीलमणि ने फटकार, “देखते नहीं कि गाँव में लाला तुम्हाय और चर्मनन्दी का नाम ले-लेकर क्या कुछ कर रहे हैं ! देवकान्त तो एक दिन पुलिस के हाथ पड़कर पड़ेगा । कहाँ जायगा भागकर, तुम भी कैओगे । मेरा नाम बदनाम करोगे । मेरी पदवी भी छिनेगी और फिर वह पदवी कभी तुम्हें नहीं मिलेगी । तुम्हारे बाबा की आत्मा को फिटाना क्या होगा । तुम न आगे से तुँह सँभलकर बात न की, तो मैं खूँगा मेरे घर से निष्का बाबू और अपना रखता बाबू !”

खोन्पाही ने मुँहलाकर कहा, “तुम भी तो अपनी जगह पर खड़े नहीं रख सकते । बात को बहाना तो कोई तुम से सीखे । गाँव में हर कोई अतुल के निरुद्ध हो रहा है । घर में भी तुम उसे प्यार-बुलार नहीं दोगे, तो उसका दिल दूब जायगा ।”

“अतुल कोई मज्दूर तो नहीं है कि उसे कोई धूँक मारकर ठप्पा देगा ।” खोन्पा ने गम्भीर होकर कहा, “हमारे नार्मन साहब कहा करते थे कि विवाद करते समय दूसरे की बात ध्यान से सुनो । बात का ठहर बात से हो, मुझसे नहीं । मुझका ठानकर बात करना बुद्धिमत्ता का धर्म नहीं । पिता के सामने पुत्र भी बात कर सकता है । जब पिता के कन्धे तक आने लगे पुत्र का सिर, तो पिता को चाहिए कि पुत्र को समझता का दर्जा देना आरम्भ कर दे । बात करते समय तो सब बराबर हैं । नार्मन साहब यह बात मानते थे । और, छोड़ो यह विवाद । आज मैं ने सारा वर्ष बाद नीलमणि को गप्प होते देख लिया । गाँव-भूड़ा की पदवी तो सम्मुख बड़ी पदवी है ; पर यह पदवी और भी बड़ी बन जाती है, यदि सरकार के अतिरिक्त लोग

मी लागू हैं। इसके लिए सप्ताह को तो न देना था। जिस पदवी को कबान के लिए मूट की शरणा लेनी पड़े, वह भी कोई पन्थियों में पदवी है।

सोनपाही ने प्रसंग बदलते हुए कहा, “अतुल, तुम आज अपने ननिहाल अवरय हो आओ। जैन दूर है गिलपीवाड़ी। मल्ला और रेणु ठगस हो गये होंगे उन्हें लेते आओ।”

‘हाँ हाँ मल्ला को अवरय ले आओ, अतुल।’ पलाश की झल्लें बपक उठीं, “मल्ला तो मुझे पहचान भी न सकेगा। रात बय का समय कुछ कम तो नहीं होता। और रेणु का तो जन्म ही मेरे पीछे हुआ।”

नीलमणि बोला, “बातें तो बहुत हो लीं। अच्छा अतुल तुम गिलपीवाड़ी हो आओ। कलपान में क्या बेर है? आज तो बिड़वा और दही खाने की इच्छा है।”

सोनपाही मूट मीगा हुआ बिड़वा और दही लेती आई। मीपड़ी के बरामदे में बट्ठा पर बैठे-बैठे कलपान आरम्भ हो गया।

कलपान के परबान् अतुल गिलपीवाड़ी चला गया और नीलमणि स्त्रियों की ओर हो लिया।

पलाश अपनी मीपड़ी में आ बैठा। वह अपने मन में बातें करने लगा—दिसौगुरुन में किसी अनपन है। इनका बस पहले तो पासी पर भी होवारे नहीं कर हैं, हवा को भी बाँट लें। कोई बात हुई मला? कहा गडगड़ थोड़ा है। मीरी, असमिया और नेपाली में क्यों से लड़ा चल रही है—एस्ली लड़ा और छिपी लड़ाई। बापस्य दातोगा तो बड़ी बादता है कि लोग आपस में लान्ते रहें, शिमकागर की कचहरी में झूठी गवाही होती रहे पर गाँव की भी एक म्यान-मयादा तो होनी चाहिए। जेने आन्मी के सिर पर पगड़ी होती है, बेसे ही गाँव के सिर पर होता है गाँव-बूड़ा पर पगड़ी के नीचे हाथ पैर और शरीर के धूलदे अंग सब मिलकर रहने चाहिए।

मीपड़ी ने निष्कण्ठर पलाश बॉस के मुखरु की ओर चला गया।

मेकती वासु में बौंस और भी मुक-मुक कर डोलने लगे। बौंस के पंखों से छन-छनकर सूरज की चंचल किरणें खस्ताख के छल पर पड़ रही थी। पत्थर का बड़ा दर्पण के समान मिश्रामिश्र कर रहा था। खस्ताख बिचारधाप में बह गया—साथ गाँव अग्रज की सुराई कर रहा है। लोग कह रहे हैं कि आख्ती को ठली ने जाने मित्रवाया। यदि वह बेकामत को धर्मानन्दी के घर न ले गया होता, तो बेबाप धर्मानन्दी इस पक्षर में न फँसता। आज आख्ती जाने गई, बल खनसार आयगी। जैसे एक-दूसरे की बाल लेने पर तुले हैं, पर अग्रज की सुराई करते समय एक हो जाते हैं। उस समय भी तो एक हो जाते हैं, जब घर में केदा कम लेता है; नेपाली हो चाहे मीरी चाहे अरमिया, सभी इस लुयी में ब्रह्मपुत्र पर नारिकेल पड़ते हैं। 'बह सोचते ही लक्ष्मी इति नारिकेल के पेड़ों की ओर उठ गई।

बौंस के मुकमुक से चलकर वह नारिकेल के नीचे बाकर खाना हो गया। वह सोचने लगा : 'मेमोसम का बैंगन कह रहा है—तुम्हें तोड़ लो, तुम्हें तोड़ लो।' अरे खबर मी कर, मौसम को तो जाने दे। नेपाली और अरमिया अपनी-अपनी माया में कहते हैं—'मीरी अपनी पानी से मिश्रता है तो उसे पीयता है।' मीरी मी तो अपनी कक्षाओं में अरमिया और नेपाली का उपहास करते हैं और यह तो दोनों ही कहते हैं—'मह नाव का ठला मुलठाओ, मह दुलाइन की पियह करो।' बहाक्यों के मामले में मी सब एक हो जाते हैं। 'बकदी-ककदी तम्बूल काटो, यह मी नहीं जानते कि हम पुपने सम्बन्धी हैं।' यह तो पूरे दिर्घायुक्त की आवाज है। क्या यह किसी दूसरे गाँव की आवाज नहीं हो सकती? ऐसी संकुचित इति मी क्या कि इसे दिर्घायुक्त की ही शक्ति माना जाय? 'बिच बचल को लयी' सिद्ध, उस के तो पौंच तक मोल-ही-मोल है। यह तो माझुली के किसी गाँव की आवाज भी हो सकती है, जहाँ मयात की अपनी खनसार को व्याख्या चाहते हैं। 'बह मायी लयीहो बिसकी बाल नीच की ओर हो, और वह दुलाइन पर शाओ बिसकी माँ बहुत यमी हो।' अब इस पर मी तो सब को एक होना पड़ेगा। लपहा तो सब के लिए है। मीरी, नेपाली और

असनिया के लिए क्या अलग अलग स्याह होगी ? 'एक ही गोरू मारने के पश्चात् तो बाप की भी मृत्यु आ जाती है।' इस पर जिसे म्हाभेट होगा ! 'सत्त पीढ़ियों से गाय की शुद्धता नहीं देखी, और वह बाँस का पोंगा ठटाये घूब घूबने का रहा है।' जो आदमी हुआ ही ज़ींग मारे ठगध तो इसी तरह ठपहास किया जाता है। बाँसूनी के बंगल में भी मेरे मुँह से यही बात निकलती थी, यहाँ भी मेरे मुँह से यही शुष्क निष्कर्षों। 'अच्छ ने पीछे मुँकर देखा तो धर्मानन्दी पला आ रहा था।

"आम्हो, धर्मानन्दी !" राखाल मुस्कराया।

"तुम्हें बुलाने आया हूँ, दादा !" धर्मानन्दी ने हँसकर कहा, "अब चलना है, तो जल्दी करो पहले ही देर हो गई। आखी हमारी यह रेल रही होगी।"

"मैं तो महाकांत हूँ, मधुआ तो नहीं कि तुम्हारे साथ आऊँगा बाप में बैठकर !"

"बाँसूनी तो पीछे छोड़ आये, दादा ! वहाँ हापी होंगे, तो यहाँ बसतुन है। बसतुन में मधुलियों पकड़ना ही अपना बंधा रह्य। अन्ना हमारे साथ ! आखी कह रही थी कि अन्ना से बाँसूनी की कहानियाँ सुनें।"

"अच्छा पलो !"

घर पर पहुँचकर राखाल ने देखा कि बाप पहले से तैयार है।

"आम्हो, अन्ना !" आखी ने राखाल का स्वागत किया, "घर में बैठे बैठे तो दिल मी नहीं लगता। मैं बापू से कह दिया था कि पहले बाका को लाओ, फिर हम मधुलियों पकड़ने चलेंगे।"

बाप अभी तो धर्मानन्दी ने पूछा, "निर्वाणमुल का क्या बनेगा, बाबा !"

राखाल कुछ न बोला।

धर्मानन्दी चुप न रह सका, "कुछ तो ठपाव करना ही होगा। मापस्य दादोगा से मुझे कोई शिक्षाएन नहीं, न आखी को ही शिक्षाएन

है। देवकान्त तो मुन्दी हैं कलकत्ता पहुँच गया।”

“क्यों, देवकान्त कलकत्ता क्या करने गया है?”

“यह तो बड़ी जानता होगा।”

आप्टी मुस्कराई, “वह मातृ माता से मिलने गया है, काका! उस दिन हम उसे लेकर गये, तो पहले मैं न सच के लिए चाम बनाई थी। चाम बनते-बनते मैं ने देवकान्त की बातें सुन ली थीं। वह कहता था—भाऊ माता के लिए कन्त श्राद्ध नहीं आती सच-के-सच फूल बाँधी पर मूल गये। और वह यह भी कहता था काका—भाऊ माता के हाथों में हथकड़ी है, पैरों में बन्नी, भाऊ माता गाने लगती है तो गीत उसके गले में टूट जाता है। ‘तुम ने तो भाऊ माता देखी होगी, काका।’

रत्नल ने हँसकर कहा, “मैं तो एक ही बार गया था कलकत्ता नार्मन साहब के साथ। मैं ने तो कलकत्ता में देखी नहीं भाऊ माता। वह मुझे मिलना चाहती है, तो उसे दिवौंगमुन में ही आना पड़ेगा।”

“वहाँ आकर भाऊ माता क्या करेगी?” बर्मनन्दी ने चुटकी ली, “वहाँ हम उसे क्या लिखा करेंगे? अच्छा आये तो सही। हम भाऊ माता को अपने पुरस्कारों से चली आई वह बात अक्षय सुनावेंगे।”

“कौनसी बात, बापू?”

करे रही—“साल मछली छिगी मछली से कह रही है—दू मी कुँआरी, मैं मी कुँआरी हम दोनों में से किसी को कर नहीं मिलता।”

“वह मी बापू, वह मी।” आप्टी ने अपने स्वाम से ठट्ठकर कहा, “देखने में पीठल ही ता है इसकी पीठ में तो बोंटे-ही-बोंटे हैं।”

सहवा बर्मनन्दी ने कहा, “उभो-उभो, आप्टी! बड़ी स्वाम टीक है।”

उस ने मूँद अपना बाल फेंकते हुए कहा—सावधान, मछलियों।

“अब देखना पीठल मी जमेगी और साल मी।” बर्मनन्दी मुस्कराया, “अच्छा दादा, अब बोंदेहरी के हाथियों की कोर कहानी आरम्भ करो।”

## सोलह



सुन्ताप माता-पिता की झॉल बनाकर आखती से मिल जाना चाहती थी ।

बैठे ठो बह इर चेन्न पानी-बाह पर पानी मरने जाती थी, पर कम समय हो बूखी लड़कियों की साथ होती थी । सब ने लड़कियों को म्मा कर रखा था । आखती पॉय गिब जाने में रह आई थी, मही कम पर सब से बड़ा कलंक था । अब यह कलंक बीहन-स्येत नहीं पुल सकता था । थोड़-थोड़ ठो यहाँ तक कहता सुना गया था—अब आखती का विवाह भी नहीं हो सकेगा, गल्ल अयदा कौन लेगा ? ये बातें सुन्ताप के कमन में भी यह बुझी थी । उने आखती पर गेद बोपने वाले एक झॉल नहीं भाते थे । एक बार आखती से मिलकर यह बतला चाहती थी कि संसार मले ही कमनम्नी को त्याग दे, पर सुन्ताप की झॉली से आखती कभी नहीं उठर सक्ता ।

पानी-बाह स कमनम्नी की झोंपड़ी दूर न थी । बह नाब तो वहीं बैठी रहती थी किन पर यह झोंपड़ी बनी दूर थी । पानी का कलका मले मले सुन्ताप कमनियों से आखती की झोंपड़ी को अवरय देल लेती । किसी प्रकार आखती बहर तो जाने, दूर से ही लही । फिर यह सोचती—आखती तो अपने बापू के साथ गई होगी यह तो बापू को मछलियों पकड़ने में सहायता दे रही होगी ।

इस बाबत में सुन्ताप ने प्रायः आखती का बापू के साथ बैठे देखा



था, वहाँ वह पहले के समान बैठी पैरे गिनती छूती थी। यह सम्भव न था कि उस के सामने वह आखी से हो बैठे कर ले। आख पर कलंक लग गया था। पर वह कैसा कलंक था! इसे कलंक कभी बा सकता है या नहीं, यह भी तो प्रश्न था। देवकान्त तो किसी की नाव में भी उस पार चला गया होता। अतुल ही देवकान्त को पम नन्ही के पास लेकर गया था। बेचापी आखी को तो स्वर्ण ही देखा पड़ा।

आनन्द मृन्दाप ने आखी से मिलने का निश्चय कर लिया था।

वह बहुत देर से घर से चली। उसके चिर पर लाली कलरा था। आख उसे अपना हृन्व भी कलसे के समान लाली लग रहा था। वह वह आखी से अवश्य मिलेगी। वह लौटकर न आई होगी, तो वह उस की प्रतीक्षा करेगी। दो लड़कियों को मिलने से कौन रोक सकता है! उन्हें तो बर्तें करने का अभिप्राय है। आखी से कोई ऐसा बोप तो हुआ नहीं कि मैं उसकी छाया से भी भ्रष्टा करने लखूँ। मैं उस से पूछूँगी कि याने मैं उस पर क्या बीती। किसी ने उसे पीया तो न था! उसे पीया गया होगा तो वह मुझे अवश्य बता देगी। न बतायेगी, तो मैं उस से कर्म नहीं बोझूँगी। बापमन्त्र बापेगा ने इतना सिद्धान्त तो अवश्य किया होगा। देवकान्त का मामला न होता, तो किसी मन्त्रालयी की कि आखी को थाने के बाता! अब बेचापी को जाना ही पड़ा याने, तो उसकी पिढाह करने का तो किसी को साहस न हुआ होगा।

हवा पहले से अधिक तेज हो गई थी। दूर कहीं बगले बोल रहे थे। फिर भीसे आकाश पर छातों की पॉट टिकाह बी। मृन्दाप को उस छात की बात आ गई जिसे चर्मनन्ही कलका पकड़कर लावे से और जिसे वह आखी और कलका के साथ बाहर कमलिया सापरी पर झाड़ आई थी, वहाँ से कलका ने उसे पकड़ा था। उस छात के गले में वह माला तो अब तक होगी जो मैं ने डाली थी। उस छात के साथ उसे अतुल की याद भी आ गई। किन्तु प्रश्नर उस ने थोँठ बमाने का यत्न किया था। मैं ने भी तो

उसकी एक नहीं सुनी थी। गॉब-बूड़ा का लारवा है तो क्या हुआ ! कैसे दूसरे लड़के, बैठा ही अनुम । मैं उसे यह भूल ता न करने हूँगी कि वह मुझे अपनी दौलत समझे । उस दिन के पश्चात् आज तक तो उस साहस नहीं हुआ कि मुझ से अकड़कर बोले । वहाँ भी वह सामन से नहर आ जाता है, मैं कभी झिंमे नहीं भुगतती । मला मैं क्यों मुझने लगी झिंमे ?

घाट पर पहुँचकर वह सीधी आखी की झोंपड़ी की ओर चली गई । आखी कभी तक अपने बापू के साथ बारत न आया थी । उस ने विनय किया कि आज वह आखी से मिले बिना बापस न आयी । वह बाप पर चली गई और झोंपड़ी के बन्द द्वार के सामने बन्दबा बैठ गई ।

बच भी शून्याप का दिल धन लगता, वह हँसलियों से पीछल के कण्ठ पर हलकी-सी बाप देने लगती । बच चिंती की प्रतीक्षा हो तो या तो कुछ भी बन्दबा नहीं लगता या लारवा-सी आवाज भी कभी प्रतीति होने लगती है ।

सूरज डूब रहा था । शून्याप ने मन ही-मन सूरज को प्रणाम किया । सूरज तो रोब ही डूबता था, रोब ही चढ़ता था । इसा बचल भी । उसे याद आया कि बच उस निब तारत के मामले को लेकर अनुम ने उस पर पीछ कमाना पाहो थी तो उसके मांसे पर बालों का गुच्छा मुझ आया था । अनुम की पीछ में न आकर मैं ने बीछा का प्रमाण दिया था । बाह की बाह ! बड़े आपे गॉब-बूड़ा के बेटे । कभी कोह पक्षी बोन टट्टा, कभी चिंती मछली के उचक कर कुनकी लगाने की धनि धोखा देती । वह बन्दबा बेनी रही । सूरज डूब रहा था ।

आखी की बाब न जाने कित समय आकर बाप पर लगी । शून्याप का पता ही न चला । शून्याप को देखकर आखी न आयाच ही । बाप ने उतरकर वह भंड झोंपड़ी के द्वार पर आ गई । उस ने शून्याप के घने में नौई हाल की ।

पनामनी मछलियों उतर रहा था । शून्याप ने पूछा “अच्छे तो हो, बाबा ?”

“हमारे घर का रास्ता कैसे मूल गई, बुनताप ! धर्माम्दी ने मङ्गलियों ठगारते हुए कहा, “तुम्हारे घर में तो मङ्गली नहीं पकड़ी और अपना तो पन्ना है मङ्गलियों पकड़ना ।”

“यह तो अपना-अपना क्या है, काका !”

“नाबरिया का अपना क्या है । यह इमारत कतन नाबरिया है न, यह बाइल नाबरिया से अगाइता ही रहता है ठन्का अगाइत कमी समाप्त न होगा ।”

“मर्यादा क्यों होता है, काका !”

“लोग कहते हैं, फे कपटा है मर्यादा । मैं तो कमी नहीं मर्यादा पेट की खातिर । मर्यादे को कदाभी तो कब जाता है, पदार्थों तो घट जाता है ।”

“गाँव में सब ने तुम्हारे साथ बोलना छोड़ रखा है, काका ! इसका तुम्हें दुःख तो होगा ।”

“तु क होगा भी तो किसी को बताने से क्या लाभ !”

“कमी तो तुम सोचते होगे काका, कि तुम ने देवकान्त को पार से काकर मूल की ।”

“यह तो मैं कमी नहीं सोचता ।”

“तो क्या देवकान्त अच्छा लड़का है ।”

पास से आरखी ने हँसकर कहा, “और क्या बुरा लड़का है देवकान्त ! यह बुरा है तो क्या अगुस्त ही अच्छा है ।”

“अगुस्त की तो गाँव में हर कोइ बुराई कर रहा है । सब यही कहते हैं कि अगुस्त ने ही काका को कैलाशा और बही आरखी को मी भाने मित्र बाने का दोषी है । आरखी, तुम्हें तो किसी ने हाथ नहीं लगाया होगा ।”

“सगाभा मी हो, तो अब यह बात सोचने से क्या लाभ ! देवकान्त का हम ने पार न लगाया होता, तो पुलिस उसे पकड़ लेती । अब तो सुना है यह कलकत्ता पहुँच गया माया माता के पास ।”

“पर देवकान्त की अपनी मौँ मी तो है ।”

“मैं तो बड़कर तो बड़ भारत माता को सम्मन्त्रा है अपनी-अपनी  
उनके की बात है।”

“मैं पादे भूली मर जाय, बर भाएत माता बय जाय।”

“यह तो मुझे देवदत्त से ही कहना चाहिये, पर अब शायद तुम  
उस से यह न कह सको बह अरुण शायद मुझारे हाथ न आये। देवदत्त  
उस से पहले ही खोती पर भूल आया।”

“को, उस ने ऐसा क्या अपराध किया है ? फिर क्या करता बना बना  
या, तो वहाँ से आया ही क्यों था ?”

“अब यह तो देवदत्त ही जानता है।”

जानाना सब महलियाँ ऊपर से आया था। उस ने अरुण की बात  
आरम्भ कर दी, “अब क्या हुआ-बाकार है। अरुण-मुझे ये सब  
आँखों से। ब्रह्मपुत्र की कृपा बनी रहे। वह हमारे लिए खोले सारा और  
न जाने कौन-कौनसा मछली लाता है। हमारा बाल बय रह, हमारी  
मुवाली में शक्ति बनी रहे। पैर ही सब बन करता है। बैनी पल-पेती  
बनी बन-सनी।

हमारी सलियाँ भट आया अरुण करता ठठाकर पानी-बाह पर बनी  
मई।

अपना अपना मरकर आली अपनी भीरही में लड़ आर। फिर वह  
हमारा का ठठके पर सब लड़ने गए। रास्ते में आली देर तक अरुण  
की प्रार्थना करती रही। वह इन पर खीर देती रही कि अरुण को तो  
देवदत्त की अरुण लाया सम्मन्त्रा है।

“मैं लोग तो अरुण का बुरा सम्मन्त्रे लगे हैं। वेय क्या मत है,  
भुनारा ?” आली ने भुनारा के कंधे पर पानी देकर दृष्ट।

“तो लोगी का मत है, बहो मेय भी।” अरुण सुन्दर।

“यह न क्या का रही है, भुनारा ? गोप तो सही, वही अपने का  
मिल हो न हूँ बाय।”

“यस हूँगा है ठठका गिल, तो आब हूँ बाय। मैं क्या करूँ ?”

ब्रह्मपुत्र।

आप्ली ने अटल और देवदत्त के बातलाप का उत्तर करते हुए कहा, “मैं ने तो दोनों की बातें सुनी थीं। दोनों में नहीं अन्तर है कि अटल दिसांगमुख में ही कार्य कर के दिसांगमुख को मारकर दामोदा के पंजे से छुड़ाना चाहता है, तो देवदत्त के सम्मुख बलकता से कार्य आरम्भ कर के दिसांगमुख जैसे अनगिनत गोंदों को पुलित व पंजे से स्वतन्त्र करने का प्रयत्न है। इस पर तैरा क्या मत है ?”

कृन्ताप तिलकिनाकर हँस पड़ी, धीरे बह आप्ली की बातों पर विश्वास ही न कर रही हो।

आप्ली ने आगे बढ़कर कृन्ताप का रस्ता रोक दिया।

“देर हो रही है, आप्ली !”

“बैठ मांस पीठ रहा है ; बोहाग बिहू दूर वहीं। मैं तो नहीं आ सकूँगी। मेरी बात याद रखना। बोहाग बिहू के दूत में अटल से दूर दूर न रहना। देखना कहीं उस का दिल न टूट जाय।”

“उठका दिला किलौना है, तो मत ही दूट जाय।” कृन्ताप तिलकिनाकर हँस पड़ी।

“पिछले-से-पिछले वष ठां तुम ने भी अटल की प्रशंसा की थी। मुझे मम है कि कहीं अटल बिहू में सम्मिलित ही न हो। बिहू तो रुक नहीं सकता, तुलसी बास से आ रहा है !”

कृन्ताप के घर का पिछवाड़ा आ गया था। आप्ली पीछे लौट गई।

कृन्ताप ने दपते-दपते फटक उठाकर मीठर प्रवेश किया। कर संमत्त कर वह केले के गल्ल के तामने एक-दो दूध के लिए रुक गई। वह सापने लगी, आप्ली ने वह क्यों कहा था—बोहाग बिहू के दूत में अटल से दूर दूर न रहना। और वह पग कड़कर रसोई तक आ पहुँची।

मों ने कृन्ताप को फटकाप, “तेरे ये लच्छन तेरे बापू को अकल्य करार्येगी। इतनी देर !”

कृन्ताप ने दपते दपते कहा, “तुम्हें आप्ली पिछवाड़े तक छोड़ने आई थी।”

“तो तु झाली से निपटी गयी ! तुम्हें कितना रोना था !”

पल्ल से सुधीर की पानी बोपिल्ली हँसकर बोली, “जाने मी रे, माँ !  
बूढ़ातारा और आर्यदी तो बपयन की सन्निधौ हैं ।”

मृत्पात्र के निर से कोपिली ने पानी का कलमा उतरवा लिया था। मृत्पात्र फुल, न बोली। पिछले-से-पिछले बच के बिहू की स्मृति उसकी कल्पना का एकमात्र बचाने लगी—गुन् गुन् गुन्। इस वकाल पर उसे लगा कि तमने लड़कियों साथ रही हैं—बाईं गोलाकार से दाईं से बायें, बायें से दायें उनके सामने लगे बाप रहे हैं भूम-भूम कर—मृदंग, पैपा और बँसुरी बजते हुए; दायें से बायें बायें से दायें कमी लड़कियाँ उड़कर पीछे और आगे इंसान खगतीं, कमी बाप बचाने वाले पुक्क उन्हीं का अनुसरण करते हुए उन से मिला जाने का सन करते। उसे लगा कि तमने वाली युवतियों की पॉट में एक मुहासिनी रुपरी भूम-भूम कर साथ रही है, पॉट के टीच बीच में, उस के मूँहे का फूला नीचे नहीं झलकता नमरी के सम्मुख बुकड़ी की पॉट में एक चौंध-छपीला है, जिसके माथ पर वाली का एक गुच्छा मुन् आया है वह बँसुरी बज रहा है। कल्पना के निरपट पर वह रुपरी मृत्पात्र में बदल गई, वह पुक्क अनुल कब गया बिहू नृत्य हो रहा था, इस नृत्य की आरम्भ-परिधि अभीम थी।



“हाथियों के छोटे-छोटे बच्चे मेरी आँखों के सामने बड़े हुए। क्या हाथी क्या हाथिनी, मैं ने दोनों की खजारी की; दोनों मेरी आशा मानकर चलते थे।

“तुम गिरे नहीं, काका !” मरणा हैंस पया।

“बढ़ महाबल ही क्या हुआ बेटी, जो हाथी के ऊपर से गिर जाय !”  
रालाल ने गम्भीर होकर कहा “हाथियों के दल-के-दल मेरे एक तख्ते पर बह गये, मेरे एक सकेत पर वे चमक पड़े।”

“हमारे मास्टर जी तो कहते हैं—हाथी बहुत बड़ा होता है; हाथी से बड़ा कोई नहीं होता।”  
“हाथी से बड़ी है बहान।”

“यहाँ तो एक मी हाथी नहीं है फिर अगर यहाँ लो आये, हाथी काका !”

“देते नहीं बोलते !” अतुल ने कपिला के आगे हाथ धारा डालते हुए कहा “मरणा तुम्हें मास्टर जी ने अभी तक बोलना मी नहीं सिखाया ! बाबो, तुम्हें स्कूल के लिए बेल हो रही है।”

मरणा स्कूल के नाम से चौंका।

“काका तो छुड़ी है बाबा !”

“तो मीनर काकर लवो।”

अतुल और रालाल काका निचुनाड़े की ओर बाहर पोखर के किनारे दहलने लगे।

“गिलरीबाड़ी मैं तुन ने तीन टिक लगा दिये।”

“नानी तो कल मी नहीं आन देना चाहती थी, काका ! बहती की गिलरीबाड़ी का बोझा विहू बेमरकर बाबो। मैं ने तुम्हारा नाम दिया काका, तो नानी ने मुझे छोड़ा।”

काका ने गौ-हरी की कहानी आरम्भ कर दी। बार बार काका इस बात पर तान ताड़त रह—“अतुल का आदर बही करता है मित्रता करना मी कुछ अतुल होता है। बात ने बात मित्रता भी बनी ग। कभी हम

असपुन।



प्रकार जैसे पेड़ के छुरदरे तने से गर्द झोंपल फूटती है, कभी ऐसे जिस प्रकार महाकठ हाथी को बरा में कर लेता है; अजुल को लगता जैसे सँभ ठठामे छोड़ हाथी भी काका को बाँटें मुन रहा है।

“पहले हाथी उत्पन्न हुए या मनुष्य ?” राखाल ने गम्भीर होकर कहा, “इस प्रश्न का उत्तर तो हमारे नामन साहब भी नहीं दे सकते थे। जैसे हाथी और मनुष्य की आयु एक समान होती है। समान आयु में दोनों होश समझते हैं। मैं तो बौद्धूमी में रहा, मार्मन साहब बीच बीच में घले जाते थे। लंछ की बात है सच-मूट का हिस्सा नामन साहब के माथे। दलाल में एक हाथी इतनी बुरी तरह फँसा कि फिर बाहर न आ सका। पास वाले डाक-बैंगले में, यहाँ मार्मन साहब ठहरे हुए थे, उस-मर हाथी की बीलें सुनाह देती रहीं। सातवें दिन जाकर किसी मालगुबार ने अपने सिबावे हुए हाथियों की सहायता से उन दलाल के बन्दी को बाहर निकलवाया। बाहर निकलने के पकड़-भर बार ही वह मर गया। जीवन का अन्त नहीं, पर मृत्यु तो आकर रहती है। हाथी के मृत शरीर को बंगाल में दलाल के किनारे ही छोड़ दिया गया। रीझ, बीले और सुभद्र, जिन्हें उस हाथी ने कई बार पानी से बूर रखा होगा, कई दिन तक उस हाथी की बेह पर प्रीति-मोहन का आनन्द लेंते रहे। हमारे मार्मन साहब दूखी बार यहाँ पहुँचे, तो उन्हो ने देखा कि हाथी की विचित्र-सी हड्डियाँ ही खेर रह गई हैं। उन हड्डियों के बीचों बीच एक छाही और उसके बन्ने लेल रहे थे। हमारे मार्मन साहब तो—”

“बेचारा हाथी !” अजुल ने टोक कर कहा, “हाथी के सम्बन्ध में यह भी तो कहते हैं काका कि बीकित हाथी एक लाल का और मर हाथी सवा लाल का।”

“मृत्यु तो आकर रहती है।” राखाल ने गम्भीर होकर कहा, “यह बंगाली हाथी बहुत बड़ा हो जाता है, तो उसे पता चल जाता है कि प्रतिक्षण मृत्यु उसकी ओर बढ़ रही है। वह हाथी कहीं बूर एघन्य में नदी-किनारे जाकर बैठ जाता है और धीरे-धीरे अपनी ओर बढ़ती हुई

मृगु की प्रतीक्षा करने लगता है। लका के हाथियों के सम्बन्ध में यह बात एक रात्री ने बदली पोधी में लिखी थी, पर हमारे मार्गन साहब तो लका के किसी बंगल में ऐसे एकान्त और शान्त चिन्तारे का पता न बसा सके, वहाँ बंगल के हाथी मरने के लिए आते हों।

सहसा मृगुल की कल्पना में बौद्धिकी के हाथी घूम गये। वह सोच रहा था—मृगुल की आत्मा पोधी है, कार्य अधिक है। मगल की तो कहते हैं कि मृगुल पाहे ता सो बप तक उहक ही बीकित रह सकता है। बौद्धिकी में बाबा के जीवन के तीस वर्ष व्यतीत हो गये—मरपूर जीवन के तीस वर्ष। अच्छा हुआ कि कल्प यहाँ आ गये। बाबा की तो एक-एक बात में अनुभव बोलता है।

रज्जुल ने प्रतीक बदलते हुए कहा, “तुम्हें एक दिन कल्पान्नी अपने साथ ले गया था। जब हम छायाबाल के परबाल खींच रहे थे। भारती ने कमलिया सापरी के समीप बाब रोक ली जिसके सम्बन्ध में गगन बाहरिया की क्या प्रतिक्रिया है।”

‘वह क्या तो तुम्हें भी अच्छी लगता है, बाबा।’ मृगुल ने गम्भीर होकर कहा, “वह कल्पना सम्बन्ध चित्तानी सुन्दर है कि किसी अन्य कमलिया सापरी पर गगन बाहरिया रहता था। गगन हमारे बाल नाचारेण का पुरखा था। उसके घर वाले ता दिवांगम्य में रहते थे। वह अज्ञाता ही उस ताररी में रहता था। बाबा में एक बार कमलिया सापरी वह गह। गगन नाचारेण हुए गया। पर गगन की आत्मा अब भी उस स्थान पर में रहता है।”

“अब-अब बप तक बनी रहती है यह ताररी।”

“इस पर ताररी की पॉल भी अक्षय उतरती है, बाबा।”

रज्जुल की बोलने शक्त उठी। वह कहता क्या गया, “हाँक उतर रही थी, जब हम कमलिया सापरी से सीम मील कर रहे थे। वहाँ तक पहुँचने पहुँचने पता हो गए। सिधे हुए रक्त में हम ने गगन नाचारेण का गान सुना। कल्पान्नी कहता है कि उस ने यह गीत पहले भी यह बार सुना है।”

“गगन भर गया, पर उसका गान बन्ना रह गया ।”

“फिरी का महान् कार्य हो, तो उस के पीछे उसका नाम रह जाता है ।  
ऐसे ही गगन नागरिया का गान है । बल्ल के टिनों में बल्ल बड़े-बड़े नागरिया  
ब्रह्मपुत्र में मान म्योसते करते हैं, गगन नागरिया का गान ब्रह्मपुत्र की सहरों  
पर गूँझता रहता है, जैसे गगन आज भी ब्रह्मपुत्र को चुनौती दे रहा हो ।”

पीछे से आकर फिरी ने एलस के कंधों पर हाथ रख दिया, “हम  
आ गये, हाथी काका ।”

एलस ने मल्ला के सिर पर प्यार का हाथ फेरते हुए कहा, “हम  
मल्ला के हाथी काका ही तो हुए । हम इसे हाथी का बन्ना लाकर देंगे—  
बड़ा प्यार-सा हाथी का बन्ना ।”

“परतों बोहाग बिहू है, मल्ला ।” ब्रह्मपुत्र ने प्रसंग वरसकर कहा  
“काका से कहो कि तुम्हें अपने साथ रखें ।”

## अठारह



बीरामसिंहा तो गोंध-बूझ ठहरा, बिहू की कुली में ११ दिवस पूर्व ही उस ने गोदाम्नी का लुपार बाल दिया था। बोहाम बिहू के सप्त दिवस माने गये थे, पर बिहू नाम पूरे बैशाख-मस बसता था।

बैशाख के लिए अक्षमिन्ना शुभ या बाहम्य, बैशाख का पहला दिवस मानु बिहू कहलाता था—

मानु अयात् मनुष्य। उस दिवस घर के प्राची बिहू मनाने के लिए तैयार होते थे। आठ रात से पहले लम्बे-लम्बे बीरामसिंहा ने बरहम बूरी को इतक सँटोँटा साफ धिरे, फिर तेल मलकर स्नान किया, गये स्नान पहने।

बैठ के आरम्भ से ही पट्टी और मेनी में बिहू पक्षी का स्वर सुँबन लगता था। कुछ लोगों का विश्वास था कि बिहू पक्षी कोई अज्ञात पक्षी नहीं है, बल्कि केतकी को ही बिहू पक्षी का नाम दिया गया है। बैठ के अन्तिम क्षणों में बैशाख की पक्षी तक बोहाम बिहू का स्मरण मन्त्रना करता था। व जाने बिहू पक्षी को पहले ही कैसे पता चल जाता था कि बिहू का रहा है। बैठ के अन्तिम दिवस विरगिन्नुष में 'गोक बिहू' के नाम से प्रसिद्ध था, क्योंकि इस दिन पशुओं को जलपुत्र में मल-मल कर बहलाया जाता था। बिहू का आरम्भ इसी प्रकार होता आया था। म्मेर से पहले ही बटकर घर की भित्तों हकरी और दस्त की पीठी रमककर तैयार करता था। फिर कालों का तेल और पीठी मल-मल कर पशुओं का मलपुत्र में स्नान करने के लिए निष्क्रिय करता था। जब पशुओं का स्नान समाप्त हो

बाता, तो उस पर बौल को पोरी में मरो हुए लौकी और बैंगन के छोटे-छोटे टुकड़े फेंक कर उस की पूजा की जाती थी, और पुष्पों की लीप के चन्दों में बसा जाता था—‘यह ले लौकी, यह ले बैंगन, प्रतिघर्ष फलो-मूलो । तुम्हारी माँ कह में लौकी है, और पिता भी संगवान् करे तुम्हाप दिल डोल बढ़ा निक्से ।’ गोहस्ती की सफाई की जाती थी । धूप बलाकर गोहस्ती को सुगन्धित किया जाता था । पशुओं को गर्द-गर्द पम्पिनी से बोधा जाता था । घर में त्योहार के उपलक्ष्य में विशेष रूप से बगार गर्द मिट्टाई का एक माग पशुओं को भी मिलता था ।

दोपहर तक हाट-बाजार कासे स्थान पर योंव वं युवक भी आ गये और बुद्धियाँ भी । विठ्ठलमुख का बिहू तो दूर-दूर तक प्रसिद्ध था । उन ने ‘साओ पानी’ की रस्य था । बड़े ही मादक स्वरों में बिहू का संस्कारवाद्य आरम्भ किया गया :

बिहू बा बरान करे बिहू बिहू  
 मानार बिहू कापर साई  
 समनिबाई सुनिसे कमे डिने बुली  
 सकते मरीसे धाई

[ बिहू पक्षी बिहू बिहू की रट लगा रहा है । मेरे पाल तो बिहू के लिए स्त्र ही नहीं । सगी-सखी बुलावैये, तो मैं बहना कर बूँगा-बबपन ही मैं मेरी माँ बल बली थी । ]

बिहू जाने और ‘साओ पानी’ आर्यान् वाक्क के मादक पैप का बौच न टूटे, यह कैसे सम्भव था । बोहना बिहू वं कह नाम थे । कोइ इसे ‘सत बिहू’ कहता था क्योंकि वह सत निर तक तो कम-से-कम चलता ही था इसे ‘पोंगली बिहू’ भी कहते थे, क्योंकि वृत्त और संगीत के इस पर्व पर उस रंग की मरिच झुलक उठती थी ।

तमने बरद—गोलागार में बुद्धियाँ भाव रही थीं । उनके सम्मुख बोल, बौलुपी और पैपा बजाने वाले युवक उझल-उझल कर आनन्द किमोर हुए जा रहे थे । देखे-देखे कई बल पूबन्-पूबन् नाच रहे थे । प्रसन्नोत्तर के

रूप में गान गाये जा रहे थे। वायु में मूँहसे फूलों के समान पुष्पतिर्बो जाय रही थीं, जैसे यह नृत्य-मय होशवास न आवेगा।

बचपन के मित्रों ने आज नीलमणि को भी 'शाओ पानी' पिलाकर छोड़ा, गाँव में अकेला खड़ा था। भगत ही ऐसा मास्ती का बिस् ने आज भी 'शाओ पानी' को छुँह नहीं लगाया था।

एक हस्त में मृदंग, धूमक, पैपा और बॉम्बूटी का टाठ था और बीच में अतुल मृदंग बजा रहा था। सामने पुष्पतिर्बो की पंक्ति में प्रत्येक सुन्दरी एक-से-एक सब-सब कर आर थी। हथर से सुनक एक गान उड़ाते, ठहर से पुष्पतिर्बो ठहर जाती। बिहू की रस-सुम्मा और संयति-मधुपुटी द्वारा सुनक-पुष्पतिर्बो ने यह जाय यह गई। पुष्पतिर्बो की पंक्ति में स्मृत्याप को पृथक करके देखना सहज न था पर अतुल की दाँवें उठी पर थी उसके छोटे का फूल सब से सुन्दर था।

मया पान पर आये डेढ़-गो मास ही हुए हीने अब नफ बल रोपने में थोड़े दिन रोप थे। बोहाग बिहू को कस्तुरा बने पान का त्योहार था। प्रत्येक घर का मरपल बने पान से मरपूर था, प्रत्येक मास्ती बहुत उस्सास का प्रतीक था।

पुष्पतिर्बो ने एक गान आरम्भ किया

बिहू नगरि बाकिबार, मने मोई लपटी

बिहू नगरि बाकिबार मन

बिहू नगरि बाकोले नुनूबाई मिनिबा

भरिबा मागिबा बन

[ बिहू गाती पत्नी बाई, यही थी चाहता है व्यक्तम, बिहू गात रहने का भी चाहता है। बिहू गाते-गाते मुझे अगाध न ले जाना, बन मरना पड़ेगा। ]

पुष्पतिर्बो बार-बार यह गान गा रही थीं, जैसे पुष्पों ने सामने से बार ठहर न देने का नियंत्रण कर लिया हो। अतुल को लगा जैसे यह केसल स्मृत्याप की आवाज हो, जैसे यह और किसी की आवाज हुए ही न

रहा ही ।

मुन्की को भी खोश आ गया । उन्होंने वह गान आरम्भ किया जिस में कहा गया था :

इस वर्ष बिहु आया अति सुन्दर,  
खिल गये बाहर फूल;  
ठहरो गन्ध, गोरी का मन अति चपल,  
टूट गई पैरों के नीचे परखे की हर झूल !

फिर मुनितियों ने गाना आरम्भ किया :

नाचो तो अब कुसुमर नाचो,  
साथी बेल सहे भी मर कर  
कूट आवेंगे प्राण एक निव  
मीन करेंगे गिरा वह पर !

अब अग्रज ने गान आरम्भ किया :

नहीं दामिनी मैं कि लामक कर रूप निहारूँ,  
और न कहता प्रमदुल हूँ  
मैं पक्षी भी नहीं कि ठहरे-ठहरे रूप निहारूँ,  
हाम कहीं यदि मेरे भी दो पंख होते !

बिहु के उत्साह में एक-से-एक बढ़कर गान गाने का रहे ये—नये-सुनने  
सभी गान । कुलु बाल अभी खे बा रहे थे ।

मनमुरख-सा अग्रज जैसे किसी दूसरे ही लोक में पहुँच गया था ।  
उसे लगा कि बुन्ठारा किसी दूसरे की नहीं हो सकती । अगले ही क्षण  
उसकी कल्पना को देवदत्त ने झूट लिया । वे जाने वह इस समय क्यों  
होगा, क्या कर रहा होगा । उसे भी बिरोंगमुख का ध्यान हो है । वह  
कहा था—माख माठा कलकता में रहती है और उसके कंठ से गान दूध  
दूध बरता है ! यहाँ आकर देखो माख माठा ! यहाँ तो एक मो गान नीच  
से दूधने से रहा । यहाँ क्यों नहीं आती माख माठा ! उसे कलकता ही  
क्यों इतना प्रिय है !

नृत्य समाप्त हो गया था। हर कोर पर जाने की मित्रता में था।  
अनुज भी अपने घर की ओर पल पड़ा। पर सहता पीछे से आवाज  
आह।

अनुज ने पीछे मुड़कर देखा। कुन्तारा अपनी भावना कोपिली के  
आगे हँसती हँसती खड़ी आ रही थी। अनुज ने देखा कि आगे आगे  
दोनों ननद-मावज हैं और उनके पीछे हैं सुधीर, मगत की और कुन्तारा  
को माँ। उनके यह पता चलते देर न लगी कि उनके मगत की ने आवाज  
ही थी।

बह बह गया।

कुन्तारा और उसकी मावज लपक कर आगे निकल गई। उनके  
पीछे-पीछे सुधीर और उसकी माँ भी लपक कर चले गये। मगत की अनुज  
के सामने आकर रुक गये। आवाज अनुज की के परनाम् मगत की ने  
अनुज को बुलाया था।

“आज तो तुम सब से अच्छा बच्चे।” मगत की सुन्करये “हृदयन  
साहज और उनकी कुनी लिली भी बहुत प्रमत्त प्रतीत होते थे एक आर  
नारायण गारोया भी खड़ा था, पौन-दुः। त्रिपाहेवी नहि।”

‘रिहू मैं पुनिष्ठ का क्या जान।’

‘तुम एसी बातें न किया करो, अनुज। ऐसी बातों के लिए बेवक़्फ़  
हो है। पता नहीं बह क्यों मटक रहा होगा। माँ की सेवा होती नहीं,  
बता है माया माता के देर रहान। अन्य ह बेवक़्फ़ पर उनके गुह न  
उने ठीक पाठ नहीं बताया।’

अनुज आहता तो बुरी तरह मगत की के गले पड़ गया, पर बह  
बुरकार जतना गया। साथ-साथ मगत की चले जा रही थे। आज अनुज  
ने लूच इटकर ‘साधो पानी’ पिया था। रिहू और ‘साधो पानी’ का तो  
पुपना मेल था। उलछा बोंग बोंग बिरक रहा था। आज उने दानिक भी  
बकान अनुभव नहीं हो रही थी।

पर पहुँचकर अनुज ने माँ से फिर ‘साधो पानी’ माँगा। आज तो



'साधो पानी' माँगने में कोई लाज न थी। 'साधो पानी' पीते-पीते उसकी अस्पता में मृत्यु का का बिज उभरा, जैसे वह भी 'साधो पानी' पीना चाहती हो और भगत जी का मय उसे लुपी तरह लता रहा हो। फिर जैसे किसी ने मृत्यु का के बिज को उलटा कर दिया। अरे, अरे, यह तो सिली है—वही सिली बिज ने भगतों ही बिज मेरे लिए अपने डैडी के हेडक्वार्टर विष्णुधाम के हाथ अलमिया बाइबिल की पोथी मित्रवाद भी और मैं न उसे लेने से इन्कार कर दिया था। सिली, तुम नालायक तो नहीं हो गईं ! हमने से जैसे सिली ने उतर दिया—मैं क्यों नालायक होने लगी ! मैं तो तुम्हारा बिहू बेसने चाह थी। तुम तो मृत्यु का से भी अच्युत बाचे !

अतुल अन्तर्गत था कि किसी को मैं बहुत दिनों से बीमार है। सिली की मैं शिवाग्र के अस्पताल में थी। सिली का अलमिया मो बोल सेती थी। वह बार बारपुत्र पर नाथ से घाते-बाते सिली से उसकी मेंड हुई थी। सिली अपने डैडी की लाइली पुत्री थी, बापू को डैडी कहती थी। उसके डैडी तो दिसांगसुल पर खुद रहते थे ऊनच हेडक्वार्टर विष्णुधाम बापयब बापेमा से मिला हुआ था लोगों से बेगार सेते ऊनच दिस कमी नहीं मरता था। उसकी अस्पता में सिली मुस्कय उठी, जैसे वह सिली के हमने नाथ रहा हो। वह सिली से कहना चाहता था—बिहू मैं तो 'साधो पानी' चाहता है बिहू मैं तो कोई बेगार नहीं हो सकता !

यह अन्तर्गत 'साधो पानी' की मादकता का प्रभाव था कि अतुल ने मक-ही-मक इवचन लाइज का लुपी लप्ड कोतना बापयब कर दिया। नालायक बापेमा को तो वह आज नहीं-से-बड़ी गाली बं सकता था। वह बलता था कि जाने में अर्धगन्दी की बहुत पियाह हुई थी। वह वह भी जानता था कि जाने में तो बापटी को भी क्षमा नहीं किया गया था। इस समय नालायक बापेमा कहीं मिय जाता, तो अतुल ऊनच फिर लोह शकता। हमें नहीं चाहिए बापेमा। बिहू से पुसित का क्या सम्बन्ध ! ये लोग हमें क्यों पिड़ाते हैं ! ये लोग बिहू में क्यों आते हैं !

क्या कुछ-कुछ उठाने लगा, तो वह फिर से 'साधो पानी' का निसात

बढ़ा गया। सोनपाही बोली, “लाओ पानी तो बहुत खपडा नया है।”

“तो मुझे एक गिलास और दो, मों!” बहुत सम्बन्ध।

आम तो मलना और रेसु को भी मिल गया था ‘लाओ पानी’। आम तो बिट्टू था, उसका बाबा भी पुत बकर का रहे थे, बाबा बह रहे थे, “आम तो बार्मन साहब को भी ‘लाओ पानी’ पिलाते, बप्पे वे यहाँ होते।”

उसका बाबा उठकर अपनी मीरड़ी के सामने चले गये। मलिनसि भी वहीं का बैठा। उनके लिए ‘लाओ पानी’ का मन्त्र वहीं सिखा दिया गया।

एक गिलास ‘लाओ पानी’ सोनपाही भी बढ़ा घर। ‘लाओ पानी तो सरकार भी बन्द नहीं कर सकती।’ सोनपाही ने मुँह ठुकराकर कहा, “एक बार सरकार ने माहा तो था कि ‘लाओ पानी’ बनाया बन्द कर दिया बाब पर बर सरकार के सम्मुख यह विचार रख गया कि ‘लाओ पानी’ बेचने के लिए नहीं बनाया जाता, तो सरकार ने रोक लगाने की बात छोड़ दी। बापसाह सायेगा का घर चले तो आम ‘लाओ पानी’ पर रोक लगा द।”

अतुल बचपन से ही देखता आता था कि ‘लाओ पानी’ तो प्रचुर से तैयार होता था। एक बड़े में मात और सेर की रज मिलकर उस में एक बूट्टी मिलते थे। इस बड़े को माटी में दबाकर नहीं, बैसे ही रख देते थे। पाँच दिन के पड़ताल उस में पानी मिला देते थे और उस गिन ठोके बाँव की झुलनी से झूमकर पीना आरम्भ कर देते थे। ‘लाओ पानी’ बनाने का दूसरा प्रकार भी ऐसा ही था; अन्तर बेमन इतना ही था कि उस में सेर की रज नहीं मिलते थे, मात और बूट्टी मिलकर ही काम चला लिया जाता था। सभी प्रकार से बनाये गये ‘लाओ पानी’ का नया अलग-अलग होता था।

अतुल जानता था कि किसीपुन के भीरी ‘लाओ पानी’ का लव से बड़े रनिया था। उनके घरों में लोहारी पर ही नहीं, बैसे भी ‘लाओ पानी’ पीने की प्रथा थी। बप्पों को भी देने थे ‘लाओ पानी’, पर मात्रा में बहुत कम;

सहचित्री की भी ममा नहीं करते थे ।

अतुल बरम्भे में बराह झालकर सेट गया ।

रेलु और मरुणा एगोई में माँ के पास बैठे गप शप कर रहे थे ।  
उमकी बत्ती अतुल के मसितम्ह पर जोर कर रही थी, पर उस में इतना  
साहस न था कि उन्हें चुप रहने को कहता ।

गोहल्ली की ओर से गोबर और छड़ी घाल की विचित्र-सी गन्ध आ  
रही थी । वह तटकर कपिला के पास बाना चाहता था, पर आज उस में  
इतनी शक्ति न थी कि अपने हाथ से कपिला का वूच बुद्धता । पर क्यार पर  
लौटे-लौटे वह कल्पना में गाय का वूच बुद्धने लगा, जैसे वूच की धार पड़ने  
की आवाज उसे मिस लग रही हो । वह जानता था कि वूच बुद्धते समय  
माय को भी एक विशेष प्रकार का आनन्द जाता है, जैसे वह होमी हाथी  
से कपिला के कान दबा-दबा कर वूच बुद्ध रहा हो और दुग्ध-धारा से मसुर  
संगति कूट रहा हो ।

# उन्नीस



ये मामुली के शिखरी-गॉथ में लौट रहे थे। बाटल नाबरेया के म्सीबे मीलक्यठ और बन्ती नाब चला रहे थे। दोनों के मुँहपले बाल थे। दोनों लुझीं मार थे। एक-सा रंग-रूप। वे बो भी कम करते मिलकर करते पन-भर के लिए भी उन्हें एक-दूसरे से पूछक होना अप्रिय था। मामुली में उनका बचपन बीता था, इसलिए कभी वहाँ बसा होता तो वे कम किराये पर माँ राखी हाँ बने।

मीनकयन के हाथ में या पयू और बन्ती के हाथ में डोंड। वहाँ पानी कम गहव होता, तो डोंड ने चार लगाकर नाब को आगे बढेकना पन्ता। बन्ती डोंड उटाये झॉन्नों पर सड़कते बालों में से हँसी के झुल्ले छोटता हुआ मीनकयन की ओर देखता; नोलकयन ओर-ओर में पयू बनाते हुए बन्ती बड़े-बड़ों के ममान 'बड़ दिक्कतरी पर तान वोहता, कनी ब्ययास मगत की बिगड़ शैली में 'हरी-हरी दे मायब' का बाल्याद करने के प्यपान् एक दम यम्मीर नकर आने लगता। उस समय ब्ययास मगत सोनता कि मीनकयन पर उनका रंग बड़ रहा है।

आब प्रात नाब कोलने से पहले नोलकयन ने बन्ती के बाल में पूछा था, "तुँह ब्ययास मगत का रूप पयन है या रम्पाल नाब का?" और बन्ती ने उसे कसग से बाहर बड़ा था, "मुझे तो दानों ही किमी नाउक के धुंधार प्रतीत होते हैं।" बन्ती का दिवार वहाँ तक टोक था,

साधकियों को भी मना नहीं करते थे ।

अद्वय परामर्श में पटाई बालक ले गवा ।

रेखु और मस्तना खोई में मौ के पास बैठे गप-शप कर रहे थे ।  
उनकी बातें अद्वय के मस्तिष्क पर चोट कर रही थीं, पर उस में इतना  
साहस न था कि उन्हें चुप रहने को कहता ।

गोहल्ली की ओर से गोबर और सूली पास की बिजिब-सी गन्ध आ  
रही थी । वह ठटकर कपिला के पास जाना चाहता था, पर आज उस में  
इतनी शक्ति न थी कि अपने हाथ से कपिला का वृष बुझा । पर चन्द्र पर  
सेते-सेते वह कल्पवा में गाय का वृष बुझने लगा, जैसे वृष की बार पड़ने  
की आवाज उसे प्रिय लग रही हो । वह जानता था कि वृष बुझते समय  
गाय को भी एक विशेष प्रकार का आनन्द आता है, जैसे वह दोनों हाथों  
से कपिला के पल बचा-बचा कर वृष बुझ रहा हो और दुग्ध दाय से मधुर  
संगीत फूट रहा हो ।

# उन्नीस



वे मामुसी के रिक्कायी-गॉड से लौट रहे थे। बागल जावरिया के मसीबे नीलकण्ठ और बन्ती नाब बला रहे थे। दोनों के बुँपणमे बाल थे। दोनों हुआँ माद थे। एक-सा गंग-रूप। वे हो यी कम करते मिमकर करते; पल-भर के लिए मी उन्हें एक-दूसरे ने पूबक होना कप्रिय था। मामुसी में उनका बचन बला था, इसलिए कभी वहाँ बागल हला ता वे कम बिगये पर मी पकी हो बने।

बीनकरन के हाथ में था ब्यू और बन्ती के हाथ में डोंड। कहीं पानी कम गहण होता, तो डोंड से खोर लगाकर भाव को आगे बकेला पड़ता। बन्ती डोंड उठाये आँखी पर लटकने वाली में से हँसी के कुरले छोटा हुआ नीलकण्ठ की ओर बेरस्ता; नीलकण्ठ खोर-खोर से ब्यू मस्ताने हुए कभी बड़े बुँगी के समान 'बड़ डिक्कायी' पर तान तोड़ता कभी कमपास मगल की बिगिह शैली में 'हो हो हो माबब' का आलान करने के परबान् एक हम गम्मीर नजर आने लगता। उन समय कमपास मगत तोफता कि नीलकण्ठ पर उल्ला ग बर रहा है।

छाब प्रत नाब लोमने मे पहले नीलकण्ठ ने बन्ती के बान में पूछा था, "मुझे कमपास मगल का बप बल्ल ह या कमपास बाब का?" और बन्ती ने उन अलग से बाबर कहा था 'मुझे तो दोनों ही किमी नाबक के सुबहार प्रतीत होते हैं।' बन्ती का बिसार कहीं तक टोक था,

साइकियों को भी मना नहीं करते थे ।

अच्छा बरामदे में पत्राह डालकर सेट गया ।

रेणु और मल्लिका रसाह में मों के पास बैठे गप शप कर रहे थे ।  
उन्की बातें अच्छा के मस्तिष्क पर खोद कर रही थी, पर उस में इतना  
साहस न था कि उन्हें चुप रहने को कहता ।

गोहल्ली की ओर से गोबर और सूली धास की विचित्र-सी गन्ध आ  
रही थी । वह उठकर कपिला के पास जाना चाहता था, पर आज उस में  
इतनी शक्ति न थी कि अपने हाथ से कपिला का दूध डुहता । पर खर्द पर  
सेटे-सेटे वह कल्पना में गाय का दूध डुहने लगा, जैसे दूध की चार पइने  
की आवाज उसे प्रिय लग रही हो । वह जानता था कि दूध डुहते समय  
गाय को भी एक विशेष प्रकार का आनन्द आता है, जैसे वह दोनों हाथों  
से कपिला के धन दबा-दबा कर दूध डुह रहा हो और दुग्ध चाप से मधुर  
संगीत पूर रहा हो ।

## उन्नीस



वे मामुली के शिफारी-गोब स सौद रह थे। बालू नाबरिया के मतोदे नीलकण्ठ और बन्सी नाब बला रहे थे। दोनों के बुँपपले बाल थे। दोनों बुँबों माद थे। एक-सा रंग-रूप। वे बो मी काम करते मिलकर करते पल-भर के लिए मी ठहँ एक-दूसरे से पूछ-छोटा बर्तिय था। मामुली में उनका बनपन

बोता था, इसलिए कभी वहाँ जाना जाता ता वे कम किराये पर मी राबी हो बने।

नीलकण्ठ के हाथ में या बप्पू और बन्सी के हाथ में डोंड। कहीं पानी कम गहरा होता, तो डोंड से चोर लगाकर बाब को बागे चकोन्ना पड़ता। बन्सी डोंड उठाये बौनों पर सज्जते बाली में ने हँसी के छुप्ते छोड़ता हुआ नीलकण्ठ की ओर देखता। नीलकण्ठ चोर-चोर से बप्पू बसाते हुए बन्सी बड़े बूँों के समान 'बड़ दिख्दारी' पर तान तोड़ता, कभी कस्यास्य मगत की शिफार शैली में 'हरी-हरी हे माधव' का आत्माप करने क परचाप् पक दम सम्मीर मकर खाने लगता। उन समय कस्यास्य मगत खोपता कि नीलकण्ठ पर उनका रंग पड़ रहा है।

आध्र मात बाब खोपने न पहले नीलकण्ठ ने बन्सी के बाल में दूझ था, 'तुम्हें बह्यास्य मगत का रूप पसन्द है या रण्यन काका का ?' और बन्सी ने उस आत्मग ले बाहर बहा था, 'तुम्हे तो दोनों ही जिनी नाब के नूबपार मीस होते हैं।' बन्सी का बिचार कहीं तक टोड था,



लड़कियों को भी मना नहीं करते थे।

बहुत बरम्बरे में पताह डालकर लेट गया।

रेणु और मल्ला खोद में मौ के पास बैठे गप-शप कर रहे थे।  
उनकी बातें बहुत के मस्तिष्क पर चोट कर रही थी, पर उस में इतना

साहस न था कि उन्हें चुप रहने को कहता।

गोहली की ओर से गोबर और सूली पास की बिबिध-सी गन्ध का  
रही थी। वह ठठकर कपिला के पास बाला आइता था, पर आज उस में  
इतनी शक्ति न थी कि अपने हाथ से कपिला का दूध दुहता। पर प्यार पर  
ले-लेते वह कल्पना में गाव का दूध दुहने लगा, जैसे दूध की बार पड़ने  
की आशा उससे प्रिय लग रही हो। वह जानता था कि दूध दुहते समय  
गाव को भी एक विशेष प्रकार का आनन्द आता है, जैसे वह वेलो हाथों  
से कपिला के दल ठपा-ठपा कर दूध दुह रहा हो और दुग्ध पाय से मसुर  
संगीत पूज रहा हो।

## उन्नीस



वे मामुली के शिपरी-गाँव से लौट रहे थे। बारस नाबरिया के मधीने नीलकण्ठ और बन्ती नाब बला रहे थे। दोनों के धुँधलले बाल थे। गैनीं तुन्बीं पार थे। एक-ठा रंग-रूप। वे जो भी काम बज्ज मिलकर करते; पल-भर के लिए भी उन्हें एक-दूतरे से पृथक् रहना पड़िये था। मामुली में उनके बचपन बीता था, इसलिए कभी वहाँ जाना होता तो वे कम बिछपे पर भी राखी हो बने।

नीलकण्ठ के हाथ में था चप्पू और बन्ती के हाथ में डोंड़। वहीं पानी कम बहरा होता, तो डोंड़ से जोर लगाकर नाब को आगे धकेलना पड़ता। बन्ती डोंड़ उठाये झौंभी पर लटकते बालों में से हँसी के छुरले छोड़ता हुआ नीलकण्ठ की ओर देखता; नीलकण्ठ बार-बार ने चप्पू खनाने हुए कमी बड़े-मुड़ी के समान 'बड़ दिक्कारी' पर तान छोड़ता, कमी बख्ताब मगत भी चिरिह शैली में 'हरी हरी हे माबब' का आलाप करने के परचात् एक दम तन्मीर लकर आने लगता। उस समय बख्ताब मगत सोचता कि नीलकण्ठ पर उनका रंग बड़ रहा है।

आज प्रता नाब लावने से पहले नीलकण्ठ ने बन्ती के कान में पूछा था, "तुम्हें बख्ताब मगत का रूप बसन्त है या शम्भाल बाब का?" और बन्ती ने उसे असग से बाकर कहा था, "मुझे तो दोनों ही सिंगी नमक के लुपार प्रतीत होते हैं।" बन्ती का बियार कहीं तक टीक था,

नीलाकण्ठ यह निश्चय नहीं कर सका था। भगत भी थे कि हाथी-मूँह मुँहवाकर रखते थे, और खस्ताल अथवा भगत भी से क्लिप्त उभरते थे—गर्दन तक लम्बित हुए सफ़र वाला लम्बी सफ़ेद दाढ़ी, बड़ी-बड़ी मूँहें—एक महाकत अथवा वेहा तो इसी रूप में अच्युत लग सकता था।

‘भगत भी के पकड़ में आकर खस्ताल अथवा ने भी वेहा सफ़र कर लिया, तो छिप्ने हुए आखू बैसा निकल आयेगा!’ कन्ती ने हँसकर कहा। इस पर नीलाकण्ठ क्लिप्तखिलाकर हँस पड़ा भगत भी और खस्ताल अथवा भी हँस पड़े।

भगत भी की आवाज बहुत पाटवार थी। जब वह बात करते, तो हँसखी की हड़्डी उभरकर ऊपर उठ जाती। उन्हें शिवायत थी कि खस्ताल ने आज तक मामुली अथवा एक भी सत्र क्यों नहीं देखा। मामुली में तो चार सत्र थे। इतने बड़े धार्मिक स्थान और कहाँ थे—गडामूर, आठनिवासी, अस्तावासी और दक्षिणपाट। वैष्णव महापुरुष शहर देव और उनके शिष्य माधव देव ने ये सत्र इसलिए स्थापित किये थे कि वे लोग, जो दूर दूर के तीर्थों की यात्रा न कर सके, इन में से किसी एक सत्र में बैठकर हरि के निराकार रूप की उपासना करें। मामुली के इन सत्रों में तो सैकड़ों ब्रह्मचारी और मठ लोग आत्मरूपक रखते थे। सत्राधिपति सत्र का संचालन करता था। “बैसे महाकत हाथी को चलाता है, बैसे ही सत्राधिपति सत्र को चलाता है।” खस्ताल ने हँसकर कहा, “एक महाकत को तो ऐसी मुक्ति नहीं चाहिए, जिसके लिए उसे हाथी बनना पड़े और किसी सत्राधिपति को अपने कन्हीं पर महाकत के रूप में बिठाया पड़े।”

“यह तो मित्रा करपना है, दादा।” भगत भी ने गम्भीर होकर कहा ‘सत्राधिपति तो महाप्रभु हुए। उनकी कृपा हो जान, तो बड़े-से बड़ा सत्र चल जाय।’

भगत भी ने उस सत्र की बात देख दी जो मामुली के बीचों बीच शम्भार के बस सत्र से ठीके स्थान पर बनी हुई थी। बर्षा ऋतु में जब पशुचिकित्सक हो-जाने हो जाता था, या जब कमी ब्रह्मपुत्र की वा” के कारण

दूर-दूर तक पानी भुस खाता था और मामूली के गाँव स्थितियों के समान पानी में डूब जाते थे, तो मामूली की यही सड़क तब से जैसे स्वप्न पर स्थित होने के अत्यंत पशुओं की रक्षा में तहायक सिद्ध होती थी। बड़-बड़ सप्ताह के लिए लोग अपने पशुओं को सड़क पर ले जाते और स्वयं अस्थायत के दृष्टी पर स्थान बनाकर निज स्थित लेते में तबत दुष्टिया नाब पकाने लगती थी। रास्ताल ने एक-एक बार बॉन्डूरी की कहानी आरम्भ करने का यत्न किया। मगत की के सम्मुख आब रास्ताल काका एक अतिथि के रूप में बैठे थे। बन्धुपितृ इनीलिय आब वह मामूली के सम्बन्ध में एक-एक पाठ में अपना अनुभव दूध में मिमी की तरह धोखेकर प्रस्तुत करने को ठमूक थे।

क्यों बहुत में मामूली को जिस अग्निनाह का सम्मता करना पड़ता था, उस से पार पाने के लिए लोग 'हरि हरि हे माधव' करते रहते थे। कम-से-कम मगत की का तो यही विश्वास था। "बारी तपी में तब से बड़ा बीरता है।" रास्ताल ने बहुत प्रयत्न कर दिया।

"बड़ा तो महाप्रभु का नाम है।" मगत की बात टाल मये।

प्रवाह के विपरीत नाव चलाने हुए बीलकल्प का पर्वना हूट रहा था। रास्ताल काका हँसकर बोलें, "हमारे मार्ग काहल कहा करते थे कि एक निज अग्नि प्रकटपुत्र पर भी कुल बचने में अवश्य सफल होकर रहेगा।"

"वह नहीं होगा।" मगत की बाली "हरि हरि हे माधव।"

गोलकट बोला, "वह शिक्कापी! काका यह तो कभी न होगा। प्रकटपुत्र बाला ने आज तक अपने ऊपर पुत्र नहीं बचने दिया, तो अब कैसे बचने देंगे ?"

बन्धी ने हँसकर कहा, "मगत की की तोष-दाया की कपारें मुनत मुनते तो हमारे धन एक मये। काका, एक बार मगतकी ने ही का बताया था कि फिस्मी ने गंगा और गंगावरी पर पुत्र बना लिये, और तुम भी तो एक बार कह रहे थे काका, कि फिस्मी के मन में एक बार का बाल का

बाप, उसे वह पूरा करके छोड़ता है। तो मला वह ब्रह्मपुत्र पर पुल बनाने में ही कैसे हार मान लेगा ?”

मीलकप्ट बोला, “हम तो करेंगे कि ब्रह्मपुत्र पर पुल न बने और बने भी तो गोहाटी की ओर हो बने, हमारे दिसौगकुल में तो पुल पुल न बने।”

“क्यों ?” राखाल मुन्कय्या।

“दिसौगकुल में पुल बनने से हमारे बाप में बैजहर कौन पार जानेगा ! उस हांग पुल पर बने ही करेंगे जैसे वे बाप बपों पर बसते हैं।”

मगस बी बोले, “इसे करते हैं स्थाप ! क्या मीलकप्ट तुम वह क्यों सोचते हो कि दिसौगकुल में पुल बन गया तो कुहाटा नाम जानने का कच्चा ही समाप्त हो जायगा ?”

“फिर तो केसव नागरिया की इज्जत वाली बाप पर भी बह बर्ही फड़ेगा, बाबा !” बन्सी भी चुप न रह सका।

मगस बी ने प्रथम बहसत हुए कहा

“एक बात याद करा यह। आठनिवादी उस क महाप्रभु ने एक बार अपने उपदेश में बताया था कि अलग में सर्वप्रथम हिन्दू धर्म का किछ प्रचार प्रवेश हुआ। जैसे तो उन्होंने कहा था कि अलग अनेक पुर्णों से क्रमरूप के नाम से प्रसिद्ध रहा है। वह कहा तो आप में से हर किसी ने सुनी होगी कि जब पार्वती की मृत्यु के पश्चात् महादेव शोचमत्त थे, तो देवताओं के निर्वृत्तानुसार हमारी इस मूर्ति में कामदेव को मेषा गया था ताकि वह महादेव के मन में खिड़-रक्खा की माफना को बने सिरे से कम दे सके। यह भी प्रसिद्ध है कि महादेव ने तीसरी काल से कामदेव की ओर लला और वह मरम हो गया। हमारे महाप्रभु—”

“महारक्ष की तीसरी काल वाली बात कभी मेरी समझ में नहीं आई।” राखाल ने झकड़कर कहा, “पर हमारे नामन साहब ने तो हमारे शास्त्रों का बहुतबूढ़ अंग्रेजी भाषा में पढ़ रखा था वह भी मान्यते से कि

शिव की तीसरी छाँस से अकल्प आग निकली होगी ।”

मगध जी ने बड़े धुनवाये हुए तिर पर हाथ फेरते हुए कहा ‘ शिव की तीसरी छाँस से निकली हुई आग से जब अमरदेव मरम हो गया, तो इस मरम से एक बार फिर अमरदेव ने क्या रूप धारण कर लिया ।’

“अमरदेव यहाँ मरम हुआ था, काश ।” भीलकण्ठ ने हँसकर पूछा, “और अमरदेव दोबारा कैसे जीवित हो गया था ?”

‘बढ़ बढ़ी है हमारा अकल्प, जिसे प्राचीन कथों में अमरप भी कहा गया है यही अमरदेव दोबारा जीवित हो गया था तब देवताओं की शक्ति से ।”

पत्नी बोला, “कभी अमरदेव भी मरम हुआ है, काश ।’

भीलकण्ठ ने चप्पू पकालते हुए कहा, “अब बढ़ प्रसंग उम्रगत करो । ब्रह्मपुत्र को देखो । अग्न स्नेहता नया पानी का पहा है । कपूर पहानी पर फुल क्या हुए है ।

पलाश काश बोले “विहू के तीसरे तिन तो दिवांगमन में भी क्या हुई थी ।

“आब तो आकाश निर्मल है ।” भीलकण्ठ ने हँसकर कहा “आब यहाँ पसे मरे काल-काले मेघ ।”

“काले मेघों को तो गंगा-ज्येष्ठ डालने में ही आनन्द आता है ।” बन्दी ने बड़ावा जवाब ‘उस दिन मोहम विहू दिन-भर बन्द रहा था । अब अपने अपने घर में ता बन्द नाचने ल रहा । नाच का आनन्द तो मिलाकर नाचने में ही है ।”

बाप पत्नी का गरी थी । भीलकण्ठ का हाँस-हाँस उड़क रहा था । उस ने चप्पू की गति में और भी बेम लाले हुए कहा, “दुनगाय के निध लान्धा ठीक हो गया, काश ।’

‘सुम्ह ता पम्प है लड़का ।’ मगध जी लीनकर बोले, “बर बन्दर बिचार करेंगे ।”

बन्दी ने अपनी ही हँसी, “गोंव ही में लड़की की लज्जत हो, यह ता शोना ही नहीं चाहिए ।”

“नहीं, इस में क्या बुराई है ?” राखाल ने मूढ़ पूछ लिया ।

“वहाँ लहरी के संयोग होते हैं, वहीं उमड़ी समुद्रल कनटी है ।”  
भगत भी मुस्कराये, “माता-पिता कुछ सोचते हैं—”

“होता कुछ और है ?” राखाल ने बात दोहराकर कहा, “एक बात मुझ लो । यह लहरी, जो तुम मुन्ताप के लिए टीक कर रहे हो, दुश्मनाप को मों को बिलकुल पसन्द नहीं आवेगा ।”

भगत भी ने चौंकर राखाल की ओर देखा ।

नीलकण्ठ और कन्ही कुछ न बोले वे ता उमासा देखना चाहते थे ।

भगत भी ने बात ठहरने के बिचार में कहा “मकमागर से पार लगाने के लिए मी एक नावरिया चाहिए ऐसे ही नावरिया हैं आठनिपात्री सब के महाप्रभु ! शुरुब की कन्ही को हमारे महाप्रभु नाव की तरह चले हैं । इस नाव पर वे अपने मछों को बिठा लेते हैं । हमारे महाप्रभु एक बार अपने सलग में कह रहे थे कि आब तक तो किसी ईश्वरिण ने कम नहीं लिया किन ने ब्रह्मपुत्र पर पुल बनाया हो । वे कह रहे थे—‘देना निव कमी नहीं आयेगा जब अन्य बहियों के समान ब्रह्मपुत्र मी किसी पुल के बीचे से बहेगा और पुल पर लड़े होकर मृत्यु यह अनुभव करेगा कि ब्रह्मपुत्र तो ठरकी टोपी के बीचे से बह रहा है ।’ तुम्हारा क्या बिचार है, दादा ?”

राखाल बोला, “एक निव आयेब यह मी कर दिखयेगा ।”

भगत भी ने हँसकर कहा “हमारी नाव मी एक प्रभु की डोली है । लहरों की बाण्ड है और हम—”

“और हम निर्मोहमुख बा रहे हैं ।” राखाल ने हँसकर कहा, “अब यह मी चोर करने की बात है ! मेरा संकेत तो तुम समझते नहीं । दुश्मनाप की समुद्रल लो निर्मोहमुख मी ही बनेगी ।”

“तो कब आये ही मुझे पिता रहे हैं धूम धूम कर ।” नीलकण्ठ हँस दिया । “एक बात याद आ गई । एक दिन शिवमागर के एक आदमी को मैं दिसाँगमुख से मासुली पहुँचाने गया, तो वह आदमी रात में बेना—  
‘नाव में बैठे बैठे तो लगता है जैसे हम थोड़े पर खतर हैं और पीछा

सरपट बीड़ रहा है ?' यह सुनकर मुझे तो हँसी आ गई। मैंने कहा—  
 'इतनी सरपट तो नहीं बीड़ सकती हमारी नाव।' निम्न यह बात देवघन्ट  
 और अगुल को सुनाई तो वे दोनों हँस पड़े। देवघन्ट ने छूटते ही कहा—  
 'सरपट मी बीड़ सकती है हमारे देश की नाव। यदि नावपक्ष बैने दायेगा  
 का आतंक समाप्त हो जाय।'

'और अगुल ने क्या कहा था ?' राखल ने बग़ाओर समझी।

'अगुल को क्या कहा था ?' बम्बी बाला, 'अगुल तो देवघन्ट का  
 ही पिछूट है। यह तो लम्बे-चौड़े इतना अन्तर रह गया कि देवघन्ट का  
 मान गया और अगुल अमी यों में है। नावपक्ष दायेगा ने तो बड़ी-बड़ी  
 को बारी पने कहा दिये। यह तो सब मॉन-बूझ का सिहाब है। अगुल  
 यों-बूझ का लड़का न होता तो—'

'तो अब तक कैसा में होगा ?' नीलघण्ट ने बम्बी के मुँह से बात  
 झीनते हुए कहा 'पता नहीं वे लोग नावपक्ष दायेगा में क्यों डकड़ सेना  
 चाहते हैं।'

मगल की बोली, 'मैं तो अगुल को यह बात लम्बे-चौड़े-लम्बे-चौड़े  
 गया कि अंग्रेजी राज्य का दायेगा का शिप की लीखी अँख के समान है।'

'बाह, बाह !' नीलघण्ट हँस पड़ा, 'क्या कपक बोला ! एक निम्न  
 इत अँख से निम्नने वाली आवा से अगुल मगल हो जाएगा।'

'और यह भी तो कहो कि इत लम्बे में अगुल दोषों की उठेगा,  
 बम्बे के समान।' बम्बी ने बात का दूसरी ओर घुमा दिया, 'अगुल को  
 उस दिव बिहू माफ में बड़ी देना था ! उबर श्रुताप रंग बोंब रही की  
 सुकतिनों की पंक्ति में, और सामने अगुल नाव रहा था। मगल का भी तो  
 उस समान बड़ी थे। इतने बाले कह रहे थे—'यह जोड़ी अँखों रंयेमी !  
 हम इनके माता-पिता को समझ का बाव। अगुल का बर भी तो श्रुताप  
 के समान है। माइके और लमुपल के बीच यदि बेवज एक लड़का का अन्तर  
 रहे, तो क्या पुत्र है !'

मगल की कुछ न बोली। राखल ने मगल का उठा लिया, 'बिना



ने भी यह बात कही, कुछ कुछ तो यही कहा। मैं तो कई बार यह सोच चुका हूँ।”

मंगल भी चुप न रह सके, “छोड़ो यह बात, बादा। इस में क्या रस है। एक बात याद आ गई। बड़ी सुन्दर बात है। एक बार हमारे महाप्रभु ने यह बात अपने उपदेश में आठनिपाटी सभ के भक्तों को सुनाई थी। यह बात—”

“यह बात हम भी सुनेंगे।” नीलकण्ठ हँस पड़ा।

“अबश्य।” कसी ने आग्रहपूर्वक कहा।

“सुना तो रहा हूँ।” मंगल भी कहते वैसे गये, “यह बहुत पहले की बात है। पोंच सौ वर्ष पहले की बात होने में तो कोई सन्देह नहीं। शिवतागर राजधानी से बाहर गया हुआ था एक अहोम राजा, क्योंकि बुढ़िया लोगों से राजा का मुँह चल रहा था। राजा की दो एवियाँ थी— एक बड़ी, एक छोटी। छोटी रानी राजा को बहुत प्रिय थी। उस समय वह गर्भवती थी। बड़ी रानी ने छोटी रानी के विरुद्ध बहुमन्त्र रचकर उसे मरना जानने का प्रयत्न कर लिया। यदि वह गर्भवती न होती, तो उसके बच्चे में तनिक भी विरुद्ध न होता; पर बड़ी रानी ने जिस मन्त्री को यह आशंका सौंपा, उसे छोटी रानी पर और अनागत शिशु पर न्याय आ गई। बड़ी रानी को तो उस ने यही सूचना दी कि छोटी रानी का जीवन समाप्त कर दिया गया है, पर वह उसे लकड़ी के लकड़ी से बने हुए बेड़े पर बिलम्बर ब्रह्मपुत्र में डाल आया। एक ब्राह्मण ने छोटी रानी की रक्षा की, और वह उसे अपने घर ले गया, वहाँ एक राजकुमार को जन्म देने के पश्चात् रानी ने प्राण त्याग दिये। अहोम परम्परा के अनुसार इस राजकुमार का नाम ‘सुर्गंग फा’ रखा गया। सुर्गंग फा को उस ब्राह्मण ने अपने बन्नों के साथ पाला-पोसा। हमारे महाप्रभु कहते थे—”

“यही कहते होंगे महाप्रभु कि छोटी रानी को सुर्गंगसुख में ही बेड़े पर बिगड़कर ब्रह्मपुत्र में डाला गया था।” नीलकण्ठ ने हँसकर कहा, “और यह भी कहते होंगे कि माधुली के किसी ब्राह्मण ने ही रानी की रक्षा की

भी और सुर्दंग का का पालन-पोषण किया था।”

“जब सुर्दंग का पन्द्रह वर्ष का हो गया, तो मामुली के उस ब्राह्मण ने शिवसागर आकर अहोम राजा के महा-मन्त्री को यह सूचना दी कि महापुत्र—”

“यही ही सुन्दर क्या है।” राजा ने गम्भीर होकर कहा, “कहते आइये, मरात भी !”

“हाँ तो सूचना दी। महापुत्र हमारे घर मैं अहोम राजकुमार सुर्दंग का बड़े आनन्द से समय बिताकर बहुत ही बुद्धिमान बन गया है, और वह अहोम परम्परा के अनुसार राज सिंहासन पर बैठने का पूर्ण अधिकारी है क्योंकि उसके सभी अंग पूर्ण हैं। अब यह उन दिनों की बात है जब सुर्दंग का पिता मार डाला गया था और सिंहासन के लिए राजकुमार की आवश्यकता थी। राजकुमार की मुष्काहृति अपने पिता की सी थी। उसे पूरी तरह पहचानकर उसके सम्बन्धित किया गया। हमारे महापुत्र कहते थे—”

“यही कहते हैंगे महापुत्र कि सुर्दंग का ने राजा बनकर मामुली के उस ब्राह्मण को मात्तामात्त कर दिया और उसके लहखे को राज-मरवार में रख दिया। क्यों मरात भी !” नीलकण्ठ हँस पड़ा।

बम्बी बोला, “इस क्या से यह शिक्षा मिलती है कि जिस की ममबान् रखा करे उसे छोड़ नहीं मार सकता।”

“मैं तो वृत्त ही बात सोच रहा था।” नीलकण्ठ ने कोपूबक जम्बू बनारस हुए कहा, “सुर्दंग का का किनी सुन्दर राजकुमारी से विवाह हुआ होगा, क्योंकि राज की उत्तरी अर्ध से निष्पन्न बाली आता मैं मम होने के परचान् की कामरेव ने हमारे इस कामरूप में गया रूप का बहुत पहले ही धारण कर लिया था। यह भी कह सकते हैं कि कामरेव भी मम हुआ ही था।”

राज्य ने अगली सकल गाड़ी पर हाथ फेरते हुए कहा, “नीलकण्ठ ठीक कहता है।”

“आज घर में बिचार करते समय अट्टल का नाम न मूँतिये, ममत भी।” रस्ताख ने गम्भीर होकर कहा, “विवाह के मामले में संयोग तो मिलना ही चाहिए, पर बुद्धि से काम लेना भी कुछ कम आवश्यक नहीं। बुद्धि भी एक प्रकार का ताला है इसकी चाँकी तो अपने पास रखनी है, कहीं दूर मामूली में नहीं।”

## वीस



आब फिर आखी प्रतिदिन के समान नाच वहा रही थी। बनान्नी बाल को देखकर सोच रहा था—  
यह चिन्ता पुण्य हो गया, फिर भी काम दिये जा रहा है।

आखी की कल्पना में देवचान्त का मुन्दरता हुआ चेहरा उभरा। वह भगवान् से प्रार्थना करने

लगी कि पुनित भी हरि देवचान्त की हस्ता तक भी न पहुँचें। पत्नी का ध्यान आते ही वह हट गई। न बाबा मुँह से तो पत्नी पर कभी नहीं बोल पाया। सुने तो अपने प्राण प्रिय हैं। अपने प्राण जिसे प्रिय नहीं होते। बाल बँधने से पहले बापू लग रहा है—सावधान, मछलियों!

प्राण तो मछलियों को भी प्रिय होंगे। मृत्यु तो मृत्यु से कभी सावधान होने को नहीं करती। यह तो हमारा धन्य है जो मछलियों पर भी नदा भार निभावे, वह बिना का मनुष्य है!

उने ध्यान आया कि जब उसका बापू पौनर्वे दिन हवालात में छोड़ा गया था तो किन प्रकार उसके शरीर पर पिछा के चिह्न दीप्त रह थे। स्वयं उसे भी उलटा लखवाया गया था। यदि वह देवचान्त के सम्पर्क में मृत-मृत भी कुछ बचाना स्वीकार कर लेनी, तो कर्माणि उने उलटा न लखवाया जाता। उसका बापू भी तो देवचान्त के सम्पर्क में कुछ बचाने में सक्षम तक इन्कार करता रहा था, इर्मीलित तो उसकी विचार हुए थी। विचार तो स्वयं उसकी भी हुए थे। वह बचाना ही क्या हुआ, जहाँ विचार

“छात्र घर में विचार करते समय अतृप्त का नाम न भूलिये, मनात भी।” रक्षास न गम्भीर होकर कहा, “विवाह के मामले में संयोग तो मिलना ही चाहिए, पर बुद्धि से काम लेना भी कुछ कम आवश्यक नहीं। बुद्धि में एक प्रखर का ताला है, इसकी चाबी तो अपने पास रखनी है, कहीं दूर मामूली में नहीं।”

# वीस



आज फिर आखी प्रतिदिन के समान रात पलता रही थी। कमलम्बी बाल को देखकर सोन रहा था— वह कितना सुपना हो गया, फिर भी कम दिखे जा रहा है।

आखी की कल्पना में देवदत्त का सुखपता हुआ बेहरा उभर। वह मायाज्ञ से प्रार्थना करने लगी कि दुस्ति की रति देवदत्त की छाया तक भी न पहुँचे। खैरी का ध्यान करते ही वह डर गई। न बाबा, मुझ से तो खैरी पर कभी नहीं पड़ा कदमा। मुझे तो अपने पास प्रिय हैं। अपने पास किसे प्रिय नहीं होते। बाल बेहने से पहले बापू नया कहता है—सावधान, मद्धसियों!

‘प्रत्येक ता मद्धसियों को भी प्रिय होंगे। मृत्यु तो मृत्यु से कभी ताड़ना होने को नहीं करती। वह तो हमारा पन्ना है; जो मद्धसियों पर भी दया मान लिये, वह फिर का मद्धसा है!’

उने ध्याय जाया कि वह उसका बापू पॉयवें गिन देवदत्त से छोड़ा गया था तो किन प्रकार उसके शरीर पर पिछा के चिह्न दीस रह थे। स्वयं तम भी उलटा लनकाया गया था। यदि वह देवदत्त के सम्बन्ध में भूट-भूट भी कुछ जाना स्वीकार कर लेती, तो कदाकिन् उने उसका न लनकाया जाता। उनका बापू भी तो देवदत्त के सम्बन्ध में कुछ बताने से काम तक इन्कार करता रहा था, इतीसिए तो उनकी पिछा दूर थी। रिशार् तो हरयं उनकी भी दूर थी। वह जाना ही क्या हुआ, कहीं निहार

“आज घर में विचार करते समय अतुल का नाम न मूँलिये, ममता भी।” राखाल ने गम्भीर होकर कहा, “विवाह के मामले में संयोग तो मिलना ही चाहिए, पर बुद्धि से काम लेना भी कुछ कम आवश्यक नहीं। बुद्धि भी एक प्रकार का ताला है इसकी चाबी तो अपने पास रखनी है, कहीं दूर मामूली में नहीं।”

यह भी धारणा था कि लबरे-सबरे मछलियों काबिज मिलती हैं या फिर ठोंक में पड़ना। जैसे तो बर भी बाल बाला जाता, यह थोड़ा-बहुत कम तो बर ही दिखाता था। बरमी मोर होने में देर थी।

बर्मनन्दी ने नाथ रुकवा कर बाला रेंकटी हुए कहा, "ताबधान, मछलियों! आराम से पानी छाओ हमारे बाल के भीतर। सरकार को पैसे देते हैं, मुक्त तो हमें कोई मछलियों नहीं पकड़ने देता।"

भारती को स्मरण हो आया कि पिछले वर्ष तो देवकान्त हर तीसरे नाथे दिव उसके साथ नाथ में आ बैठता था और आराम कर देता था कलकत्ता की कहावतों। कलकत्ता में उसकी पढ़ाई के दिनों में बहुत बार इरुल्ल साहब की छोटी लिली ने उसकी सहायता की थी, वह तो देवकान्त ने कई बार बताया था। नाथ ही उस ने यह भी तो कहा था—'यदि किसी प्रकार लिली को इस बात का पता चल जाता कि मैं कान्तिधरियों के लिए सम्पद में हूँ, तो कदाचित् वह मेरी सहायता करने का विचार ही छोड़ देती।' तबला उसे ध्यान आया कि देवकान्त की यादिर बाबू की झिनी पिटाई हुई थी। श्वर उस भी तो उनका लटकाया गया था। इसी पर कम नहीं की गई थी। उसके काल घंटे गये थे उसे पीने का पानी नहीं दिया गया था उसके बाल गोले गये थे; नीचे से इरुल्ल भी समाने गये थे। कोई भी पिटाई नहीं चाहता। पिटना तो आगल कम नहीं। अपनी बाल कैसे मिर नहीं होती? ताबधान, मछलियों! हमारे बाल में आराम से पानी छाओ। सरकार को पैसे देते हैं। याने मैं हमें अरुण लणकाया बनाई, नाने से इरुल्ल समाने जाते हैं। ताबधान, मछलियों, ताबधान। इस समय देवकान्त ब जाने कहीं होया। मन-ही-मन भारती देवकान्त के लिए प्रार्थना करने लगी।

बर बार भारती भीकाशी को गिनने लगती थी पल से गुजर रही थी।

तबला उसे ध्यान आया—ब्रह्मण का लहका गाह तो मछुआ बन सकता है, पर मछुआ की बच्चा तो इस रूप में ब्रह्मण की बहू बनने से रही।



न की जाती हो। शापयश के हथे पड़ने का मतलब है मृत्यु की राह देखना। हम तो मायगशाली थे कि मुक्त होकर आ गये, पर अब भी क्या मरनेवा है! देवधन्त पुलिस के हाथ नहीं लगा। पुलिस चाहे तो बापू को और मुझे दावाय इच्छस्त में रख सकती है।

अब तो उसे देवधन्त का कोई पता न था। उसे देवधन्त का पता होता तो वह उसे मौकम पहुँचाने जाती, पुलिस की दैनिक भी परवाह न करती वह देवधन्त से माय माता की बात पूछती। वह उस से पूछती कि माय माता दिवंगतमुख कब आयेगी। इसके उत्तर में देवधन्त बात लिमेटता। वह उस से कहती—पहले मकली और माय काका, देवधन्त। फिर माय माता की बात बताता। अभी अगले ही दिन वह देवधन्त की माँ से मिलने गढ़ थी। माँ को इस बात का तो दैनिक भी डुल नहीं कि क्या इस पय पर कहीं थल रहा है पर उसे इस बात का बहुत डुल है कि कलकत्ता से लौटकर उसका क्या एक बार भी उस से मिलने नहीं आया।

देवधन्त बैठे के की माँ होने का तो भला कैसे गर्व न होगा। करने पर अछरी या मूमा का बात सुनते हुए माँ सदा यही सोचती है कि देवधन्त बैठा बैठा तो प्रत्येक स्त्री को मिले। माँ का यह विचार तो कितना सही कि देवधन्त का कार्य शीघ्र समाप्त हो जायगा और फिर वह दिवंगतमुख में कमकर रहेगा। मैं सोचती हूँ कि अपने कार्य से छुटी पाकर देवधन्त के लिए यह कितना बर्तन सही रहे जायगा कि वह दिवंगतमुख में कमकर रहे। देवधन्त जायस है। मकुर की क्या तो क्या लकड़ बनेगी जायस की वह। जायस का लकड़ा तो मकुरा बन लकड़ा है वह मकुर पलाते-पलाते बोली, मकुरियों का प्याल रखी, बापू। क्यों जालीगे बात ?

‘तुम मकुर बलायी रहो, आरती। मकुरियों कहीं मिलेंगी, यह बला मेरा काम है।’

अनन्तरी जानता था कि मकुरियों कहीं अधिक मिलती हैं। वह

यह भी जानता था कि सखे-सखे मछलियों का बिक मिलती है या फिर खोंक के पर्याप्त । ऐसे तो सब भी बाल बाला जाता, यह थोड़ा बहुत काम तो कर ही दिखाता था । कामी मोर होने में देर थी ।

बामनन्दी ने पाप रुकवा कर बाल रूँकते हुए कहा, “सावधान मछलियों ! आराम से बली आओ हमारे बाल के भीतर । सरकार को पैसे देते हैं, हुस्न तो हमें कोई मछलियों नहीं पकड़ने देता ।”

आप्ली को स्मरण हो आया कि पिछले वर्ष तो देवचन्द हर तीसरे खीचे दिन उनके साथ नाव में था बैठता था और आराम कर देता था कलकत्ता की कार्नावो । कलकत्ता में उसकी पढ़ाई के दिनों में बहुत बार हस्तन ठाढ़ की कैपि लिली ने उसकी सहायता की थी, यह तो देवचन्द ने कर बार बताया था । साथ ही उस ने यह भी तो कहा था— यदि किसी प्रकार किसी को इस बात का पता चल जाता कि मैं कार्नावो के निरुपसन्न मे हूँ, तो कदाचित् यह मेरी सहायता करने का विचार ही छोड़ देती ।” सहसा उसे प्यार आया कि देवचन्द की स्मृति कादू की चिन्ती पिछाई हुई थी । स्वयं उसे भी तो उल्टा स्मरण था था । इसी पर बन नहीं की गई थी । उसके कान पीठे गये थे उसे पीने का पानी नहीं दिया गया था उनके बाल बोम्बे गये थे; नीचे से हस्तर भी लगाने गये थे । कोई भी पिछाई नहीं आता । पिछाई तो जानाब काम नहीं । अपनी बाल कितने प्रिय नहीं होती । ‘सावधान, मछलियों ! हमारे बाल में आराम से बली आओ । सरकार को पैसे देते हैं । पाने में हमें उल्टा स्मरण बताया है, नीचे से हस्तर लगाने जाते हैं । सावधान, मछलियों, सावधान ! इस समय देवचन्द म जाने बहो होया !’ मन ही-मन आप्ली देवचन्द के लिए माधना करने लगी ।

कर बार आप्ली भीचरों को गिनने लगती को पाठ से शुरू रही थी ।

सहसा उसे प्यार आया—ब्रह्मण का लहका बाह तो मनुष्य बन सका है, पर मनुष्य की कृपा तो इस क्रम में ब्रह्मण की बहु करने से रही ।

सुप्त में तां सरकार किती को मज्जसिंघों पकड़ने का कत्ता करने की आज्ञा देने से रही। अपने खान के लिए मत्ते ही कोई दो-चार मज्जसिंघों पकड़ कर ले जाय, पर कोई इस जन्म को अपनायेगा तो उसे सरकार को ऐसे बने ही होंगे। ऐसे देने के विरुद्ध ता नहीं है बापू। मन्दुर से तो अहोम खता भी ऐसे लेते होंगे। ब्रह्मपुर में बाह किन्ती मज्जसिंघों पकड़ते रहें, वह तो अपना परिश्रम है। फिर सरकार ऐसे क्यों लेती है? देवकान्त ने बताया था कि कलकत्ता में हजारों गलियों हैं। मन-ही-मन वह उन गलियों का गिन्ने लगी। ठक हजारों गलियों में खूने वाले लोग कैसे होंगे? वे अपने ही सुत-पुतल में लगे रहते होंगे। देवकान्त ने एक बार मुझे कलकत्ता निरामे का कथन किया था। मैं अकरम कलकत्ता देखने जातींगी। कलकत्ता देखकर वहाँ का जातींगी। फिर मैं वहाँ के लोगों को "कलकत्ता से भी कहीं बापू-बापू कलकत्ता की बदलियों मुनावा करूँगी।"

अमलन्दी बोला "जाय तो पूरी ली मज्जसिंघों कलकत्ता चाहिए।"

आपली का ध्यान पर से आपली बात की ओर था। फिर उस का ध्यान देवकान्त की ओर चला गया। आकाश का लहलहा जाहे तो अकरम मज्जसिंघ का लकता है। पहले वह अपने काम से छुड़ी तो पा ले, फिर वह दिवंगतुल में कमर खेया। वह मन-ही-मन ब्रह्मपुर की मज्जसिंघों गिन्ने लगी। मुझे बार-बार पुलिस ने देवकान्त का मेरा बताने के लिए विरक्त किया था, बार बार मेरे इन्कार करने पर मेरे मुँह पर बन्धा गया था। पुलिस का अत्याचार मैं ने बड़े पैमाने से सह लिया था।

अमलन्दी के शरीर पर अभी तक पुलिस की थोटी के निशान लहर जा रहे थे। आपली ने कई बार पूछा—'बापू, मुझे किती ने कुछ कहा था वहीं था बने मैं?' अमलन्दी ने हर बार यही उत्तर दिया—'वे मुझ से पूछने खे और मैं टसल रहा। मुझे किती ने हाथ नहीं लगाया।' अभी अगले ही दिन मैं दूनतारा को उस के पर तक छोड़ने यह, तो रास्ते में उस ने मुझे बकमती की क्या मुनाह थी। बकमती की क्या ता मैं पहले भी बकमती थी,

पर उस दिन कुन्दाय के मुख से वह क्या सुनकर चितना आनन्द आया था। कुन्दाय ने बचपनी की क्या सुनाने से राह कहा था—‘तेरी क्या तो बहुत बुरा है, आखी ! एक दिन दिसाँगसुख वाली को मालूम हो जायगा कि आखी ने एक बार फिर बचपनी की कहानी को बीकित कर दिया था ! मैं ने उसे चुप कराते हुए कहा था—‘क्या पता, पुलिस के धोड़े और बत्तायार से ही तुम्हारी आखी मकसीत हो जाती और बख्शान्त का ने पता बेती ! फिर कैसे उसकी बख्शान्त में बख्शान्त की आवाज सुँब उठी—एक दिन मैं अपनी बचपनी से मिलने आऊँगा। बख्शान्त में कर्म समाप्त करने के पश्चात् मैं दिसाँगसुख ही में रहूँगा। मैं महुआ का आऊँगा। फिर तो न पुरा होगी, मेरी बचपनी !

कमान्नी ने न जाने क्या सोचकर कहा, ‘वह कहास्त वा तुम ने अकरम मुनी होगी, आखी !’

‘कैयसी बापू !’

‘वही—‘बीनी के लिए बर्तों की कुछ बूँदें ही बा’ हैं !’ वही तहरी बाउ है !’ कमान्नी ने दोनों हाथ आनाय की ओर उठाकर कहा, ‘आब किने बाबू फिर रह हैं। बर्तों होगी !’

आखी बोली, ‘यह बीनी वाली कहास्त भी अच्छी है, बापू ! मैं मोफनी को तुम वह लॉव आर मकनी वाली कहास्त सुनायते !’

‘अरे हौं आखी ! वह कहास्त भी अच्छी है—‘देखो बहन देखो, तुम्हें लॉव ने हवा लिया और मिनी मकनी पक’ ली !’ इस कहास्त का मन्त्रण बहुत गहरा है !’

आखी कुछ न बोली। असम के इतिहास की वह सुविस्मयन क्या नाटक के दृश्य के समान उसकी बख्शान्त में उठी—कतन का कबायारी अहोम राजा ‘सुमिका पा’, जिस ने बसुन्दाक अहोम सिंहासन पर आबिषाक कर लिया था, उस पर की ऊपर की मकिल में महुआ बांधे हुए थे फिर बाहर निकाले गए थे। नीचे लुपे मैदान में, जहाँ कभी सूर्य डूबा करते थे या नाटक देखे जाते थे, आब लक्ष्मी की संगमूमि पर सभी

बम्बती की लाश उतारी जा रही है। उसके शरीर पर तड़ान-सड़ान झोंके लगाये जा रहे हैं। सात दिन से वह भूली और प्यासी है। वह वह जानती है कि उसका पति गडापरसिंह कहाँ है, पर वह बचती नहीं। उसे तुरी तरह खताया जा रहा है। सन-के-सन अहोम राजकुमारों को अहोम परम्परा के अनुसार सिंहासन के अयोम्य टहरने के लिए नृसिंह फा ने अपने सेनापति को आज्ञा दी थी कि वह उपा की प्रथम फिरफूटने से पूर्व ही प्रत्येक अहोम राजकुमार की एक-एक उंगली या एक-एक कान काट कर और सोने के बड़े घास में सजाकर प्रस्तुत करे। सेनापति आज्ञा पालन के लिए बला। सन राजकुमारों को सिंहासन के अयोम्य बना दिया गया, क्योंकि अहोम परम्परा के अनुसार उपा मगवान् का प्रतीक माना जाता था इसलिए सिंहासन पर बही राजकुमार बैठ सकता था जो राष्ट्रीय हथि से सहाय पूर्ण हो। बम्बती के पति गडापरसिंह को किसी प्रकार सूचना मिल गई। वह माग निष्पत्ता। तड़ान-सड़ान बम्बती के शरीर पर झोंके लगाये जा रहे हैं ताकि वह अपने पति का भेद बता दे। बम्बती कुछ नहीं बोलती। वह मृत्यु से कोस रही है। हचारी लोहा उपा पर किया जा रहा वह अत्याचार देख रहे हैं, सन की आँखों में आँसू हैं सन यही चाहते हैं कि गडापरसिंह मागा बीरों की सेना समेत आ पहुँचे, बम्बती को बचा लिया जाय और अत्याचारी नृसिंह फा का शासन समा के लिए समाप्त कर दिया जाय। बेसते-बेसते बम्बती के प्राण-पञ्चक उड़ गये। गडापरसिंह अपने मित्रों की सहायता से नृसिंह फा को उसके अत्याचार का दण्ड देता है और स्वयं सिंहासन पर बैठने में सफल हो जाता है। बम्बती के नाम पर शिक्तागर में बबसागर लुहाया जा रहा है। बम्बसागर के किनारे बम्बती के बलिदान के उपलक्ष्य में बम्बोम बनवाया जा रहा है। आरती की कल्पना में बम्बती के बलिदान का दृश्य फिर से घूम गया। फिर जैसे बम्बती ने आरती का रूप धारण कर लिया। नृसिंह फा के स्थान पर गारम्भा दारोगा आकर खड़ा हो गया। सन से एक मङ्गली उसकी लाश चढ़ाई गई है नीचे से उसके हृदय लगाये जा रहे हैं।

बर्द बस्ती से मये गंगाधरसिंह का पता पूछा जा रहा है। हयनराजो !  
मुझर का बच्ची ! बता वह सेवा देवबन्धन क्यों है ?

वह अरबी और फार्सी गीतार्थों को गिमाने लगे—एक, दो, तीन ।  
फिर वह जैसे अपने बापू को सुनाकर कहने लगी, “ब्रह्मपुत्र बाबा पर तो  
हमारा नौचरई चलती चलेगी । साधन, मन्त्रियो ! हमारे बाल में छाया  
से बली छाओ । ब्रह्मपुत्र पर मन्त्राली भी छाप है और अरुण के इतिहास  
पर बस्ती की । बनी बस्ती, छोटी बस्ती । नौचरई का रही  
है—एक दो तीन । बाल में मन्त्राली बँस रही हैं—एक, दो, तीन ।  
देवबन्धन बर्दो की है, मुन्धो रहे—एक, दो तीन । बलाबला में रहते ह  
माछ मला—एक, दो, तीन । माछ मला बहुत दुबली हो गई है—  
एक, दो, तीन । मैं छाया निरामात्र के धान में हून से टफरी सफने  
मगने मर गई थी—एक दो, नव । मैं फिर से धीमि हो गई थी—  
एक, दो तीन ।

# इक्कीस



होन्नि से क्या कन्ठ नहीं हुई थी। स्टीमर की मिड़की से क्या का दरम बहुत मला धीरे हो रहा था।

सिल्ली बाग़ी थी कि क्या श्रुत गौर बाग़ों के लिए संकट लेकर जाती है। साथ ही उस ने यह भी सुन रहा था कि बग़ाल और असम के नये और पुपने कवि क्या श्रुत का गुणगान करते नहीं थकते।

एसी स्टीमर पर सिल्ली का बन्म हुआ था। जब उसका बन्म हुआ तो यह स्टीमर कलकत्ता से दिर्गोन्मुख आ रहा था। कलकत्ता से चलने के तीसरे दिन स्टीमर ही में सिल्ली ने संसार में बाहर पहली बार खोले ली। वह भी बही महीना था—गोहाग किहु से डेढ़ माह बाद यही बग़ाल का दिन था। यह सोचकर कि बाग़ उसका बन्मणि है सिल्ली मन ही-मन फूली न समझी थी। यह स्टीमर भी उसे बहुत अच्छा लगने लगा वो उसके निवास के लिए स्टीमर-घर पर ही खड़ा रहता था।

जब से देवकान्त दिर्गोन्मुख से माग गया था, सिल्ली उसके सम्बन्ध में कुछ अधिक सोचने लगी थी। कलकत्ता जाने से एक दिन पूर्व यह सिल्ली को मिलने आया था, पर कलकत्ता से लौटकर तो उसे स्टीमर-घर पर आने का समय ही नहीं मिला सका था।

देवकान्त के दृष्टिकोण से बीकन को देख सकना सिल्ली के बल का रोमांच था। उसके डेढ़ी ने अंग्रेज जाति को विधिपूर्वक की मानना उसके मस्तिष्क में बत-बत कर भर ही थी। न जान क्या से सिल्ली यह मुन्नी आई

थी—'बच तक हम यहाँ रहेंगे, रुपये के खोर पर रहेंगे।' इसके उत्तर में वह प्रायः मौन रहती। उसके ईर्ष्याही सोचते कि लिस्ती उन से सोलह आने सहस्र है।

बच लिस्ती सैकण्ड इयर में पढ़ती थी तो देवचान्त चौथे इयर में था। दोनों कलकत्ता के दो असंग-असंग कालेजी में पढ़ते थे। लिस्ती जानती थी कि देवचान्त एक असमिया पत्रिका का कार्य कर छोड़ता है और इसके बदले में कलकत्ता की उस पत्रिका का सम्पादक देवचान्त की सहायता करता है। देवचान्त त्रिर्गामुख से दूसरे कलकत्ता पहुँचा। इसकी लम्बी कहानी थी जो लिस्ती ने कई बार स्वयं देवचान्त के मुख में सुनी थी। वह कहानी सुनते सुनते वह कई बार चुपे तरह खोर छुड़ थी फिर भी उस ने तौम-बार आदरों पर देवचान्त की आर्थिक काठनाइयों में उसका हाथ बढ़ाया था। उस न केवल मानकता के कारण पर लड़े बल्कि ही देवचान्त की सहायता की थी। आखिर उस दोनो का सम्पन्न त्रिर्गामुख ही में बीता था और लिस्ती के लिए वह बात बहुत महत्वपूर्ण थी। ब्रह्मपुत्र ने ही दोनों की कल्पना में गा मरा था। मने ही देवचान्त यह न सोच सकता था कि लिस्ती एक ईर्ष्या लक्ष्मी होने हुए भी त्रिर्गामुख के सम्पन्न को इतना महत्व दे सकती है।

लिस्ती से हाथ निकालकर मिली क्या के छुट्टी को अपनी मुक्ति में दाने का फल बन लगती। उस के मुख पर हवा मुह फेर रही थी। हवा की चपलता लिस्ती को प्रिय थी, पर उस की कल्पना में यह बात भी कुछ दूर न थी कि यदि क्या ने तूफान का रूप धारण कर लिया तो हो सकता है कि त्रिर्गामुख के बहुत से लोगो की कुत्ते उठ जायें। पढ़ने से पिछले रूप इन्हीं दिनों आलोसीगा की सुललमान बस्ती की अधिक नहीं तो आत्मीय-परायण मीपड़ियों तारा के चरों की तरह देह गई थी।

कलकत्ता बान से पदसं दिन देवचान्त लिस्ती से निम्न आया था, ता न जाने किन सम्पन्न में युनायो बाइक की चर्पा होने पर देवचान्त ने कहा

ब्रह्मपुत्र।



या—‘सूनाती नारक में मृत्यु पेश जाती है और पैमान से सीधी रेखा खींची जाती है, पर जब जबकि छात्रों की इतनी प्रशंसा हो चुकी है और यह सिद्ध कर दिया गया कि कोई भी रेखा सीधी नहीं होती, वह और भी आश्चर्यक हो जाता है कि नारक में ट्रेजेडी का रंग पेश करते समय सीधी रेखा कौन पर मृत्यु को लाने की वजह यह जीवन के सभी लाना काय ।’ इसके उत्तर में यह पूछने पर कि मृत्यु को जीवन के सभी लाने से उत्पन्न क्या तात्पर्य है, देवदत्त ने कहा था—‘एक मृत्यु वह भी जो छात्रों को प्राप्त हुई, एक मृत्यु वह भी है जो एक वेशमन्त्र को प्राप्त होती है ।’

यदि अपने डेढ़ी के इस विचार से सिली पूरी तरह सहमत हो जाती कि जैसे-जैसे छात्रों के चोर पर ही इस देश पर राज्य करेगा, तो छात्र वह सभी देवदत्त को यह आश्चर्य न पड़ी कि उनके लक्ष्मि में आकर वह अपने देश के सम्मान में इतनी सीखता से बात कर सके ।

परन्तु जैसे आश्चर्य ही अपना पूरा चोर दिखाने पर कुछ नहीं भी । जब तो प्रदीप्त होता था कि लक्ष्मि का रंग ऊपर आ रहा है । आश्चर्य फिर दित्तोन्मुख की भीषणियों के ऊपर उठ जायेंगे । आश्चर्य फिर बहुत-सी भीषणियों पिकले से पिकले रूप के समान नीचे बैठ जायेंगी । सिली को विद्वत्ता में खड़े-खड़े यह आश्चर्य कि एक बार अचानक में उस ने देवदत्त की एक होश में फिर पर बुलाया था । फिर के परन्तु उन्होंने एक कैरे देखा था । उस कैरे में जीवन और मृत्यु का राज दिखाया गया था । कैरे समाप्त हुआ तो देवदत्त यह उठा था—‘वह मृत्यु नहीं, मृत्यु का उपहास है । मृत्यु तो नहीं है या पौसी पर मूलतः हुए आन्तिकारी से गले मिलती है ।’ जब तो तुम्हारे मन की बात पूरी होकर पड़ेगी, देवदत्त ! तुम जैसे-जैसे का दया सहने से इन्कार कर रहे हो । नहीं तुम्हारी आन्ति का संदेश है । मेरे डेढ़ी गलत करते हैं । उरते का उर तो सदा दया से दिया जाता है, चाहे पहले या पीछे । छात्रों की विद्या तो यह नहीं है । वह तो प्रेम का संदेश लेकर आता था ।

इत कन्देश के अपराध में उसे टयल मिला। उसे अपनी सुखी स्वयं ही  
उठाकर हो जानी पड़ी थी। उसके हाथों और पैरों में नेलें गाढ़ की  
गयी थीं।

सामने वाली दीवार पर एक चित्र लटक रहा था। यह एक परबाहे  
का चित्र था। चित्र का परबाहा हूब-हू अगुल प्रतीय हो रहा था। चित्र ने  
मी अगुल से परिचित होने के परबाह वह चित्र देखा, उस ने यही कहा  
कि यह अगुल का चित्र है।

सिली जानती थी कि बर्ग म्या के सब से अधिक गीत वो टैगोर ने  
ही लिखे हैं। कलकत्ता में रखे हुए उस ने बैंगला भी सीख ली थी।  
अवमिया तो वह पहले ही जानती थी। देवकान्त के साथ मिलकर उस ने  
हर बार टैगोर के गीत गाये। देवकान्त के समान तो मन्ना वह कैसे  
गा सकती थी फिर भी टैगोर के गीतों की स्वर-माधुरी उसे प्रिय थी।  
इसीलिए दोनों एक बार कबि टैगोर से मिलने शान्तिनिन्देन गये थे।  
बडा-सा खोगा पहने कबि आपन कुर्सी पर बैठे थे। पूरबी की प्रशंसा में  
सिली दूर नर कविता कबि न बनी खोचदार आवाज में सुनाई थी।  
अप देवकान्त को न जाने क्या दखी उस ने कबि से प्रश्न कर दिया—  
'पूत को भी तो मृत्यु आती होगी और क्या पूत जैसे ही नहीं मरता  
जैसे शान्तिनन्देन कीर्ति पर मूल जाता है।' इसके उत्तर में कबि ने मुस्करा  
कर कहा था—'पूत भी मृत्यु ही पूत का बीज है।' शान्तिनिन्देन से  
लौटते हुए गाड़ी के हिन्ने में देवकान्त ने कहा था—'दब मृत्यु अपने  
अपने वह मुकपत कलहर विपान करता है।'।

बरा के अनेक दरय, बिनका बखन न जाने किन-किन पुस्तक में हुआ  
था, सिली को बखपना में उमरते पले गये। फिर बखपना की सूर अगुल  
ही ओर घूम गई। अगुल में सन-मुल सुन है, देवकान्त में तो बहुत  
कुछ गहर का मिश्रण है। मैं भी अपने को सुन नहीं कह सकती।  
हउ तो ईश्वरी भी नहीं रहे। विताप्रसाद के अगदी-मृगा के कन्धे में  
मद्यपुत्र।

डेढ़ी का भी हिस्सा है। डेढ़ी छाल नहीं कि वह यहाँ डण्डे के चार से  
 रहना चाहते हैं। प्रेम के चार पर तो चाहें कोई लाखों-करोड़ों पैसे तक  
 रह लें, डण्डे के चार पर तो कठिन है। डण्डे का बर्तन डण्डा है। हम  
 लोग काइस्त की शिक्षा भूल रहे हैं। काइस्त हमारा बरबाद था।  
 हम काइस्त की भेंटें हैं। काइस्त ने अपनी भेंटों को एक ही शिक्षा दी कि  
 लोगों के मन प्रेम से भीतो, सेवा से भीतो। 'सहसा लिली को उस दिन  
 की याद आ गई जब उस ने अपने डेढ़ी के हेडक्वार्टर विष्णुधाम के हाथ  
 अट्टल के साथ अरमिया बाइबिल मिशनरी की। इसे अट्टल ने स्वीकार  
 नहीं किया था। पहले उसे अट्टल पर बहुत क्रोध आया था, पर अब तो वह  
 सोचती थी—अट्टल को बाइबिल को अत्यन्तकता ही नहीं वह पहले से  
 ही काइस्त की शिक्षा पर चल रहा है।

पीछे सुझकर लिली ने बरबाद का चित्र देखा। यह चित्र वह शान्ति  
 निवेदन से लाई थी। बरबाद का चित्र अट्टल से कितनी आनन्दजनक  
 समझा देता था। अट्टल अच्छा है या बेवकाल ?—यह प्रश्न लिली के  
 मस्तिष्क में बार-बार उठता रहा।

बाहर बर्बाद हो रही थी। लिली ने प्रमोक्सेन पर कभी सिम्फनी का  
 रिकार्ड खरीदा था। उसकी कल्पना में बीथोफ़न का चेहरा उभरा, जैसे  
 बीथोफ़न कह रहा हो—'मुझे इस सिम्फनी की प्रेरणा एक बरबाद के गीत  
 से मिली थी। वह एक खालिस गीत था। मेरी सिम्फनी में उस खालिस  
 गीत का खालिस बीज जड़ पला-भूला। पास वाले कमरे से डेढ़ी की आवाज  
 सुनाई दी, "कभी सिम्फनी पर तो हमारी लिली आज बेटी है!" फिर ममी  
 की आवाज आई, "मुझे तो स्कॉप तुम ही अधिक प्रिय है।" लिली ने  
 डेढ़ी और ममी की आवाजों को अनजुमी करते हुए बर्बाद के कार्नेल्स पर  
 ध्यान लगा दिया।

# वाइस



रामाल काका की न- भोंपड़ी बर्न श्रद्ध से पहले ही बनकर तैयार हो गई थी।

सापन मीरी अन्तिम अर्थ तक फल बढ़ता रहा कि काका गौब-बुला के बकर से निचलकर मीरी बस्ती में आकर रहें। उसका किनार था कि काका अश्वत्थ कादिर के बकर में डूब गये। नर की बगल में कमीन का यह डकड़ा बहुत दिनों से रामली पड़ा था। उसने पर पोन्गी पहले से मौसुद थी, बिन में काय राबईलों का बोझ तैयार नबल जाता था। राबईलों का यह बोझ मामुली से आया था। काका ने इमे दिसासामुन के हाट-बाजार से खरीदा था।

काका की भोंपड़ी के द्वार के दोनों द्वार सेमन का एक-एक पेड़ लगा था। दो पेड़ इस भूमि पर पहले से मौजूद थे। यह कहना तो अटिन था कि इन पेड़ों ने भोंपड़ी की शोभा बढ़ा दी थी या भोंपड़ी ने इनकी सुन्दरता में चार-चौ- लगा दिये थे। भोंपड़ी के पाछे थी पोन्गी, बिन के पीछे एक द्वार केने का कुन था और दूसरी ओर बौनों का मुरमुन। भोंपड़ी का द्वार सड़क से बहुत दूर न था। नीलमणि बलपारु मगत और अश्वत्थ कादिर का यही किनार था कि भोंपड़ी बहुत पीछे दृष्टकर बनार बाव, पर काका न कमी की एक न मुनी। काका ने यह स्थान सड़क के कारण ही चुना था। इसलिए भोंपड़ी का द्वार सड़क के बापिक

मसपुत्र ।

से अधिक समीप रखा गया। यह तो सेक्स के पेड़ों का लिहाज रखा गया, नहीं तो यदि ये पेड़ पहले से नहीं मौजूद न होते और कच्चा के मस्तिष्क पर इस बात की छाप न होती कि पौदरूषी में उनकी भोंपड़ी के समीप सेक्स के पेड़ दूर तक चले गये थे और फागुन में इनके लाल-लाल फूल लाल रंग के भयंकर मुक़ाबले थे, तो कच्चा ने ठीक तरह पर ही भोंपड़ी बनाई होती।

वनसिंह की बुद्धिमत्ता पर भी काबू कम ही चले थे अपने हाथ से लाना पकड़ते, अपने हाथ से बांध बनाते बिसे मी उन से मिलना होता, उनके पास खिंचा खड़ा आता। उनकी प्यारी प्यारी बातें फिंगी के सम्बन्ध में होतीं। वो कोह मी एक बार कच्चा की बातें सुन लेता, फिर सदा के लिए उनकी बातों का रसिबा बन जाता। नीलमणि के घर में कितने हुए दिन कच्चा को प्रायः समझ हो आते और वे सदा यही ठोक्ते कि वहाँ वे उनके ही होकर रह गये थे, कच्चा से खोज ही नहीं सकते थे।

अन्धुल कठिर हँसकर कहता, “अबेले बैठे-बैठे तो आदमी का विला उठता जाता है। विला से बातें करते तुम पछीं कैसे बैठे रहते हो, बाटा !”

कच्चा यही उत्तर देते, “एक दुनिया बाहर है, तो एक दुनिया अपने अन्दर भी तो है। बाहर वाली और अन्दर वाली दुनिया में मेल क्या रहे, यही तो देखना होता है। आगु के खरार में एकदम तो आकरक है। सुन्न पर तो सप की कृपा है बिसे मी मिलना होता है, यही क्या आता है।”

कच्चा की भोंपड़ी में जाने वालों में सप प्रकर के लोग थे। मीरी, अलमिया और नेपाली, सभी कच्चा की कहानियों पसन्द करते थे। कभी ऐसा भी होता कि दो-दो तीन-तीन दिन तक एक मी आदमी कच्चा से मिलने न आता, पर कच्चा को इसकी विशेष चिन्ता न होती। मस्तान से मिलने के लिए कच्चा के दिहा में आकरन उभरा ठठरी। कच्चा मस्तान के मी आना होगा तो नहीं क्या आवेगा, यह विचार कच्चा को कर था

आता, पर सगला था कि मल्ला काच को बिलकुल भूल गया।

काच किसी दुश्मन से कुछ लपेट रहे होते, तो पास से गुजरता हुआ मल्ला वह बार चाहता कि अभी बाहर काच की डोंगी से लिपट नाम और करे—सुम्मे भूल गये, काच ! मैं हूँ मल्ला !

जब भी मल्ला स्कूल जाता, उसके भी मैं यही आता कि काच की मीपड़ी मैं जाता बाप और काच का सुख-समाचार पहुँच ही आने बड़े। सत्यकाम को स्कूल से लौटते हुए वह भीतर बाहर काच का गम्भीर चेहरा देखने का विचार सहज ही सुना न सकता। वह बार वह दूर से देखता कि काच मीपड़ी के बाहर गड्ढे से बैठे हैं और उनके सामने बैठा उनकी कहानियाँ सुन रहा है। मल्ला सोचता—वह दिन शीघ्र आयेगा जब काच आये तो उठे पास आते देखकर काच उसे प्यार से बुलायेंगे वे उठ से बातें करेंगे, प्यार से उसके चिर पर हाथ डेरेंगे। वह चाहता था कि काच के सरक हाथों का बान्धकर पछड़ी उनके पास बैठा रहे। वह अभी जानबूझ ही तो था। कभी वह सोचता—काच तो बड़ा आदमी है, मैं तो बहुत छोटा हूँ। वह मन-ही-मन कैलता कर लेता कि काच तो बड़ा आदमी है और बड़ा आदमी कभी झपट्टा नहीं होता। फिर भी काच का प्यार आता रहता। कभी वह सोचता कि काच मुझ से मिलना आरम्भ कर देंगे, वे मुझ बुलायें तो सही मैं उनके घर बाहर उन से बोलूँगा नहीं। कभी वह सोचता कि वह अपनी बहन रेणु को भी साथ लेकर काच से मिलने जायगा। रेणु चितनी पुरा होगी। पर हम क्यों काच के घर जाने लगे ? काच क्यों हमारे घर से चले गये ? वे फिर से क्यों हमारे घर में आकर नहीं रहने लगते ? देखते-देखते उसकी कल्पना में बंगल उग आता इस दिन मैं बाप और हाथी होते, लोमड़ी के बच्चे होते, खरगोश और हिरन, गीदड़ और मोर, और न जाने क्या-क्या। वह सोचता—मैं उल्लास काच के साथ हाथी पर बैठकर आलीशाना की राह से गुजर रहा हूँ; रेणु ये रही है कि काच ने उसे अपने साथ क्यों नहीं बिठाया अविद्विद वह रहा है—‘बाप हम यिनारों और हाथी की सहाय करे

मलना !' बाह रे बाह ! मैं कमीन से कितना कैसा हो गया भनसिंह से भी कैसा, बनसिंह की बुझान से भी कैसा !' बख्शपा के थिरपट पर मलना को काफ़ कितना अच्छा लगने लगता ।

मलना के पैर रुक गये । वह काफ़ की मँपड़ी के सामने खड़ा रहा । चौक उतर रही थी । फिर रात का अन्धकार फैल गया ।

मलना ने सोचा—यह बलमा चाहिए, मैं मेरी यह बेख रही होगी रेणु भी मुझे डूँड रही होगी । छार पर खड़ी बूझता मुझे इतनी बेर से छाते बेखकर कहेंगी—'अब कुसी मिली ! मीतर से निष्कलकर मैं कहेगी—'हूँ कहीं रह गया था !' रेणु होइकर आनेगी और कहेगी—'हम हटों का लेख लेलेंगे, मलना !'

मलना मीतर चला गया और सिइकी से मँपकर बेखने लगा । मलना टेन के प्रकाश में काफ़ का चेहरा पत्थर से तराशा हुआ प्रतीत हो रहा था । काफ़ बैठे गुमगुना रहे थे । उनकी झौलें में काँस थे । उनकी आत्मक मर्याद हुई थी । वह न तो मीतर का सञ्चाल था न माग सञ्चाल था । बाहर अन्धकार था । वह काफ़ से इच्छा भी था और उनकी ओर खिंचा भी था । वह उसके हाथी काफ़ थे । उस ने उन्हें इस काम से मुक्त था । अब तो वह उनका घर छोड़ कर आ गये थे । उनकी झौलों ने काफ़ के हीट दिसते देखे; उसके छोटे-छोटे कानों ने काफ़ की आवाज सुनी । उसके सारे शरीर में एक बड़ी लूझि जाग उठी । वह मागकर मँपड़ी के मीतर चला गया । वह काफ़ के गले लय गया और फूँ-फूँ कर रोने लगा ।

मलना को अपने हाथों पर उठा कर चलाख लाल हो गया और बड़े प्यार से चलाख बोला :

"मेरे बेटे !"

मलना कुछ न बोला । आवाज उसके कंधे में ही कहीं अटक गई । काफ़ समझ गये कि क्या बात है । काफ़ ने प्यार से पूछा, 'इतने दिन तुम क्यों न आये ?' बालते ही मलना किसे कहते हैं ?'

"यह तो मैं नहीं जानता ।"

“मस्टर जी ने भी नहीं बताया ?”

“नहीं ।”

“मैं न भी नहीं बताया ? अच्छा, हम बताते हैं । जिस हाथी के दाँत होते हैं, उसे कहते हैं दन्तान ।”

“यह तो मैं भी जानता हूँ ।”

“अच्छा तो मसला किने कहते हैं ?”

“यह तो नहीं जानता ।”

जिस हाथी के दाँत नहीं होते, उसे कहते हैं मसला ।”

मसला को जैसे बिरहास न आ रहा हो कि काका ठीक करते हैं । शायद मसला का बड़ी मस्तिष्क है, शायद काका उपहास कर रहे हैं । वह अपने दाखी काका के पास बैठ गया ।



# तेईस



आज भीरी बस्ती में दबूर-पूजा का त्योहार मनाया जा रहा था। पूजा के लिए भीरी भाया का शब्द या 'ऊह'। इसलिए स्वयं भीरी लोग इस त्योहार को 'दबूर ऊह' कहते थे। असमिया और नेपाली लोगों का विश्वास था कि दबूर इन्द्र देवता का ही भीरी रूप है, इसलिए वे दबूर-पूजा के स्थान पर इन्द्र

पूजा करना पसन्द करते थे।

बच में दो बार यह पूजा की जाती थी। पहली पूजा वैश्व में की जाती थी—वर्षा ऋतु से पहले; दूसरी पूजा आश्विन में की जाती थी, जब वर्षा ऋतु अपने उत्कर्ष पर होती थी। यह तो सभी मानते थे कि यदि इन्द्र देवता की दो बार पूजा न की जाय तो वे वर्षा ऋतु में अम्बर पर अपने घड़े कुछ इस प्रकार एक साथ तोड़ डालें कि सब मणिबों में बाढ़ का जल। यह मन तो लगा ही रहता था। इन्द्र के कोप से ऐसा तूफान आ सकता था कि मणिपड़ियों की छतें उड़ जायें, असंख्य पेड़ उखाड़कर गिर जायें, चढ़क पर चलते हुए लोग उड़कर कहीं दूर जा गिरें और यह भी पता न चले कि उनके शरीर में कितनी बोटियाँ थीं।

भीरी लोगों में यह नियम था कि बस्ती का पुजारी दबूर-पूजा का दिन निश्चित करे, इसलिए दोनों बार विभिन्न भीरी बस्तियों में दबूर-पूजा का दिन अलग-अलग होता था। शर्त यही थी कि वैश्व और आश्विन में एक-एक बार प्रत्येक भीरी बस्ती में दबूर-पूजा अवश्य की जाय।

छबेरे-सबेरे दबूर-पूजा आरम्भ होने से पहले बस्ती के प्रवेश-द्वार पर कोई चिह्न रख दिया जाता था जिस से यह पता चल जाय कि बस्ती के भीतर दबूर-पूजा हो रही है और पूजा शेष होने तक कोई व्यक्ति बस्ती के भीतर प्रवेश करने का साहस न करे। यह भी नियम था कि यदि बस्ती का कोई व्यक्ति काम से बाहर गया हो तो वह भी पूजा के समय में बस्ती के भीतर न जाये। यदि कोई पशु लिम्ब आदमी मिला जाता, तो बस्ती के बाहर लकड़ी की छल्ला लगाकर उस पर वह लिम्बवा दिया जाता था 'आब हमारे गाँव में दबूर-पूजा हो रही है। इसलिए प्रस-काल से लेकर गोपूति तक कोई भी आदमी बस्ती के भीतर प्रवेश न करे।'।

यह विधि, जिसे 'मानानी' कहा जाता था, अचम्मिया प्रांत में लिम्बी रहती थी। इस से एक को पता चल जाता था। इस विधि की अवहेलना करते हुए कोई व्यक्ति बस्ती में घुसने का साहस करता, तो उसे एक ही दण्ड दिया जाता—उसके हाथ-पैर बाँधकर उसे 'वेडूम' में डाल डालते थे। वेडूम उस स्थान को कहते थे जहाँ मीपनी के मधान के नीचे सुघर बँचे रहते थे। दबूर-पूजा की शिवि से दो-बार निम्न पहले ही मीपनी पुखरी पूजा के लिए मुग्गे-मुगिरी, बिबरी संख्या छत्त से छिन्नी अकम्पा में भी आबिक नहीं होती थी, और एक लकड़ी ठोक करके रखता था। पूजा से पहले बस्ती के लोग मिलकर बस्ती की परिधिमा करते थे। परिधिमा पौब बम की बस्ती की और उस में मुग्गे, मुगिरी और सुघरी को भी लाय रखते थे। परिधिमा में केवल पुकर ही रहते थे। परिधिमा के परपात् मुग्गे-मुगिरी और सुघरी की बलि दी जाती पूजा करने वाले लोग मिलकर मंत्र पढ़ते और इन्द्र देवता के नाम पर सहयोग का आनन्द लेते। पूजा के परपात् 'लाओ पत्नी' का नशा किया जाता।

दबूर-पूजा की एक रीति यह भी थी कि गाँव की लड़कियाँ मिलकर मापती थी और अपने दबूर-सम्य में गाने गाने वाले गाँवों में इन्द्र देवता का तन्वाचित्र करते हुए कहती थी—'देवता की कृपा बनी रहे। बस्ती कायकनी हो। शिवरी पुखरी हो। गाँव में सुख-शान्ति रहे। धान धान

सँ मिले, आदमी आदमी से मिले । कोई किसी से शत्रुता न करे, कोई किसी से ईर्ष्या न करे । दूर बेवता का आशीर्वाद सब को एक समान प्राप्त हो ।

दिसांगसुल के स्कूल में न चैत की दूर-पूजा की छुट्टी रहती थी न आरिक्न की । पर आज स्कूल बन्द था । आरिक्न की दूर-पूजा का दिन एतेवार को ही पड़ता है, यह सुनकर आज मक्का को अपार हर्ष हुआ था ।

नये बन्ध पहनकर मक्का घर से जाता, तो सोनपाही ने पीछे से पुछर कर कहा :

“सीधे एखल काका के घर जाना ।”

मक्का ने सिर हिलाकर माँ को बिस्वास दिलाया कि वह एखल काका के घर जा रहा है ।

ते दिन से क्या यहाँ हुए थी । परतों ही तो निर्णय किया गया था कि आज ही के दिन दूर-पूजा की जाय । मक्का की आँखों में हर वस्तु घूम रही थी । नये बन्ध पहनने का उसे बहुत हर्ष था । उस से मी अधिक हर्ष इस बात का था कि वह झपेला है और जो पाड़े कर सक्ता है । मूमा का कुंठा और अक्की की निजर को वह बार-बार दूकर देखता रहा । पैरों में नये मोबे थे । वे मोबे पिछले हान-बाजार में लपड़े मये थे । पैरों में नये बूट थे, जो शिर्कागर से मँगवाने गये थे । सिर पर पु पटाये वाला थे । गर्दन के साधारण से झुंडे से सिर के पु पटाये वाला पाड़े की अवलोक के समान होलन लगते थे । एक झुंडे से उस ने वालों को दिखाया और सड़क पर लड़े-लड़े अपने घर की ओर मगर मुमाकर बेला ।

घर के सामने लड़े-लड़े मक्का ने सोचा—एखल काका ता बड़े अच्छे हैं । सब बड़े आदमी तो इतने अच्छे नहीं होते और न ही वे बच्चों को इतनी प्यारी-प्यारी कहानियाँ सुनाते हैं । अब एक तो बन्ध प्राप्त भी चुके हूँगी । कल रात जब मैं उस से मिलता था, उन्होंने आज सवेरे आने को कहा था । मैं काका के घर न जाऊँ तो काका क्या करेंगे ?

आज तो दबूर-पूजा है। आज की कहानियों तो कल भी सुनने की भिन्न आयेंगी।

आमरा पर बादल धिरे हुए थे। आज बराब न हो तो अफ़सूस है, वह होकर आमरा मीरी बस्ती की ओर हो लिया। आज तो बराब मिलकुल नहीं होनी चाहिए। इस से तो दबूर-पूजा का गगन बियाह बायबा।

एक स्थान पर एक बार उन ने पीछे की ओर बहार मुआकर देखा। वह पीछे लौट जाने की बात सोचने लगा। मैं मारेगी। अनुम कल देंगी। क्या एत अनुम ने मुझे मीरी बस्ती की ओर जाने से मना किया था। शायद कृतार ने मुझे मोरी बस्ती की ओर जाने से मना किया हो शायद उन ने बाहर मैं से कह दिया हो। मैं तो अभी का सचती है। मैं तो अभी मरे मुँह पर ब्याह लमा सचती है। मैं का कहना मतो, यह बात तो मान्यर की भी कहते हैं। अबादी की निकर किन ने हो ?—मैं ने। मुगा का कुता किन ने लिया ?—मैं ने। मैं ने तो कहा था कि रामल बाबा के घर जाना और मैं दबूर पल पहा। मैं तो अफ़सूस है—बहुत अफ़सूस है। दबूर-पूजा भी अफ़सूस होगी। फिर मैं दबूर-पूजा क्यों न रेम् ? हमारा बोहम-बिह तो हर कोर देल सचता है। इन बर तो मेम साहब भी हमारा बोहम-बिह देलने बाद की गारमश शरीगा और जाने के निराही भी तो बोहम-बिह का नाम देल रह थ। फिर मैं क्यों मीरी बस्ती में बाहर दबूर-पूजा का नाम नहीं देल सचता ? मोपी बस्ती में सब ने बने बन्ध पहने होंगे। सबकी ने दुर्ही में पूल लगाये होंगे। बरों छाधार बाबा भी होंगे। क्या रमर एस्तल बाबा भी बहीं गये हों। रामल बाबा अवरय बहीं गये हल। उमे भान बाबा कि वह भी अवरने बान में एक पूल लगा ले। बाब मैं पूल न लगा सचने का उमे बहुत दुःख था।

वह बरने-बर्नी पल उठाकर मोपी बस्ती की ओर चलन लगा।

दूर से दोस की छाया समीन आ रही थी। वह इस बान की पोम्पा थी कि मीरी बस्ती में दबूर-पूजा का नाम आरम्भ हो चुका है। उमे तो

इस बात पर आश्चर्य हो रहा था कि बोला की आवाज इतनी अच्युत है, फिर भी घर वाले दबूर-पूजा में जाने से उसे रोकते रहे थे।

बह पछा आ रहा था। अब वह उस मोड़ से भी आगे का पुच्छ का पहाँ से आलीसीमा की सड़क नीचे छद्मि-बाट की ओर चली गई थी।

मल्ला फलते-फलते एक पेड़ से उतराया। इस पेड़ पर एक तख्ती लटक रही थी, जिस पर पाल से बड़े-बड़े अक्षरों में यह लिखा हुआ था कि बाहर का कोई आदमी दबूर-पूजा की समाप्ति तक बस्ती में न घुसे। मल्ला को बहुत शोक आया। दबूर-पूजा देखने से मुझे कौन रोक सकता है? मैं तो विरगामुक्त के गान-बुझा का बेटा हूँ। मेरे सिर पर तो आघात काफ़ी भी हाथ फेर चुके हैं और रक्तस्राव आया था। वे दोनों मीचे हैं। मुझे तो कोई कुछ नहीं कर सकता।

उसके पग बस्ती के भीतर उठते चले गये। लड़कियों के दबूर-पूजा गान की सय गान्की-विरगामी आ रही थी। वह चाहता था कि भागकर वहीं, पक्षी के समान उड़कर बाग के घेरे में पहुँच जाय।

उधर से तीन-चार मीचे भागते हुए दबूर आ रहे थे। उन में साधन भी था। पास आते ही साधन ने कड़क कर कहा, 'फिर मांग आ रहे हो, मल्ला के कन्ने।'

मल्ला बिसकुल न समझ सका कि साधन ने बूझते ही यह क्यों कहा। अभी आगते ही दिन तो साधन ने जलसिंह की बुझान से चाप पीकर रक्त नाशित की बुझान में कुछ समझ मेरे सिर पर हाथ फेर था।

देखते-देखते साधन ने अपने कन्ने से रस्ती उतारकर मल्ला के हाथ पैर बाँध डाले।

मल्ला बहुत विरगामा। किसी ने उसकी एक न सुनी। मीचे मुक्कों ने मल्ला को उठा लिया और वे उसे 'येष्टम' में ले गये।

मल्ला रोता रहा। वे मुक्त ठहर को धूस गये फिर नृत्य हो रहा था।

रक्त के दास पर विरगते हुए दबूर-गान की आवाज बराबर मल्ला के

कमलों में आ रही थी किन ओलों में वह मँके उछला था, वे मानने  
 वालों काइकेसों की ओलें व थीं ये तो सुपरी की ओलें थीं—वड़े सुपरी,  
 छोटे सुपरी सुपरियों अपने बच्चों को पास रही थीं। मन्ना की कल्पना  
 में मैं का चेहरा बूम गया। उस ने इरकर ओलें बन्द कर लीं। उस ने  
 सलास काफ़ को पुकारना आहा। इतने में किसी सुपरी के बच्चे ने आकर  
 अपनी धूसरी मन्ना के मुँह पर रख दी।

अहा सुपरी मन्ना को पास रहा था।

# चौबीस



रापाला काका का माया ठककर—कहीं मल्ला को कुछ हो न गया हो ।

वे बड़ी व्याकुलता से मीपड़ी में टहल रहे थे; मित्राजी से झोंक कर बेसने लगते । छिर के मीपड़ी से निकलकर सड़क पर आ गये । सड़क पर लड़े लड़े काका की कल्पना में चौदहवीं का एक दरम घूम

गया । वसइल वाले एक स्थान पर बंगली हाथी का एक बच्चा फँस गया था, उसे बड़ी कठिनाई से बाहर निकाला गया था । वह बच्चा छिना मरसूम था । उसे मैं ने बड़े प्यार से पाला था और नामन साहब के बच्चों की मैद कर दिया था ।

काका तो बाला ब्रह्मचारी थे । विवाह किये बिना भी मनुष्य बीकित रह सकता है, यह था काका का सिद्धान्त । इस सिद्धान्त पर चलने का निर्णय करने के पश्चात् एक बार भी तो काका के पग इयमगाये नहीं थे, पर काका को बच्चों से सदा प्यार रहा । चौदहवीं में नामन साहब के बच्चे मिल गये थे, तो यहाँ रिशोंगमुख आकर मल्ला मिल गया । आज काका को इतना अकपयश न था कि मीपड़ी के पीछे आकर राजहंसों के बोड़े का मुन्म-समाचार पूछे । वे पोल्सी में तैर रहे होंगे । फिर काका को राजहंसिनी के अकड़े देन का प्यान आ गया । वेलें राजहंसिनी के अकड़ों से कितने बच्चे निकलते हैं । तात आठ बच्चे तो अधिक नहीं होंगे कम रहे, तो पोल्सी की शोभा नहीं बढ़ेगी । पोल्सी में देखे हुए राजहंस कितने अकड़ लयते

हैं। एक जोड़े से तो बात नहीं बनती।

बाघ को बाघनी भूमि से भी कुछ डाय हो जाती थी। पेशान बालग जाती थी। जिस दिन बाघ को पेशान लेने जाक-बर जाना होता उस दिन बाघ बुने हुए वस्त्र पहनते। वह से बाबा दिसौगमुख में आ गये थे, उन्हें प्रति मान पेशान निश्चित सिबि को मिल रही थी। इस नियमितता के लिए बाघ मम-ही-मम पिलंगी की प्रशंसा करते-करते नीलमणि के घर आ पहुँचे।

सोनराही ने बताया, “मल्ला तो यही बहकर गया था कि वह सीधा बाघ के पास आ रहा है।”

बाघ ने सोचा कि कहीं वह नाब-बाट की आर न चला गया हो। अधिक सोचने के लिए समय न था। वे मूट सड़क से बीन उतरकर बाघ घाट की ओर हो लिये।

सुनताप गाँव की अन्ध लड़कियों के साथ बानी का बल्ला उठाने आ रही थी। पूछने पर पता चला कि बाघी की भोंपड़ी के पास उन्होंने वूर त एक लड़क देला था जो मल्ला प्रतीत हो रहा था।

पानी घाट और नाब घाट पर कहीं भी मल्ला का पता न चला तो बाबा बहुत परपये। मल्ला को तो उन्होंने बाघनी गोट में निकाला था; बाघ से बड़ बप पूर, बाघ के बाँगुड़ी से लुट्टी लेकर दिसौगमुख आये थे। आब त घाट-नौ महाने पदले बाघ में बाँगुड़ी से पेशान पाकर बापल दिसौगमुख आकर नीलमणि के पिछसाहे वाली भोरनी में रहने लगा, तो मल्ला से भेन हुए। तब मल्ला न कुछ हाथी बाका का नाम दिया। वह नाम ही नाम सादर के चप्पी ने भी नहीं दिया था। बाघ मरला कहीं रह गया। क्या बाघ उसकी प्यापी-प्यापी बातें सुनने को नहीं मिलेगी?

महारा बाघ को प्याम आया कि हो-न-हो मल्ला दबूर-पूसा लेगन न चला गया हो। वहाँ जाने में तो उसे लज ने रोका था। वह अन्धा लड़क है वह वहाँ नहीं गया होगा। वह वहाँ चला गया। अब तो दबूर



पूजा समाप्त होने का समय हो रहा है। वह वहाँ नहीं गया होगा। वह तो आकाशचरी सड़का है।

दूर-पूजा समाप्त होने का समय समीप न होता, तो काल भूतचर भी मीरी बस्ती में जाने की बात न सोचता। अब तो कोई मर न था।

काल मीरी बस्ती की ओर चला जा रहा था। वह प्रकार की आराधनाएँ काल के मन में उठ रही थीं—कहीं मल्लाह बगसिंह की दुकान पर न चला गया हो। पर अब तो मीरी बस्ती समीप है। पहले वहीं पता चलाना काल। वह वहाँ चला भी गया होगा, तो शायद उसके साथ लोगों ने दयापूर्ण व्यवहार किया हो। उसके हाथ-पैर बाँधकर उसे बेगुम में तो नहीं डाला गया होगा। दयापूर्ण व्यवहार करने से क्या इन्तरेकता किसी का हाथ रोक सकते हैं ?

चलते चलते काल ने सोचा कि कल्ला तो कल्ला ही है। उस साल की आगु भी कोई आगु होती है। काल मर-ही-मन दिन गिनने लगा। तीन मास बाद मल्लाह मारदू बप का हो जायगा।



मीठी बत्ती के एक बुग-बुग कोने में फूल से भी कोमल मन्ना पड़ा था वहाँ साधन मीठी उसके हाथ-पैर बाँधकर उसे झाल गया था।

मन्ना के लिए यह स्थान बहुत मयानक था। उसके छोटे-से मस्तिष्क में बढ़ी-बनी आत्माएँ खरखर घटती रहीं।

साधन ने बार-बार आकर साधन मेरे अपराध का न जाने क्या टरह देगा। वह टरह क्या इस टरह से भी बना होगा ?

अपराध बना ही गया था। उसके पाँचों ओर सुझर धरती धूमिलियाँ हाथकर मैली-कुचली मिट्टी लाने लगीं।

वह सुझर छोटे सुझर, सुझरियाँ और उनके रश्म। एक सुझर की बड़ी-बड़ी झोंके छोटी होने लगीं।

यह सुझर यों बेग रहो थी, जैसे कमी-कमी मन्ना की नौ बेग कटती थी। कमी ये झोंके फैलने लगतीं, कमी मिट्टी-ने लगतीं। व मी को आराध देना चाहता था।

पर वहाँ नौ कहाँ थी ?

यह सुझर जैसी आराध निश्चयन लगने, तो मन्ना भी इन आराधों के संगम में कपल नगरी-सी आराध निभा देता।

हिर एक बॉली ने काला नाम बाहर निकला।

अपराध में काला नाम एक रेखा प्रगात हो रहा था मन्ना ने

प्रधनुष ।

१८१

उस हिलती-डूकती रेल को देखा । छोंपों के सम्बन्ध में सुनी हुई अनेक कहानियों एक साथ उसके मस्तिष्क में घूम गईं, जैसे बुनिया मर के छोंपों का बिगड़ इस कासे माग के बिप के सामने होच हो जैसे साक्ष्य मृत्यु ही उसकी तरफ बड़ी आ रही हो जैसे उसके पीकन की बाती अब कुछ ही क्षणों में बुझ जायगी; फिर यह बाती कभी नहीं जलेगी, चाहे कोई इस दीपक में मनी तेल क्यों न डाल दे !

५  
१  
१

# छब्बीस



एलाल काका के जीवन में इतना बड़ा अपभ्रम पहले कभी नहीं लगा था ।

आज रात खोर की बगल हुई, जैसे यह करान न हो, अन्धर का अभिशाप हो जैसे इन्द्र देवता कोप में आकर दिशैगमुष्म को समाप्त कर देना चाहत हों । तूफान बहुत ममानक था । आलीसीगा के

बहुत-ने बूझ उलझकर मिर गये ।

मन्ना को मृत्यु का आघात एलाल के लिए असह्य का आघात ने काका के कण्ठों में गिरकर जमा-साजना की, 'अब यह तो खोर व जानता था कि जाला बाग चौकी से निकलकर एक कुल ने भी कोमल जालक को हठ कायगा !'

आज रात काका की आँख नहीं लग सकती थी । नीलमणि और अतुल ने सन्तुषन बनाये रन्ध; सोवपाही मोंपड़ी की दीवार ने मिर पटक-पटक कर ठेकी रही । तूफान में ही मन्ना का शव नीलमणि के घर पर लाया गया, जैसे मन्ना के होंटी पर वह बात कमचर रह गई हो, वो वह मृत्यु में पूव ब्रह्मा पाहता था ।

जैसे इन्द्र देवता का जल-मल एक करने का यह अन्तिम निष्प हो बार बार बिकली बढ़कती और बार बार हवा प्रदेक बन्धु को ठहा ले ब्रह्मा पाहती ।

एलाल इतप्रभ-सा बैठा था । अतुल बार-बार उसे बुलान का दन

करता। क्या मन्सल राजाल ने मूलकर मी जवान हिलाई ही।

एक और कथाएँ मगत अम्बुल कारि के साथ बैठे इस बात पर जोर दे रहे थे, “आजमी का कोई मरोसा नहीं। मृत्यु आती है तो कहकर नहीं आती।”

जनसिंह ने पुलिस दावेगा के हाथों में कहा, “मलना को दबूर-दूबा में जाने के लिए किस ने कहा था?”

“कहना किस ने था?” रत्न नाथि ने बात को किसी ठिक्कने लगाने के विचार से कहा, “अन बातक को दोष देने का नहीं है। प्रश्न तो यह है कि दबूर-दूबा को मीठी लोग अपनी ही पूजा क्यों समझ बैठे हैं। इन्द्र देवता तो सब के हैं।”

जोर से निक्कली कड़वी, जैसे इन्द्र देवता मी रत्न नाथि की हों-मै-हों मिला रहे ही। कथाएँ मगत बोले, “किसी को दोष देना व्यर्थ है। चौधप चयामेयुर है। आत्मा तो बार-बार बोला बदलती है। सदा के लिए तो यहाँ कोई बैठा नहीं रह सकता।”

“बड़े बड़े बादशाह मी न रहे।” अम्बुल कारि ने विरवातपूर्वक कहा, “ये मी ज्यों में जा सोये। कब का मी मौँ का दर्वाँ माना गया है। माटी का पुटला है इन्साल। माटी से पैदा हुआ माटी में जा सोया। इस में तो कोई दोष ही नहीं सकता।”

आचार बोला, “सब होय इमरा है। न हम मलना के हाथ-पैर बाँधकर मैथुन में डालते, न बाँधी से निक्कलकर आला बाग उठे इस बात।”

राजाल का ध्यान इन बातों की ओर न था। उसकी कल्पना में जैसे मलना की आवाज शींष रही हो—मैं तो अब मी सँत हो रहा हूँ, कम्ब। तो बत शुरू कर दो कोई हाथियों की कहानी। मैं सब सुन सकता हूँ। मुझे किसी नाम ने नहीं डरा। मैं तो निराश्रुत डीक हूँ।

सोम्याही का किलाय राव के चारों ओर बैठे लोगों के दिल हिला रहा था। दर्शन का धैर्य भी पहलें से बढ़ गया था।

राजाल सोच रहा था—“यह कितना अमंगल है। मलना हमें छोड़कर

बना गया। मलना की मुक्कन अब बनी देखने को न मिलेगी। प्रतिदिन सूर्य उदय होगा, प्रतिदिन सूर्य अस्त होगा। मलना कहीं न होगा। बसूर-पूजा तो आती ही रहेगी। यह तो बप में हो बार आती है। मलना अब बनी यह पूजा देखने नहीं आयेगा। वह बनी अपने बाबा से मिलने नहीं आयेगा। आलीसीगा को सन्द सन के लिए उस से बंधित हो गए।" पर चगले ही सूर्य बाबा को लगा कि मलना की आवाज आ रही है—कका, कका, ओ हाथी कका। मैं तो सब सुन रहा हूँ। ओ कुछ नी लोहा बर रहे हैं। मैं तो सब सुन रहा हूँ।

अन्यास मगत ने समस्त ज्ञान बपावने के लिए जैसे आब की रात ही सुन ली हो। उन्होंने अपनी परशुपम कुण्ड की यात्रा की कथा सुनने के पश्चात् बताया कि निर्हो गरी को अचोर लोग अपनी माया में सिर्वांग करते हैं। "सिर्वांग का अर्थ है पूजा हुआ।" मगत भी करते चले गये, "सदिया मैं एक अचोर गौड़-बुजा ने तुम्हें वह बहानी सुनाई थी जिस में सिर्वांग नदी के किनारे हो जन-आतिथी के तरदारों के बीच युद्ध का वर्णन किया गया था। एक सरदार नदी में बह गया फिर उनका कुछ पता न चला। उस से इस नदी को सिर्वांग कहने लगे। सिर्वांग हो पादे निर्हो, बात तो एक ही है। जैसे वह सरदार नदी में बह गया था, जैसे ही समझे हमारा मलना भी मृत्यु-नदी में बह गया। मृत्यु तो कोद बहला चाहती है। कम भी लो, पादे अधिक भी लो। वह सवार तो बड़ा कठिन है। बीज बड़ा सख्त है। मैं तो कहूंगा कि जो पहले बला गया, वह पहले बाहर मारान् से मिल गया। मगवान् से तो विजय भीम मिला बाप, उसका ही अर्थ है।"

नीलमणि भुर बा; इस इत ध्याव में स्वर मिला लड़े, इतनी कन्या उस में न थी।

पाम ने अश्रुल काटि ने वह बहानी छोड़ दी जिस में एक मों अपने लड़के को मरुज से मदभियों पकड़ लाने को भेजती है और लड़का मरुज में हूब बसा है।

भनसिंह बोला, “येही ही कहानी हमारे बड़े-बूढ़े नेपाल में भी सुनाते हैं। मृत्यु की क्यारों तो असंख्य हैं। मृत्यु का पथ किस ने रोका है ? इसी पथ से बड़े-बड़े सन्त-महात्मा गये, और इसी पथ से बड़े-बड़े जोर और काम् भी। मृत्यु का पथ तो महापथ है !”

रत्नास अग भी कुछ न बोला, यद्यपि वह कहना चाहता था—‘तुम लोगों को क्या हो गया ? क्या एक वास्तव की मृत्यु से भी तुम्हारे कर्णों पर शून्य तक नहीं ऐंगी ? क्या तुम्हारी धार्मिक शिक्षाचार्य का यही आशय है कि एक वास्तव की मृत्यु पर हो आँसू भी न बहाये जाई ? क्या निर्दोशमन के लोग इस मृत्यु से कुछ भी शिक्षा नहीं ले सकते ?’

# सत्ताईस



मल्ला की मृत्यु ने देवकान्त की मौ की फिर से विडाल कर दिया था। वह ता पहले ही दो माल से बीमार थी। इधर उठकर स्वास्थ्य कुछ सुधर रहा था। वह पचास बर पार कर चुकी थी पचास बर अभी और बीने का संकल्प रखी थी। वह से देवकान्त का पिता लम्बी बीमारी में एहियों राह-राह कर चल रहा था

मौ ने अपने हाथों के परिभ्रम ने ही पर चलाया था। चित्ताग्रहाद के 'अरुहो-मृगा महकारी संस्थान' के लिए सर्वोत्तम रेशम के धान और पार्श्व देवकान्त की मौ ही अपने करों पर तैयार करती थी। इसलिए वह से मौ बीमार पड़ गई थी, चित्ताग्रहाद हर तीसरे-चौथे रोज मौ का सम्भार पूछने आता था। दवा-दस्त का प्रबन्ध चित्ताग्रहाद ने अपनी ओर से कर दिया था, और मला हो वास मौम्री की बेटी शोभा का जो अपनी मौ से भी अधिक देवकान्त की मौ का ध्यान रखती थी। दो माल से शोभा ही ता मौ के किए गल-जल पकना रही थी।

बिमार पर पड़े-पड़े मौ ने लौटकर पूछा, "केश मीर" तेरी कहानी कहीं तक पहुँची?"

मीर ने लालगैर व प्रकृत में बिगने लिगने मौ की ओर मन्नत उठा कर कहा

'मेरी कन्नी एक दिराप मोह पर पहुँच गई।'

'दर बीनका मोह है।'



नीरज ने धीरे से उत्तर दिया :

“मेरी कहानी का नायक उस के आसपास में, मकान के दफ्तर में अपनी मर्ी से मिलने आता है । वह जानता है कि पुलिस उसकी ताक में है, पर वह मर्ी की बाढ़ आती है, तो वह संसार की विपत्तियों को भुलाकर मर्ी से मिलने आता है ।”

मर्ी को बड़े बेग से काँसी ठडी, जैसे अम्बर पर बड़े बेग से पड़ा उमड़ती और बिल्ली काँपती है । वह कुछ कहना चाहती थी, पर उल्टा दिन की निरन्तर बर्बा ने इतनी उलट पैदा कर दी थी कि उसके बोल बार बार उस के होठों तक ही रह जाते ।

वही अटिताइ से मर्ी के मुख से यह बोल निकला :

“मेरा—देवघन्त तो—मुख से—निकलने नहीं आता ।”

नीरज चुप रहा ।

“अरे—कल्पना है ।” मर्ी ने अपनी बात जारी रखी । वह कोई लम्बी कहानी छोड़ देना चाहती थी—नीरज की कहानी से भी लम्बी, पर लॉरी ने बाधा न बनने दी ।

नीरज को कसकता सं शिठौंगसुल पट्टुये आज बतर्वाँ दिन था । जिस दिन वह यहाँ पहुँचा था, उस से तीन दिन पहले ही बाले नाम ने मलना को उस लिया था । मर्ी कई बार मलना की बर्बा कर चुकी थी । मलना की मृत्यु को बलिदान की कोठि में रखने को तो मर्ी तैयार न थी पर उसका यह बिचार अक्षय था कि वह मर्ी पंचायत मिलकर यह निर्णय नहीं करती कि आगे से बहुर-मूला देवने पर किसी प्रकार की टोक न रहे, तो यह बड़ी जज्बा की बात होगी ।

मर्ी का विश्वास था कि वह पार और लॉरी से पड़िर्वाँ रगड़-रगड़ कर कमी नहीं मरेगी । देवघन्त के पिता को तो पेशी ही मृत्यु आई थी । मर्ी समझती थी कि वह साफ़ बच गई । जब वह बहुत रोम काँपती हो आसगी । वह यह तो निराकुल नहीं चाहती थी कि अपनी बात बोलों में आकर देवघन्त उस से मिलने आये । नासमझ बारोगा देवघन्त की ताक में

है, यह बात उस की मौ से छिपी न थी। फिर भी उसे यह भय अब्बय था कि कहीं मृत्यु कुदरे-से आकर ही उस पर न झनक पड़े, जैसे किसी कबूतर की गर्दन नोच लेती है और कहीं ऐसा न हो कि देवघन्त को अन्तिम बार की मरकर बेले बिना ही उसे संसार से बिगा होना पड़े। यही सोच कर वह बाली

“देवघन्त कब आयेगा ?”

मीरड ने लालंगेन ठटाकर मौ के चेहरे पर प्रचार डाला और गम्भीर होकर कहा “आराम करो, मौ। चिन्ता छोड़ो, मैं का मुंहारे पास हूँ।”

रेशम का कार्य करते-करते रेशम के तार मौ की आत्मा से छू गए थे। दो मास से मौ बीमार थी। फिर भी उसकी सुस्थान में मृगा के बानों की-सा बदनक थी। मौ की आवाज में कसबो का-सा लुण्ठन था। मौ के बावन में रेशम की-सी हड़ता का गहरा था। जिस दिन मीरड यहाँ पहुँचा था, मौ ने मुस्कटाकर कहा था, “कुछ भी हो, रेशम के कीड़े रेशम के तार कतना नहीं खाएँ लखत। रेशम के तार बनने का बेपारों का जितना बर्गिया मोल मिलता है !” इनके उत्तर में मीरड ने गम्भीर होकर कहा था, “उबलने हुए पानी में रेशम के कीड़ों के तैयार बिने हुए ‘पोलू’ का डाल कर पोलू के भीतर छिपकर बैठे हुए कीड़े का मृषु के दर्शन करादे जाने हैं।”

बिस्मयसाद की प्रशंसा करते तो मौ यकनी न थी। मौ के इस विचार से बिस्मयसाद सोचकर आन सहमन था कि आदमी की मुक्ति काम करते करते मर जाने में है, जैसे रेशम का कीड़ा रेशम खाते-खाते मर जाता है। मौ ने बत्ती बत्तियों में जलाया था कि रेशम का काम करने बानों का बनने लम्ब अनुपम में यह जान ही जाता है कि बं डीक अकसर पर पोलू का गरम पानी में डाल दे। इस काम में देर की जाय तो रेशम का कीड़ा पोलू को भीजा हुआ बाहर निकल आता है। पोलू में लुण्ठ होने से रेशम अन्दा नहीं निकलता, लम्बे तार नहीं निकलने। जैसे मौ ने इस बात पर भी प्रचार डाला था कि जैसे बीर के लिए जान राने हैं, जैसे ही अरु ठेयार

करने के लिए पोखू सँभाल कर रख लिये जाते हैं। मों ने कहा था, 'बेटा नीरद, वह पककर तो पकता ही रहता है—पोखू से निकालकर रेशम का कीड़ा अकड़े देता है, अकड़े से कीड़ा और कीड़े से पोखू। पोखू से फिर कीड़ा, फिर अकड़े। यह तो शम्पा कलापक है, बेटा। कम-कमालतर का पककर तो पकता ही रहता है।'<sup>१</sup>

नीरद को समझ था कि किस प्रकार एक बात करने में मों को बीस बार फौंसी उठी थी। अपनी कहानी में वह मों का चरित्र पूरी तरह उजागर करना चाहता था। उसके वह प्रयत्न था कि बेटे को मी रेशम के कीड़े के कम में चित्रित कर लें। उसके सम्मुख वह समस्या थी—क्या रेशम के कीड़े की मृत्यु को बलिष्ठ नहीं कहा जा सकता जबकि पोखू को उससे पानी में डालकर कीड़े को उसके मीठर ही मृत्यु-शय्या पर तुला दिया जाता है? उसकी कहानी का नायक तो एक इन्सान था, जो किसी तरह के अत्याचार को उपात कर देना चाहता था। वह लोगों को इस अत्याचार के विरुद्ध आवाज उठाने के लिए तैयार बन रहा था। वह जानता था कि उसके नायक का मार्ग ठा उसे कष्टदायक एक दिन फौंसी तक ले जायगा। क्या मों यह नहीं जानती? कहानी के नायक के बलिदान से रेशम के कीड़े की मृत्यु की तुलना तो अन्यत्र दूर जा पड़ती थी। मों की मौंती फिर से छिड़ जाने का मन न होता, तो नीरद अकस्म मों से इस सम्बन्ध में बात करेगा। आखिर वह तीस-चौतीस वर्ष से रेशम का काम करती आ रही थी; और जब से विद्याप्रसाद का 'अपहरी-भूगा-सहसरी संस्कार' का कच्चा आरम्भ हुआ था, उसे इस काम से पहले से कहीं अधिक लगाव पैदा हो गया था। विद्याप्रसाद को मों परपोषक का साकार रूप सम्झती थी। मों ने नीरद को बता दिया था कि आरम्भ में देवदत्त ने विद्याप्रसाद से ही पार वर्ण शिक्षा पाई थी। उस दिनों विद्याप्रसाद का स्थूल सरकार ने अपने निम्नस्तर में नहीं लिखा था। वह स्थूल गाँव-बूढ़ा ने लोगों से कहा अना करने कहा था। विद्याप्रसाद पर यह अपराध लगाया गया कि वह साइनी की प्रिय का गया। मों ने लौंती से मे-हाल होते हुए बात सँभल

कर रहा था, “विद्याप्रसाद” तो धर्म-धर्म बाप्ता आत्मी है, पैदा भीरद । वह पारो होना तो उस का रोम का कथा इतना जैसे फलता-फूलता । मुझ पर तो वह बड़ा दयालु है, और मेरे-मात्र नहीं रखता । मित्रनी पेशगी मौन लूँ, जिला जाती है । अब हो मात से बड़ी न्या-दाक भेदना है, बही घर का लभ बनाता है ।” यह कहते-कहते मों को फिर लौंगी छिड़ गई थी और उसने हीनकर कहा था, “विद्याप्रसाद ने तो बहुतों की ब्रह्मनी नाव पार लगाई है ।”

यहाँ पहुँचने ही तब से पहले भीरद ने घनमिह की दुकान से देवघन्त का पत्ता पड़ा था । घनमिह ने देवघन्त के जगार हो जाने की कदावी मुनाने के पन्नात अनुन को बुलवा देका था । अनुन के बार-बार आग्रह करने के बावजूद भीरद ने यही निश्चय लिया था कि वह देवघन्त के घर पर ही ठहरेगा । अनुन ही उस यहाँ पहुँचा गया था ।

वज्रव्य वस्ती में देवघन्त का घर बहुत अच्छी जगह पर स्थित था । मामने सड़क थी, पिछड़ाया गिलाह गली के किनारे तक पला गया था । अच्छे-नाला बागोना भी था यद्यपि इसकी रोग-मात नहीं की था एही थी ।

भीरद का विश्वास था कि अनुन अच्छी तरह जानता है कि इस ठग्य दरघन्त यहाँ है । उस ने अनुन से कहा था “दरे लिए नहीं, देवघन्त को तो अपनी मों में मित्रन के लिए ही अपनी बात हुयेनी पर रखकर अपना बाहिर क्योंकि मों की मौला बार बार घर पकड़ लेनी है और गुदाकथा में आत्मी का मरेला और भी कम हो जाता है ।”

भीरद का देवघन्त का प्रतीक्षा था । उसका विश्वास था कि यह हा यहाँ मरना कि अनुन न उस मुकना पहुँचाए हा और वह निम्नने न आरे । मने ही वह मुझ से निम्नने आरे, पर मों ने मैं यही कटुंगा कि वह म्मी तो निम्नने आया है ।

बार-बार खजना बनसती था और बाग्य गरबने मे प्रिने बही पाल ही रगनूनि के नगरे बज रहे हों । मों में आज सरे टीक ही तो कहा था “हृद देना बज हो गये । दिन लोगों ने मन्ना के दारु निरे उनकी

मईपड़ियों तृप्तन में वह बाँधेंगी ।”

नीरद के मतानुसार वह केवल आध विरवास या कि प्राकृति मनुष्य से प्रतिरोध चाहती है । तृप्तन का बेग बंद गया तो धर्मी और पापी सभी वह बाँधेंगे । तृप्तन में धर्मी और पापी का भेद नहीं रह सकता । यह बात वह मौ से तो नहीं कहना चाहता था । कई बार नीरद सोचता कि उस ने असम आने के लिए वह मौसम क्यों चुना । फिर वह अपने निश्चय और कार्यक्रम पर हस्ता का प्रमाण देते हुए सोचता कि उस ने इस मौसम में यहाँ आकर खोद मूल नहीं की । ब्रह्मपुत्र के तीर देखने के लिए तो यही मौसम ठीक है । यही बात उस ने कल सिली से भी कही थी, जब वह उसके निम्नवश पर स्वीमर में डिनर के लिए गया था । यह डिनर बहुत मँहगा पड़ा था । छतरी के बावजूद वह निकुलन मीसता हुआ वापस बलमा पहुँचा था । उसका छाया बुँदी तरह मुन्कर पीछे की ओर दोहरा हाँ गया था ।

उत्ते बाद आया कि सिली किस प्रकार देर तक उस चरबाहे की प्रशंसा करती रही थी, जिसे कलाकार ने उस चित्र में प्रस्तुत किया था जो उसके कमरे की दीवार पर लगा हुआ था । सिली के डैडी तो बहुत रोच-दाच रखने के पक्षपाती हैं । वे बीमेच ठहरे । इस बादि के व्यक्ति तो इस समय हिन्दुस्तान में राज्य करते हैं । उसकी मम्मी लक्ष्मण नाइता की मूर्ति प्रतीत होती है—शान्ति का साकार रूप । सिली ने अपना प्रिय स्वयंभू अपनी मम्मी से पाना है । उसकी अन्तर्पत्ता पर आहन्त की छाप है । कलकत्ता में भी तो हम उस से मिल कर पवित्र रह जाते थे । बीमेच लड़की होकर हिन्दुस्तान से इतनी सहस्रभूति रखती है । इतना सेवा-आश तो किसी हिन्दुस्तानी लक्ष्मी में भी बड़ी मुश्किल से होगा ।

कलकत्ता में सिली से नीरद की जब भेंट हुई थी तो सिली ने उदा उने दिवंगमूल आने का निम्नवश किया था । उसका विचार था कि नीरद को स्वीमर में ही ठहरना चाहिए । अपन डैडी से कहकर वह ठहरा लिए अलग कमरे का प्रबंध कर सकती थी । वह जानती थी कि नीरद ब्रह्मपुत्र

पर एक पुस्तक लिख रहा है। वह इस पुस्तक के कई अध्याय लिखी  
 को पढ़कर सुना कुछ था। उसकी लेखन शैली लिखी को पठनी थी। साथ  
 ही नीरद का यह विश्वास कि नदी की बोका-गाथा भी उसी प्रकार लिखी  
 का सच्ची है जैसे किमी महापुरुष की जीवनी, लिखा वो बहुत प्रिय था।  
 लिखी को यदि नीरद की रचना में कोई चीज पसन्द थी तो यही कि  
 वह दिन माया में लिखता है उसके एक-एक शब्द को बीती-आगती वस्तु  
 समझकर ठठठाता है और अपने टिप्पणों पर रखकर एक नया रंग, एक  
 नया अनुपमा बना देता है। भाव का यह प्रयोग क्या अनुभव चाहता था।  
 वह चरना-म्यूस पर पहुँचकर, परिस्थिति को समझकर और बात की  
 महत्त्व तक बाहर मोती की तलाश में होता लगाने वाले के अन्तर्गत में  
 लिखता है। इसलिए वह कहती थी कि ब्रह्मपुत्र तो स्टीमर की जिनगी से  
 ही ठीक-ठीक नजर आ सकता है। बेबचन का मछल तो कलामा में दिसाँग  
 नदी के किनारे था। वहाँ से इस नृपञ्च के मौनम में ब्रह्मपुत्र के किनारे  
 पहुँचना तो बहुत कठिन था। नाव में बैठकर दिसाँग नदी से ब्रह्मपुत्र में  
 आता सचसे थे, पर वह क्या मारी मर्मन्त था। अब नीरद था कि वह तो  
 मर्मन्त में भागने को बाधता सम्मता था; इन क्षिप्त उन ने लिखी के किम्वदन्त  
 का चमत्कार देते हुए अन्त में यही कहा था, “अभी मैं बेबचन की माँ के  
 पास ही ठहरूँगा। कोई खर होया तो स्टीमर में आ जाऊँगा।” कुछ  
 उत्तर में लिखी ने बड़ी किम्वदन्ता से कहा था, “यहाँ भी हम बहुत अधिक  
 आराम तो नहीं है सचेंगे, पर अचिर-न अचिर आराम देने की चेष्टा  
 करेंगे।” लिखी के डेरी ने हँसकर कहा था, “लिखना भी बहुत  
 बड़ा काम है। अब टैगोर ने ‘गीताञ्जली’ लिखी तो उस कमी भूलकर भी  
 प्यार न आया होगा कि इस पर मोरल प्राइज मिलेगा।” लिखी की  
 मम्मी ने हँसकर कहा था, “मुम्हारा मतलब है नीरद के ‘ब्रह्मपुत्र’ पर भी  
 उस मोरल प्राइज मिल सकता है।” लिखी के डेरी ने “क्यों नहीं, क्यों  
 नहीं” कहकर लिखने के काम में अपना विश्वास जताया था। उसके  
 सामने लालटेन जल रही थी। बाहर बाजल गरज रहे थे। भूकम्पार क्या

हो रही थी। एक-दो बार मों की झोल अवरन कुली और उस ने लॉस लॉसकर बेहमल होते हुए कहा, "नीन्द बना, अब सो जाओ।" पर नीन्द की झोलों में आन नीन्द न थी।

मों फिर लो गई। अब भी बिकली खदकतो, छत और दीवारों के बीच के खूपनों से घाती हूँ बिकली की कोंप में मों के मुर्तियों वाला चेहरा यो प्रतीत होता जैसे किसी मूर्तिधर ने उसे बड़े परिश्रम से तपसा हो।

अचानक द्वार पर गलक दूर।

नीन्द ने ठठकर धुन कोला।

बया में भीगता हुआ एक आदमी भीतर आया। उस ने अपने-आप को छपही की बाहर में लपेट रखा था। पानी से भीगी हुई बाहर को छटाते हुए उस ने नीन्द से हाथ मिलाया। "ओहो बेकान्त!" नीन्द उसे पहचानते हुए उसके गले लगाकर मिला। बिकली की कोंप में बेकान्त ने खोली हुई मों का चेहरा देखा। वह बड़े प्यार से उसके चेहरे पर मुन गया; मों के चरणों की ओर लगे होकर मों को प्रणाम किया।

बेकान्त ने हाथ के संकेत से नीन्द को वृत्त कमरे में चलने को कहा।

नीन्द कालटेन ठठकर बेकान्त के पीछे-पीछे चला गया। यह कमरा कई दिनों से खाल नहीं किया गया था।

"पहले कत्न बदल लो।" नीन्द ने कालटेन की बत्ती जलाते हुए कहा।

बेकान्त ने कत्न बदल। गिल्ली कत्न एक ओर दाल टिमे।

"मों की दशा कैसी है?"

"टीक नहीं है। गुम्हायी बाब कोहते-कोहते उसकी झलि लग गई।"

"कलकला से कब चले थे?"

"कोई दो सप्ताह हो रहे हैं।"

"अनुभव ने मों दूर?"

"दूर।"

“मिली से मी ! उस से मिले बिना कैसे रह सके होगे !”

“मिली तो बह रही थी कि स्त्रीमर में उसके डैडी कमरा बे लफ्ते है ।”

“आज क्या लिख रहे थे !”

“एक छोटी-सी चीज ।”

“ब्रह्मपुत्र ॥ ओह नया अध्याय !”

“वहीं ।”

“हूँ !” बेकान्त ने बिचित्र-ठा मुँह बनाकर कहा ।

नीरज समझ गया कि बेकान्त क्या कहा था। वह जानता था कि बेकान्त के सामने तो अपने ज्ञानोत्सव के कम के इतिहास को देखना ही नहीं ।

अपने शाल आम्बार में फिर जुमाकर बेकान्त ने जैसे नीरज से कुछ कह दिया । नीरज समझ गया कि बेकान्त अपनी हठार पर होहल्ला मार बात आगे फिर कह रहा है—“जबल कम से भागकर तुम कह तक व्यय की रचना में लगे रहोगे ।”

“मिली के डैडी तो कह रहे थे कि मेरी पुस्तक पर नोबल प्रशस्ति दी मिल सकती है ।” नीरज मुस्कण ।

“और तुम ने किशोर कर लिया !”

“तुम मुझे क्या कर दोगे, बेकान्त ! अकिशोर का भी तो मैं बाद कर रहा नहीं देखता । इस लिए मैं ने अपने जीवन के सब से अच्छे कर लिखा दिये । वहीं ब्रह्मपुत्र बंगाल में पड़ा से लिखा है वहीं मेरा कम हुआ वहीं लिखल मैं ब्रह्मपुत्र का उत्तम-स्वयं है उस स्थान की मैं न जाना कर रही है । माकरोरु न बनकर कर का मील तक मैं न बाद में बटकर ब्रह्मपुत्र की जाना की थी । तुम का जानते हा कि लिखल मैं भर लिखा गयायी है तुम यह भी जानते हा कि ब किस प्रकार वहीं पहुँचे ।”

“बह कशमी मुझे पसन्द है । तुम न ही तो सुनाइ दो कह कशमी कि हमने एक बार कलकत्ता में एक कभुलीवाला न एक गली में न जान किन प्रकार आयेगा ॥ आकर अपनी बन्सूक से एक बालक को मार डाला



या और सब लोग अपने-अपने घर में वा लिये थे ।”

“कितकुल ऐसे ही हुआ था । फिर एक बालक बाहर निकला ।”

“हाँ, हाँ ! तुम्हारी कहानी का वह बालक बहुत बोर था । उस ने गली के दूसरे बालक को बसा दिया । वे बालक उस कलुनीबस्ता के सिर हो गये । कलुनीबस्ता भाग निकला और वह बालक का अगुवा बालक अपने पसलक विपिन घोष कहलाया । विपिन घोष के घर में एक बालक ने कम लिया, वो नीरज घोष कहलाया ।”

“क्यों मुझे क्या रहे हो ?”

“क्या नहीं रहा, सम्झ रहा हूँ । मेरी सम्झ में वह बात आज तक नहीं आई थीर, कि यदि तुम सबसुख अपने पिता के पुत्र हो तो देश की परबलता के विरुद्ध तुम्हारे अन्दर जोर माकना क्यों नहीं आयी । तुम ने ही तो बताया था कि जब भीकुल विपिन घोष ने देखा कि बलकता के कुछ होयल घेसे भी हैं वहाँ प्रवेश अपने कुर्छों के साथ वा सधते हैं, पर वहाँ हिन्दुस्तानियों का प्रवेश विपिद्ध है, तो उन्होंने ने वह निर्णय किया कि वह इस अपमान को सहते हुए इस देश में नहीं रहेंगे । वे विपिन अपने गये और बलकता में अपने मित्रों से वह कह गये कि जब तो वे उठी सम्म लौटेंगे जब देश स्वाधीन हो जायगा । मैं पूछता हूँ कि इस माकना का हकारवाँ अंश भी तुम्हारे अन्दर क्यों न आया ?”

“मैं ने सिक्खे का रास्ता अपनाया ।” नीरज ने देवप्रन्थ के गले में बाँधे बलकर कहा, “तुम्हारा रास्ता अपनी कमह महन् है । उस से तो मैं ने अभी इन्कार नहीं किया ।”

“तो फिर इन्कार किस बात से किया है ?” देवप्रन्थ ने हँसकर कहा, “तुम पौली पर अपने से डप्ये हो । तुम्हें अपना जीवन कुछ अधिक प्रिय है ?”

जोर से बादल गरबा और निबली यों कइमी जैसे देवप्रन्थ की हामी मर रही हो ।

“देवप्रन्थ, आज मैं तुम्हें वह बात बताना चाहता हूँ, वो मेरी आज

तक किसी को नहीं बताए।” भीतर ने गम्भीर होकर कहा आरम्भ किया, “तुम कहोगे यह गप है, पर यह एक सच है।”

“मैं अक्षय सुनूँगा।”

“बालक और पौष्टिक के प्रवेश में शिवों का विश्वास है कि कल बेवता का अन्त रखने से सदा शुभ फल मिलता है। बहुत दिनों तक मेरी माँ के सन्तान न हुए। उस ने बल-बेवता का अन्त रखकर भी बेल लिया पर उस के कोई सन्तान न हुए। पाँच वर्ष तक निरन्तर माँ यह अन्त रखती रही आर—”

“आर फिर अन्त का शुभ फल बिछला। आ गये हमारे भीतर भी महापद्म।”

“यह कहानी माँ ने मुझे उस समय सुनाई, जब मैं दो वर्ष पूर्ण सिन्धुत गया था। माँ ने बताया कि वह सन्धियों के साथ पद्मा और ब्रह्मपुत्र के संगम पर एम्नक्ष्मी से एक दिन पहले स्नान करने गई थी। अमी सुयोग्य बर्तन हुआ था। बिनासे से लगी हुई एक नन्दी-सी नाव नहर का रही थी, जैसे यह नाव किसी मोमड़ी ने अपने कंठ के लिए फिलाने के रूप में तैयारी करद हो। उस नाव में कोई कन्तु क्लेश के पत्तों में टकी हुई पत्नी थी और—”

“और वह कन्तु मुझापी माँ ने उठा ली।”

“सुनो तो। माँ को उस समय पता चला जब बालक के रोने की आवाज आर। यह एक नरकत बालक था। उस माँ पर से आर और—”

“और बड़ी बालक बड़ा हाँकर बीरद कहलाया।”

“जब माँ तो यही कह रही थी।”

“और तुम ने इसे तत्प न्याय लिया।”

“मेरी कल्पना में तो यह विश्व दूतप ही रूप धारण कर रहा है।”

“वह कन्तु।”

“जैसे के पत्तों में लिपटा हुआ एक बालक एक नन्दी-सी नाव में पड़ा बालपाप में बड़ा जा रहा है। यही मेरे जीवन का प्रतीक है।”

धुर-धुर बों ! धुर-धुर बों !—दूध बुझने का अपना संगीत था । बॉस के बॉसों में दूध बुझते-बुझते अतुल ने मुस्कान के साथ नींद का स्वागत किया ।

नींद जानता था कि मल्ला की मूख से आवाज से अतुल अभी तक पूरी तरह संभल नहीं सध । अपिला की आँखों से प्रच्छ ही रहा था कि दूध बुझे जाने से उसे एक विशेष प्रश्न की तृप्ति हो रही है; पर नींद को लगा कि मल्ला की मूख से तो अपिला भी उदास है ।

मीटर से रेगुल आकर अतुल के पास जाड़ी हो गई । वह पत्ते की सीटी बजा रही थी । सीटी की आवाज सुनकर अपिला थोड़ी बहो, जैसे वह सीटी की आवाज सुनने की निर अम्बल हो ।

धुर-धुर बों ! धुर-धुर बों ! अतुल बुझ रहा था ।

नींद ने रेगुल के सिर पर हाथ फेरा, तो वह पश्चित नेनी से देखती हुई मीटर की माग गई । नींद ने उठकी ओर अधिक ध्यान न दिया । वह तो यह सोचकर आया था कि अतुल से साथी बात करेगा कि किस प्रकार तुलना के बावजूद बेबकान्त मों से मिलने आया था, यद्यपि वह यह निर्णय न कर सध था कि बेबकान्त मों से मिलने आया था या स्वयं उठी से । वह अतुल से पूछना चाहता था कि इन दिनों बेबकान्त क्यों किया हुआ है । फिर उस ने सोचा कि यह पूछना तो व्यर्थ है । पूछना होता तो मैं बेबकान्त से ही न पूछ लेता । उस न निर्णय किया कि वह बेबकान्त के सम्बन्ध में आज बात भी नहीं करेगा । पुलिस बेबकान्त की ताक में है । कहीं लेन के देने न पड़ जायें । पुलिस तो मुक्त भी दिपलत में ले सकती है । मैं तो इसके लिए तैयार नहीं । मेरा तो वह खता नहीं । मैं तो लेकनी का धनी हूँ । मेरा कार्य है शिक्षा; अष्टाध की कहानी, मनुष्य की कहानी, बेसी भी कहानी हो; उस में कैसा भी मोड़ कवी न आये । मेरा कार्य तो पूरा को शिक्षाने के लिए तैयार करना है । मेरा कार्य तो जीवन में सुगन्ध लाना है । यह सोचकर वह स्वयं ॥ मुकटा दिया । उसे यह परवाद न थी कि अतुल उठकी मुकाम को अवश्य देखे ।

दूध बुझने के पदमात्र अतुल बॉल का फुट-मर ताजा पीया उठाकर लाना हो गया। यह पीया बहुत माँ बॉल में तैयार किया गया था। बोलो म ताजा दूध को मुगध आ रही थी। नीर ने मुस्कुराकर कहा, "लेफ्ट को रचना में मी सीधी-सीधी मुगध आने लगें, तो समझी लेफ्ट की बला बीदल हो ठी है।"

पहले अतुल नीर बकर दूध का पीया रख आया, फिर बड़ नीर को पोतर के डिनारे बापो अरनी अरनी में ले गया। 'इही-चिहना पकल बोलो या पान?' अतुल ने कहा 'तो चाहो रही आ आरगा।'

'आप निरेंगे।' नीर मुस्कुराया।

'आप में पाही देर लगेगा। बाप बना डिना लेन गये हैं।'

'असो दूनी मी क्या है?'

बेहरास्त को मी की बाली की बाल बनी तो अतुल ने कहा, 'मिमी की हासरी और मिम बन आयेगो! मुना है उन न कनकना में हासरी पनी है।'

नीर बोला, 'अब तक तो एक बैच की का इलाज चल रहा है। विनामना गामिनी और पुडिना मेम छोड़ता है।'

मी का गनो मी है।'

'परी तो बटिना है। मी को दवा में पूरा है।'

अतुल के चेहरे पर शोक की रेखाएँ अब मी अस्थि थीं। अन्त का मनु का दुःख का अनी तक नहीं मूल लक्ष था। नीर के बान के लनीर ही इ लक्ष टन न कहा, 'दिवान्त को कनका तो निरहा थी।'

'आप दू दूना उन तक न पहुँची हो।' नीर ने गम्भीर होकर कहा।

'तो फिर मे मित्राली चाहिए।'

'अररर।'

पनी बैठे बैठे नीर ने मित्रुन किया था कि यदि अतुल पर अन्त आरम्भ करेगा तो वह बान का गोप कर आरगा।

धुर-धुर चों ! धुर-धुर चों !—दूध डुहने का अपना संगीत था । बोंठ के बोंठों में दूध डुहते-डुहते अटुल ने मुम्बई के साथ नीरू का स्वागत किया ।

नीरू जानता था कि मम्मा की मृत्यु के आपात से अटुल अभी तक पूरी तरह सँभल नहीं सका । अफिरा की आँखों से प्रकट हो रहा था कि दूध डुहने जाने से उसे एक विशेष प्रकार की तृप्ति हो रही है; पर नीरू को लगा कि मम्मा की मृत्यु से तो अफिरा भी उदास है ।

नीरू से रेणु आकर अटुल के पास खड़ी हो गई । वह पसे की सीटी बजा रही थी । सीटी की आवाज सुनकर अफिरा जैसी नहीं, वैसी वह सीटी की आवाज सुनने की फिर अभ्यस्त हो ।

धुर-धुर चों ! धुर-धुर चों ! अटुल डुबूब हवा रहा ।

नीरू ने रेणु के सिर पर हाथ फेरा, तो वह चकित नेत्रों से देखती हुई नीरू को मारा गई । नीरू ने उसकी ओर अधिक ध्यान न दिया । वह तो वह सोचकर आया था कि अटुल से सारी बात करेगा कि किस प्रकार दूधन के बाबूद बेकाम्बत मों से मिलने आया था, बचपि वह यह निर्वाय न कर सका था कि बेकाम्बत मों से मिलने आया था या स्वयं उठी से । वह अटुल से पूछना चाहता था कि इन दिनों बेकाम्बत कहाँ छिपा हुआ है । फिर उस ने सोचा कि वह पूछना ता व्यर्थ है । पूछना होता तो मैं बेकाम्बत से ही न पूछ लेता । उस ने निश्चय किया कि वह बेकाम्बत के सम्बन्ध में आज बात भी नहीं करेगा । पुलिस बेकाम्बत की तलाश में है । कहाँ लेने के लेने न पड़ जायें । पुलिस तो मुझे भी हिपस्त में ले सकती है । मैं तो इसके सिवा तैयार नहीं । मेरा तो वह पस्ता नहीं । मैं तो लेकनी का पसी हूँ । मेरा कार्य है सिलना; ब्रह्मपुत्र की कहानी, मनुष्य की कहानी, बेसी भी कहानी हो; उस में बैसा भी मोड़ क्यों न आवे । मेरा कार्य तो फूल को सिलाने के लिए तैयार करना है । मेरा धर्म तो जीवन में सुगन्ध लाना है । यह सोचकर वह स्वयं ही मुस्करा दिया । उसे यह परवाह न थी कि अटुल उसकी मुस्कराहट को आश्चर्य देखे ।

दूध बुझने के पदमात्र अतुल बॉम का फुट-भर लम्बा बॉमा उटकर लम्बा हो गया। यह बॉमा बहुत मागे बॉम से तैयार किया गया था। बॉमी से ठाका दूध की मुग-ब आ रही थी। मोर ने मुम्हटाकर कहा, 'लेखक को रखना मेरी मीठी-मीठी मुग-ब आने लगे। तो सनम्मी लेखक की कला बीजन्त हो टनी है।'

पहले अतुल मोर बाहर दूध का पांगा एक आया फिर वह नीरव को पोकर के छिपारे बाधो बननी मीरङ्गी में ले गया। "दही-चिड़ा पक-करोगे या पाय?" अतुल ने कहा "तो पाहो बही आ बापगा।"

'पाय पियेगे। मोर मुम्हटाया।

'पाय में थोड़ी देर लागेगी। पाय बना दिखा लेने गये हैं।

देखकर को मी की बीजन्ती की बात पली तो अतुल ने कहा 'पिपी की टाँसरी और किछ कम आनेगी! मुना है टय न बनकला में गन्तरी पनी है।'

मीरद बोला, 'अब तक तो एक देय की का हल-ब चल रहा है। चित्तमनाद गालियाँ और पुकिया मेम दोन्ता ह।'

'मी दबा लगती मी है।'

'पहो तो कटिना है। मी को दबा से पूया ह।'

अतुल के बेहरे पर शोक को देखते अब मी अंकिन थीं। मम्मा का मूत्र का कुप-बह बनी तक नहीं भूल गया था। मोर के बज के तनार मुँह लकर टन ने कहा, 'देखान्त को सूचना तो निबहार थी।'

'आपद बह सूचना ठक तक न पहुँची हो। नारद ने गम्भीर होकर कहा।

'तो फिर मे निबहानी चाहिए।'

'अन्तः।'

वहाँ बैठे-बैठे मोरद न म्रियुव किया था कि यदि अतुल पर श्रृंग अरम्भ करेगा तो वह बाध का गोप कर बापगा।

मममुत्र।

रेखु फिर आ गई। वह वहीं पड़े की सीढ़ी बना रही थी। अशुल ने कहा, “इस के झूठे सँ मस्तिष्क में यह प्रश्न नहीं उठ सकता कि मरणा क्यों जाता गया।”

“अब मरना कभी वापस नहीं आया।” नीरद ने सहायभूषिणों के स्वर में कहा और फिर प्रसंग बदलते हुए बोला, “परसों रात सिली से मेरी बातें हुई। सिली के कमरे में मैं ने तुम्हारा चित्र देखा है।”

“मेरा चित्र ?” अशुल ने सतर्कता पूछा, “मैं वहाँ कब गया ? मेरा चित्र किस ने बनाया ?”

“सिली तुम्हारी बहुत प्रशंसा कर रही थी।”

“मेरी प्रशंसा ! मुझ में ऐसा कीन-सा गुण है ? मुझ पर तो उस नाराज होना चाहिए था।”

“क्यों ?”

“उसकी मेरी हुई अलमिया आदमिनी मैं ने सीखा ही थी।”

“उस बात की तो उस ने कर्ण नहीं की। फिर तुम्हारे विवाह की कर्ण क्या पड़ी।”

“उसका इस से क्या प्रबोध ?”

“उस ने विष्णुधाम से मुक्त होगा। कोई जड़भी सुकृता है तिसी मुक्त में।”

“सम्पन्न बस्ता घर है न।” अशुल ने दृढ़ता से कहा, “उसी घर में रहती है कुन्ता। उसके साथ मेरे विवाह की बात चल रही है। उसके पिता कल्याण भाग्य ने बूढ़-बूढ़ तक तीर्थ-यात्रा कर रही है। किसी कार्य का मासुली मने हैं।”

नीरद बोला, “अमी से विवाह के पक्ष में न फैसला। देवदास मुनेगा तो उसे मुक्त होगा। वह तो कलाकला में तुम्हारी बहुत प्रशंसा करता था।”

“देवदास का खस्ता कलाकला से आरम्भ होता है, मेरा दिवंग मुक्त से।”

मीरा ने गम्भीर होकर कहा

“या तो मनुष्य यह भूलकर कि उसका क्या कहों हुआ, सारे संसार की यात्रा करे, या वह अपने मस्तिष्क के भीतर बसी दूर दुनिया की खोज करे, कभी-कभी मस्तिष्क की गलियों में घूमने से भी मनुष्य को बहुत-कुछ मिला सकता है। मस्तिष्क कोर एक तिन का गिलाँना तो बर्ही है। काल की अनंतता पग-पगिली से होता हुआ मस्तिष्क काज के युग में पहुँचा है, पर यात्रा की दूसरी बात है। परमी रात में लिप्पी से कह रहा था कि अतुल को दुनिया तिलाव करे।”

‘उस ने क्या कहा ?’

‘बह कह रही थी—‘अतुल मैं को बियो’ता है बह है उसका छुट्ट आदिम रूप। काज के युग के निष्कट-सम्पर्क में जाने पर उसका बह रूप बिगाड़ बाँटा। तुम्हारा क्या विचार है ?’

“बह टीक करती है। मैं तो दिर्घायुष्य में रहकर ही काम करना चाहता हूँ।”

“बौमुड़ी की पुन को ही लो। अब प्रश्न पिया जा सकता है कि संगीत बर्त की पोटी पर आश्रित है या गायक के करत पर। एक संगीत असतुल की लहरी का भी है; उसे तो किरी के कण्ट की चाह नहीं। प्रकृति का संगीत हो प्यारे मानव का इनका अपना-अपना सन्देश है। मानव-सम्पत्ता विभिन्न अन्ति द्वाप है और इसका एक ही सन्देश है कि मानव प्रत्येक देश की यात्रा करे और वह अतुल प्राप्त करे जिसके बिना वह कोर बियो’ पग बर्ही उठा सकता है। बाहर की दुनिया देतकर गुन दिर्घायुष्य आओगे तो दाँ आँखा प्रगति-कार्य कर सकोगे। कमलता और बम्बर जैसे शहर तो गुन अस्त्रय देन आओगे।”

‘दिर्घायुष्य तो न शिखरगार बनना चाहता है व गोहादी, कमलता बम्बर की तो बात ही दूर रही।”

‘असतुल बहुत दूर से आता है और बहुत दूर बना है। असतुल यही प्रसन्नपुत्र।’



रेणु फिर आ गई। वह वहीं पते की सीटी बजा रही थी। अतुल ने कहा, “इस के छोटे से मस्तिष्क में यह प्रश्न नहीं उठ सकता कि मरना कहां चला गया।”

“अब मरना कभी वापस नहीं आएगा।” नीरद ने सहानुभूतिपूर्ण स्वर में कहा और फिर प्रसंग बगलते हुए बोला, “परछों उठ लिली से मेरी बातें हुईं। लिली के कमरे में मैं ने तुम्हारा चित्र देखा है।”

‘मेरा चित्र?’ अतुल ने सतर्पण पूछा, “मैं कहां बन गया? मेरा चित्र किस ने बनाया?”

“लिली तुम्हारी बहुत प्रशंसा कर रही थी।”

“मेरी प्रशंसा? तुम में ऐसा कौन-सा गुण है? तुम पर तो उसे नापक होना चाहिए था।”

“क्यों?”

“उसकी भेबी हुईं अकस्मिका बाइविल में ने लौटा दी थी।”

“उस बात की तो उस ने चर्चा नहीं की। फिर तुम्हारे विवाह की चर्चा चल पड़ी।”

“उसका इस से क्या प्रयोजन?”

“उस ने विष्णुपद से मुला होमा। और लाइकी मूकताप है।”

“सम्झे बाला पर है न।” अतुल ने हड़या से कहा, “वही पर मैं रहती है मूनताप। उसके साथ मेरे विवाह की बात चल रही है। उसके पिता कस्यत्स मयत ने दूर-दूर तक वीर्य-बाजा कर रली है। किसी अर्थ बरा मामुली मये हैं।”

नीरद बोला, “अभी से विवाह के बखर में न फँस जाना। वेकअन्त मुनेगा तो उसे झुल होगा। वह तो कलकत्ता में तुम्हारी बहुत प्रशंसा किया करता था।”

“वेकअन्त का चला कलकत्ता से आरम्भ होता है, मेरा निर्वीय मुल से।”

मीटर में गम्भीर होकर कहा

“या तो मनुष्य, वह मूलकर कि उत्तम जन्म कहाँ हुआ, सारे संसार की यात्रा करे, या वह अपने मस्तिष्क के मीटर बसी हुई दुनिया की लोत्र करे क्योंकि मस्तिष्क की गतिशील में जूझने से ही मनुष्य को बहुत-कुछ मिल सकता है। मस्तिष्क कोई एक दिन का सिलसिला तो नहीं है। कल की असंख्य पगाड़ियों ने इन्हा हुआ मस्तिष्क आज के युग में पहुँचा है पर बाबा की वृद्धि बल है। परती रात में किसी से कह रहा था कि जगुल को दुनिया त्रिपद था।”

“तुम ने क्या कहा ?”

“वह कह रही थी—‘जगुल में जो कियेला है वह है उत्तम शुद्ध आदिम रूप। आज के युग के निष्क-सम्पर्क में जाने पर उत्तम वह रूप पिगड़ जायगा।’ तुम्हारा क्या विचार है ?”

“वह ठीक कहती है। मैं तो दिव्योत्पन्न में रहकर ही काम करना चाहता हूँ।”

“बोलुपी की बुल को हो लो। अब प्रश्न किया जा सकता है कि संगति बॉस की पोरी पर आश्रित है या मानव के कवड पर। एक संगति ब्रह्मपुत्र की लहरों का भी है। उसे तो किसी के कण की चाह नहीं। प्रकृति का संगति हो चाह मानव का, इनका अपना अपना ल्पेश है। मानव-सम्पर्क विभिन्न देशों में बड़ी बड़ी नदियों के किनारे विद्यमान हुए। मानव पर बलवाप की आदिम रूप है और इन्हा एक ही ल्पेश है कि मानव प्रत्येक देश की यात्रा का और वह अनुभव प्राप्त करे, शिवाये किना वह कोई विश्व पग नहीं उठा सकता। बाहर की दुनिया देखकर तुम त्रिगुण्य आकाशों को नहीं अस्फुट प्रगति-कार्य कर नभसो। कलकत्ता और बम्बर जैसे शहर तो तुम अक्षय्य देश थाओ।”

“दिव्योत्पन्न तो न शिकारार बनना चाहता है न गोहारी, कलकत्ता बम्बर की ता बल ही बूर रही।”

“अस्तुव बहुत बूर में आता है और बहुत दूर जाता है। अस्तुव नहीं

नहीं है जिसे तुम दिव्योत्सुक के गण से बापने की मूल कर रहे हो।”  
नीरद ने अन्तिम धर्म प्रस्तुत करते हुए अतुल की ओर देखा।

इतने में चाय आ गई। बीलमाधे भी आ पहुँचा। आते ही ठठने कहा,  
“अब जो तुम कहो, वही मगत की ओर सतर दिया जाय। तुम्हारी धम्म-  
पत्नी वह पहले ही ले गये थे। अब ये विवाह की विधि निश्चित करने का  
आग्रह कर रहे हैं।”

“विवाह भी आवश्यक है।” पात से नीरद कह उठा, “पर लोग  
इतना शीघ्र विवाह क्यों करते हैं, वह मैं आज तक नहीं समझ सका।”

अतुल चुप रहा।

“अच्छा तो मैं मगत की से कह देता हूँ कि जमी रुक जायें। लोगों  
का मुँह भी तो रक्ता होगा। लोग कहेंगे—कल मक्का पल क्या और  
आज अतुल का विवाह रचाया जा रहा है।”

“चाय ठण्डी हो रही है,” अतुल ने कलपूर्वक कहा, “पहले चाय  
के साथ हस्ताक्षर किया जाय। ये बातें तो कभी खत्म ही नहीं होंगी।”

## उनतीस



बीरद राजा का काया की भीषणी में पहुँचा तो काया बेटे  
मुहम्मद पर काया लगा रहे थे ।

“काया, बीरद बापू !” काया मुहम्मद पर ।

इधर-उधर की बातों के पन्नाल काया ने देवदत्त  
की बात बसाह । पहले तो बीरद ने अधिक दिलचस्पी  
न दियाई पर अब काया इन प्रसंग को छोड़ने को

देखार ही व हुए तो बीरद ने कहा

“देवदत्त बंगाल के एक कायाकवासी कायिचारी दल में सम्मिलित  
हो गया । इन लोगों ने एक के बाद एक, पूरी पाँच इन्ग्लैंड की । एक-से-  
एक बड़िया पिस्तौल बलाने बाने मुक्त इस दल में शामिल हैं । दल के कुछ  
संग गिरफ्तार किये जा चुके हैं और तीन मुक्त अभी तक पकड़े नहीं गये ।  
उन्हीं तीन मुक्तों में देवदत्त भी है । देवदत्त के पास सब से बड़िया पिस्तौल  
है । एक अक्षर पर तो मैं स्वयं हूँ इस में सम्मिलित होते-होते रह  
गया था । देवदत्त के समाचार-पत्रों में आश्चर्य सब से अधिक इसी  
आश्चर्यपूर्ण दल की खबरें लय रही हैं ।”

काया ने कायाकवासी पूछा, “तो क्या इस दल की खबरें गांधी  
बाबा की खबरों से भी अधिक लय रही हैं ?”

“हाँ काया !” बीरद मुहम्मद पर, “इस दल पर यह मुहम्मद बल  
रहा है कि इन्हीं ने एक-एक करके पाँच अंग्रेज अफसरों को मार डाला ।”

“तुम दिन इस के साथ हो ?”

“मैं तो किसी भी दल के साथ नहीं हूँ। क्या ! यह बात मैं ने कलकत्ता में रेवन्समैन से स्पष्ट कह ली थी। जैसे वेश प्रेम में तो मैं किसी से जोड़े नहीं हूँ।”

“तो तुम सरकार-पार्टी के साथ भी नहीं हो ?” अन्ध ने गम्भीर होकर कहा।

“आज तक तो मैं ने सरकार की चापलूसी का सपना नहीं देख्य।”

“तो तुम्हारा कौन-सा मार्ग है ? हो ही तो मार्ग हैं—बम और विस्फोट का मार्ग या फिर सत्याग्रह और अहिंसा का मार्ग। हमारे नार्मन साइड पॉइण्ट्स के जंगल में बीमार हाथियों की देख-भाल करते हुए गांधी बाबा का प्रसंग लेइ देते थे। वे तो कहते थे कि गांधी बाबा का मार्ग यही है जो ईसा का मार्ग था। ईसा तो सहर्ष छली पर चढ़ गया था। तुम्हारा कौन-सा मार्ग है, नीरज बाबू ?”

“मैं तो सिल्सकार ही सेवा करता हूँ, अन्ध !”

‘किस की सेवा ?’

“सारे संसार की सेवा, अकेले अपने ही देश की नहीं। सच्चाई तो उन देशों के लिए एक है, सारे संसार की समस्याएँ एक हैं।”

“एक कैसे हैं उन की समस्याएँ ? स्वाधीन और परधीन, सब एक कैसे हुए ? यह प्रश्न तो मैं नार्मन साइड से भी पूछ बैठता था।”

नीरज ने हँसकर बात समाप्त करते हुए कहा, “मैं तो ब्रह्मपुत्र पर दुस्तक मिला रहा हूँ क्या ! हाँ, एक बात अवश्य है। पहले मैं केवल एक नदी की बीकनी सिक्का चाहता था; अब मेरी समझ में यह बात आ गई कि नदी के किनारे बसे हुए लोगों का संघर्ष भी नदी की बीकनी से अलग नहीं।”

अन्ध की आँखें चमक उठीं। वह ध्यातपूर्वक नीरज की तरफ देखने लगे।

## तीस



दोनों सहस्रियों बलमा का रही थीं। एक का विवाह हो चुका था, और दूसरी अभी अविवहाहिता थी।

चतुर्थ रोज़ तक तो आखिरी इस बात को लेकर सुनताप का उपहास करती रही कि यदि वह इतना ही खजानी कमी छिपती है तो वह बतावे कि वो पित्र उसके विवाह में मिली ने उसे मेट किया या उस में

अनुत्तर क्यों ने आ गया था।

जब बहुत धीमी की समाप्त हो चुकी थी। यम की प्रकृत कटकर पर आ चुकी थी। बाड़ा आरम्भ हो गया था। अभी और पीछे हुए तक पुनः की वादर ऐसी हुई थी। तबसे तबसे ही तो पुनः थी। पुनः में स्तिवटी दोनों सहस्रियों बलमा की ओर आ रही थीं। यम की प्रकृत करने के परम्परा सुनताप का अनुत्तर के साथ विवाह हो गया था। इस विवाह पर बीतर हो मिली को लेकर आया था। मिली एक छोटे से लड़के होकर भी गाँव की बस्तियों में इतनी विलसतपी लेती है, वह तब के लिए बड़े आश्चर्य की बात थी। चलते चलते आखिरी ने कहा :

“बस ही इतनी ही पुनः थी। बापू के नाम में बहुत-सी सहस्रियों का लेनी थी। बापू कह रहा था कि महापुत्र में सहस्रियों की समाप्त हो गयी।”

सुनताप ने हँसकर कहा, “यह बीन-सी नरु वत है।”

ये शक्तिता से बली का रही थी। चलते-चलते उस सारत की बर्षा

पत्नी बिसे आखी का बापू कमलिया सापरी से पकड़ लाया था। फिर अटल का प्रसंग आया कि जिस प्रकार वह कुम्हारा के पास आकर सास को मुक्त करने का आग्रह करने लगा था। दोनों चहेलियों के बर्ताव में वह हस्य सखीव हो उठा कि जिस प्रकार वे सास को उठाकर बापू के साथ गाव में बैठकर उसी सापरी पर उसे छोड़ने गई थीं। “जब स वह सास अपनी पॉल के साथ उड़ गया, कमी छोटकर दिखाई नहीं दिया।” कुम्हारा ने हँसकर कहा, “वह माता भी क्या ही पत्नी गई जो मैं ने उसके गले में डाली थी।”

“तू सोचती थी कि वह सास फिर कमलिया सापरी पर उठकर अपनी पॉल से निहड़ बायगा और बापू फिर उसे पकड़ लायगा।”

‘मैं ने तो सोचा था कि माता से मैं अपने सास को पहचान लूँगी।’

‘पेला नहीं होता, पगली!’

‘दूर से तो हर सास के गले में माता नजर आती है।’

“दूरे करते हैं मकर का चोखा।”

कुम्हारा ने प्रसंग बन्दते हुए कहा, “देवचन्द कहाँ होगा, वह तो थोड़ा नहीं जानता।”

“वह अपनी पॉल में उड़ रहा होगा।” आखी मुन्कवाई।

कुम्हारा ने हँसकर कहा, “तेरे सपनों में देवचन्द अवश्य आता होगा, पर तू कमी बतायेगी थोड़े ही।”

‘आता है तो आये, मैं कैसे रोक सकती हूँ? तू अपने अटल की बात सुना, कैसा निच्छा!’

कुम्हारा चुप रही। आखी ने हँसते-हँसते उसके गले में जोड़ डाल दी। “हर-बापू की कुपड़लियाँ मिलाकर किये गये विवाह ने कुछ ठा रंग मिलाया होगा। विवाह से पहले की रात यहाँ किठनी शुभ थी। तुम्हारे घर वाले ब्रह्मपुत्र से पानी साकर तुम्हें स्नान करते रहे और अटल के घर वाली ने भी रात दिन तक ऐसा ही किया। कता तो सही कि पर-बापू के लिए सड़कियाँ अलग अलग पानी क्यों लाती हैं; पर-बापू की प्रयंता

मैं इतने गीत क्यों गाये जाते हैं ?

“तू क्यों इतनी ठठाकनी हो रही है। तू का प्रसपुन मैं कुचकी लगा लेगी और हो जायगा तेरा शुभ स्नान।”

“मैं क्यों कुचकी लगाने लगी ? मैं भी दुलहान बनकर बैठूँगी।”

“तेरे शिष्ट आग्र की समिधाओं से कौन हदन करेगा ?”

‘हम जो ठगी पण्डित को मुलायमे। मेरे दिवाह मैं भी एक नूतरे को पान-ताम्बूल में करने की रीति का पालन किया जायगा। बैसा तेरे दिवाह पर हुआ था।’

“तब तो तुम्हें भी मेरी तरह बिनाह मे पहले सत जिन तब दूध और बेला रखकर रटना होगा। मरि तब तू भी घर के माथे पर फूल रखना और तब घर इन फूलों को तरे कंधे पर रख देगा और जब अग्नि-देवता के सम्मुख विवाह-सम्पन्न हो लेगा तो तेरे घर में भी घर-बसू के निर पर बैसे ही फूल और बाकल बारे जायेंगे जैसे हमारे घर में।”

‘नाकल क्यों जाते हैं ?’

‘बायली के साथ सम्बन्ध बाढ़ने के साथ।’

‘तुम्हें कुछ भी मान्य नहीं।’

‘तो तू क्या ?’

“य” भी एक प्रश्न का आशीर्वाद होता है कि जैसे बायली घातकी है जैसे ही कपू भी कुचकी बने।” बायली ने अपनी बाँहें सुनवाय के यने में हाथ दी।

वे देवदन्त के घर पहुँची, ता सुबह पुन्य का परम्प हवाकर भौंछने लगा था। माँ ने उनका स्वागत करते हुए कहा, ‘आओ, बायली ! आधा, सुम्राप।’

‘माँ, सुम्राप उलहना देने आर है कि तुम उनके रिवाज में क्यों नहीं आर ?’ बायली मुस्कधार।

‘मैं कैसे आनी।’ माँ ने रागधर कहा “कह तो मनमोहि कि मरने मरने बन मर। मैं ने सुना है कि रामज भी विवाद में मरिमनिन नहीं



हुआ था।”

आप्ली बोली, “विवाह तो रुकता नहीं। कोर आये पाहे न आये। यत्ना काका तो सब से यही कहते फिस्त हैं कि मलना की पिता की आग अभी ठण्डी भी नहीं हुई थी और इन लोगों को अगुल का विवाह रवाने को रुक गई।”

“वह ठीक कहते हैं।” मों लौल्ले-लौल्ले पेहल हो गई।

बुन्ताप मों का सिर रवाने लगी। आप्ली उठकर मों के लिए पानी लेवी आद। वह मों ५ मुँह में पानी की बूँदें डाल रही थी कि शोमा भी आ गई।

शोमा के हाथ में चाय का गिलास था।

आप्ली ने उलहना दिया, “शोमा, तु बुन्ताप के विवाह पर नहीं आद थी, तो तेरे विवाह पर क्यों आयगा?”

“मैं मों को देखती था विवाह पर आती।” शोमा बोली, “मों, चाय पी लो।”

‘मेरा मुँह बहुत कड़वा हो रहा है, मेरा। मेरे प्राण निकलते भी नहीं।’ मों की आवाज मधुर हुई थी। बड़ी कठिना से मों चाय पीने के लिए यकी हुई।

फिर देवचन्त के बारे में बातें चलती तो मों ने कहा “उसे कभी मों को देखने का ध्यान नहीं आता।”

बुन्ताप बोली, “कभी तो वह मों से मिलने आयगा। जिस मों का वृष पिता है, उसे वह मुला बोड़े ही रेगा।”

“देवचन्त के मुल पर तो सदा माण्ड माता का नाम रहता है।” आप्ली मुस्कुराई।

“माण्ड माता पहले है या बकरी। शोमा ने गम्भीर होकर कहा, “पर पुलिस हमारा देवचन्त को ताक में रहती है, मों। पुलिस उनका पता नहीं चला लगी और इनी काण्ड बाधयण बाधेगा की बरसी हो गई।”

‘निर्दोषगुल का बाधयण से तो पिता छूटा।’ आप्ली ने पूरा

पूर्वक कहा ।

अब तीनों साइलियो बसा मर्ह, तो बीरद बहराया हुआ माँ के कमरे में आया । माँ ने गम्भीर मुद्रा में कहा, 'मैं ने उन्हें कुछ नहीं बताया । तुम बचपना नहीं ।'

बीरद की जान-मै-काय आर धीरे उस ने समझकर कहा, 'माँ मैं ने समझा था कि तुम ने उन्हें बताया होगा ।'

माँ बोली, 'मैं सब समझता हूँ । दीवार के भी कम होते हैं देखा । कभी तो मुन्हायी बरानी क्यों तक पहुँची ? इस कहानी को बरदा-बरदी रखम करो, देखा ।'

# इकतीस



उत्कल काका की भौंपड़ी के सामने छेम्ब के फूल  
कस्तुर की झाप लगा रहे थे ।

काका 'तो घर से बाहर ही नहीं निकलते थे ।  
जो कोई भी उन से मिलने आता, मल्ला की मूसु से  
सम्बन्धित बातें सुनने के लिए तैयार होकर ही  
आता । कुछ दिनों तक तो लोगों का यह विश्वास

रहा कि उम्म स्का ही काका के मस्तिष्क से यह बात मिटा देगा, पर  
समय था कि यह घटना काका को मानसिक रोम के समान भीतर ही-भीतर  
साजे वा रही है । बात करके काका भी की मइस निकल लेते हैं तो काका  
ही करते हैं, यह साबकर सामने बैठा व्यक्ति कई बार पुछनी कहाली को  
पूरे ध्यान से सुनने का मन करता ।

अब तो माघ का महीना था । मल्ला कारिजन में मय या इत  
जल को पोंचवों महीना आ रहा था । दो माघ से कुछ दिन ऊपर तो अजुल  
के विवाह को भी हो गये थे । कभी काका यह उलहना देने समते कि  
दिनोंगमुख के लोग इतने कजोर हो गये हैं कि एक निरपराध बच्चे की मूसु  
से भी उनके धन में श्रुं नहीं रेंगी; कभी वह गाँव-बूझा नीलमणि और लम्पी  
तीर्थ-बाबा की डींग मारने वाले कज्याश मगव की चिन्ती-दिटी अकल पर  
हैलने समते । ऐसा भी क्या संकर आ रहा था कि अजुल और सूनठाप का  
विवाह एक बष के लिए भी न कर सका । जब स्वयं मल्ला का बापू मल्ला  
की मूसु का शोक मनाने से विमुख हो गया, तो दिनोंगमुख के अन्य मीठी,

अरुमिया और नेपाली लोगों से क्या धारा की जाती ? आदिबन में मरुना मय और अर्द्धिक में सदा के सम्मल जाती बिहु मनाया गया, जैसे गाँव में जो दुस्तर पटना न दूर हो । आदिबन की अन्तिम तिथि से आरम्भ होता है जाती बिहु, जब लोग धरों और खेतों में गीप लगाते हैं । अर्द्धिक की प्रारम्भिक की विशेष रूप से मरुली और गोहल्ली में दिये लगाते हैं । मरुली में अनाम मय रहता है, गोहल्ली में गान-बैसा बँधे रहते हैं । मरुली हो इस परम्परा का कि जाती बिहु में बोहाग बिहु के सम्मल नाच-गान नहीं होता नहीं तो मरुना की मृत्यु के परन्तु जाती बिहु मनाने की बात और भी सत्य होती । जब जाती बिहु मनाया जा रहा था, तो मैं दूर खेती में निष्कृत गया था । खेतों में अगमगाते दीप देल कर मय हृदय बल उठा था । शाली और बाऊ धान में बालियों निष्कृत रही थीं, जैसे ये बालियों बर रही हों—हम अगहन-भूल में तैयार होगी ! टोक ही तो था, शाली और बाऊ धान अगहन ही में तो क्या था । दूर से मैं ने अगहन को भी धान बरसे देखा था ।

अमुल अर्द्धिक लौक को बाबा के पास आ बैठा तो बाबा न छुटत ही कहा, “ये लोग माप बिहु का स्वाहार मी कैसे रोक सकते थे ?”

“टोक देते तो क्या कुछ था ?” अमुल अर्द्धिक ने मग्गीर होकर कहा, “पर जब ये लोग जाती बिहु मनाते से न छले, तो माप बिहु मनाने से देने रलते ? बात तो तब थी कि अगहन का पिबाह मी एक साल के लिए रोक दिया जाता । जब बीलमाष ने ही यह बात न सोची, तो अलीमिंगा बलों को कभी डोर दिया बाप और बलमा बलों का मी क्या अदपप गिना बाप ! चित्तानिया के नेपाली तो न जाती बिहु मनाते हैं, न माप बिहु और न बोहाग बिहु ।”

“जाती बिहु मनाकर लोगों ने मरुना की मृत्यु का उगवा उदहार नहीं किया था किना माप बिहु मनाकर ।”

“पर कैसे, दादा ?”

“प्रतिपद के सन्तान इस बार मी पूत की अन्तिम तिथि की रात के

## इकतीस



एकाला काका की मीठी की सामने सेमल के फूल  
बसन्त की छांव खगा रहे थे ।

काका 'तो घर से बाहर ही नहीं निकलते थे ।  
जो कोई भी उन से मिलने आता, मन्ना की मृत्यु से  
सम्बन्धित बातें सुनने के लिए तैयार होकर ही  
आता । कुछ दिनों तक तो लोगों का यह विचार

रहा कि समय स्वतः ही काका के मस्तिष्क से यह बात मिला देगा, पर  
लगता था कि यह करना काका को मानसिक रोग के समान भीतर ही-भीतर  
आये जा रही है । बात करके काका की भी माया निकल खेते हैं तो काका  
ही करते हैं, यह सोचकर सामने बैठा व्यक्ति कई बार पुछनी काका की  
पूरे ध्यान से सुनने का कल करता ।

अब तो माघ का महीना था । मन्ना आम्बिक में मर चुका था; इत-  
नाल को पोंचसों महीना का रहा था । दो मास से कुछ दिन अगर तो अश्विन  
के विवाह को भी हो गये थे । कभी काका यह उलहना देने लगते कि  
दिवौगमुक्त के लोग इतने कटोर हो गये हैं कि एक निरपराध बच्चे की मृत्यु  
से भी उनके कल में रूँ बही रेगी; कभी यह गोंब-बुड़ा बीसमधि और लम्बी  
तीर्थ-यात्रा की डींग मारने वाले काकाया मगत की पिछी पिटी अस्त पर  
हँसने लगते । ऐसा भी कभी लँकट आ रहा था कि अश्विन और सुनताप का  
विवाह एक बार के लिए भी न कर सका । जब स्वर्ग मन्ना का नाम मन्ना  
की मृत्यु का शोक मन्ना से विमुक्त हो गया, तो दिवौगमुक्त के अन्य मीठी,

अरुमिया और नेपाली लोगों से क्या आशा की जाती ? आरिक्म में मन्त्रमा  
 मय और अतिथि में सदा के समान जाती बिहू मनाया गया जैसे गाँव में  
 चोर दुराद पत्रमा न दूर हो। आदरन की अन्तिम स्थिति से आरम्भ  
 होना ही जाती बिहू, बन लाग धरें और सेवा में दीप जलाते हैं। अतिथि  
 की प्रत्येक को अरुण रूप से मण्डी और गोहल्ली में दिया जाता है।  
 मण्डी में अनाम मय रहता है, गाहल्ली में गाय-बैल बंधे रहते हैं। मला  
 हो इस परम्परा का कि जाती बिहू में बोहाग बिहू के सम्मान नाच-गान नहीं  
 होता नर्दी तो मलना की मृत्यु के परस्पर जाती बिहू मनाने की बात  
 और भी लज्जती। जब जाती बिहू मनाया जा रहा था तो मैं दूर ऐलैं में  
 लज्जत गया था। सेती में बगमगात दीप देत कर मय हृदय बल उठा  
 था। शाली और बाऊ बान में बालियों विफल रही थीं, जैसे ये बालियों  
 बंद रही ही—इम अगहन-पूज में तैयार होगी। ठेक ही तो था शाली  
 और बाऊ बान अगहन ही में तो क्या था। दूर से मैं न अगुल को भी बान  
 करते देखा था।

अष्टुल आदिर लौक को बाबा के पास आ बैठा तो बाबा ने झूठे ही  
 कहा, "ये लोग माय-बिहू का स्वाहार भी कैसे ठेक सकते थे ?"  
 'ठेक बैठे तो क्या कुछ था ?' अष्टुल आदिर न गम्भीर होकर  
 कहा, "पर जब ये लोग जाती बिहू मनाते थे न टले, तां माय बिहू मनाने से  
 होने टले ? जब तो वन थी कि अष्टुल का विवाह भी एक लाल के लिए  
 ठेक दिया गया। जब नीलमणि न हो यह बात न सोची, तो आनीसिमा  
 पाला को रुपो दीया बाय और बलना बलों का भी क्या अ-पय गिना  
 बाय ! पितासया के नपाला तो न जाती बिहू मनाते है, न माय बिहू  
 और न बाहाग बिहू।"  
 "जाती बिहू मनाकर लोगों ने मन्त्रमा की मृत्यु का उतना उपहास नहीं  
 किया था जितना माय बिहू मनाकर।"  
 "पर हेम, दादा !"  
 'मन्त्रमा के उतना हम बार भी पूज की अन्तिम नाच का बोंत के

मयपुत्र/

पॉन्च उखल गाइफर और उनके बीच लकड़ी का डेर लगाकर माघ बिहु के उखलास में लड़के-लड़कियों ने वहीं रात गुजार दी थी और अगले दिन—”

“यह प्रथा तो पुरानी है, दादा !” अम्बुल कादिर ने टोक कर कहा।

“पुरानी तो है, पर हम लोगों ने मलना का शोक मनाया होता तो सदा के समान इस वय भी लकड़ी के उस डेर को अगले दिन अर्थात् माघ की प्रतिपदा को प्रातः चार बजे नीलमणि के हाथ स अम्य न लगवाइ होती !”

“अमा लगाने के लिए वे लोग और किस से कहते ! सभी लड़के-लड़कियों ने अमा को प्रणाम किया था। लड़कियों आग तापती रहीं और लड़कों के वंगल बेस्वती रहीं, टांग ! लड़के-लड़कियों के अतिरिक्त बड़े लोग भी तो वे !”

“मला माघ बिहु की आग को ‘मेची’ क्यों कहते हैं ? इसे तापना शुभ क्यों माना जाता है ?” रत्नाल ने गम्भीर होकर कहा, ‘आग तापने और वंगल से अवकल पाकर हर कोइ अपने-अपने घर को सौट आया होगा। अब यह तो असमिया लोगों का ही त्योहार है। नेपाली भी ‘मेची’ को शुभ मानते हैं। सुखलमान तो दूर से ही इसे बेल् लेते हैं !”

अम्बुल कादिर पहले तो चुप रहा। फिर वह कहता चला गया, “माघ बिहु को तो मैं बुढ़ नहीं कहता। मीठी नेपाली और सुखलमान भी इस में शामिल हों तो क्या बुढ़ है ? मेची तापने के बाद वे भी घर-घर माघ बिहु के उखलास में मीठे पकवान खाने जाएँ, तो क्या बुढ़ है ? वे भी पटार में मैलों की लड़ाई देंगे, तो कोई बुढ़ बात नहीं। वे भी माघ बिहु की पुरानी में नये कपड़े पहन सकते हैं, पर तबाल तो यह है कि मलना बैल प्यारा बच्चा कहते नाग के डंसने से मर जाय और उसका नाग मौ दुलु का सव बुढ़ मुलाकर माघ बिहु की मेची जलाता फिरे, इस से क्याही अप्रलोठ की क्या बात होगी ?”

काध कुछ न बोले। अम्बुल कादिर सोचने लगा कि देंगे अब क्या क्या बात कहते हैं।

माघ का महीना तो 'आहु' जान बोलने का महीना था। क्या जानते थे कि आहु जान की पगड़ी नहीं रोपी जाती इसे तो जेट में हल पलाने के परचात्र जैसे ही वो दिया जाता था। क्या यह भी जानते थे कि आप आहु जान बोया कामगा ता कहीं काकर माघ में कसा जायगा। माघ बिहू और बोहाग बिहू के बीच में यह पार माघ की काबजि आहु जान के बोलने और काटने का ऋतु थी। अशुभ कबिर ने हँसकर कहा "पुर क्यो हो गये, दादा ! पेंशन ले आये थे ! तुम्हें तो घर बैठे पेंशन का जाती है। हम तो घर में नहीं बैठ सकते। आबकल आहु जान बोलने का काम खोरी में चल रहा है।"

"घर माघ से तो मैं पेंशन लेने की नहीं गया।"

"क्यों, दादा ! पेंशन फिंगी के पास क्यों छोड़ते हो ?"

"मल्ला की मायु ने मुझे उसाहरीन कर दिया है अशुभ कबिर !"

"तो क्या पेंशन छोड़ दोगे, दादा ! हमारे लिए ही लाओ। फिर हम भी आहु जान नहीं बोवेंगे। घर बैठे पेंशन मिलती रहे यह तो बड़ा आनन्द है। ये लोग फिंगी को बुरा क्यों कहते हैं ! दादा, हमें भी पॉन्टनी क्यों नहीं ले गये थे ! हमें भी पेंशन मिलती। क्या तुम्हारे नार्मन साहब हमें नौकरी न देते ?"

"क्यों न देते ! वे तो बहुत अच्छे थे। मैं तो उनके उपचार से लडा हुआ हूँ।"

"आनन्द से पेंशन पा रहे हो दादा ! शहर हम हैं कि आहु जान बोलने के साथ-साथ बाऊ जान बोलने की भी तैयारी कर रहे हैं। फेर ख बरखा है। हम से तो कमलानी ही अच्छा है उसे तो न आहु और बाऊ जान बोलने की पिन्ता सजगती है न शाली जान की ! उस का जान बना रहे, अशुभ में मजलिसों की कमी नहीं।"

"अपना अपना काम है।"

आहु जानते थे कि आहु और बाऊ जान में यह अन्तर है कि जहाँ आहु बोलने का पार में बरखा है वहाँ बाऊ बहुत देर से पछता है। आहु के अशुभ।



लिय केवल पार-पौन महीने चाहिए—माघ में बोवा और अष्ट-आषाढ़ में फट लिया, पर बाक तो बहुत बीलम-बालम था। माघ में बोते थे आहु के छाप-छाप और अगहन-पूस में अटते थे—पूरे आठ-बी महीने बाद। अगहन-पूस ही में तो शास्त्री की फसल अटती थी। शास्त्री तो ऐसे बैराग्य से ही शुरू हो जाती थी, जब इसकी पनीरी लगार्द अटती थी। सावन में शास्त्री की पनीरी खेतों में रोपी जाती थी और अगहन में शास्त्री अटती जाती थी। यदि पनीरी लगाने के तीन महीनों की गिनती न की जाए तो रोपने और अटने के बीच तो बड़ी धार-पौन महीने लगते थे। कभी यह भी जानते थे कि आहु और शास्त्री में इतना ही अन्तर है कि आहु रग में लाल होता है। बाक बाग भी रग में कुछ-कुछ लालिमा लिये रहता था। जिस खेत में एक बर्र शास्त्री लगायेंगे उसमें प्रतिवर्ष शास्त्री ही लगायेंगे, दिवांगमुल में ऐसा ही होता था। कभी-कभी आहु और बाक को उगनी अपनी अपनी जमीन में न बोकर किसी शास्त्री वाली जमीन में बोकर देलते थे, पर आहु और बाक वाली जमीन में लाल पत्तन करने पर भी शास्त्री उगनी अच्छी नहीं होती थी। छिन्नी उस जमीन पर बहाँ वह हमेशा से रोपी जाती थी।

“बहाँ तक धान की फसलों का सम्बन्ध है,” राखल बोला, “ये तीन ही फसलें हैं—आहु, बाक और शास्त्री। इन में भी आहु और बाक मले ही एक छाप इसी माघ महीने में ही बत हैं, पर जब आहु को बेट आषाढ़ में अटते हैं तो बाक की बालियाँ पकनी तो बूर रही जनी लगनी भी आरम्भ नहीं होती।”

अम्बुल आदिर न हँसकर कहा, “अरे दादा, ये तो अक्लाह के खेप हैं—किसी को पहले पकये किसी को पीले।”

“यह तो तुम भी मानोगे कि बाक बीलम-बालम धार बीर बाल मही।”

“अरे दादा, इस में आदमी क्या करेगा ? तुम्हारे हाथियों में भी तो सप-के-सप एक-बैसे खेप नहीं होते।”

“बढ़ तो ठीक है।”

“सब अहसास का खेल है, दादा ! अहसास ने तो तरह-तरह के आदमी बनाये हैं। हमारे दिर्गोष्ण मुल ही को देख लो, एक आदमी से दूसरा आदमी कितना अलग नजर आता है।”

“आदमी कितने भी अलग अलग क्यों न हों, हमारे दिर्गोष्ण मुल में तो तीन ही जातियाँ हैं—नेपाली, मीरी और अछमिया, पर मुल्लामान तो अपने को अछमिया ही मानते हैं।”

अम्बुल आदिर ने हँसकर कहा, “तो तुम इन्हें ब्राह्म, बाऊ और शाली से मिला रहे हो ? इन में बाऊ तो मीरी ही हुए, दादा।”

“फिर तो तीन हुए, पर बाल की किन्हीं तो अनगिनत हैं, अम्बुल आदिर।”

“अरे हौं, दादा ! यह तो हम भूल ही रहे थे। ‘गोम्पी’ ‘अनकु अगा’, ‘रंगा ब्राह्म’, ‘गऊन पली’, ‘अगी बोला’, ‘अहमली’ ‘बहा’ और ‘बपा’—बाल की ऐसी-ऐसी न जाने कितनी किस्में हैं।”

“बर्नान्दी भी तो मल्लियों की किस्में गिन सक्ता है।”

“अरे छोड़ो, दादा ! तुम तो मजाक करने लगे। तुम्हारा क्या है—न बाल की किस्म, न मल्लों की बंजाल नस आ गई फेरान बैठे-बिठाये। साधन तुम्हारे कमीन लैमाले बैठा है और तुम्हें कोई किस्म नहीं लगती। उस से लेकर आधी कमीन तुम्हें क्यों नहीं ले छोड़ते, दादा।”

“तुम्हारे पास अपनी कमीन क्या कम है ? इन करने का क्या रह हो !”

“नीलमणि तो कहता है कि दिर्गोष्ण मुल में ही उसकी अमी है, दादा।”

“तो तुम भी दिर्गोष्ण मुल को ही क्या मान बैठे ? अच्छा विचार है।”

जैसे ही हो रहा था। अचानक ने उठकर लालटेन लगाई, अम्बुल आदिर ने गम्भीर होकर कहा, “पेशानी भी क्या बीब है। लालटेन की तो हम इतनी इदर करते हैं; पर अहसास किन्हीं ने दिन के लिए जो इतना बड़ा

सूख बनावा है, उसके लिए तो हम अल्लाह मिर्चों के शुष्कपत्र नहीं होते ।”

इतने में आभार और साधन आ निच्छे । आभार ने छूटते ही कहा, “हम एक शुभ समाचार लाये हैं, अन्ध । मीठी पंचाफत ने यह निर्देश किया है कि इस बय मलना के शोक में चैत की दबूर-यूवा बन् रखी जाव और आगे बलकर आशियन की दबूर-यूवा के अकसर पर, बय मलना की मृत्यु की पहसी बरसी पड़ती है, दबूर-यूवा सब के लिए लोहा ही बन ।”

अन्ध कुछ न बोले । अन्धुल आदिर ने गम्भीर होकर कहा, “यह तो अन्ध प्रेक्षा है, हमारे अल्लाह मिर्चों को भी पसन्द आवेगा ।”

## वत्तीस



“तुम कभी-कभी इतने उदास क्यों नजर आने लगते हो ?” सुस्ताप ने पास आकर कहा ।

‘मैं सोचता हूँ कि रामलाल बाबा ने कितना बाधू कर डिलाया है । पहले तो कभी ऐसा नहीं हुआ था । मल्ला की मृत्यु का बोझ अब तक झकने का का ही होते आये हैं । वह ठीक करते हैं कि मल्ला की ही होती आये हैं ।’ अतुल कहते-कहते

‘तुम्हारी ये बातें कभी खतम भी होंगी ! मेरे तो जान पड़ गये हैं मुनते-मुनते । वह ठीक है कि मल्ला कासे नाग के डसने से मर गया था । वह भी ठीक है कि हमारे विवाह की विधि शीघ्र निश्चल आई थी । सारी दुनिया विराह करती है । हम ने भी कर लिया तो हम से क्या अपराध हुआ ?’

‘बाबा तो यही करते थे कि हम मल्ला की जिज्ञा की रात टबड़ी हो जाने देते ।’

‘तो बाबा को करना चाहें तो कर लें ।’

‘तुम तो साल निर्व्यवस्था बनी जा रही हो । हरि-हरि हे माधव !’ सुस्ताप जानती थी कि अतुल ने उसे पिछले के लिए ही ‘हरि-हरि हे माधव’ की याद लगाई है । यदि वह मगत भी की लड़की है तो इसका वह अर्थ तो नहीं कि उसके सम्मुख मगत भी के प्रिय बोल का उपहास प्रत्युत ।

सूरज बनाया है, उसने लिए तो हम अल्लाह मिर्चों के शुभगुणार नई  
होवे ।”

इतने में आचार और लाभ का निकले । आचार ने छूटते ही कहा  
“हम एक शुभ समाचार लाये हैं, काश्म । मीठी पंचामृत ने यह निर्णय  
किया है कि इस वर्ष मलना के शोक में बैठ की दबूर-पूजा बन्द रखी जाए  
और आगे चलकर आदिबन की दबूर-पूजा के अक्सर पर, जब मलना की  
मृत्यु की पहली बरती पड़ती है, दबूर-पूजा सत्र के लिए खोल दी जाए ।”

काश्म कुल न बोले । अश्वपुल आदिर ने गम्भीर होकर कहा, “यह तो  
अशुभ फैसला है, हमारे अल्लाह मिर्चों को भी पसन्द आयेगा ।”

## वत्तीस



“तुम कभी-कभी इतने उदास क्यों नजर आने लगते हो ?” सुमारा ने पास आकर कहा ।

“मैं सोचता हूँ कि जल्द काका ने कितना काबू कर दिया है । पहले तो कभी ऐसा नहीं हुआ था । मसना की मृत्यु का बोझ अब तक झेले काका ही बोते आये हैं । वह टीक करते हैं कि मसना की ही बोते आये हैं । वह टीक करते हैं कि—” अगुल करते-करते

किता की छाँट कभी टपड़ी भी न टूट भी कि—” अगुल करते-करते

“तुम्हारी ये बातें कभी कलम भी होंगी ? मेरे तो बान पक गये हैं मुनवे-मुनवे । वह टीक है कि मसना कासे भाग के इतने से मर गया था । वह भी टीक है कि हमारे विवाह की तिथि शनि निकल आरंभ भी । तारी बुनियाद बिनाह करती है । हम ने भी कर लिया तो हम से क्या अपराध हुआ ?”

“क्या तो यही करते थे कि हम मसना की किता की छत टपड़ी हो जाने देते ?”

“तो क्या को करना चाहें तो कर लें ।”

“तुम तो साथ निर्य कनी का प्यो हो । हरि-हरि हे माधव !” सुमारा जानती थी कि अगुल ने उसे विज्ञान के लिए ही ‘हरि-हरि माधव’ की धार लगाई है । यदि वह मगल भी की लक्ष्मी है तो इसका अर्थ तो नहीं कि उसके सम्मुख भगत भी के प्रिय बोल का उदास प्रसन्न ।

ठंडाया था।

“पैत की टबूर-यूवा मीरी लोगों ने इत बय बन्द रखी।” अगुल ने गम्भीर होकर कहा, “पहले तो कमी ऐसा नहीं हुआ था।”

“तो हम क्या करें?” सुनताप ने नाक-मौं पकाइ। “और यदि आरिक्न की टबूर-यूवा का द्वार अपने को खोल के लिए खोलने का फैसला भी हो गया तो क्या हुआ।”

“हम समझती हो यह तात्पर्य बात है। अब जिसोंयमुल वाले एक मुझी होकर रह सकेंगे।”

“मैं यह वही मान सकती।”

“यह तात्पर्य-सी बात भी तुम्हारी बुद्धि में क्यों नहीं आती।”

“मीरी लोग अपने को राजसं मानते हैं और असमिन्ना लोगों को खे खेकर से भी धरिया समझते हैं। नेपासिनों को वे खेकर का दरवा बैठे हुए भी बतलते हैं। उस दिन कुना नहीं था, वाचन मीरी क्या बन्द रहा था।”

“पिछली वाली को मुता देना ही अच्छा है।”

“भरं बल्ले भी कौन-सी हैं जिन्हें बन्द रखा था।”

“यह बात तो कब की बात हो गई कि वाचन मीरी ने बनसिंह को गले धूरे की गाली दी थी।”

“और यह भी उस ने बनसिंह का सिर तोड़ डाला था।”

“उतका था तो कम का मर गया।”

बुद्धारा ने मुँहझाकर कहा, “यह कहना सहज नहीं। उतके सिर पर कमी एक पट्टी बँधी है।”

“नवे बापेगा ने बनसिंह को न मइयाया होता, तो मुझमा रिबतमर कमी न जाता।” अगुल गम्भीर नजर आ रहा था।

“कमी यह भी सोचा कि बनसिंह का क्या दोष था। यह तो कोई भी कर सकता है कि बैठे बेकर माटी लपेट ले। बनसिंह ने भी यही किया। उस न एक मीरी की माटी खापी नहीं केवल आधी लपेट ली थी। यह कौन-सा अपराध था।”

“यही तो मैं भी कह रहा था ।”

“तो क्या अब नेपालियों के सिर टूटने बन्द हो जायेंगे ?”

“नेपालियों की बचलत तुम ने कब से आरम्भ कर दी ?”

“मीरी सोचते हैं कि असमिया और नेपाली की मिली मगत है और दोनों मिलकर उन्हें दिवॉंगमुल से लदेझना चाहते हैं ।”

“असमिया और नेपाली भी तो मीरियों को अपना शत्रु मानने लगे थे ।”

“तो तो वे अब भी मानते हैं और मानते रहेंगे ।”

“बह तो न कहो ।”

“तुम बच हलकी-सी बात पर रीक गये कि एक बार मीरियों ने अपनी दबूर-यूबा नहीं मनाई और आगे को दबूर-यूबा में खब को आने की आज्ञा दे दी ।”

“अब वे हाथ-पैर बाँधकर छिपी को ‘येगुम’ में नहीं हलेंगे, बेठे मलना को डाल दिया था ।”

“तो क्या इस से आपस की शत्रुता मिट जायगी ? यह सब गिलावा है । पल्लात कब भी मोले हैं वो हल्की बातों में आ गये ।”

“पल्लात बाका तो स्वयं मीरी हैं । उनका प्रभाव तो सभी पर है । क्या मीरियों से यह बात छिपी हुई है कि असमिया और नेपाली कब पर जान देते हैं ?”

“छाफन और बनमिह में जो शत्रुता है, वह तो इस से समाप्त नहीं हो गई । और यह भी क्यों मूल रहे हो कि नये दारोगा के साथ मिलकर छाफन मीरी बाबू को चौब-बूजा की पदवी से हटाकर आचार मीरी को गौब-बूजा बनाता चाहता है ।”

“हमें शान्ति रखनी पारिए ।”

“यह शान्ति नहीं कायदा है ।”

“कभी आग से भी आग बुझी है ? आग तो पानी से ही बुझी है ।”

“अपना शत्रु अपने पास रखो । मैं ने तो बड़े बड़े हानियों को भी



आम-बसुला होते देखा है। साधन मीठी तो सब से यही कहता फिट्टा है  
 दिसाँगमुक्त का गोंव-बूझा अलमिया नहीं मीठी होना चाहिए। और बात  
 हुई मला।”

“और यदि बापू स्वयं ही यह बात मान जायें या मैं बापू को पछी  
 कर हूँ गोंव की मलाई के लिए?”

बुद्धाच ने हँसकर कहा, “खुश गिर गया गड्डे में, वास्ता—फिट्टा  
 टक्का स्थान है।”

“बड़ डिक्कड़ी। बड़ डिक्कड़ी। मेरी बात तो तुम समझोगी ही नहीं,  
 बुद्धाच।” अचल न उठकर अपनी पत्नी का सिर थपथपाया, “मैं कहता  
 हूँ, शान्ति बड़ी कस्त है। शान्ति से ही महाकत हाथी को चलाता है।  
 शान्ति से ही नावरिया बाव लेता है। तुम तो मगत की की लड़की हो,  
 शान्ति की बात तुम से अधिक कौन समझ सकता है।”

“मरि और शान्ति तुम अपनी ही कम-गुदनी में छिपाकर रखो।”  
 बुद्धाच ने हँसकर कहा, “बड़ी-बड़ी बातें केवल कहने को होती हैं।”

“पन्नास अन्न ने मीठी, अलमिया और नेपाली को एक-दूसरे के समीप  
 लाने में कैसा काम कर दिया।”

“तो क्या मीठी वह प्रकार करना छोड़ देंगे कि नेपाली लोगों ने रूप  
 के बन्ने पर तो इस प्रदेश में अधिकार कर ही रखा है। अब वे मीरियों की  
 मांही स्पर्श कर उन्हें बेचर करने पर तुले हुए हैं।”

“मीठी ये बातें स्वयं बोले ही कहते हैं।”

“तो और कौन करता है।”

“उम्मे मुक्त से शायदा बोल रहा है।”

“कौन दारोगा? भायक्या की तो मायुली में बरसी हो गई।”

“नायक्या गया, गोपीनाथ जाया। क्या अन्तर बढ़ता है? पुलिस  
 तो पुलिस है। फिन्गी की पुलिस तो बही करेगी को फिन्गी जाहेया।”

“फिन्ग में ऐसी शक्ति है कि फिन्गी से उबर ले।”

“देवदन्त को भाव कर रहा है, वह तो फिन्गी से क्षमा नहीं।”

“देवचन्त तो मागा-मागा छिछा है ।”

“देवचन्त क्या कर रहा है, यह ज्ञातों अधिक जानती है ।”

कूस्ताप ने मुँह बनाकर कहा, “आखी मछुए की लड़की ही छरी, पर उसे बदनम्न क्यों करते हो ?”

कूस्ताप जानती थी कि देवचन्त के लिए अतुल के हृदय में सम्मान की भावना है । यह वह भी जानती थी कि देवचन्त का पय अतुल का पय नहीं है अतुल कभी ऐसा काय नहीं करेगा जिस में उसे देवचन्त के समान द्विर कर रहना पड़े इसका कूस्ताप को पूरा विश्वास था ।

“पहले तो मुझे देवचन्त से शिष्यत्व की कि यह तिसौगुण की बात मुझकर बलबला की बात क्यों सोचता है और क्या—”

“और क्या तुम देवचन्त के मरु बने का रहे हो ?”

“तुमो तो, क्या से उठ ने मामुसो में कार्य आरम्भ किया है—”

नारायण भी मापक्य है । वह बड़ता होगा कि देवचन्त बाद रखेगा ।”

“देवचन्त को तुम इतना गुप क्यों छनमली हो ?”

“तुम भी तो उसे बहुत अच्छा नहीं समझते । तुम ने ही तो कहा था कि विस्तोत और कम बाला रस्ता तुम्हें निककुल पसन्द नहीं है । देवचन्त का वा बही रस्ता है । चाहे वह बलबला में रहे चाहे मयमुनी में ।”

“उपाय असल असल हो सकते हैं, पर लक्ष्य तो एक ही है ।”

“तुम वा क्या करते हो कि क्या तुम सो जाते हो तब भी स्नेह की भावी तुम्हारा पीछा करती है, तुम्हारे साथ खोती है रेत की भावी । क्या वह बात भूल गये ?”

“ना तो मैं क्या भी कहता हूँ ।”

“मछुए का काम है मछुए-पकड़ना, किसान का काम है मैती-फिराली और तिराही का काम है लड़ना । देवचन्त तिराही हो सकता है, पर तुम तो किसान हो ।”

पर वे पोकर के किनारे उड़लने हुए अतुल और कूस्ताप बेर तक बातें

करते रहे। कम तो स्यौंदन हो रहा था, यही तो गाय बुढ़ने का समय था।

“गाय मैं बुढ़ लूंगी।” सुनताप मुस्कुराई।

“अपना रूप तो बेसो।” अतुल ने हँसकर कहा, “बिन पूरे हो रहे हैं और बढ़ती है—गाय मैं बुढ़ लूंगी।”

सुनताप लजा गए। पोस्टर में खड़ी हुई बत्तलों बें-बें कर उठीं, बैस बे मी अतुल के साथ सम्मिलित होकर सुनताप को घेड़ रही थीं।

अतुल ने प्रसंग बदलते हुए कहा, “नये दारोगा गोपीनाथ, निताप्रसाद और दिव्यश्याम का शुट बन गया है। तीनों ने मिलकर बौध्दी मचा रखी है। बेगार के मारे दिवंगमसुल का नाक में दम छा गया है।”

“तुम अकेले क्या कर सकते हो?” सुनताप ने बसपूर्वक कहा, “मैं बढ़ती हूँ, तुम इन बत्तों में न पड़ो तो अच्छा है।”

“मैं अकेला नहीं हूँ। राखाल काध मेरे साथ हैं, तो समझे साथ दिवंगमसुल साथ है। एक बीघ बे हैं बो लेत में बोये करते हैं, फल उगाती है, बासियाँ पकती है, फल बढ़ती है। एक फल बढ़ है बिसे मये बिवायों को फल करेंगे। नये बिचार भी नये बीघों के समान बोये करते हैं।”

सुनताप बत्तलों के समीप खसी गई। एक बार फिर बत्तों बें-बें कर उठीं, बैस बे अतुल की बात दोहरा रही थीं। सूरज की किरणों पोस्टर के कल पर मिला-मिला रही थीं। बत्तलों के ठहरने से ठठठी हुई हिलारें बढ़ी मसी प्रतीति हो रही थीं। सुनताप ने पलटकर कहा, “तो अब बाकर दूध बुढ़ सो। देखते नहीं, सूरज नारिकल से मी लेंवा उठ गया।”

## तेतीस



मिली खिलखिलाकर हँस पड़ी, जैसे नीले रंग की गुड़िया लबीच हो उर्ली हो और धुल-माध में हो वह बोझ उठी हा।

नीर यह निर्णय न कर सका कि मिली आकाश पर सारंगों की पोंत को देखकर हँस रही है या उसे कोई मूली दूर बात याद आ गई है।

नीली फाक में मिली पड़ी-क्या की मापिका प्रतीत हो रही थी। मुनहरे घूँघरी पर लपेटे रिबन चमक रहे थे। नीले आकाश पर दूर सारंगों की पोंत नजर आ रही थी। सारा अपनी बन्धुमि को लोट रहे थे। यह तो ऐसी बात नहीं थी जिस पर एक छोटे-से लड़की को हँसो आने लगे। नीर जानता था कि मिली को उस की बातों में रस आता है। वह यह भी जानता था कि मेरेकल कालेज में धन-पौ-तक सिखा पाने के बावजूद मिली की बचि साहित्य में ही अधिक है। शिक्षा की महानता तो वह स्वीकार करती थी, पर साहित्य ही सब से अधिक उस के जीवन का अंग बन गया था।

शायद मिली को किसी लड़की की याद आ गई या वह देवदत्त के प्रसार हाने पर हँस रही है। नीर यह समझने का धन कर रहा था कि मिली क्यों हँस रही है। हँसने की क्या बात है। बाढ़ के अन्तिम दिन है, लौक का समय है। ब्रह्मपुत्र की निशान बगवाण पर हमारी मान का रही है। ब्रह्मपुत्र तो बहुत ही शान्त और गर्मीर बरकर आ रहा

लिली ब्रह्मपुत्र पर तो हैंसने से रही। नीलकण्ठ और बन्सी भाव पला रहे हैं। मैं लिखी के समीप बैठा हूँ। मेरी पुस्तक में वह रख लेती है और इस पुस्तक में तो उसके डेढ़ी भी कुछ कम लग नहीं लेते। उसके डेढ़ी तो कई बार पूछ चुके हैं कि कितना काम बाकी रह गया है। उसके डेढ़ी तो बपट से उम्ह करने के पड़पाती हैं। उसकी मम्मी इस प्रसंग को अविच महत्त्व नहीं देती। मिली भी आत्मा में आसाम रम गया है, वह हिन्दुस्तान के स्वतन्त्रता आन्दोलन के दिग्दर्शक भी नहीं है, पर वह गांधी जी के कहिसा बाले उपाय को ही अच्छा समझती है। कलकत्ता में वह बेबकान्त से कहा करती थी—‘मैं इसके शिलकुल बिकल नहीं हूँ कि हिन्दुस्तान स्वाधीनता पाँगे पर गांधी जी के उपाय से ही स्वाधीनता ली जाय, तो अच्छा होया।’ इसके उत्तर में बेबकान्त कहा करता था—‘तुम भी तो थोड़ा-सा प्रयत्न करो, बाहे किसी भी उपाय से रही।’ शायद लिली यह सचकर हैंस रही है कि एक हिन्दुस्तानी लड़के की मूर्खता का इस से बड़ा प्रमाण क्या हो सकता है कि वह एक बौद्ध लड़की से अपने देश को मुक्तकर हिन्दुस्तान के स्वाधीनता आन्दोलन के आगे बढ़ने में तहायता देने की आशा करे।

“क्या सोच रहे हो, नीरद !” लिली ने ब्रह्मपुत्र की लहरों से प्यार हटाकर कहा।

“एक मन्त्र सुनोगी लिली !” नीरद ने हैंसकर कहा, “यह ब्रह्मपुत्र का मन्त्र है।”

“बकर !” कहकर वह लिलालिताकर हैंस पड़ी, जैसे उसकी मोली प्रक और मुनहरी चूँपर भी उसका समर्थन कर रहे हों।

नीरद ने मन्त्रोच्चारण आरम्भ किया :

ब्रह्मपुत्रो महाभाग धान्तनु कुमनन्तः ।

अयोधं बर्मे सम्भूतं पापं सोहित्य मे हर ॥

लिली ने प्रसन्न मुद्रा में कहा, “यह तो कोई पुराना संस्कृत मन्त्र है। इस में क्या कहा गया है !”

“इस में कहा गया है—हे महाभाग्यवान् ब्रह्मपुत्र ! हे शास्त्रनु कुल  
नन्दन, हे अमोघ शक्ति के गर्भ से कम लेने वाले, हे लोहित, मेरे पाप  
हो ।” नीरद की मुष्कमुखा पहिले से अचिन्त गम्भीर हो उठी ।

लिली की प्रसन्नता की सीमा न रही । नीरद को लगा कि लिली इस  
मन्त्र पर नहीं, समस्त सत्सृज-कविता पर ईश खी है । वा शास्त्र लिली  
मुष्क पर ईश रही है । लिली की हँसी की उपेक्षा करते हुए उस ने कहा,  
“बैत मास में अस्मत् अष्टमी के दिन बंगाल और भारत में लाखों व्यक्ति  
ब्रह्मपुत्र में स्नान करते हुए इस मन्त्र का उच्चारण करते हैं ।”

लिली की हँसी अपने में ही नहीं आ रही थी । नीरद को लगा कि  
शास्त्र लिली उसके कानों पर ईश रही है । सफेद पांती, गहरे कमीच,  
नीरद को यही देश प्रसन्न था ।

“ब्रह्मपुत्र को लोहित क्यों कहते हैं, अमोघ हो ऐसा ” नीरद  
मुष्कपया ।

लिली हँसती रही । जैसे उसे यह जानने की तमिष की चिन्ता न हो ।  
पर नीरद के होठों तक आह बुर बात पीछे न दूर रही, “यह बहुत  
कुपती क्या है, लिली ! जब परशुराम ने पिता की आज्ञा से माता का चिर  
कुलहाड़ से धार इला, तो कुलहाड़ा उस के हाथ से छूटा ही न था ।  
कहते हैं उसकी माता का एक ब्रह्मपुत्र में गिरने से इसका कल उत्पन्न हो  
गया है । लोहित और रक्तम पञ्चमयी हैं । माता का बच करने के  
परशुर बहुत समय तक परशुराम का मानसिक संकुलन बाधित रहा ।  
ब्रह्मपुत्र के एक कुण्ड में महाकर ही परशुराम को शान्ति उपलब्ध हुई ।  
यह कुण्ड अब तक परशुराम कुण्ड कहलाता है ।”

बीलकपट भाव ऐसे-ऐसे माने लगा ।

ब्रह्मपुत्र कानों में, बध्मपूरी हृदय

आमी मय सोय आह

अद्वय नीमीषा, ब्रह्मपुत्र देवता ।

तामोष ही मानेता भार ।

सिली ने यन्मीर होकर कहा, “वह गीत तुम अपनी पुस्तक में अमर हो सकते हो, मीरा !”

मीरा मुस्कराया, “ब्रह्मपुत्र के स्नान-मग्न से भी कहीं अधिक मुझे यह असमिता कोकशीत अच्छा लगता है—‘ब्रह्मपुत्र के किनारे बरहमचूरी गाछ है वहाँ हम ईश्वर लाने जाते हैं। इसे बहाकर मत ले जाना, ब्रह्मपुत्र देवता ! हमारी इतनी भी क्षमता तो नहीं कि ताम्बूल से ही तुम्हारा सत्कार कर सकें !’ ब्रह्मपुत्र और बन-बीकन का कितना नहिमा सन्तुष्टन है।”

सिली ने हँसकर कहा, “जब ब्रह्मपुत्र में बाढ़ आती है, तो वह किसी की प्रार्थना पर धन नहीं धरता।”

“असम में घर-घर सुपारी के पेड़ नजर आते हैं। घर में कोई भी अपने उसे पल-ताम्बूल अवरण देते हैं। निर्बन-से-निर्बन व्यक्ति भी ताम्बूल का टुकड़ा तो हर अवस्था में मँद कर सकता है।” मीरा उत्तर की प्रतीक्षा में सिली की ओर देखने लगी।

सिली यन्मीर होकर बोली, “कवि कहता है कि हमारे पास ताम्बूल तक नहीं है जिस से ब्रह्मपुत्र का सम्मान किया जा सके; पर प्रश्न तो यह है कि यदि उसे ताम्बूल मँद कर भी दिया जाय, तो क्या ब्रह्मपुत्र अपनी बाढ़ की लहरों में बरहमचूरी का पेड़ बहा ले जाने का किन्तार छोड़ देगा ! मुझे तो इस किन्तार पर हँसी आने लगती है।”

“तुम प्रकृति को एक अन्वी और बहरी शक्ति मानती हो ?”

“मिलकुल !”

‘मनुष्य ने प्रकृति में अपना रूप ढालने का प्रयत्न किया है, वहाँ तक कि अपने अनुभव को ही नहीं उस ने अपने सहज ज्ञान तक को प्रकृति में रचाने की परम्परा को जन्म दिया है। अब तो वह परम्परा बहुत पुजनी हो गई। प्रत्येक देश की कविता में इसके उदाहरण मिलते हैं, जैसे प्रकृति भी मनुष्य के सम्मान सोचती हो, जैसे वह कभी मनुष्य पर लुप्त हो जाती हो, और कभी उस से कण्ठा लेने की बात सोचती हो; पर देवता तो यह है कि वह दृष्टिकोण कहीं तक ठीक है।”

नीलाचयन ने अपनी ही बात दोहरा दी, "मैं और बन्ती तुझों मार हैं।" यह कहकर वह हँस पड़ा।

बन्ती ने हँसकर कहा, "हमारा विश्वास है कि यह बात ब्रह्मपुत्र भी जानता है।"

नीरद बोलता, "अब कहो, तिली ! यदि तुम्हारी बात ठीक है, तो ब्रह्मपुत्र कैसे जानता कि बन्ती और नीलाचयन तुझों मार हैं ?" वह तिली की ओरों में झँकने लगा।

"जुना है नासाय दापोगा माझुली में बहुत अत्याचार कर रहा है, नीरद बाबू !" नीलाचयन ने प्रसन्न बदलकर कहा, "कुछ देरकर बाबू का भी पता है।"

"नया दापोगा गोपीनाथ दितांगमुक्त में कौन-सा कम अत्याचार कर रहा है ?" बन्ती ने गम्भीर होकर कहा, "पहले नासाय दापोगा, चिठा प्रसाद और बिष्णुराम का छुट था, अब इस छुट में नासाय के स्थान पर गोपीनाथ आ गया। तीनों ने चौकली मचा रखी है। देवार के मामले में तीनों एक हो जाते हैं।"

तिली बोली, "क्या हमारा बिष्णुराम भी साथों पर अत्याचार करता है ? चिठाप्रसाद के सम्बन्ध में भी मैंने कभी नहीं सोचा था कि वह स्वयं आदमी है।"

नीलाचयन ने शेष से बूझते हुए कहा, "चिठाप्रसाद को दण्ड ही रहने दीजिए। उसका 'अवधो-मृगा' छहमासी अस्थान' विल प्रचार बना, यह तो दितांगमुक्त में कभी जानते हैं।"

"कभी जानते हैं तो बेवकाल को ओं क्यों नहीं जानती ?" नीरद ने आश्चर्यपूर्वक पूछा, "वह क्यों चिठाप्रसाद की धरुता करती है ? दितांगे वय वय वह बीमार थी तो चिठाप्रसाद उसे पेशगी अलग भिखाता था और दवा-दारु सुलभ रही।"

"एक पर दवा दिलाकर चिठाप्रसाद को पर बुझम जाता है।" नीरद ने कहा और भी शेष आ गया, "यही तो उसकी चालाकी है। उस ने



पहले लोगों से कहा कि थोड़े-थोड़े रुपये हो, सब का इस सत्याग्रह में भाग होगा और लाभ सब में बाँटा जाएगा। किन लोगों ने रुपये दिये, पीछे उन्हें वैसे ही डरकर दिया गया। वे तो यही कहेंगे कि विद्याप्रसाद ने ठगी का खेल रचाया है।”

बन्दी बोला, “देवकान्त ही एक दिन विद्याप्रसाद का खेल बन्द करेगा।”

लिली कुछ न बोली। वह ब्रह्मपुत्र की विद्याल जलपाप को देखती रही। टपटो हवा चल रही थी। नीरद ने प्रसंग बतलकर कहा, “अब बन्धु आत्म्या फूल खिलेंगे।”

लिली मुस्कुराई “किसी भी देश की कविता को उठा कर देख लो, फूलों की मरुता बकर मिलेगी।”

“कविता में कवि फूलों से बाँधे जाया है।” नीरद ने गम्भीर होकर कहा, “पर यदि दुम्हायी बात सत्य है कि प्रकृति एक अग्नी और बहरी शक्ति है, तो मैं पूछता हूँ कि कवि फूलों से कैसे बाँधे जाया है?”

अमी छतें सिर पर नहीं आया था। नाच पड़ी का रही थी। नीलाचन्द्र और बन्दी प्रसन्न थे। अमी ठग के सिर पर से कोई पत्नी गुबार जाता, अमी कोई मत्स्यनी उबककर अपनी मुलाकूति दिखाती और फिर उबकी लगा जाती।

नीरद बोला, “अब बन्धु आता है तो सब जूझी पर एक साथ क्यों नहीं आता? किसी पर पहले आता है, किसी पर बहुत पीछे।”

“यही तो प्रकृति का खेल है।” लिली ने ठेकी से दर्दन दुमाकर गुनहरे बूँपों को मटक दिया।

“यदि प्रकृति एक अग्नी और बहरी शक्ति है, तो पहले तो यही समझ में नहीं आता कि फूल कैसे खिलते हैं और फिर यदि फूल खिलते भी हैं तो एक साथ क्यों नहीं खिलते? ऐसा क्यों होता है कि किसी वृक्ष में बसन्त को उमंग पहले बाग उठे और किसी बागरे को अग्रापण की पदपाप तक तुम्हारे न रहे सके।” नीरद ने मुस्कुराकर लिली की तरफ देखा।

सिली काज बहुत प्रसन्न थी। उस ने गम्भीर होकर कहा, "यह बात तो तुम ने एक बार कलकत्ता में भी कही थी, जिस रोच हम बुट्टेनिष्ठ गार्डन देखने गये थे। देखकान्त भी था हमारे साथ। देखकान्त ने तुम्हें जो बचाव दिया था मुझे वह भी याद है।"

"देखकान्त ने क्या बचाव दिया था?" बीरू ने पानी में हाथ डाल कर बालक के समान खेलते हुए कहा "देखकान्त ने कहा था कि जैसे कमल में कोई पेड़ पहले लिल्ला जाता है और कोई बहुत पीछे, इसी तरह कोई बेश संसार की प्रगति में पहले काम बड़ाता है और पीछे।"

सिली मुस्कराए और फिर उस ने प्रसन्न बालक कह, "वह तुम्हारा अनुमान क्या कर रहा है?"

"वह क्या करेगा?" बीरू ने हँसकर कहा, "उस का विवाह हो गया। अभी हमसे ही दिन मिला था तो गोपीनाथ दापोया की शिफाफ करने लगा कि वह तो नापसन्द से भी अधिक अत्याचार कर रहा है। जब तक कोई काम करने के लिए आगे न आये, बात नहीं बनती। आगे आने के लिए प्रार्थनों की बाजी लगानी पड़ती है।"

सिली गम्भीर होकर बोली, "कभी-कभी तुम्हारे मुँह से देखकान्त बोलने लगता है। बात तो कमल की बात रही थी।"

बीरू ने खोर से बन्धू बलाते हुए कहा, "बंगल में तो बलन्त मूमता-मूमता आता है। हर पेड़ के कान में कहता है—भीमान् की, बागो, मैं आ गया। अब कोई पेड़ बलन्त की बात पर कान न घरे, तो क्या करे बलन्त देवारा?"

बन्ती बोला, "सब पेड़ों को तो बलन्त आदेश नहीं दे सकता कि अभी रुक जाओ। कोई पेड़ मरे फागुन में मिलता है, तो किसी पर जैत में भी पूरा नहीं मिलते। हर पेड़ बैशाख में भी मिलने का नाम नहीं लेते, जेन में बाहर कहीं उन पर पूरा मिलने का नशा नगर होता है।"

"बलन्त में आती है बलन्त आत्मी।" बीरू ने प्रसन्न बालक, "बलन्त में सुख-स्नान कर के उसी दिन पाप क्षमा करने जान है।"

“नीलकण्ठ, तুম ने तो कोई पाप नहीं किया होगा ?” सिली मुस्कुराए,  
“तुम्हें पाप धुलाने की क्यों चिन्ता करनी है ?”

बन्सी ने हँसकर कहा, “पाप धुलाने की चिन्ता तो गोर्गन्धर्व दायेगा,  
चित्राग्रवाड और बिष्णुराम को होनी चाहिए ।”

नीरव बोला, “देवग्रन्थ की बात ठीक मालूम होती है । जैसे वस्तु  
सब पर छाता है—किसी पर छागे, किसी पर पीछे, जैसे ही हर गँव  
बागवा है—कोई छागे, कोई पीछे ।”

सिली ने हँसकर कहा, “जला हुआ कस्तूर खोना नहीं जला करता ।  
तुम्हारी कुत्तक कहाँ तक पहुँची ? क्या तুম यह कुत्तक ब्रह्मपुत्र बिल्ली ही  
लम्बी लिखना चाहते हो ?” यह कहकर सिली बेर तक हँसती रही । फिर  
बाह्र संमस्तकर बोली, “नीलकण्ठ, अब बाब को बापस चित्रांगदुल ले  
जलो ।”

## चौतीस



चाँदनी रात में मौका-निहार का इतना ध्यानन्द लिली को पहले कभी नहीं आया । नींद उसे स्त्रीपर तक पहुँचाकर चला गया था । उस रद-रदकर यह बात लटक रही थी कि आठ उस ने नींद से यह क्यों बंद दिया था—कभी-कभी तुम्हारे मुँह से देवकान्त बोलने लगता है । फिर नीलकण्ठ के शब्द उसकी

कल्पना को छू गये—मुना इ नारायण दायोगा मामुस्ती में बहुत आत्मा पार कर रहा है । वह सोचने लगी, नीलकण्ठ ने नींद से यह भी तो बंद या आठ—कुछ देवकान्त बाबू का भी पता है । धीरे धीरे कन्नी के मुँह से निकले हुए शब्द उसकी चेतना का कुरेदने लगे—मया दायोगा गोविन्दाय शिरगिमुण्य में बौनला कम आत्मापार कर रहा है ।

स्त्रीपर में अपने कन्नी की लिङ्गकी से लिली ब्रह्मपुत्र को देखती रही, जो चाँदनी की भीगी आदर ओढ़े पान-मग्न प्रतीत हो रहा था । उनके मन में वह कद के भाव उठ रहे थे । मन-ही-मन उस ने प्रेरणा किता, छात्र में अपने देवी से माफ़-माफ़ शब्दों में कहेंगी—“यह के बल पर हम यहाँ बिसकुम नहीं रह सकते । उनकी पत्न्या में देवकान्त का चेहरा घुन गया, जैसे देवकान्त बंद रहा हो—मैं तुम्हारे दृष्टि की टपक हूँ । दिना में मेरा बिरास रात में तुम लोगों के आत्मापार न ही रद दिना धीरे धीरे मेरे सामने मेरा रास्ता है, जिस पर पान से मुक्त कोई ही रोष लगता ।

लिट्फ्री से हटकर वह विद्यालयाय दर्पण के सामने लकी हो गए और बेर तक चेहरा सँभाली रही। पीछे से एकएक मम्मी का चेहरा दर्पण में मुस्करा उठा।

“कहाँ तक हो जाये?” मम्मी ने आगे आकर पूछा, “नीरव को डिनर के लिए क्यों न रोका?”

“उस पर जाने की जरूरती थी, मम्मी।” लिट्फ्री ने गम्भीर होकर कहा, “पर आकर वह अपनी पुस्तक लिखने बैठ जायगा।”

“कब पूरी होगी उसकी पुस्तक?” मम्मी की आँखें चमक उठीं, “उस से कहो, हमारी माया में भी इसका अनुवाद आवश्यक लगनाये।”

“पहले लिट्फ्री तो बात बेकारों की पुस्तक, मम्मी।” लिट्फ्री निरालाकर हँस पड़ी। फिर ज़रा सँभलकर बोली, “मैं सोचती हूँ, उसकी पुस्तक कभी पूरी नहीं होगी।”

“यह तो मत कहो, लिट्फ्री। नीरव पका मेइमती आदमी है। वह ज़रा पुत्र पर ऐसी पुस्तक लिखने जा रहा है, जैसी दुनिया की किसी भी माया में किसी दूसरे दरिया पर नहीं लिखी गई। यह बात मैं तुम्हारे डेडी से भी कह चुकी हूँ। मछपुत्र बहुत बड़ा दरिया है। मछपुत्र पर कभी पुस्तक लिखने का नीरव का संकल्प मुझे तो दिल-आन से प्यारा लगता है, लिट्फ्री।”

“कहाँ तुम पर नीरव ने आपू तो नहीं कर दिया, मम्मी?” लिट्फ्री प्रमत्त मुद्रा में बोली, “असम का पुराना नाम है कामरूप, और मम्मी, कामरूप का आवू तो प्रसिद्ध रहा है।”

बड़े प्यास से लिट्फ्री ने दर्पण में यह देलन की चेष्टा की कि जब वह हँसती है तो कहीं उसके चेहरा बिगड़ तो नहीं जाता। उसे बाद था कि कॉलेज में किस प्रकार बहुत-सी हँसोड़ लड़कियों का चेहरा हँसते समय झुरी तरह बिगड़ जाता था।

“अच्छा तो तुम बाल सँभाल लो।” यह कहते हुए मम्मी अपने कमरे की ओर पल्टी गई।

दर्पण के सामने एक-एक लिट्फ्री गुनगुनाते लगीं किसी असमिया

गीत की पुनः थी। जैसे स्वयं ब्रह्मपुत्र इस पुनः में अपने बोल सुना  
 रहा हो। उसे लगा कि ब्रह्मपुत्र संतार के मानचित्र पर एक महान्  
 नद है। मन ही-मन वह सोचने लगी—जब पहले-पहल तिम्बत में मान  
 सरोवर मील से चल पड़ी होगी ब्रह्मपुत्र की जलधारा, तो उस ने कब  
 सोचा होगा कि उसके सामने इतनी लम्बी मंझला है। फिर वह सोचने  
 लगी कि नीरद ने भी यद् बात नहीं सोची होगी कि उसकी पुस्तक इतनी  
 लम्बी होती जायगी। कैयों में कंसी करते-करते वह सोचने लगी कि तबमुक्त  
 नीरद ने अपनी पुस्तक में ब्रह्मपुत्र की आत्मकथा प्रस्तुत करने का नियम  
 कर रखा है। समय-समय पर वह नीरद के मुख से उसकी पुस्तक के कुछ  
 प्रसंग सुन चुकी थी। वास्तव में कहीं-कहीं नीरद ने अपनी पुस्तक में ब्रह्मपुत्र  
 के मुख से बड़ी पते की बातें कहलवाई हैं—“मित्र मित्रा को मैं हिला  
 नहीं लफटा, उसे मैं बारम्बार सम्स्कार करता हूँ।” “ब्रह्मपुत्र जानता  
 है कि क्यूँ कितना गहरा जाता है।” “क्या करने से क्या बढ़ती है  
 तीली केरने से कान का छेद बढ़ता है।” “मैं के घर में क्यूँ बढ़ती है  
 पन्ना में धान बढ़ता है; बाद में बढ़ता हूँ मैं।” “मैं नाम है ब्रह्मपुत्र।  
 “छोटे-छोटे घर बनाओ, बिजने बाहो बनाओ मुझ से दूरे, मेरा  
 नाम है ब्रह्मपुत्र।” “हाथी मित्र हिमाच से लाया जाता है उनी हिमाच  
 से लाता है मित्र हिमाच से बना होती है, उनी हिमाच से मैं पैलता हूँ  
 फिर भी लोग मुझे गाली नहीं दे सकते क्योंकि मेरा नाम है ब्रह्मपुत्र।  
 “नरों में लपु है वह, जिसका नामा में सम्मान नहीं पाते-पीते नरों  
 में लपु है वह, जिसके मराल में धान नहीं मावरियों में लपु है वह, जो  
 मेरी बिछाल जलपाठ पर नाव लेने इरता है मैं हूँ नाधात् ब्रह्मा—  
 ब्रह्मपुत्र।” “धन पाने के लोभ में बोयी मित्रों की देखला भी बोता है  
 आगे-ही आगे बढ़कर लपु से जा मिलने की नाथ में मैं इन्द्र देवता  
 से करता हूँ—घोर बरलो, घोर बरलो।” “येनी-येनी अतन्म्य नूनियों  
 नीरद की पुस्तक की परबुसिदि में हीरे-जोतिर्ने की तरह खरी दूर है—  
 यह बात सिली की कल्पना को गुरगुना रही थी। कंसी करते-करते उसका

हाथ कहीं झटक नहीं रहा था। उस गीत के बोझ वह फिर गुनगुनाने लगी। वही ब्रह्मपुत्र का गीत, जिसके उत्तर में ही शायद नीरव ने अपनी पुस्तक में लिखा था—‘तुम्हारे किनारे मेरा घर है, जैसा चाहो, मेरे साथ व्यवहार करो।’ वह सोचने लगी—नीरव बाबू ने अपनी पुस्तक में एक स्थल पर यह भी तो लिखा है—‘बरती पर राजा राज्य करता है, क्षीर आकाश पर है इन्द्र देवता का राज्य, जिसके संकेत पर ब्रह्मपुत्र प्रवाहित होता है, मल्ल हाथी की चाल से।’ यह विचार सचमुच हैंसाने वाला था, मल्ल हाथी की चाल से ब्रह्मपुत्र की चलना उसके धर्म का मस्तिष्क को झुंकेने लगी। पश्चिम के लोग कहीं तो यूरोप बाजारों से अलग हो जाते हैं, वह सोचने लगी वहीं वे लोग अपनी की मूलभूतों में लो जाते हैं।

फिर उस ने ग्रामोपेन कोसकर सातवीं सिग्नली का रिकार्ड लगा दिया। अब मिलसिलाफर हैंसने का कोई प्रश्न नहीं उठ सकता था। यह सिग्नली तो ब्रह्मपुत्र कितनी गहरी है—यह सोचने लगी—यह सिग्नली मुझे बचपन से ही प्रिय है; नीरव ब्रह्मपुत्र पर पुस्तक लिखता है, तो भक्त मारता है उस से कहीं अच्छा तो यह है कि सातवीं सिग्नली का रिकार्ड बजाया जाय; नीरव की पुस्तक कौन पढ़ेगा? ‘रुटीमर पर बीपेलिन की सातवीं सिग्नली बज रही थी नीचे घट-बाहु ब्रह्मपुत्र धीरे-धीरे गम्भीर गति से बह रहा था।

सहसा किसी के मन में यह विचार उठा—मैं एक डॉमेन की लकड़ी हूँ, तो क्या हुआ मैं इसमें देश की सेवा करूँगी। मैं डॉमेन की ‘मिडिसन’ द्वारा इस देश के रोगियों की सेवा करूँगी। कम है यह देश, जहाँ मेरा जन्म हुआ कम है ब्रह्मपुत्र, जो संसार के ‘मैप’ पर अद्वितीय है।

फिर सृष्टि का शब्द हुआ, उसे पास ही कहीं कच्चा कगार दूढ़कर ब्रह्मपुत्र में समा गया। किसी अत्यममलक-सी सोचने लगी—‘बड़े के बल पर हम यहाँ बिलकुल नहीं रह सकते।

## पैंतीस



वसन्त ऋष्यश्री के दिन सब का मुँह ब्रह्मपुत्र की ओर था। अतुल और रास्तास काका आज मिलकर ब्रह्मपुत्र में स्नान कर रहे थे। आज तो दिर्घागमूल के सभी लोग मल-मलकर ब्रह्मपुत्र में नहा रहे थे। हर किसी को अपने पाप क्षमा कराने की चिन्ता सता रही थी नीलाकण्ट और बन्सी भी क्यों पीछे रहते? आज तो शिवठागर-निवासी भी यहाँ स्नान करने आये थे। इतनी भीड़ तो यहाँ किसी भी मैले पर नहीं होती थी।

“बहू कया तो तुमने भी सुनी होगी?” नहाते-नहाते रास्तास काका ने कहा।

“कौनसी?” अतुल मुस्कराया।

“वही कुत्ते की जन्म-कथा।”

अतुल को यह बात निश्चिन्त-सी लगी—हम ब्रह्मपुत्र में स्नान कर रहे हैं, और इस शुभ अवसर पर काका को कुत्ते की जन्म-कथा सुन रही है। उस भीम बैलकर काका ने कहा, “क्यों, नहीं सुनींगे?”

“अच्छा, तुना डालो, काका।” अतुल ने क्रममने-माथ से कहा।

काका ने कदना आरम्भ किया :

“जब ब्रह्मा ने कुत्ते की रचना की, तो उस से कहा—‘यहूँ पर जाओ और अपने लिए स्वामी चुन लो, और—’”

“और कुत्ते ने आकर भद्र आधमी को अपना स्वामी चुन लिया।”



अग्रस्त को हँसी आ गई, “काका, यह किशर की क्या है ?”

“मुनो तो !” काका कहता पला गया, “चलती पर आकर कुत्ते ने खन से पहले हाथी को अपना स्वामी बनाना चाहा, और हाथी ने—”

“हाथी ने इन्कार कर दिया ।” अग्रस्त ने टोककर कहा, “तुम तो तीस वर्ष हाथियों के बीच रह आये हो, काका । तुम ने किसी हाथी से ही पृष्ठ लिया होता कि उसके पुरखों ने कुत्ते का स्वामी बनने से क्यों इन्कार कर दिया था ।”

“मुनो तो । हाथी समझ गया, उसका विशाल शरीर देखकर ही तो कुत्ता उसे अपना स्वामी बनाने आ रहा है । उसने सोचा कि इन्कार कर दे, पर वह चुप रहा । कुत्ते ने समझा, ठीक है, हाथी रुकी हो गया । रात हुई, तो कुत्ते ने बड़े बेग से चलती हुई हवा में हिलते पत्तों की आवाज सुनकर भूँकना आरम्भ कर दिया, और—”

“और हाथी डर गया ।” अग्रस्त ने हँसकर कहा, “पर हाथी क्यों डर गया था, काका ?”

“हाथी ने कुत्ते को बता दिया—भूँकना तो ठीक नहीं, बंगाल में बाघ तुम्हारी आवाज सुन लेंगा, तो आकर तुम्हें मार डालेगा । कुत्ता समझा—इस हिसाब से तो बाघ हाथी से भी बलवान है, क्यों न फिर बाघ को ही अपना स्वामी बनाना जाय । वह भट बाघ के पास पहुँचा—”

“बाघ ने क्या कहा ?”

“बाघ ने कहा—तुम मुझे अपना स्वामी मानते हो, तो मैं तुम्हारा स्वामी हूँ । रात हुई, तो तेज हवा में हिलते-डोलते पत्ते खोर मचाने लगे । कुत्ता भूँकने लगा । बाघ ने कहा—पात ही शिकारी ठाक मैं होगा, वह आकर तुम्हें मार डालेगा ।” कुत्ता खोजने लगा—इस हिसाब से तो शिकारी ही अधिक बलवान् हुआ ।”

“फिर क्या हुआ ?”

“शिकारी ने कुत्ते की बात मान ली । रात को हवा चलती, तो कुत्ता अपने स्वभावपर भूँकना आरम्भ कर देता और शिकारी

प्रथम होकर उत्तरे पीठ प्यार से धरमपाने लगता । तब से कुत्ता आदमी के पास रहने का अभ्यस्त हो गया ।”

ब्रह्मपुत्र में स्नान करने पाशों का कोसाहल पहले से बढ़ गया था । दूर से मीलमणि मागता हुआ आया । उसका रोंग बढ़ा हुआ था । वह बहुत प्रसन्न खिन्ता था । रास्ताल में कहा, “क्या समाचार है मील मणि ? आज तो तुम भी स्नान कर लो । अपने पाप तुम भी क्षमा करा लो ।”

“मेरे पाप तो पहले ही क्षमा कर दिये ब्रह्मपुत्र बाबा ने, बाबा ।” मीलमणि मुस्कुराया ।

“वह कैसे ?”

“बस समझ जाओ, बाबा ।”

“कुछ कहोगे भी ?”

“बलवारा के पुत्र हुआ है । हमारी बराबरी में एक कूल सिद्ध गया ।”

“अच्छा तो जल्दी करो । बस्त्र उतारो, पहले स्नान कर लो ।”

ब्रह्मल ने देखा—काका इस समाचार से बहुत प्रसन्न है । वह अपने असीम आह्लाद को मन में दबाये स्नान करता रहा ।

“फर तो संसार है, बाबा ।” मीलमणि ने ब्रह्मपुत्र में उतरते हुए कहा, “कोई प्रसन्न है, कोई उदास । किसी के लिए तुम समाचार आता है, किसी के लिए दुःख की सूचना । इस विशाल संसार में मनुष्य अपना छोटा-सा संसार बसाकर रहता है ।”

“जल्दी-जल्दी स्नान कर लो ।” रास्ताल ने गम्भीर होकर कहा, “फर शान पित बचरना ।”

रास्ताल दोनों हाथों से पानी उछाल रहा था, जैसे हाथी अपनी सूँड से पानी उछालता है । ब्रह्मल ने देखा—काका आज उतना ही प्रसन्न है, जितना उस समय था, जब वह चौदहवीं से सीटने के पश्चात् भगवान् की और आरती के यामे से छूटकर आगे पर प्रसन्न हुआ था ।

“आज तो हमारे घर बलमा होगा, दादा !” नीलमणि ने आग्रह पूर्वक कहा ।

“अधरथ !” रास्ताला मुस्कराया और उसी तरह दोनों हाथों से पानी उछालता रहा ।

अटुल की कल्पना में वे दिन भूम गये, जब मलना रास्ताला काका को ‘हाथी काका’ कहा करता था । काका हाथी ही तो था । तीस वर्ष एक हाथियों में रहने के कारण काका हाथी जितना सयाना हो गया था । बैठने-उठने और चलने-फिरने के रंग-रंग में ही नहीं, दोनों हाथों से पानी उछालकर हाथी के खँड से पानी उछालने के अनुकरस में भी काका पूरा हाथी बन गया था ।

घर से एक कुत्ता मागता हुआ आ रहा था ।

पास आकर वह कुत्ता बड़े ध्यान से काका की ओर देखने लगा । अटुल ने हँसकर कहा, “वह आ गया तुम्हारी क्या का नामक, काका ! इस से पूछ देओ, अपना स्वामी चुनने में इस से भूल तो नहीं हुई !”

चतुर्विध स्नान करने वालों का शोर था ब्रह्मपुत्र मुस्करा रहा था, जैसे कह रहा हो—मुझ से कोई भयभीत न हो, मैं तो देवता हूँ—साक्षात् ब्रह्मा !

## छत्तीस



छात दिन से बर्षा का यही हाल था। आत्म पितृ मूँछलबार बरपा हो रही थी। बरपा की परवाह न करते हुए रत्न अपनी हुकाम से धनसिंह की हुकाम में आ गया।

“इस वर्ष विसर्गिमुक्त का बचन कठिन है।” धनसिंह ने मर्तरे हुए आवाज़ में कहा।

“तुम तो स्वयं ही बहरा गये।” रत्न ने उत्तरा सेक करने के ढंग से एक हाथ की उँगली दूसरे हाथ की हथेली पर बसाते हुए कहा, “ब्रह्म पुत्र का पानी चढ़ सकता है, तो उत्तर भी सकता है।”

“पिछले इस दिन में वो फुट पानी चढ़ गया, अभी तक उठरने का नाम नहीं लिया।”

“बढ़ तो ठीक है, पर बहराओ नहीं। ब्रह्मपुत्र का कोप तो हम बचपन से ही देखते आये हैं।”

“हमारा घर ही चित्तालिया में पड़े बूबेगा; अब वहाँ से ब्रह्मपुत्र बह नहीं।”

“ब्रह्मपुत्र से इतना ही भय था, तो चित्तालिया बासा पर बेचकर छाली सीमा में घर क्यों नहीं बना लिया। इसके वो साम होते—एक तो हुकाम के समीप होता, दूसरे छाली सीमा तक पहुँचने में ब्रह्मपुत्र को बहुत समय लगेगा।”

“इस वर्ष सारा चित्तालिया ब्रह्मपुत्र की मेंट होकर रहेगा।”

“तो रत्नमी क्या निन्ता है, धनसिंह मारै ! सब के घर डूबेंगे, तो तुम्हारा भी सही । तुम में बहुत पैसे बचा लिये । बहुत आमदनी होती है, तो सूर्च मी होना चाहिए ।”

“जगता है ब्रह्मपुत्र ने इधर को करबट ली ली । पहले तो पानी की भार काष्ठ उधर को थी ।”

“मेरी मानो तो अमी से अपना घर लाठी करके सब सामान इधर ले आओ । इधर नवा घर बना लो ।”

“बहु-मन्तर से तो घर बनने से रहा ।”

धनसिंह और रत्न में ये बातें चल ही रही थीं कि कम्पास मगल आ गये । वे क्या में बिलकुल भीग गये थे । “आब भी सम्य है कि लोग हरिनाम की बाहर छोड़ने का विचार ठान लें ।” मगल जी न मीगी हुए बाहर एक तरफ रकते हुए कहा ।

रत्न बोला, “हरिनाम अपने से क्या ब्रह्मपुत्र उठर जाएगा, मगल जी !”

धनसिंह ने बाब का गिलास मगल जी के हाथ में बमाते हुए कहा, ‘चाय पीकर थोड़ा गरम हो लो, मगल जी ! बात तो रत्न की ठीक है । अब मेरी लोग साज में दो बार दबूर-पूजा करते हैं, और सभी जानते हैं कि दबूर-पूजा तो असल में हमारी इन्द्र-पूजा ही है । इन्द्र महाबान् से यही प्रार्थना की जाती है न कि वे अपने पक्षों को तनिक कम ही दूटने दें । बर्ष की वृत्ती दबूर-पूजा को अमी बहुत दिन मी नहीं हुए और क्या का को हाल है, सब क सामने है । बर्षा होती रहेगी, तो ब्रह्मपुत्र और भी बढ़ेगा ।”

मगल जी बाब का बूँट मरकर बोले, “मम अपने कर्मों का पछ है । लोगों के विचार ठीक नहीं रहे । वैष्णव धर्म स्वीकार करने में लोग आगे नहीं आ रहे, तो महाबान् को क्यों दोष देते हैं !”

“छोड़िये मगल जी, ये बातें तो पुरानी हो गई ।” रत्न ने हँसकर कहा, “बूँटा मारने से केला नहीं पकता । जिस गिला को आबमी दिला

नहीं सकता, उसे गम्भीर करने बैठ जाता है ।”

मगत की अपनी ही हँसो बसे गये, “हरि मारे, तो रक्षा कौन करेगा ? और हरि रक्षा करेगा, तो मारेगा कौन ? वह किसी ने कहा है म—भग्युलाल का पहुँचने पर हरिनाम । उस से तो बात नहीं बनती । हरि से तो सबा यही कहना चाहिए—तुम्हारी माटी पर ही मेरा घर है । निधन लंका में भी क्यों म थका जाय, उसके कर्मों से मोक्ष नहीं उठता । पर सब से बड़ी बात तो पाशों की गठरी उतारना है फिर हरि की कृपा होते देर नहीं लगती ।”

“जनसिंह पर आत्मका प्रमाण नहीं पक सकता, मगत की !” रत्न ने हँसो की पुनरावृत्ति छोड़ी, “जनसिंह का तो एक ही सिद्धान्त है—जो तुम्हारा है, वह मेरा है, और जो मेरा है उस तुम्हारा बाप भी मुझ से नहीं ले सकता ।”

मगत की बोले, “अब तक मनुष्य संसार में है, वह मोह-माया से छूट नहीं सकता । खाने का गये हैं—ताम्बूल के पेड़ की जड़ में मोहर डालो, बाँस की जड़ में मिट्टी डालो, और उस मारियल की जड़ दुरन्त काट डालो, जो पल न दे । जिस प्रकार मारियल को पल सनाता है, उसी प्रकार मनुष्य को भक्ति का पल सगना चाहिए । कभी हमारे साथ आठनिवादी सम की यात्रा करो, तो जीवन सफल हो जाय ।”

रत्न ने हँसकर कहा, “तो फिर क्या ब्रह्मपुत्र में पानी बहना बन्द हो जायगा, मगत की ! जनसिंह की तो एक ही शर्त है । अपने हरि से कहकर इस बय विठासिया बली को बचा दीजिये, फिर उसे विठासिया के छारे मेवाली वैष्णव बम जाँचिये ।”

मगत की गम्भीर हाँकर बोले, “अब तक विठासिया को ब्रह्मपुत्र काटकर नहीं ले गया, तो वह किसकी कृपा है ?”

इतने में क्या मैं मीठाते हुए रास्ताल काकर और अतुल का पहुँचे ।

“अरे अनुज, तुम मे मताया ही नहीं कि तुम्हारे सक्का हुआ है ।”

जनसिंह ने हँसकर कहा, “यह बात इतलिय तो नहीं लिखा गये कि कहीं

हाडू न खिलाने पर कायें ।”

राजाल ने प्रसंग बदलाकर कहा, “ब्रह्मपुत्र बहुत विकलाह हो उठा है आज ।”

“यह कोई नई बात तो नहीं है, काका ।” राज ने गम्भीर मुद्रा बना ली, “नदी किनारे के वृक्ष की जो स्थिति होती है, उसी स्थिति में रहते आये हैं हम हिर्लोमिमुल-निवासी । ब्रह्मपुत्र हमारा देवता है, उसके ही वह विकलाह मकर आने, मले ही शान्त-गम्भीर ।”

चनछिन्न और अतुल कानाफूसी में लो गये । राजाल को मूक देखा कर राज ने कहा, “ऊपर इन्द्र देवता के घड़े टूट रहे हैं, नीचे ब्रह्मपुत्र अति मीस्थ और अति मन्वद्व हो उठा है । इस स्थिति में कौन है हमारा रक्षक ।” यों ही राज ने अपनी बात कथ्य की, क्या का वेग और भी बढ़ गया, जैसे इन्द्र देवता और ब्रह्मपुत्र में सम्मिश्रण हो गया हो ।

पानी छिछा पड़ने लगा था, एक ही बीछार में सब भीगा गये । मुड़ी पर ठोकी टेके अतुल बोला, “देवकान्त मामुली में मीमा रखा होगा ।”

## सैंतीस



एक ओर आठनियाटी सत्र था, दूसरी ओर था वह गाँव, जिसके सम्बन्ध में कुछ लोग कहते थे कि यह आठनियाटी सत्र बमने के बाद आया हुआ था। स्वयं इस गाँव के लोगों का विचार था कि यह तो आठनियाटी सत्र बमने से बहुत पहले बसा होगा, और इसी से इस सत्र को भी वह नाम मिला

होगा।

पाने के बग़ीचे में नारायण कुर्सी पर बैठा था। उसके हाथ में एक पुस्तक थी। पास वाली कुर्सी पर अक्षर पर पड़ा था। दूर बादलों के पीछे सूर्य अस्त हो रहा था। बादलों के नीचे से जैसे अब तक कोई लाल गुलाब उछाल रहा था। फिर वह लाल रंग बैजनी बन गया, बैजनी रंग नारायण को बहुत प्रिय था, पर अब वह रंग भी उसे देर तक अपनी ओर आकर्षित न कर सका।

अब से वह दिसोंमुख से बढ़कर वहाँ आया था, उसकी सय से बकी चेष्टा यही रही थी कि किसी प्रकार दैवकान्त हाथ आ जाय। यद्यपि उस ने कोई कसर न उठा रखी थी, फिर भी शिकार अब तक हाथ न आया था। वह पहला अबसर था कि उसे मुँह की खानी पड़ी। जैसे अब तक तो पुलिस विभाग में वह नीला के बोखले से भी मौस हँद लाने में शुक माना जाता था।

सूर्य अस्त होने के साथ-साथ जैसे नारायण का सय साहस भी अब



दे रखा था, पर वह अब भी सोच रहा था—देवकान्त आज नहीं, तो कल अवश्य हाथ आकर रहेगा। वह भागकर कहीं जायगा। मामुली तो यही बीस-एक मील लम्बी है, पॉन्च-एक मील चौड़ी होगी। इतनी बड़ी भी तो नहीं है मामुली। अंग्रेज तो मामुली से कहीं बड़े पूरे अरम का मासिक है। अरम का ही नहीं, अंग्रेज तो बंगाल का भी मासिक है। बम्बई, मद्रास और बिहार, यू० पी०, पंजाब और फ्रिजर—सबसे अंग्रेज का भयना पहराता है। मामुली से भी भाग जाय देवकान्त, तो वह कहीं भी जायगा, वही पकड़ा जायगा। यहाँ मामुली में बंगाल तो डठना नहीं है, कहीं-कहीं बंगाली पास अवश्य दूर-दूर तक चली गई है—हाथी से भी ऊँची पास। इसी हाथी पास ने तो अब तक बर्षा और बाद में भी देवकान्त की रक्षा की है।

आज के अलवार की लुबरे नारायण को पसन्द थी। सब से आकर्षक लुबर तो उसी बम-केठ की थी, जो अब कसकता की अदालत में चल रहा था। उसी मुकदमे का एक मुलजिम या देवकान्त, जो अब तक हाथ नहीं आया था। पहले हत्या करते हैं, फिर भागते फिरते हैं। चले हैं हिन्दुस्तान को आकाश करने। इन से तो महात्मा गांधी फिर भी अच्छे हैं, वे भागते तो नहीं। जब भी अंग्रेज उन्हें पकड़ता है, वे कुली से बेल चले जाते हैं।

उसका बड़ा लड़का कसकता में बकालत पद रहा था उस से छोटी लड़की का विवाह उस ने जिस घूम-घाम से किया था, उसकी तो शिव तमार तक के लोगों ने प्रशंसा की थी। छोटा लड़का गोहाटी में पद रहा था। दो बर्ष पहले उसे गोहाटी के कॉलेज में प्रविष्ट कराया था। पढ़ने में तो वह भी निपुण था। वह बकालत करने की अपेक्षा इन्जीनियर बनना पसन्द करता था। वह तो अच्छा होगा। एक माई बकील बनेगा, एक इन्जीनियर।

नाउयस का अपना विचार धारम्य में रही था कि छोटा लड़का पुलिस-अधिकारी बने। फिर यह सोचकर कि इस विभाग में बैठन बहुत

कम मिलता है, उस में यह विचार छोड़ दिया था। हम ने तो किसी-न-किसी प्रकार अपना काम चला लिया। जो लोग पुलिस को 'भूस-विभाग' कहकर हमारे विरुद्ध विद्रोह करते हैं, उन्हें हम भी तो नहीं भूल जाना चाहिए कि कतन में तो हमारा पार नहीं पड़ सकता। हमारे स्थान पर कोई भी हो, ऊपर की आमदनी के बिना तो गुजारा कर ही नहीं सकता। हमारी बीमारी लेती होती है। लोग हमें बेगार के लिए कोसते हैं, पर हम पूछते हैं—बेगार में तो हम काम कैसे थमाएँ? जैसी हवा आसक्त चल रही है; यदि लोगों को खुशी हुई दे दी जाय, तो लोग तो जाने को धर्मशास्त्र बना दें। पुलिस दायोता गरदन ठेंची करके न भूम सके।

अंग्रेज की बस्ताई हुई हवा पर उसे क्रोध आने लगा। जेल जाने वालों पर उस हँसी आ रही थी। यह भी कोई काम है! एक साधारण का व्याख्यान दिया और चल पड़े जेल का मात खाने। इस प्रकार भी मला कमी देश आकाश हुआ है। व्याख्यान में मारी और खरने की ही बात करें वे लोग, तो क्याचित् हम भी हमें हाथ न लगायें। पर वे तो विद्रोह की बातें करते हैं। यदि वे लोग समझते हैं कि अंग्रेज कच्ची मोलियों सेलकर बका हुआ है, तो यह उनकी भूल है। आनन्द करें; जैसा भी इनके मन में आता है करें—पर मैं रहूँ, पाड़े जेल में। जेल तो बना ही इन लोगों के लिए है, या फिर चोर डाकुओं के लिए। अदम्यत में न्याय किया जाता है, जेल में नया सुगठनी पकती है। काले पानी भी मेकता है अंग्रेज, तो न्याय की नास्ति। पौसी का दण्ड देता है, तो न्याय के नाम पर। न्याय तो महान् है। न्याय से ही मुल और शान्ति की स्थापना होती है। मुल और शान्ति के बिना तो कोई देश प्रगति नहीं कर सकता। पुलिस इस काम में अंग्रेज का दायाँ हाथ है। पुलिस के बिना तो अंग्रेज एक कदम नहीं चल सकता। फिर कोई पुलिस को बुरा करता है, तो उसकी भूल है। भूल में बहुत अधिक तो नहीं पसती पुलिस में। बल उठनी ही माया ली जाती है, कितनी से काम थल जाय। पुरोहित भी तो बलिष्ठा होता है, और यदि कोई आर वैसे हमारे हाथ पर

रखता भी है, तो हम आठ पैसे का लिहाज करते हैं। यह तो 'इस हाथ तो, उस हाथ है' वाली बात है। कानून तो कानून है। अंग्रेज का कानून तो मक्का कैसे बदल सकता है? जो हमारा लिहाज रखता है, उसके साथ हम भी लिहाज करते हैं।

रात ठहर आई थी। नारायण कुत्सी पर बेठा रहा। देवकान्त पर हाथ न रख सकने का उसे बहुत खेद था।

यहाँ आठनिपाटी में न बनसिंह था, न कोई रत्न न कोई निरामराज या विष्णुराम। उसे दिर्गोन्मुख की याद स्वप्न लगी।

यह गाँव दिर्गोन्मुख की अपेक्षा बहुत छोटा था। आठनिपाटी सब बहुत बड़ा था पर यहाँ तो मक्का लोग रहते थे। उन से तो पुलिस को घूस और बेगार मिलने सं रही। दिर्गोन्मुख इसलिए भी अच्छा है कि त्रिबसागर समीप है। आदमी अधिकारियों की मदद में रहता है, उधरि के अक्सर भी अधिक मिलते हैं।

बहुत दिनों से नारायण ने सरकार के सम्मुख यह सुझाव रखा था कि शिकारी गाँव में घाना बनाया जाय, जिस से मामूली के उस छोर पर सड़न ही अंकुश रखा जा सके। यह बात बस्तुतः बहुत विचित्र थी कि अब तक सरकार को शिकारी गाँव में घाना बनाने का विचार नहीं आया था। वह प्रसन्न था कि सरकार ने उसके सुझाव को मान्यता दी और अब एक महीने से शिकारी गाँव में घाना बना दिया था। मिलाते सप्ताह ही सरकार की आज्ञा से नारायण शिकारी गाँव का दौरा करके आया था; यह देखकर उस प्रसन्नता हुई थी कि घाने के लिए खर नई भैंसियाँ सबक के किनारे बनकर तैयार हो गई थीं। उन ने एक सभा बुलाकर लोगों को समझाया था—'अपने अंगड़े निपटाने में आप लोगों को सुधीता होगा। पहले आपको अपने अंगड़े बहुत दूर ले जाने पड़ते थे।' पर उसका मास्य कुछ लोगों को बहुत पसन्द नहीं आया था। एक अंधे किसान ने उठ कर कहा था—'मैं तो कुछ देख नहीं सकता, पारोगा भी! पर मैं न तुम्हारा है कि जो देख भी सकता है, उन्हें भी निरंगी के राज्य में श्वाय मजूर नहीं

आता ! लोगों ने उस आदमी को पुनः कहा था, नहीं तो क्या जाने वह क्या कुछ करेगा। एकदम मूक और निरक्षर हैं मामुसी के लोग। इसीलिए तो दित्तमिमुख बासे जब किसी का उल्लू बनाते हैं, तो उसे 'मामुसी से आया हुआ' बताते हैं।

शिकाही गौश बालों को यह भी तो हात था कि उसका धाना आठनियादी धाने के अधीन है। नारायण बारोता की क्ली प्रसन्न थी आज मेरा पति दो धानों का बारोता है, कल मेरे हाथों के लिए सोने के धन में आनन्द बनेंगे।

परे पर नियुक्त सिपाही ने आकर कहा, "भोजन तैयार है, बारोता जी।"

"आकर रहो, चौका टहरकर लारेंगे।" नारायण ने अनमने भाव से कहा।

सिपाही न न जाने क्या सोचकर म्हाप्रभु की प्रशंसा आरम्भ कर दी। आज सवेरे के अंतिम में वह भी सम्मिलित हुआ था।

"मुझे तो ऐसा लगता है बारोता जी, कि हमारे पास म्हाबान् भी समा नहीं करेंगे।"

"तो आकर तुम भी भक्त बन जाओ। हमारे भी मन में यह बात आती है कि मरि करके देला जाय।"

एक दूसरे सिपाही ने आकर शिकायत की, "बारोता जी, वह हमारे धाने के सिद्धबाहे बासा म्हाबा है न, आज उस ने मल्लू देने से इन्कार कर दिया।"

"क्या कहता था वह सूअर।"

"कहता था—आओ आकर कह दो जिस से भी कहना हो, मैं मुक्त मल्लू नहीं दूँगा।"

"उतका बाप भी देगा मल्लू।" नारायण ने मुँहझुंझुकर कहा, "बार गूँठे आकर ही सीधा हो जायगा, उसे कुछ से उलटा लटकाने की भी आवश्यकता नहीं होगी। सूअर को अभी नारायण के हाथ नहीं

लगे ।”

इतने में बाहर से एक सिपाही ने आकर कहा, “शिकारी गँव का माना जाता दिना गया, सरकार !”

“वह कैसे हो सकता है ?” मारायश ने हाथ उठाकर कहा, “कौन साया है यह लम्बर ? किस सूअर ने भी है यह बकवास ?”

## अड़तीस



आठनियादी सत्र से शिकारी गाँव जाने के लिए महाप्रभु की छाटा से सब से बड़ा हाथी मिल गया। नारायण को आशा तो न थी कि महाप्रभु अपनी सवारी वाला हाथी भेजकर सरकारी काम में हाथ बटावेंगे। बन्दी का काम था, इसलिए महाप्रभु ने भी सरकार का साथ देना इतना आकर्षक समझा।

सरकार भी तो बस चसते आठनियादी सत्र का ध्यान रखती है। क्या मजाल सत्र-निवासियों को कोई कष्ट होने पाय। कमिश्नर साहब दौड़ करते हैं, तो लो काम छोड़कर आठनियादी अवस्थ आठ हैं। फिर महाप्रभु ने अपनी सवारी वाला हाथी भेजकर सरकार के प्रति अपनी निष्ठा का प्रमाण दिया, तो यह साधारण बात है। इतनी आशा तो सहज ही की जा सकती थी। सरकार का एक बामा गाँव वालों ने जला डाला हो और इस मामले की जाँच-पड़ताल करने का काम सामने हो, तो कोई निरालर व्यक्ति भी मूर्ख समझ सकता है कि यह कितना आकर्षक कार्य है। आठनियादी सत्र के अधिकारी तो बहुत विद्वान् हैं। भक्तगुरु उन्हें प्रभु कहकर सम्बोधित करते हैं; पहुँचे हुए भक्त उन्हें महाप्रभु कहना ही उचित समझते हैं। अब मैं भी तो उन्हें महाप्रभु कहता हूँ। उनके सम्मुख आकर मैं झूझ जाता हूँ कि मैं एक पुस्तिक दारोगा हूँ। उनके चरणों में बैठकर अपने पाप सामने आने लगता हूँ। मन करता है—नाम तो है नारायण, पर बेठा, सिर पर पापों की गठरी उठा

रली है। इतनी भारी गठरी उठाये यमलोक तक कैसे पहुँचोगे ? यमलोक के द्वार पर तो पूरी जाँच-पड़ताल होगी। झूठ-झूठ यह तो धर्म से रहे कि तुम्हारी गठरी में पाप नहीं, पुण्य भरे हैं। नरक का द्वार ही बिलाना जायगा, बेटा ! स्वर्ग का द्वार तुम्हारे लिए नहीं है। ये पुण्यात्मा और होते हैं, जो स्वर्ग में ही प्रवेश करते हैं। पर कोई बात हुई मला कि महा-प्रभु की अनुकम्पा हो जाये और आदमी नरक में ही प्रवेश करे ! महाप्रभु तो वैष्णवजन हैं। वह वैष्णवजन ही क्या दुष्ट, जो अपनी शरत् में आये किसी व्यक्ति को वैष्णवजन न बना डाले ! महाप्रभु जब मुत्सन्नाह देखते हैं मेरी ओर, तो कहता है कि मेरे पाप कट रहे हैं। पर मैं ने ऐसे पाप भी कौनसे किये हैं। महाप्रभु से क्या यह बात भूली हुई है कि ज्यू-हो-ज्यू है ! शिकारी ज्यू में अपना कर्त्तव्य पालन भी ऐसे ही है, जैसे कोई मकत मकत करता है। जब तक मुलक़िम की दिट्ठाई न की जाय, वह कच्ची बात बताता क्या है ? पुलिस तो वैसे ही बदनाम है। हम तो मामूली दिट्ठाई से ही काम चला लें। वैसे ही कोई सब-सब कह दे, तो हम गढ़ मकत मिलनी दिट्ठाई भी न करें। इन लोगों को यही आदत पड़ गई है। दिट्ठाई का डर उठ जाये, तो वे लोग सब शान्ति-सुरक्षा भंग कर दें। शान्ति-सुरक्षा का तो महाप्रभु भी समर्थन करते हैं। कल को कोई आठनिपाटी सब को आग लगा दे, तो क्या महाप्रभु पुलिसों से रिपोर्ट बन नहीं करावेंगे ? अकस्य करावेंगे ! कोई बात हुई मला ! शिकारी गाँव वालों को वह क्या क्षमी ? क्या इस प्रकार धाना कट हो जायगा ? उस दिन उस आन्धे ने किसी भूलता की बात कही थी। काठ का उल्लू ही थे प्रतीत हो रहा था ! कहा था—शिकारी गाँव में किसी को भी छिरींगी का स्थाय नकर नहीं आता। तो क्या अब इस तरह छिरींगी का स्थाय नकर आन लगेगा ? अब मायावस के हाथ लगेये, तो वेना अपने कर्मों को रोयेगा ! सरकार का दोष अभी तक इन लोगों ने देखा ही नहीं ! — हाथी तेज़-तेज़ उग मर रहा था।

महाबत ने लड़क झोड़कर हाथी पाम की मुरंग में प्रवेश किया, तो

नारायण के मस्तिष्क को भटका-सा लगा और वह महाबल से चारों करने लगा ।

“मामुसी में बलदान वाले स्थान पर ही उगली है हाथी घास ।”  
नारायण ने टंकार लगाया ।

“हाँ, महाराज ।” महाबल ने पीछे मुड़कर देखा ।

“हाथी घास नाम भी क्या लोचकर रखा है । मेरा तो बिचार है, हाथी घास की किन्नी सुरंग में ही दिना देना होगा वह सूखर का बच्चा ।”

“कित्त को नूढ़ रहे हो, महाराज ।”

‘ वह देवकान्त है न ! कनकला का एक मयोका ! पहले हत्था करते हैं, फिर छिपे निरते हैं ।’

“दिनकी हारा कर दी, महाराज ।”

“रौंख धमके की ।”

“रात के समय, या दिन के समय ? कित्त समय को गड़ यह हत्था ।”

“हत्था तो हारा है । हत्त से तो धन्तर नहीं पकवा कि हत्था रात को की गई या दिन में ।”

हाथी घास उनके कंधों तक आ रही थी । महाबल डिगना होता तो उतका तिर मो हाथी घास की ऊँचाई से नीचा हो जाता ।

महाबल ने हाथी का तेज़ चलने के लिए ठकसाया, और लौलकर कहा, “इस प्रकार तो देवकान्त हाथ नहीं धाम्ना । उसे पकड़ना हो, तो वैशाल घास की इन सुरंगों में से जाँच-छापकर उसे ढूँढ़ना चाहिए ।”

नारायण ने तिर हिलाकर महाबल के बिचार की उराहना की, “कहीं देवकान्त इन्नी सुरंग में दिना हुआ हमारी चारों न मुल रहा हो ।”

महाबल ने हँसकर कहा, “हमारा हाथी तो बहुत तेज़ डग मर रहा है । देवकान्त क्या भाकर हमारा पीछा कराए ?”

हाथी और भी तेज़ डग मरने लगा । नारायण को लग, जैसे हाथी न उनकी बात समझ रही हो । ऐसे में देवकान्त कहीं दिलाई दे जाता, तो



नारायण उस पर गोली बाग देता । उसे देवकान्त पर बहुत क्रोध आ रहा था । उसकी मुँहलाहट लोगों पर भी थी—ये लोग देवकान्त को पकड़कर हमारे हवाले क्यों नहीं कर देते ?

महाबत ने गम्भीर होकर कहा, “मामुली तो सीधा देश है, महाराज ! यहाँ चोर नहीं, डाकू नहीं । मामुली में कोई ठाका लगाना भी जरूरी नहीं समझता । यह बात तो हमारे महाप्रभु भी कई बार कह चुके हैं अपने उपदेश में ! महाप्रभु कहते हैं कि मामुली तो—”

“स्वर्ग है बरती पर !” नारायण ने हँसकर कहा, “पर अब तो मामुली को भी बाहर की हवा लग रही है । देवकान्त का यहाँ आ छिपना भी इसकी एक दलील है ।”

“महाराज, सरकार को बाने बनाने की जितनी जिम्ता है, उतनी हस्पताल बनाने की जिम्ता क्यों नहीं है ?” महाबत ने अपठर पाकर निरामा लगाया, “धीर सरकार, यह बात मैं अपनी ओर से नहीं, लोगों की ओर से कह रहा हूँ ।”

नारायण को महाबत की बात बहुत अप्रिय लगी, जैसे महाबत के मुँह से देवकान्त बोल रहा हो । उस ने मुँहलाकर कहा, “तुम नये हस्पताल बनाने की बात करते हो । मैं कहता हूँ, जो बका हस्पताल मामुली में पहले से है, उसे भी बन्द कर दिया जाय, धीरे बने हस्पताल के नीचे जो छान छोटे हस्पताल बनाने की स्वयं सरकार के सामने है, उसे भी रोक दिया जाय, जब तक देवकान्त को पकड़कर हमारे हवाले नहीं कर दिया जाता !”

महाबत ने इस बात का कोई उत्तर न दिया । हाथी धीरे-धीरे चलने लगा था । नारायण ने डाँटकर कहा, “इस तरह तो थिकारी गाँव पहुँचने में मीर हो जायगी !”

“इतनी दूर तो नहीं होगी, महाराज !” महाबत ने पीछे मुड़कर देखा, और हाथी पर अंकुश बलामे लगा ।

थिकारी गाँव पहुँचकर पता चलता, बाने को आग लगाने वाला ठसी

अग्ने का पुत्र है। बापू ने उस दिन गाँव की समा में यह करने की  
 हिमायत की थी—“मैं तो ब्रह्मा हूँ, पर शिकारी गाँव के उस लोगों को  
 भी, जिनकी झालें ठीक हैं, फिरंगी के राज्य में स्थाप न कर नहीं आता।  
 और अब उसके पुत्र ने शिकारी गाँव का धाना खला डाला।

सामन पाने की जगह हुई मॉपहियों राज का डेर प्रतीत हो रही थी।  
 सेमा दिखाही और छोटा दारोगा बहुत बकराये हुए थे।

एक झर एक हथ के साथ लादे की जगह से एक मकसुबक  
 को बँध दिया गया था।

“तो यही है उस अग्ने लखर का बच्चा।” नारायण ने अपनी  
 मकसुब के कुन्दे से उस मकसुबक के सीमे पर बोट करते हुए कहा।

छोटे दारोगा ने आगे बढ़कर कहा, “इसका नाम बाबू है, सरदार।”

“इसका सब जानू निकाल कर छोड़ेंगे।” नारायण भूले डेर की  
 तरफ गुपना।

## उनतालीस



धम्मे की लकड़ी तो जावू ही था। चाली की कसक कटकर मर या चुकी थी, और बाऊ भान को दिया गया था। अब जावू पिछले-पिछले मर जाय, तो धम्मे दिक्पाल का क्या हाल होगा ?—यह सोचकर शिकारी गोंब के लोग कोंप उठते थे। धम्मे दिक्पाल अपने जावू के बिना जीवित नहीं रह सकता।

जावू को कुछ हो गया तो दिक्पाल अनन प्राण त्याग देगा। बाप-बेटे के बिना माँ का भी बुरा हाल होगा, बाकर ब्रह्मपुत्र में कूद पड़ेगी—शिकारी गोंब में यह बात हर किसी की ज़बान पर थी। जावू की बहम पठबही से-सेकर बेहाल हो रही थी। उसकी आसु विवाह योग्य थी, और उसका विवाह जावू ने ही करना था।

कुछ लोग, जो जावू के विरुद्ध थे, हुदय से चाहते थे कि जावू की अमी और भी पिड़ा हो। वे चाहते थे कि जावू का हमेशा के लिए सीधा कर दिया जाए, और फिर वह लगातार मीरी की बेटी सोमी पर डोरे न डालें।

यह तो अम्मा हुआ कि जावू के बनपन के मित्र प्रभात और मुहन किन्हीं काम से गाँव-बूढ़ा मखिर के साथ दिर्घायुक्त गये हुए थे; वहाँ से उन्हें शिवसागर आना पड़ गया था और बापन शिकारी गोंब पहुँचते तीन दिन लग गये थे। प्रभात और मुहन वहीं उस दिन गाँव में होठ, जिस दिन दयाधी रात और और के बीच जागा जलाया गया था, तो यह अनन्मय था कि वे पुलिस के बंगला में फँसने से बच जाते। छोटा

बारोना अविन्तराम अब तक बंदि पीत रहा था और बार-बार नारायण राओना से कह रहा था—बाग मझे ही जानू मे लगाई थी, पर प्रभात और मुकम का भी इस मामले में कुछ कम हाथ नहीं था। अब कानून तो यह आशा न देता था कि प्रभात और मुकम को भी जॉस सिवा आय, जब कि वे इस घटना के समस्त गाँव से बाहर वे और गाँव-बूढ़ा मखिबर जैसा खाता-पीता आदमी इसका लादी था। नारायण ने अविन्तराम को पहले ही, जब वह जाना बमना धारम्भ हुआ था, यह बात समझा दी थी कि मखिबर को हर हासत में खुश रखा जाय, क्योंकि उसका विचार था कि मखिबर ही गाँव को देवकान्त के विपैले प्रचार से बचाकर रख सकता है।

जानू की पिढार केवल दलीखिए तो नहीं हो रही थी कि उस न जाने को आय क्या लगाई। यह तो बहाना था। असल बात तो यह थी कि किसी प्रकार देवकान्त हाथ आ जाय या तो जानू स्वयं मुँह से बक देगा, या हो सकता है कि देवकान्त उसकी पिढार की लकर सुमकर शिकारी गाँव में खला आये और उसे भट गिरफ्तार कर लिया जाये। बाब-बीच में जानू की पिढार बन्द कर दी जाती थी नारायण पास आकर उसे पुन कारने लगता था।

आठमिवादी सब का हाथी ठसी दिन बाफ्त मेज दिया गया था। नारायण अभी तक वहीं था। उसका विश्वास था कि शीम ही देवकान्त का पता खल जायगा।

एक दिन जानू की पिढार करते समय, उसकी माँ को सामने बिठा दिया गया। नारायण का विचार था कि जानू माँ की चर्च में देवकान्त का पता बता देगा। माँ रोटी रही, जानू ने उफ़ तक न की। आसिर पिढार बन्द कर दी गई।

फिर एक दिन प्रभात और मुकम को सामने बिठाकर जानू को पीगा गया। अगले दिन नारायण को पता चला कि सतारम मीरि की बेटी मोरी से जानू का दिस मिला हुआ है। सतारम और गोपी को बुलाकर सामने

बिठा दिया गया और एक सिपाही नारायण का हुक्म पाकर जादू को मिमो-मिमोकर जूते लगाने लगा। गोपी ने दोनों हाथों से झट्टे कर लीं। वह जादू को इतनी जुरी तरह पिटाते न देख सकी।

जो लोग अब तक पुलिस से दबते थे, वे भी डरपट से पुलिस के विरुद्ध हो गये। वह टीक था कि याने को मलाने की योजना देवकान्त की सुझाव हुई थी। यदि जादू की इतनी जुरी तरह पिटाई न की गई होती, तो गोंब-बूढ़ा मखिवर और गोंब के दूसरे लोग मिलकर वह मिमो-हारी से लेते कि अब कभी ऐसा नहीं होगा।

शिकायत गोंब में याना बनाये जाने के तो सभी विरुद्ध थे, क्योंकि वह नई बात थी। सब खी कहेते थे—जब आज तक यहाँ याना बनाये बिना ही सरकार का काम चल गया, तो अब क्यों नहीं चल सकता? पुलिस पात होगी तो नाम की बर्बाद हानि ॥ अधिक होगी—यह सब का विचार था लोगों को ऐसा सोचने से कोई नहीं रोक सकता था। जादू की पिटाई ने इसे सिद्ध कर दिया था। मान लिये कि जादू का अपराध है, उसे जितना चाहो पीटो, चाहे फाँसी पर चढ़ा दो; पर जिस सामने बिठाकर जादू को पीटा जाता है, उसका क्या अपराध है?

एक दिन कुछ लोग इकट्ठे हो गये और गोंब-बूढ़ा का साथ लेकर लाहलपूरक नारायण से मिले। उन्होंने शिकायत की—जादू की मौँ को छामने बिनाकर जादू को क्यों पीटा जाता है? प्रभाव और मुकन कितने ही जादू के मित्र क्यों न हों, पुलिस को वह अधिकार तो नहीं कि वह इन दोमों लकड़ों को सामने पिटाकर जादू पर हाथ उठाने? सताना मीरी और उनकी बेटी गोपी को छामने बिठाकर जादू को मगी पीट पर मिमो-मिमोकर जूत लगवाना तो और भी बुरा है।

नारायण पहले तो बहुत गर्म हुआ और गोंब-बूढ़ा को भी कोलने लगा, पर जब लोग अर्पणी बात पर अके रहे, तो उस ने यह कहकर जान बुझा—‘आगे को इसका ध्यान रखा जायगा।’

जादू की पिटाई का सब से अधिक दुःख गोपी को था। उस ने प्रभाव

और मुकून पर जोर डाला—“फिरी-म-फिरी तरह देवकान्त तक यह समाचार अवश्य पहुँचाओ और उस से पूछो, अब क्या किया जाय ?”

प्रमात ने धीरे से कहा, “तू यवरा मत्त, गोपी ! जावू का कुछ नहीं बिगड़ेगा ।”

गोपी की आँखों में आँसू थे ।

मुकून बोला, “जावू तो बहुत पक्का निहत्ता । उस में शिकारी गोंब की लाज रम ली ।”

गोपी जानती थी कि किस प्रकार प्रमात, मुकून और जावू तीनों देवकान्त से प्रभावित हुए । वह स्वयं भी तो देवकान्त से मिली थी । फिरंगी के राज्य की जो सुरारें देवकान्त ने की थी, वह सोलह जाने तक निकली । फिरंगी का राज्य तो पुलिस और सेना के अत्याचार का राज्य था । पुलिस का अत्याचार आँखों के सामने था । सेना भी अत्याचार अत्याचार करती होती । एक बात सब निकली, सूखी भी सब होगी । गोपी यह भी जानती थी कि जावू अपने माता-पिता का साइला बैरा है । अब देवकान्त आया था, तो जावू ने अपने बाबू दिङ्गराज से पूछा था—“यदि मैं भी देवकान्त के साथ काम करूँ, तो कैसा रहे ?” जावू तो बाबू का साइला बैरा है । बाबू ने आज्ञा दे दी, पर स्वयं देवकान्त नहीं चाहता कि जावू हथेली पर जान रखकर आगे आये । प्रमात और मुकून के तो छिन-छीन पार-पार मात्र हैं । उन्हें कुछ हो गया, तो घर वालों की अधिक हानि नहीं होगी । पर जावू तो अपने माता-पिता का हकसोता बैरा है, उसके बिना तो घर टूटकर जायेगा । पर मैं कमाने वाला नहीं हूँ ।

देवकान्त के सम्मुख मैं शिकारी गोंब के गोंब-बूढ़ा मणिवर को पूरी लखर रखते थी । गोंब-बूढ़ा होने के माते तरकार मले ही उसे अपना दायीं हाथ समझती थी, पर उसके दिल में फिरंगी के विरुद्ध जो आग सुलग रही थी, उसे देवकान्त ने मझका दिया था ।

प्रमात और मुकून ने रात के ठण्डे में मणिवर से सलाह की—  
“अब क्या पग उठाया जाय ?”

## चालीस



बाँस-कुच में मन्वान पर लोटे-लोटे देवकान्त ने खम्ब, निर्मल, तारों-मरे आकाश को बड़े ध्यान से देखा। टार्च जलाकर उसने कस्तूर पर बैठी घड़ी पर नज़र डाली जेब में फड़ हुए पिस्तील को टटोल कर देखा; ऊपर की जेब में लगे पाठ-टेन पैम को छूकर देखा।

घड़ी ने बताया कि रात के बारह बज रहे हैं। आज पूरा की अन्तिम दिशि थी। बाँसों की शाखाओं के बीच स उस ने देखा कि माघ बिहू के सिलसिले में गाँव क लोग 'मेखी' की आग छाप रहे हैं।

मुक़्क़ों और युवतियों के मिले-जुले आह्लास सुनाई दे रहे थे। कमी किली गीत का बोल माताबरब में तैरने लगता था। देवकान्त का भी तो चाहता था कि वह भी मन्वान से उतरकर नीचे खला बाप और माघ बिहू की आग छापने वालों के साथ मिलकर वह भी अग्नि देवता को नमस्कार करे। यही तो हम त्योहार की सब से बड़ी विशेषता थी। मन्वान पर पड़े-पड़े वह शीत से अकड़ा जा रहा था। उसने सोचा—आज कल नारायण बापेगा पूरे कोरशोर से मेरी तलाश में है। शिकारी गाँव का घाना जलावे जाने की धटना भी बहुत ताज़ी है; वह स्वयं आउनिपायी सब से हाथी की मचायी करते हुए शिकारी गाँव में आ पहुँचा है और आजकल वहीं गहरा दुग्धा है। उस ने कहा मिराँव किया वह मन्वान कोककर नीचे नहीं उतरेगा।

बढ़ सोचने लगा—क्या लखर, नारायण अपन सिपाहियों के साथ  
 ग़रत कर रहा हो । मैं इसमी बाबानी से तो उसक हाथ आने से रहा ।  
 मेरा रिस्तोत सखानत रहे । दो-चार आदमियों को तो मैं मइज ही ठगडा  
 कर सकता हूँ । यदि ऐसी ही बात हो जान—जान पर खेल आने की  
 वही मिर पर आ पहुँचे—तो मैं यह भी कर सकता हूँ जीवित तो मैं  
 नारायण के हाथ आने से रहा ।

आकाश पर आकाश-गंगा भी तो आब बहुत सुन्दर लग रही थी ।  
 इन तारों में मेरी भी साँझ है, उसने सोचा—तारों के साथ तो मनुष्य का  
 चिरकालीन सम्बन्ध है । किम ग्रह में मेरा जन्म हुआ, वह भी तो इसी  
 आकाश में होगा । क्या यह झूठ है कि एक विशेष ग्रह में जन्म होने पर  
 आसु-वर्षत मनुष्य पर उस ग्रह का प्रभाव रहता है । इन में कौनसा  
 तारा ऐसा है, जिसे मैं अपना तारा समझ कर देखता रहूँ ।

वह आकाश-गंगा का दृश्य वह प्यास से देखता रहा । किसी स्थल  
 पर उस ने पढ़ा था कि जो लोग शहीद हो जाते हैं, वे मर कर तारे बन  
 जाते हैं । यह कैसे हो सकता है । या यापद यह ठीक है । तो क्या  
 असंभव शहीद हो चुके हैं तारों में । क्या ये सब तारे पदले मनुष्य थे ।  
 मनुष्य की कस्यना का भी कोई ठिकाना नहीं ।

बाँस की खान्धाओं में से हवा काफी अन्तर पर चलती दूर भित्री बहुत  
 मशी लग रही थी । आब सारा गाँव लुप्त था । बैबकाम्त खोजन लगा—  
 बर्हा शिकारी गाँव में न जाने किस-किस पर हाथ हासा होगा नारायण  
 ने । शिकारी गाँव की पीड़ा को इस गाँव वाले अपनी पीड़ा नहीं  
 समझते । समझते होते तो तो माथ बिहू कैसे मनाते ।

आकाश-गंगा पर भी उसे रह-रह कर श्रेष्ठ आने लगा । यदि वह  
 सच है कि ग्रह-जघनों के साथ मनुष्य का सम्बन्ध होता है, तो यह बहुत  
 स्थिति क्यों होती कि शिकारी गाँव में कुछ लोग पुलिस के हाथों भुरी तरह  
 मिट रहे हैं और आकाश पर इतनी मयनामिराम आकाश-गंगा अपनी  
 छटा दिखा रही है । आब तो तारों को भी यह हथोस्तात नहीं दिखाना



पाविए ।

मजान पर लोटे-लोटे उस ने कई बार करघट बटली कई बार वह कम्पना-बारा में वह गया—मुकन और प्रमात पिट रहे होंगे बाबू अभी इस कार्य में सम्मिलित नहीं हुआ होगा, मैं ने उसे समझा दिया था । जिस का बाबू अम्बा हो, मैं बीमार रहती हो, उसके पक्ष में जाने से तो बेचारी का घर ही उबड़ जायगा । बाबू ने अबरन मेरी बात मान ली होगी । मैं ने उस से कहा तो था—अब ऐसी स्थिति का सामना बाबू, कि तुम्हारे मैदान में कूबे बिना काम ही न चल सके, तो मैं स्वयं तुम्हें हाथ बटाने के लिए कहूँगा अभी नहीं । अभी तो प्रमात और मुकन ही काफ़ी हैं । नारायण अब प्रमात और मुकन पर गरब रहा होगा । या शायद प्रमात और मुकन उसके हाथ धाम से पहले ही भाग गये होंगे । अब शिकारी गोंव से जमाधार मिले, तो पता चले ।

बार-बार उसका हाथ खेब में चला जाता था । पिस्तौल को दबोचते हुए वह सोचने लगा—काश मुझे नारायण को सदा के लिए ठहरा करने का अवसर मिल जाय ! शिवाही से उन्नति करते-करते उसे बायोगा बनने में न जाने कितने वर्ष लग गये । अब वह मुझे पकड़कर सरकार के सम्मुख अपनी काय-कुशलता का प्रमाण देना चाहता है । अधिक-से अधिक वह सफल इन्स्पेक्टर बन जायगा । यह भी कौन जानता है कि उसे यह अवसर अवश्य मिलेगा ! शायद मेरे पिस्तौल की गोली उसकी छाती में लगे और वह सदा के लिए सो जाय !

मिमी की आग की ज्वाला ऊँची उठ गयी थी । देवकान्त को लगा, नई लकड़ी डाली गई है । वह सोचने लगा—शीत कास में तो अलाब बेसे ही चम्का लगता है । फिर यह तो माय बिहू की 'मिमी' है । अग्नि देवता, मेरा ममस्कार स्वीकार करो !

उसकी दृष्टि आकाश-गंगा की ओर उठ गई । मन-ही-मन वह सोच कर कि मृत्यु के परचाह् मनुष्य तारा बन जाता है, उस ने आकाश-गंगा के तारों की ओर ध्यान से देखा । ममस्कार, आकाश-गंगा ! मेरे लिए

स्थान रमता । मैं आ रहा हूँ । मैं बहुत शीम आ रहा हूँ ।

उस के मस्तिष्क को सौर का सटका लगा । अभी तो बहुत बाय रोय है । अभी तो कवल शिखरी गोंब का धाना ही अलाया गया । अभी तो बहुत कार्य रहता है । नाशपण भी क्या पाह करेगा कि अभी देवकान्त से पाला पका था । मामुली के एक-एक बाने को आग न लगायी, तो मेरा माम देवकान्त नहीं । मामुली के सम्बन्ध में यह तो विस्मय है कि इसपुत्र के हाथों ही इसकी खति हुई है । यहाँ नर मायी एकत्रि होठे सत्सा बर लगे हाने । मामुली का माय तो बड़ो उरमाऊ है । धन्य है मामुली ! मेरे कलकत्ता बाल मित्र सोचते होंगे कि देवकान्त कापर है । वे क्या जानें कि देवकान्त कितना आकरपक काम कर रहा है । पाँच पाँच अंग्रेजों को ठरडा करने में मैं ने अपने मित्रों का हाथ बढ़ाया । यह तो बहुत आसान था कि मैं भी पकड़ा जाता मुम पर भी अमिपेय चलता मुझे भी पॉसी हो जाती । पर यह जीवन इतना सस्ता भी क्यों बेचा जाय ? बेचने का तो प्रश्न ही नहीं उठता । इस जीवन को यों इतना शीम क्यों गँवाया जाय ? मामुली की मायी त्रिपुनी उरमाऊ है, उतने ही उन जाऊ है मामुली बालों के मस्तिष्क; नहीं तो मेरी बात, जो दिखगिमुल बालों की समझ में न आइ, शिखरी गोंब बालों की समझ में कैसे आ गई ? अभी तो मुझे यह लककर चलाना है । मामुली से अंग्रेज का बीच नाश न कर दिया, तो मेरा नाम देवकान्त नहीं । समूचा हिन्दुस्तान न जाने कब स्वतन्त्र होगा ! पहले तो मामुली ही स्वतन्त्र होगी । बाहिर तो यह था कि पहले दिखगिमुल ही स्वतन्त्र होता, क्योंकि आज से पीने दो सो कर पूर अंग्रेजों का पहला स्टीमर दिखगिमुल के बाट पर ही लगा था, और वहीं से पूरे अस्म देश में पराधीनता का बीज बोने का भीमशेर किया गया था । यह सोचते-सोचते वह निद्रा-भारा में रह गया ।

उसकी आँख खुली, तो उस पाह आया कि आज तो स्वप्न में अटुल से ही नहीं, अभी अनंतरा से भी बातें हुई । अटुल इतना शीम बिबाह

के चक्कर में पड़स जायगा, यह तो उस ने भूलकर भी नहीं सोचा था। स्वप्न में मायी मूलतः बेटे को घूम पिता रही थी। अतुल आर्त्त मुकामे बैठा था, जैसे सोच रहा हो—अब देवकान्त के सामने आँखें कैसे उँची करूँ ? उस ने अतुल के शिर पर हाथ पेरते हुए कहा था—अब बात नहीं, मित्र ! हम चाहो तो अब भी बहुत-बहुत कर सकते हो। विदेशी सरकार का कत्ता उलटने के लिए तो बहुत-बहुत करना होता है। हिंसा और अहिंसा दोनों ही सहायक हो सकती हैं। मैं जानता हूँ, हिंसा दुर्गै बनकर नहीं तो अहिंसा ही रही। कुछ तो करो, अतुल !

मोर होने में अधिक देर न थी। उसे ध्यान आया, मामुली के चतुर्दिक् पानी है और यह असम की रोप भूमि से कटी हुई है। उसे यह दुःख सन्ताने लगा कि तीन दिन से उसे नगर-कागज देखने को नहीं मिला। उकड़ी चिड़िया जो कबर छाती है, यहाँ तो वही कबर मिलती है। न जाने कितने दिन तक नगर-कागज देखना मुशकिल न हो, सिवली बार मामुली की सकल पर आते हुए एक व्यक्ति के हाथ में कबर-कागज देखा था। उस से लेकर मैं ने भी यह कबर-कागज पढ़ना चाहिए, तो उस ने यह कबर-कागज मुझ ही दे दिया। वह उसे पढ़ चुका था। वह जोरहाट से आ रहा था। जोरहाट से चलकर यह कोकिलामुल पहुँचा; वहाँ से ब्रह्मपुत्र पार कर मामुली के किनारे आ लगा पहले कमला बाकी तब देखने गया, अब आठमियाटी तब देखने जा रहा था। उसके पास मामुली का बड़ा मानचित्र था, जिस पर विशेष रूप से यह चक्क दिव्यार गए थी—मामुली में सब से ऊँच स्थान पर निर्मित यह चक्क। मामुली के मानचित्र के अतिरिक्त उस व्यक्ति के पास किसी अंग्रेज की लिपि हुए एक पुस्तक भी थी, जिस में बताया गया था—वस्तुतः मामुली को लम्बाई बीस मील से कहीं अधिक है, बरा-श्रुत में बाढ़ आती है तो लम्बाई कम हो जाती है। इसकी बीस मील लम्बाई तो बरा-श्रुत में भी पानी रहती है। उली प्रकार इसकी चौड़ाई भी पौंच मील से इकोदी तो सहज ही कही जा सकती है। पर बरा-श्रुत में भी पौंच मील की चौड़ाई

तो सदा बनी रहती है। जैसे बाद का जोर अधिक बढ़ जाता है, तो मामुली के भीतर तक पानी आ जाता है। मामुली के एक गाँव से दूसरे गाँव तक ज्ञान के लिए गुटिया गाब लेनी पड़ती है। मामुली वालों के लिए यह संकट कई-कई सताह तक रहता है। कुल मिलाकर मामुली में बीस-पन्नीस हजार की जगसंख्या हो आवश्यक होगी। बहुत ही गैर और निरक्षर लोग बसते हैं वहाँ। बिधा के नाम पर थोका बहुत प्रकाश मामुली के कमला बाबी, छाठनियाड़ी, दक्षिणपाट और गकानूर—इन चार बेप्याव सत्रों में ही दक्षिणोत्तर होता है। इसमें के धार्मिक जीवन में यह ठस्तेलनीय है कि निराश्वर मगवाम के उपासक, बेप्याव सन्त शंकर देव और उनके साधक शिष्य माधवदेव के सध्याय ने अपने चार सत्र स्थापित करने के लिए मामुली को ही चुना। उस व्यक्ति ने मुझ से पूछा था—आप क्या काम करते हैं ? मैं ने अपनी ठोकी पर हाथ पेटकर कहा था—एक दिन मैं भी छाठनियाड़ी सत्र की यात्रा पर जाना चाहता हूँ। वह बोला—आज ही क्यों नहीं चलते मेरे साथ ? मैं ने कहा था—आज नहीं, फिर किसी दिन जाऊँगा। वह बुर बुर कर मुझे देखता रहा, जैसे ओह सी० आई० बी० का छादमी हो। मैं ने भी अपनी परशुराम-कुण्ड की काल्पनिक यात्रा की कहानी से उसे बहला दिया था। मेरी कहानी वह कितने मजे से सुनता रहा था। सकल से हटकर हम एक पोखर के किनारे जा बैठे थे। उसके पास बेंले थे। उस न तीन बेंले मुझे भी दिये थे। पोखर में बत्तलें ठहर रही थीं। मेरी आँखें उस अंग्रेज की लिखी हुई पुस्तक पर जमी थीं। इस में मामुली के भूगोल पर ही अधिक जोर दिया गया था। बाद में मेरी हुई नवियाँ छिन्न से जीवित होकर मामुली के बीचों-बीच अपना ठाना-बाना जुन बैठी हैं। ऐसे गाँव बहुत कम हैं, जो बाद में जूझते नहीं। हो-देकर मामुली के एक सिरे से दूसरे तक सम्मार्थ के रूप गुजरने वाली सकल ही ऐसी ऊँची जगह है, जो बाद के दिनों में लोगों के लिए सहायक सिद्ध होती है। वे अपने पशुओं को इस सकल पर ही आते हैं, स्वयं पेक्षा पर मजान बनाकर दिन गुजारते

है ।" मन्वान का ध्यान आते ही उस ने अपने मन्वान को झूक देखा—  
 यह मन्वान तो सन्मुख बड़ी सुन्दरता से तैयार किया गया है ।"

पूर्व में नये रंग आग रहे थे । अब उपा के चौंघट उठाटने का समय  
 आ रहा था । उसका ध्यान तो उसी पुस्तक की ओर था, जो उस ने उस  
 दिन पोल्स के किनारे केले जाते हुए पढ़ी थी । उस समय यह बहुत भूला  
 था, केले स्वादिष्ट थे । उस लेखक की विदेशी मनोकृति पर उसे देर तक  
 श्रेय आता रहा था । मोर की प्रतीक्षा करते-करते वह श्रेय फिर से आग  
 उठा, जैसे उस श्रेय लेखक के शब्दों में बाद में मरी हुई गद्दी आग  
 उठती है । उस श्रेय न मामुली की हाथी पास की सुरंगों का विशेष  
 रूप से उल्लेख किया था । हाथी पास के जंगल दूर-दूर तक चले गये  
 हैं, यह तो उसने ठीक ही लिखा है । दलदल वाली जगह पर ही उगती  
 है हाथी पास । "पर यह तो मामुली में हर कोई जानता है । वह लिख  
 कर उस श्रेय लेखक ने कौन-सा तीर मारा ? और उसकी पुस्तक तो  
 बाहर वालों के लिए है, जो मामुली को नहीं जानते । अपनी एक  
 बात का उल्लेख करते हुए उस श्रेय ने यह भी तो लिखा है कि किस  
 प्रकार उसने एक बार मामुली की लकड़ के किनारे एक पेड़ पर बने हुए  
 मन्वान पर एक रात बिताई थी । उस ने अपने मेहनताने के आस्तित्व का  
 बदला यों चुकाया था कि अपनी बन्धु से उस बाघ को मार डाला  
 था जो पास के एक जंगल से लकड़ पर आ गया था और कदाचित् वह  
 बाघ बेचारे मीरी की गर्मवती गाय को मार डालता ।

उस श्रेय पर देवकान्त को बुरी तरह श्रेय आने लगा । वह कहना  
 चाहता था—हिन्दुस्तान के लोग गर्मवती गाय के समान हैं, फिरंगी  
 बाघ के समान गाय पर झगड़ता है ।"

उस ने जेब में हाथ डालकर अपने पिस्तील को टोलेख देखा—  
 ठीक है, पिस्तील अपने स्वाम पर पड़ा है । उसे अपने ऊपर श्रेय आने  
 लगा—पिस्तील जेब में है, फिर भी मैं यहाँ छिपा बैठा हूँ ।

वह यों मामुली की लकड़ से बाहर मौल भीतर की ओर था । यहाँ

से टाई मौल पर या बीसरी गॉब, जहाँ अधिकतर काछारी लोगों के घर थे। बीसरी गॉब से डेढ़ मौल या शिकारी गॉब। उसकी दृष्टि आकाश पर कम गई। उसका ध्यान उसे बहुत प्रिय था। उस बीमेज पर फिर क्रोध आने लगा—मामुली की उठा का लो साहब बहादुर ने भूलकर भी नाम नहीं लिया। मैं कहता हूँ—मामुली में उठा कितनी प्रिय लगती है, कितनी संकटबाहक, कितनी पुष्ट, कितनी आशाप्रद !

उसे उस दिन का ध्यान आ गया जब मामुली स्वतन्त्र हो आयी। मामुली ही क्यों, जब सारा हिन्दुस्तान मुल्कामी की कैदियाँ तोड़कर उठा हो आयगा, जब यहाँ से बीमेजी साम्राज्य का लफ्फा उलट आयगा !

क्रिस्ती स्वर्णध्या के मयनामिराम मायक के समान सुब में सुँद बाहर निकाला, तो देवकान्त ने बीसों के बीच से मँककर देखा। गॉब की ओर से गॉब-बूढ़ा रंजन आ रहा था। गॉब-बूढ़ा के हाथ में एक पोटली थी। देवकान्त समझ गया कि उसके लिए बलवान आ रहा है। उसे बहुत मूल लगी थी। वे लोग बचपुत्र कितने अच्छे हैं। उन ने सोचा—इहै मेरा कितना ध्यान रहता है। ठीक समय पर हर चीज मिल जाती है।

रंजन जब मयान के ऊपर आ गया था। उस ने पोटली देवकान्त को देकर पूछा—“उरु तो नहीं लगी थी ?”

“उरु कैसे लगती ?” देवकान्त ने हँसकर कहा, “‘मेजी’ की धारा बल रही हो गॉब में, और तुम्हारे देवकान्त का उरु लगती ! यह कैसे हो सकता था, काका ?”

“पर ‘मेजी’ की धारा तो बहुत दूर थी,” रंजन ने मयान के ऊपर पहुँचकर कहा, “तो थोड़ा बलवान कर लो !”

“काका, एक मेजी वह भी तो है, जो दिख में लगती है।” देवकान्त ने गम्भीर मुद्रा बना ली।

रंजन ने अपनी ही डेर लगाई, “बेटा, शिकारी गॉब से प्रमत्त आवा हुआ है।”

“तो उसे साथ क्यों न लेते जाये।” देवकान्त की झल्लें चमक उठीं।

“वह तो तुम्हें देखने की निरुद्ध कर रहा था, पर मैं ने कह दिया—  
देवकान्त तो कमलाबाकी गंगा हुआ है।”

“वह क्यों कह दिया, काका ! प्रमाद तो मेरा साथी है। क्या  
सबेर लाया है प्रमाद।”

“कह रहा था—भाराम्बा ने जादू को ही पकड़ा है, और जादू की  
कुटी सड़ पिटाई हो रही है।”

देवकान्त के मुँह पर चिन्ता की रेखाएँ उमरीं। वह चुप बैठ रहा।

“अच्छा, तो मैं प्रमाद को बुला साता हूँ।” रंजन ने मञ्चान से  
नीचे उतरते हुए कहा, “इतने में तुम बलपान कर लो।”

# इकतालीस



शिफारी गाँव पूर्ण रूप से मीरी गाँव होने के कारण यहाँ माघ बिहु नहीं मनाया जाता था, पर नारायण ने पहले से फ़ैसला कर रखा था कि अबके इस गाँव में भी 'मित्री' जसेगी। लेकिन दिल की बात उठ ने किसी से नहीं करी थी।

शिफारी गाँव के मीरी यद्यपि अन्य असमिया जनों के समान 'मित्री' नहीं बुलाते थे, फिर भी वहाँ के समान वे इस वर्ष भी साय बाले कीलारी गाँव में माघ बिहु की आग तापने से न चूके। पूरा गाँव तासी हो गया। नारायण ने सोचा—यह अच्छा अवसर है।

अबू तो पहले से पुलिस की हिरासत में था। इसर उसके आगे बापू और बीमार माँ को भी पकड़ लिया गया था। और अब पूरा गाँव की अन्तिम रात नारायण को एक नये सुनवार के कम में देखने जा रही थी।

एक सिपाही को नारायण ने पहले से बैरकर कर रखा था कि वह बाबू के घर के नीचे वाले मन्चाम में चुप जाय, जहाँ सुनार बँधे रहते हैं और चुनके से आग लगाकर भाग जाये।

सिपाही ने यह काम बड़ी कुशलता से किया।

उधर कीलारी गाँव में 'मित्री' की आग तापते लोगों के पास वह लम्बर पहुँची कि बाबू के घर को आग लग गई। दूर से आग की ऊँची उठती धुआँ देखी, तो वे शिफारी गाँव की ओर बीड़ पड़े।

एक कम, न एक अधिक, पूरे पंचपन घर जलकर राख हो गये। आग



बूँदों की धरफ भी पैर रही थी। पुलिस के सिपाही आग बुझाने का नाटक खेलते रहे, पर आग उन के पैर के बाहर थी।

साठ-आठ घण्टों में सोठे बच्चे और कुछ बूढ़े रोती भी बल में। कुछ मिलाकर पौच-छा: स्त्री-मुर्खों को ही पुलिस ने आग में जलने से बचा लिया था।

बेसे नारायण ने एक-एक आदमी के सामने शोक-प्रदर्शन किया। मण्डिर का घर बच गया था। नारायण ने उस के सामने जाकर भी रोती स्त्रियाँ बनाकर बरी कहा, “मुझे इस बात का बहुत दुःख है मण्डिर कि शिकारी गाँव में अज्ञानक आग लग गई और इतना नुकसान हो गया।”

मण्डिर ने बे-रस लोगों की दुहाई देकर कहा, “दारोगा जी, अब तो जादू और उस के माता-पिता को छोड़ दीजिए। अब तो हमारे गाँव को म्हाबानू ने ही धाना जलाने का बरक है बाबा।”

अगले दिन मोर होते ही जादू के माता-पिता को मुक कर दिया गया। फिर सौंझ होने पर, जब बीसहारी गाँव निवासी दारोगा के पैरों पर पिर गये, जादू को भी छोड़ दिया गया। इस के लिए यह शत रसी मई कि शिकारी गाँव और बीसहारी गाँव के लोग मिलकर बे-रस लोगों की सहायता करें और उसे हुए जाने को भी फिर से बना दें।

बनाबदी दौर पर नारायण को लोगों के साथ छद्मानुभूति थी मीठ से वह सुरा था।

जादू का मुख कन्द था, पर वह बात उस से छिपी न थी कि शिकारी गाँव के पंचपन बर को जलाने और बीस स ऊपर सोठे बच्चों और बयोदुख प्राणियों की निर्मम हत्या का पाप नारायण ने ॥ कमाया है। उस इतना सन्तोष अवश्य था कि उस के माता-पिता बच गये। उसकी बहन भी बच गई थी, क्योंकि उस रात वह मण्डिर के घर बली गई थी।

प्रमाद अपने को भावशाली मानता था, क्योंकि वह देवकान्त से मिल आया था, पर इस दुमाय का भी तो पारोबार ॥ था, उसके पीछे

म केवल एक बीमार से अधिक गाँव जलकर राख हो गया, बीच से ऊपर बन्ने और बूढ़े भी इस आग में जल गये। मरने वालों में ठठका बापू भी था।

मुकम इतना-सा बैठा था—शिक्कारी गाँव में उस रात सर्वप्रथम बापू का घर आग की मेंट हो गया, तो मैं अपने पर पर क्यों उपस्थित न था ! मैं पर पर होता तो शायद इतना बड़ा दुःखान्त होने से बच जाता। परं के जलने से कहीं अधिक उसे बन्नों और बूढ़ों के जल मरने का दुःख था। ख़बर, मुर्गियों और कबूतर भी तो जल गये थे, उनकी संख्या का अनुमान लगाता सहस्र न था।

मुकमों का विश्वास था, गाँव की आग लगाने में पुलिस का हाथ है पर गाँव के ग्राम्य लोग नारायण की बगुला-मछि के प्रभाव से बच रहे थे, “नारायण लाल बुरा हो, वह गाँव की आग लगाने का पाप नहीं कमा सकता।”

बापू को तब से अधिक चिन्ता इस बात पर थी कि गाँव-बूढ़ा मखिबर भी नारायण की बातों में आकर लोगों से कहता फिरता है—आग लगाने में पुलिस का कोई हाथ नहीं हो सकता।

“अब क्या किया जाय ?” प्रभाव ने बापू के पास आकर कहा।

“बदला लिवा जाय, और क्या किया जाय ?” बापू ने गम्भीर होकर कहा, “मेरा विश्वास है कि देवकान्त भी यही कहेगा।”

“तुम ठीक कहते हो,” प्रभाव ने समीप होकर कहा, “मुझे पार है। उस दिन मैं देवकान्त से मिला, तो उस ने कहा था—शिक्कारी गाँव वाले बापू की पिटाई को सारे गाँव का आपमान समझें और सब इकट्ठे होकर किरंगी से लोहा लें।”

“अपनी पिटाई का तो मुझे दुःख नहीं,” बापू ने हवा में हाथ उछाला। वह बहुत गम्भीर मकर खाता था।

इसमें मैं मुकम भी वहीं आ निकला।

“तुम बताओ, मुकम !” बापू ने झूठे ही कहा, “क्या दुनिया की

कोई ऐसी शक्ति है, जो हमें बदला लेने से रोक सके ?”

“एक बार देवकान्त से मिलकर बात करनी चाहिए ।” मुकुन्द बड़े हुए परों की ओर देखकर बोला, “हम ने कभी न सोचा था कि नारायण यह पाण्डु बनेगा ।”

तीना मित्र देर तक बातें करते रहे । “देखते नहीं, जो बे-कर हो गये, वे अपने कर्मों को रो रहे हैं ।” जाधू ने गम्भीर होकर कहा, “जिन के बन्धे और बूढ़े बल मरे, उन के आँसुओं में बाद आ गई—ब्रह्मपुत्र की बाद से भी बड़ी बाद ।”

“ब्रह्मपुत्र हमारे आँसु पीता आया है ।” प्रमात ने ब्रह्मपुत्र की ओर संकेत करते हुए कहा, “ब्रह्मपुत्र हमारे सुल-दुःख का साक्षी है ।”

“हमारा आगला कदम क्या हो ?” मुकुन्द ने प्रमात की बात अन सुनी करते हुए कहा, “बह बातों का समय नहीं, कुछ करने की बेला हमारे द्वार पर आकर लकी हो गई । उठो, कुछ करो ।”

# वयालीस



मन्थिपर किसी काम से त्रिसंगमुख आया था। उस के पीछे-पीछे बाबू, प्रभात और मुकुन भी अपनी माव लेकर दिर्नागमुख पहुँच गये। शिकारी गँव के घर जलाने आन । तब परहसे ही बनसिंह की दुकान तक आ पहुँची थी।

बनसिंह ने एक आदमी को मेज पर अनुस को बुलवा लिया। साथ ही रास्ताज काका आ गये।

राम ने बायें आदमी के हात छोटे कर दिए, पर जब वे पैस देने लगे तो राम ने लेंगे से इनकार कर दिया।

अनुस बोला, "आज तो बनसिंह भी बाय के पैसे नहीं ले सकता।"

अनुसिंह कुहरा हुआ हुआ था। बनसिंह की दुकान पर जान-गोष्ठी का समी रँध गया।

राम बोला, "नारायण ने यहाँ तो कभी हठमा अन्धकार नहीं किया था।"

"मुझारी तो नारायण की प्रशंसा करने की आदत रही है।" बनसिंह ने चोट की।

प्रभात बोला, "हमारे बाबू मार्ग की अठनी दिखाई हुई, उसे तो हम पूरा भी सकते थे, पर नारायण न तो हमारे घर आता डाले।"

"पहले मेरी बात का उत्तर दो।" राम कह उठा, "शिकारी गँव का माना किस ने जलाया था और क्यों जलाया था। यह पक्षी देवप्रान्त

कोई ऐसी शक्ति है, जो हमें बदला लेने से रोक सके ?”

“एक बार देवकास्य से मिलकर बात करनी चाहिए ।” मुकुन्ध जल्ते हुए घों की ओर देखकर बोला, “हम ने कभी न सोचा था कि मारामस्य यह बाल बलेगा ।”

तीनों मित्र देर तक बातें करते रहे । “देखते नहीं, जो बे-पर हो गये, वे अपने कर्मों को रो रहे हैं ।” बाबू ने गम्भीर होकर कहा, “मिन क बच्चे और बूढ़े बल मरे, उन के आँसुओं में बाद छा गई—ब्रह्मपुत्र की बाद से भी बकी बाद ।”

“ब्रह्मपुत्र हमारे आँसु पीता आया है ।” प्रमात ने ब्रह्मपुत्र की ओर संकेत करते हुए कहा, “ब्रह्मपुत्र हमारे दुःख-दुःख का साक्षी है ।”

“हमारा अगला क्या होगा ?” मुकुन्ध ने प्रमात की बात धन सुनी करते हुए कहा, “वह बातों का समय नहीं, कुछ करने की बेला हमारे द्वार पर आकर खड़ी हो गई । उठो, कुछ करो !”

# वयालीस



मशिवर किसी काम से दिलीगमुल आया था। उस के पीछे-पीछे जाहू, प्रमात और मुकम भी अपनी मात लेकर दिलीगमुल पहुँच गये। शिकारी गँव के पर जलाये जाने की शहर पहुँची ही बनसिंह की दुकान तक आ पहुँची थी।

बनसिंह ने एक आदमी को भेजकर अतुल को बुलवा लिया। साथ ही रास्ताज काका आ गये।

रतन ने चारों ग्राहकों के बाल खींचे कर दिए, पर जब वे जैसे होने लगे तो उस ने होने से इनकार कर दिया।

अतुल बोला, “आज तो बनसिंह भी खाय के पैस नहीं ले सक्या।”

चतुर्दिक कुहरा छाया हुआ था। बनसिंह की दुकान पर जान-बोझी का समों बैच गया।

रतन बोला, “नारायण ने यहाँ तो कभी इतना आस्थाचार नहीं किया था।”

“गुम्हारी तो नारायण की प्रशंसा करने की आदत रही है।” बनसिंह ने खोट की।

प्रमात बोला, “हमारे जाहू माई की जितनी फिटार हुई, उसे तो हम मूल भी लकटे थे, पर नारायण ने तो हमारे पर जला डाले।”

“पहले मेरी बात का उत्तर दो।” रतन कह उठा, “शिकारी गँव का थाना किस ने जलाया था और क्यों जलाया था। यह पट्टी देवकान्त

ने ही प्यार होगी ।”

मशिपर ने ठपाइ से सिफुइते हुए कहा, “देवकान्त से मेरी बातें हुई हैं । वह तो कहता है—बिबेशी राज्य का सक्ता सभी उसटा बा सक्ता है, जब हिंसा और अहिंसा के दोनों ठपाय काम में लाये जायें । उसके मतानुसार न अकेली हिंसा कुछ कर सकती है, न केवल अहिंसा ही । हम तो अशक्त निराम हैं, हम पड़े हुए भी नहीं हैं । मैं ने उसे बहुत सम्मझाया था । हम सबको को भी तो मैं ने बहुत समझाया था । हम पर देवकान्त का प्रभाव अधिक है ।”

रत्न ने पूछा, “तो क्या शिकारी गँब का याना देवकान्त ने बताया था ।”

बापू बोला, “नहीं तो ।”

रास्तास ने कहा, “अब वह पूछने या कहाने की बेला नहीं कि शिकारी गँब का याना किम ने बताया । मेरी आसु तो हाथियों के बीच बीटी है । हमारे मामन साहब कहा करते थे—जो काम करना हो, पहले उस पर विचार कर लो; फिर जो फैसला किया जाय, उस पर पूरी शक्ति से चलो ।”

“तो फिर करना क्या है, काका ।” अतुल ने हाथ उठाकर कहा ।

रास्तास पहले तो स्तब्ध रहा । फिर उस ने खवा-बवाकर करना शुरू किया :

“पहले तो वह समझ लो कि शिकारी गँब और दितांगमुल की पीड़ा कोह अलग-अलग नहीं है । जो हत्याकाण्ड शिकारी गँब में हुआ, उसे दितांगमुल में भी दोहराया जाय, सभी हम उस पीड़ा को अनुभव करें, वह तो कोह बात न हुई ।”

“बिलकुल सच है, काका ।” अतुल ने जैसे सब की ओर से कहा, “बिलकुल सच ।”

घनसिंह में धाम के गिलास तैयार कर लिप ध । सब के हाथ में एक एक गिलास धमात हुए बांसा, “पहले जरा गरम हो लो ।”

अनुष्ठान ने बाय का बूट भरकर करना शुरू किया

“मुझ से तो बेवकान्त माराम्त है। उसकी बात ठकती-ठकती मुझ तक पहुँचती रहती है। मामुसी और दिस्तगीमुख तो एक ही हैं। बीच में मझपुत्र बढ़ता है, वस यही अन्तर है। वह कहीं काम कर रहा है, मैं यहाँ काम शुरू करना चाहता हूँ।”

“अब यह मुनते-मुनते तो मेरे काम पक गये, अनुष्ठान।” बनसिंह ने बोट की, “तुम कुछ नहीं करोगे। पहले बाहर दूनवारा से सलाह कर आओ।”

“मूलावारा बेचारी क्या करती है। रस्ताल में हाथ उठाकर कहा, “बद कब अनुष्ठान को काम करने से रोकती है।”

“तो फिर हो बाय छेसला।” अनुष्ठान ने कहना शुरू किया, “कल बुधवार है, काका। हाट-बाजार का दिन। दूर-दूर से लोग आयेगे और मैं तो कहता हूँ—

“मैं तो कहता हूँ, उससे निकाला बाय।” बनसिंह ने हँसकर कहा, “वैसा ही कुलूट, वैसा गोहाटी, शिबसागर और टिकक्याद में निम्नतवा है। मन्वान की सौगन्ध। आनन्द का आदेगा। शिबसागर से दिस्तगी मुख का आम्ता बहुत ब्यादा भी तो नहीं। अरे अरे, आनन्द का बाप्पा।”

रस्ताल ने भी इस विचार को पसन्द किया।



# तेतालीस



सोम के समय दस-बारह नौकरों दिसाँगमुल से शिकारी गोंब में ले गई। यह तय हुआ कि बन्ने, बूढ़े और बलाम सब दिसाँगमुल आ जायें, जहाँ उनके खाने-पीने का प्रबन्ध दिसाँगमुल वाले करेंगे। दिसाँगमुल वालों ने चन्दा करके लगर का प्रबन्ध कर दिया। इस कार्य में मीरी, असमिया और नेपाली

का मेह नजर न आता था।

सूर्योदय के साथ-साथ शिकारी गोंब से नौकरों दिसाँगमुल पहुँची।

पहले शिकारी गोंब वालों को बहापान कराया गया, फिर एक समा का कार्यक्रम रखा गया।

दोसिए डोल बजा-बजाकर हाट-बाजार में आये हुए लोगों से प्रार्थना कर रहे थे—आप लोग समा में अवश्य पहुँचें।

समा के लिए आलीसीगा के समीप वह स्थान चुना गया, जो पिछले वर्ष ब्रह्मपुत्र की बाढ़ के कारण जेती के अयोम्य हो गया था।

समा में आने के लिए विद्याप्रसाद और विष्णुप्रसाद को भी सन्देश भेजा गया, पर अन्तिम क्षण तक प्रतीक्षा करने के बाद वह वे दिलाई न दिये। नीरद आज सबेरे से ही आ गया था आज वह पहले से अधिक गम्भीर मकर आ रहा था।

शिकारी गोंब के चलने की जगह छोड़ी की तरह फैल गई, पर हाट बाजार तो बन्द नहीं हो सकता था। बाहर से आये हुए लोगों के लिए

यह समस्या थी कि वे अपनी चीजें किसें सौंपालें। पर जब हाट-बाजार के बहुत से व्यापक समा में जा गये, तो रास्ताल काका ने हाट-बाजार में जा कर लोगों को इस बात पर राखी कर लिया कि वे अपनी-अपनी चीजें समेटकर रख लें। इसकी रखावासी का काम आठ-दस मुन्कों को सौंप दिया गया। किसी की यह मजाल न थी कि कोई चीज हथ-उधर कर सके। ऐसा-ऐसी सब समा में जा गये।

समापति रास्ताल काका को ही बुना गया। समा के चारों कोनों पर पुलिस के सिपाही गढ़र धा रहे थे। समा में सब से पहले उन लोगों के दशन कराये गये, जो शिकारी गोंब से बे-बर होकर यहाँ पहुँचे थे।

शिकारी गोंब के गोंब-बूढ़ा मखिबर ने अपने मापक में कहा—

“यह कहना तो सख्त नहीं कि क्यों को आग किस ने लगाई, जैसे यह कहना कठिन है कि बाने को आग किस ने लगाई। फिर भी मैं एक बात कहना चाहता हूँ कि हमारे गोंब में हमारी इच्छा के म होते हुए सरकार ने धाना बसा दिया। इसी से सारा मगका शुरू हुआ। धाना बनाने का बिचार सरकार छोड़ है, मेरी तो इतनी ही मायमा है।”

मखिबर के परम्परा अनुसार को कुछ कहने का आदेश मिला। उस ने ठठकर कहना शुरू किया :

“मैं बहुत पढ़ा-लिखा आदमी नहीं हूँ, इसलिए मेरी बात में कुछ भूल हो, तो मुझे क्षमा कर दिया जाय।

“जैसे मधुमक्खियाँ मधु इकट्ठा करती हैं, ऐसे ही हमारे पुरखाआ को अनगिनत पीढ़ियों ने मिलाकर सच्चाई को इकट्ठा किया। वह सच्चाई क्या है ? वह सच्चाई हमें अनुभव से पगपी। हमें उस अनुभव की कर करनी चाहिए।

“मैं समझा-बोझा मापक देने की शक्ति नहीं रखता, फिर भी एक बात अवश्य कहूँगा। जैसे शिकारी गोंब बलाया गया, जैसे ही हमारा गोंब भी जलाया जा सकता है। गोंब-बूढ़ा मखिबर यह क्यों मूल रहे हैं ? शिकारी गोंब मिट जायेगा, तो वे किस के गोंब-बूढ़ा रहेंगे ? क्या वे

एक ठाँके हुए गाँव के गाँव-बूढ़ा बने खना पसन्द करेंगे ! इसलिए हमें ऐसा काम करना चाहिए कि शिकारी गाँव की रक्षा की जाय । शिकारी गाँव की रक्षा में ही विसाँगमुल की भी रक्षा है । हमारे बीच ब्रह्मपुत्र बहता है, वस इतना ही अस्तर है । यह तो कोई बड़ा अन्तर नहीं ।

“देवकान्त अब नहीं था, तो मेरे साथ उसकी हमेशा बातें होती थीं । वह सदा भारत माता की बात करता था । मैं ने तो भारत माता काब तक नहीं देखी । मैं ने तो विसाँगमुल माता देखी है । जैसे शिकारी गाँव वालों ने मामुली माता मछो ही न देखी हो, शिकारी गाँव माता अवश्य देखी होगी ।

“मेरा एक ही प्रस्ताव है, और यह प्रस्ताव मैं विसाँगमुल की ओर से रख रहा हूँ । हम यहाँ से कुछ बनावकर चले, आगे आगे शिकारी गाँव के निवासी हों, पीछे-पीछे हम विसाँगमुल पासों । और भी दूसरे गाँवों के लोग यहाँ आये हुए हैं । वे चाहें, तो अपनी शक्ति हमारे साथ मिला सकते हैं ।”

वह धड़क अटल बैठ गया ।

खलस काका ने उठकर कहा, “अब मैं प्रसिद्ध लेखक नीरद बाबू से कहूँगा कि वे भी अपने विचार हमारे सामने रखें ।”

नीरद ने उठकर खना आरम्भ किया, “भारत माता की जय ! यहाँ वह प्रश्न उठाया गया है कि भारत माता को तो आप लोग नहीं जानते, और आप तो अपनी-अपनी गाँव माता को ही जानते हैं । हमारे देश में तो कई प्रांत हैं । बंगाल, असम और उड़ीसा; मद्रास, यू० पी० और बिहार; पंजाब, कश्मिर और जम्मू । हमारा देश तो विशाल है । यहाँ लाख लाख गाँव हैं । वे लाख लाख गाँव माताएँ मिलकर एक ही नाम से पहचानी जाती हैं वह नाम है भारत माता ।

“मैं ने बहुत यात्रा की है और सर्वत्र भारत माता के दर्शन किये हैं । एक दिन भारत माता स्वतन्त्र होकर रहेगी । इस से तो अंग्रेज भी हन्कार नहीं कर सकते । अब भी भारत माता स्वतन्त्र होगी, वह अपने बेटों

की मिली-जुली शक्ति से ही स्वतन्त्र होगी। मैं रातनीसि में पका हुआ मनुष्य नहीं हूँ। मैं तो एक साधारण लेखक हूँ।

“ब्रह्मपुत्र पर पुस्तक लिखने की मेरी पुरानी समझ है। मेरी पुस्तक का एक भाग शीघ्र ही दफ्तर जाने वाला है, दूसरे भाग की तैयारी कर रहा हूँ। मैं आज तक जेल नहीं गया। जेल जाने का मेरा संकल्प भी नहीं है। फिर भी मैं भारत माता का बैठा हूँ।

“देवकान्त से कलकत्ता में अक्सर मेरी बातें हुआ करती थीं। वह मुझ से करता था—कामित-पथ अपनाओ। मैं करता था कि हमारा अपना-अपना पथ है। वह करता था—लेखक तो और भी बहुत स हैं। मैं करता था—जो चीज बे मिल रही है मैं उस से आगे की चीज लिखना चाहता हूँ; लिख पाऊँगा या नहीं वह और बात है, बल तो कर ही रहा हूँ। वह करता था—तुम लिखने के बहाने देश के काम से पीछे हट रहे हो। मैं करता था—देश के लिए तो वे भी काम करते हैं, जो अपने ब्राह्मण पर बड़े तैयार करते हैं; ऐसे ही तुम्हारे और बर्बर भी देश का काम कर रहे हैं अपना जुमाने वाले बुलाए और ताबुन बसाने वाले मजदूर भी देश के लिए ही दिन-रात एक करते हैं और हमारे विद्यालय देश के अनगिनत किसान, जो छठ-दिन लहू-पसीना एक करके अच्छे उगाते हैं, वे भी तो देश का काम करते हैं।

“मेरा मार्ग न हिंसा का मार्ग है, न अहिंसा का। मेरा मार्ग तो लेखनी का भाग है। शिकारी गाँव वालों के साथ मेरी पूरी सहानुभूति है। यदि मैं शिकारी गाँव का गाँव-बूढ़ा होता, तो आग लगाने वालों के निकट अपना रोप मकट करते हुए गाँव-बूढ़ा की पकड़ी त्याग देता। एक लेखक भी त्याग करना जानता है। मुझे सरकार ने कोई उपाधि नहीं दी। पर इस अवसर पर मुझे रबीन्द्रनाथ ठाकुर की याद आती है, जिन्होंने अमृतसर के जलियाँवाला बाग में डायर के हत्याकाण्ड से दुःखी होकर सरकार को ‘सर’ की उपाधि सौंप दी थी। मैं करता हूँ, उस दिन रबीन्द्रनाथ ठाकुर ने भारत माता की आँखों में आँसू बहाकर ही विदेशी

ब्रह्मपुत्र /

एक ठगने हुए गाँव के गाँव-बूढ़ा बने खना पसन्द करेंगे ? इसलिए हमें ऐसा यत्न करना चाहिए कि शिकारी गाँव की रक्षा की जाय । शिकारी गाँव की रक्षा में [ ] दिसाँगमुल की भी रक्षा है । हमारे बीच ब्रह्मपुत्र बहता है, उस इतना ही अन्तर है । वह तो कोई बड़ा अन्तर नहीं ।

“देवकान्त जब यहाँ था, तो मेरे साथ उसकी हमेशा बातें होती थीं । वह सदा भारत माता की बात कहता था । मैंने तो भारत माता आज तक नहीं देखी । मैंने तो दिसाँगमुल माता देखी है । जैसे शिकारी गाँव वालों ने माम्मुली माता को ही न देखी हो, शिकारी गाँव माता अवश्य देखे होगी ।

“मेरा एक ही प्रस्ताव है, और यह प्रस्ताव मैं दिसाँगमुल की ओर से रख रहा हूँ । हम यहाँ से कुछच बनाकर चलें, आगे-आगे शिकारी गाँव के निवासी हों, पीछे-पीछे हम दिसाँगमुल वाले । और भी दूसरे गाँवों के लोग यहाँ आने हुए हैं वे चाहें, तो अपनी शक्ति हमारे साथ मिला सकते हैं ।”

यह कहकर ब्रह्मपुत्र बैठ गया ।

राजलाल काका ने उठकर कहा, “अब मैं प्रसिद्ध लेखक नीरद बाबू से कहूँगा कि वे भी अपने विचार हमारे सामने रखें ।”

नीरद ने उठकर कहना आरम्भ किया, “भारत माता की जय ! यहाँ यह प्रश्न उठाया गया है कि भारत माता को तो आप लोग नहीं जानते, और आप तो अपनी-अपनी गाँव माता को ही जानते हैं । हमारे देश में तो कई प्रान्त हैं । बंगाल, असम और उड़ीसा; मद्रास, यू. पी. और बिहार पंजाब, फ़किरपुर और बम्बई । हमारा देश तो विशाल है । वहाँ साठ लाख गाँव हैं । ये साठ लाख गाँव माताएँ मिलकर एक ही नाम से पहचानी जाती हैं; वह नाम है भारत माता ।

“मैंने बहुत यात्रा की है और सर्वत्र भारत माता के दर्शन किये हैं । एक दिन भारत माता स्वतन्त्र होकर रहेगी । इस से तो अंग्रेज भी इन्कार नहीं कर सकते । जब भी भारत माता स्वतन्त्र होगी, वह अपने बेटों

की मिली-जुली शक्ति से ही स्पर्धन होगी। मैं राजनीति में पका हुआ मनुष्य नहीं हूँ। मैं तो एक साधारण सेल्फ हूँ।

“ब्रह्मपुत्र पर पुस्तक लिखने की मेरी पुरानी समझ है। मेरी पुस्तक का एक भाग हीम ही दरजर मान वाला है, दूसरे भाग की तैयारी कर रहा हूँ। मैं आज तक जल नहीं गया। जेल जाने का मेरा संकल्प भी नहीं है। फिर भी मैं भारत माता का भैया हूँ।

“देवघान्त के कलकत्ता में अक्सर मेरी बातें हुआ करती थीं। वह मुझ से कहता था—घान्ति-यथ अननाओ। मैं कहता था कि हमारा अनना अनना पय है। वह कहता था—सेल्फ तो चीर भी बहुत से हैं। मैं कहता था—ओ चीज़ बे सिल रहे हैं, मैं उस से आगे की चीज़ सिलना चाहता हूँ। लिम पाऊँया या नहीं, वह चीर बाल है, बल तो कर ही रहा हूँ। वह कहता था—तुम लिखने के बनने देश के काम से पीछे हट रहे हो। मैं कहता था—देश के लिए तो वे भी काम करते हैं, जो अपने चाक पर घड़े तैयार करते हैं। घेस ही लुहार और बढ़ई भी देश का काम कर रहे हैं। कम्का तुमने वाले जुलाहे और साबुन बनाने वाले मढ़ पूर भी देश के लिए ही दिन-रात एक करते हैं और हमारे विशाल देश के अनगिनत किसान, जो रात-दिन लहू-पसीना एक करके छत्रलें उठाते हैं, वे भी तो देश का काम करते हैं।

“मेरा मार्ग न हिंसा का मार्ग है, न अहिंसा का। मेरा मार्ग तो सेल्फनी का मार्ग है। शिकारी गॉब वालों के साथ मेरी पूरी सहानुभूति है। यदि मैं शिकारी गॉब का गॉब-बूढ़ा होता, तो आज लगाने वालों के बिरुद्ध अपना ठेक प्रकट करते हुए गॉब-बूढ़ा की पक्षी राग देता। एक सेल्फ भी स्वाम करना जानता है। मुझे सरकार ने कोई उपाधि नहीं दी। पर इस अवसर पर मुझे रबीन्द्रनाथ ठाकुर की याद आती है, जिन्होंने अमृतसर के अलिपी वाला बाबा में जायर के हत्याकाण्ड से जुली होकर सरकार को ‘सर’ की उपाधि लौटा दी थी। मैं कहता हूँ, उस दिन रबीन्द्रनाथ ठाकुर ने भारत माता की आँखों में आँसू डेलकर ही विदेशी

सरकार द्वारा की हुई तथापि लौटा दी थी ।

“मास्त माता को अपनी माता मानते हुए आज मैं एक लेखक का धर्म पढ़ाता हूँ, पर मेरी लेखनी का विस्तार कबल हिन्दुस्तान तक ही सीमित नहीं । मेरे सम्मुख तो समस्त विश्व है—विश्व माता । फिर भी मैं कहता हूँ—आप कुलूस अवश्य निकालें । इस अवसर पर उपस्थित होने के नाते मैं भी कुलूस में आप के साथ रहूँगा ।”

कुलूस निकालने का प्रस्ताव सर्वसम्मति से मान लिया गया । रामबाल काका ने उठकर कहा, “शिकारी गँव की जय ! दिर्गन्तुल की जय ! आप लोग तैयार हो जाइए ।”

कुलूस की कल्पना से रामबाल काका पुलकित हो गये—घरे घरे, सब जगह मिलकर शिवसागर की ओर प्रस्थान करेंगे, तो बौं सगेया जैसे हजारों बौंसा बाला एक विशाल हाथी सूम्ता मूमता जा रहा है ।

## चवालीस



सब से आगे जादू, प्रभात और मुकुन थे। उन की ओरों बमक रही थीं, कर्मों में हृद मिश्रण की क्षय थी। अतुल, रास्तास काका और मीरद भी आगे बढ़े, और उन के पीछे-पीछे अपाह होगों के पग उठने लगे।

चतुर्विंश कुहरा सा रहा था। कुलूस बन-वप पर चला जा रहा था। सब के मन यह कह रहे थे—‘जो माई सुरज, शक्ति निकली हमें रास्ता दिखाओ। हमें हर प्रकार के अमार्ग व्यवहार से दूर रखो।’ ‘एक, दो, तीन। एक, दो, तीन। इसी रास्त पर सब के पग उठ रहे थे। उन्हें कई मील चलकर शिवसागर पहुँचना था। इतनी दूर मंजिल तय करके तो आज तक कोई कुलूस नहीं चला होगा। इस कुलूस का हर व्यक्ति जैसे यही कहना चाहता हो—‘हम प्रतिनिधि जन-जन के, हम ब्रह्मपुत्र-सन्तान। हम न्याय चाहते हैं, हम बीमों का अधिकार चाहते हैं। जो भी अम्याव की बात सामेगा, उसे मूक होमा पड़ेगा, मुँह की साकर ख जाना होगा। हम असहाय, विषय नहीं। हम जन-जन के प्रतिनिधि हैं।’

पसले-चलते कुलूस की गति कहीं भी मन्द न पड़ी। कुहरा कुछ-कुछ थिलर गया। कुलूस में पसने-वालों की परचाप आगे वाली कान्ति का पता दे रही थी। आखिर कुलूस शिवसागर के समीप पहुँच गया।

यह कैसा कुलूस है, शिवसागर में जस्टी-अस्टी यह बात किसी की



समझ में न आई ।

डिप्टी कमिश्नर की कोठी के सामने पहुँचकर बुलूस के गानभेदी नारे सुनाई देने लगे

“शिकारी गाँव पर आस्थाघार बन्द करो ।”

“शिकारी गाँव का बलाया जामा मसानक आस्थाघार है ।”

“नारायण चारोना असम का डापर बन गया ।”

डिप्टी कमिश्नर के हेड क्लर्क ने बाहर निकलकर कहा, “शिकारी गाँव तो लखिमपुर जिला में है, जैसे समूची माझुली भी उसी जिला में है । साहब कहावुर करते हैं—शिकारी गाँव हमारे हस्तके से बाहर है, इस लिए आप लोगों को लखिमपुर जाने की सलाह दी जाती है ।”

बुलूस के नारे बराबर गूँजते रहे, जैसे सब लोग यह करने पर दृढ़ गये हों—आज तो लखिमपुर के साहब कहावुर को भी यहीं आकर जवाब देनी पड़ेगी ।

पुलिस के सिपाही देर तक लोगों को समझा-बुझाकर पीछे खींच जाने की सलाह देते रहे, पर माझूम होता या आज तो स्वयं शिवसागर के डिप्टी कमिश्नर के हाथ बाँधने पर भी ये लोग रात-भर यहीं डेरे डाल देंगे ।

# पैंतालीस



जब थिकारी गाँव वालों को मौकाओं से बापल मेला जा रहा था, नाब-बाट पर यह लम्बर पहुँची—  
देवकान्त पकड़ लिया गया।

अनुस ने बाँतों छले ठँगली दबाकर रस्ताल काका की ओर देखा—उस के मुख से एक भी शब्द न निकला।

“यह कैसे हो सकता है !” रस्ताल ने गम्भीर होकर कहा।

“बापल यह लम्बर झूठ हो, काका !”

अनुस की जान-में-जान भाव, “हम क्या चाहते हैं काका, कि देव कान्त को कोई पकड़ ले।”

“यही तो मैं भी करता हूँ। देवकान्त का यही दोष है न कि वह हिंसा में विरक्त रहता है।

अनुस ने कहा, “भगवान् करे देवकान्त सही-सलामत हो।

पान से किसी ने कहा, “पागल हाथी को तो मार बाँधते हैं।”

रस्ताल को उस समय यह बात बिलकुल शयिकर प्रतीत न हुई।  
उत्तने कहा, “मुझे तो देवकान्त के पकड़े जाने की लम्बर बहुत बड़ी गम्य मालूम होती है।”

जानू, प्रमात और मुकून कुछ न बोले। उन्होंने काका और अनुस की ओर आह्वान-भरी आँखों से देखा और नाब में जा बैठे, जहाँ मधि बर उभरे पुला रहा था।

सब लोग पहले ही का चुके थे अब यह भाव भी धीरे-धीरे मामूली की ओर चल पड़ी।

अब ब्रह्मपुत्र बहुत शान्त प्रतीत हो रहा था। रास्ताल सोचने लगा—वही ब्रह्मपुत्र क्या मैं कितना विकलाक हो उठता है ऐसे ही मनुष्य की प्रकृति है—कभी शान्त, कभी एकदम क्रुद्ध।

नाब-बाढ पर लगे-लगे काका के कदम भारी हो रहे थे। अटुल के कंधे पर हाथ रखकर उन्होंने कहा, “क्या देवकान्त को सम्मुख फन्स लिया गया ? भैया मत कहता है—ऐसा नहीं हुआ होगा।”

“तुम्हारी बात मेरे दिल में भी लगती है, काका।” अटुल ने स्मिर भाव से कहा।

“क्या ?”

“देवकान्त बिलकुल मुक्त-चैन से होगा। हमारे सुख की कुंजर तो उस तक भी पहुँचेगी। उसे बहुत आनन्द आयेगा। वह सोचेगा—मामूली मैं मैं नारायण को संभल रहा हूँ, और अब बिरौतमुक्त-निवाली मिलकर गोपीनाथ का माक में दम करने पर तुल गये हैं।”

ब्रह्मपुत्र के उस पार जाने वालों का वाणी-बल एक नाबरिया से माका लय कर रहा था। पास ही कुछ मनुष्य भाव में जात रखकर मद्धली मारने का रहे थे। ब्रह्मपुत्र स्थिर भाव से बह रहा था, जैसे पार जाने अथवा मद्धली मारने वालों की ओर ध्यान देने का उसे तनिक भी अवकाश न हो।

काका ने पहले ब्रह्मपुत्र की ओर देखा, फिर अटुल की ओर। उन्हें अटुल से बहुत आशा थी। वह अटुल के समीप मुँह लाकर कुछ कहना चाहते थे, इतने में कहीं से मीरद का निष्पत्ता। आते ही बोला, “ब्रह्मपुत्र महाम् है, काका। ब्रह्मपुत्र ने हमें माया दी—जीवन की माया, मरणा की माया। ब्रह्मपुत्र सदा हमारे साथ है; हमारे पुत्र-प्राप पर तथा इतनी दृष्टि रहती है—”

“और तब क्या होता है, जब ब्रह्मपुत्र में बाध आती है ?” काका

को भी चुनींती देने का अवसर मिल गया ।

“ब्रह्मपुत्र हमारा पयद्रोह है ।” नीरद कहता चलता गया, “हमारा लुत्ता, हमारा सह-यात्री स्वतन्त्रता की गुहार लगाने वाला बल-शक्ति, पप का शत्रु है । आरोग्य-हीन आगे अपनी मंजिल की ओर जाने के लिए कूट-संकल्प है ब्रह्मपुत्र हमारे लिए भी उतनी यही डेर है—मंजिल परधानों, आगे बढ़ो ।”

“हमारी मंजिल तो अब स्वतन्त्रता से एक कोस भी दूर नहीं हो सकती ।” अतुल ने गुहार लगाई, “कौन है, जो हमें रास्ता दिलायेगा ?”

“यात्राय ।” काका की आँखें बमक उठीं ।

“ब्रह्मपुत्र की अपनी परम्परा है,” नीरद अपनी ही कहता चलता गया, “एक विरहसीन, आगकण परम्परा । बहता जा रहा है, बहता जा रहा है, बहता जा रहा है—ब्रह्मपुत्र । सुदूर मानचरोवर से आता है, सुदूर समर की ओर जाता है । स्वयं अपना इतिहास बनाता है ब्रह्मपुत्र, और हम से कहता है यह हमारा सह-बाहु ब्रह्मपुत्र—तुम भी गतिधाम बनो; सह-बाहु बनो, सहस-बाहु बनो बिम्बे मत, मत बनो कठपुतली अपना मोल परधानों मत बेचो किसी के हाथ अपनी मंजिल, अपनी विर-यात्रा, अपनी विर-साधना—कभी मत बेचो ।”

“हम बिकेंगे नहीं ।” अतुल चुन न रह सका ।

“यात्राय ।” काका ने अतुल की पीठ टोपी ।

नीरद कुछ न बोला । उस के विचार गुटर-गूँ-गुटर-गूँ करते कबूतरों के समान एकाएक बातावरण की निस्तब्धता से लिपटकर चुन हो रहे । देश-काल की कैद ही क्या सब से बड़ी सच्चाई है ? समय की शीक सरीखा बहता हुआ ब्रह्मपुत्र आकर क्या सिख कर रहा है ? पानी को क्यों छील लेती है सूपी भरती ? क्या राजनीति ही सब से बड़ी सच्चाई है—देश-काल की कैद में जकड़ी सच्चाई ? देवकान्त इस सच्चाई के बसकर में कब तक फँसा रहेगा ? अतुल और रामाल काका भी क्या उछी और नहीं जा रहे ? देश-काल में जकड़ी सच्चाई की मूल-भुसौर्य में एक बार प्रवेश

करके क्या ये लोग कभी आराम से बाहर भी आ सकते ! काल का अपना अस्तित्व नहीं है क्या ! उसे क्यों नहीं देखते ये लोग ! क्या वे उसे देख नहीं सकते ! काल क्या मात्र एक अर्थाहीन पैलाव है ! देश-काल का आसिगन क्या इतना ही आवश्यक है ! देश के आसिगन-वास में आये बिना क्या काल अपनी सार्वभौमता खिन्न नहीं कर सकता !—ऐसे-ऐसे अनेक प्रश्न नीरव को कुरेखते रहे ।

“छायाछ !” काका ने दोबारा अतुल की पीठ ठोकी, “हम बिकी नहीं ।”

“और नीरव बाबू को भी हम उसकी पोथी के पोकर में ही नहीं झुमे देंगे !” अतुल ने संभलकर कहा, “क्यों नीरव बाबू !”

“ब्रह्मपुत्र पर देशकाल अपने हस्ताक्षर करना चाहता है,” नीरव ने गम्भीर होकर अचाह बल-मवाह की ओर संकेत किया, “आप लोग भी तो उसी का अनुसरण करने जा रहे हैं, पर पानी पर क्या किसी की छिन्नाबट टिक सकती है !”

अतुल ने राखाल काका की आँखों में देखा । काका भी क्या स्थिति को हाम से जाने दे सकते थे ! बोले, “सच्चाई तो ब्रह्मपुत्र में बमकर बड़ी हुई चहान क समान है । जौड़-झूठी में हमारे नार्मम साहस कहा करते थे ।”

“सच्चाई तो ब्रह्मपुत्र की गहराई है, काका !” अतुल मुस्कराया ।

“और कहना नहीं है ब्रह्मपुत्र की सच्चाई !” नीरव ने अतुल को वहीं रोक्ना चाहा ।

नीरव को लगा, जैसे राखाल और अतुल यही कह रहे हैं—सच्चाई तो देश-काल की सीमाओं में बँधकर ही गहरा आ सकती है । ऊपर से नीरव मुस्कराता रहा—मीतर मन की गहन गुफा से पही आवाज आती रही—तुम अपनी पोथी क्यों नहीं लिपिते आराम से बैठकर ! ब्रह्मपुत्र क्या मात्र किसी परी-कथा का उपना है ! कुदासा क्या सदा-सदा के लिए ब्रह्मपुत्र को लपेट सकता है ! ‘आज’ क्या कभी ‘कल’ के लक्ष में बँधने

से बक सका है ! लिली एक अंग्रेज-बुद्धिवादी होकर भी अस्म से बँध गई, क्योंकि इसी ब्रह्मपुत्र की अथाह जलधारा पर स्टीमर के एक बस में उसका जन्म हुआ। वह अस्म से बँध न पाई होती, तो बार-बार यह क्यों बहती—इसके बल पर तो हम यहाँ नहीं टिक सकते !

अनुस और रास्ताल काका परे को सरक कर आस में कुछ सलाह करने लगे। नीरद के पैर वहीं-वहीं जमे रहे। अग्रमी पुस्तक के हम शब्दों में खोया-खोया-सा वह वहीं लका रहा—सेतुहीन ब्रह्मपुत्र पर सेतु अस्मर योंही जाँगा एक दिन जाना निरंगी राय, आम्मा स्वराज्य ! शापद देवकान्त भी वह दिन देखने को बचा रह जायगा। जी-ए एन-डी-एच आर—गौड़ी ! बार-बार एन-डी-एच आर—गौड़ी ! जी-ए-एन-डी-एच आर—गौड़ी ! बार-बार रटेयी लिली—निर से मिश्र बनकर ! और हिसंगा देवकान्त—लिली के बिचार पर नहीं, उसके उच्चारण पर। अस्म में जन्म लेने में, ब्रह्मपुत्र से बँधकर भी यह अंग्रेज-बुद्धिवादी अपने उच्चारण पर काबू नहीं पा सके। अरे गौड़ी नहीं, लिली गाँगी नहीं—गांधी करो गांधी ! जो देवकान्त लिली का उच्चारण सुधारेगा। तब निरंगी राज्य समाप्त हो चुका होगा, स्वराज आ चुका होगा तब लिली को 'ब्रह्मपुत्र' की बजाय भी 'ब्रह्मपुत्र' करना सीखना होगा।

रास्ताल काका ने पलटकर कहा, 'अब हम नीरद बाबू को दोके में नहीं ! देवकान्त के समान नीरद बाबू हमें छोड़कर वहीं नहीं जायगा।' 'हाँ, बाका !' अनुस में हैसकर कहा, 'नीरद बाबू हमें छोड़कर किसी मामूली में नहीं जायेंगे।'

अनुस के साथ जैसे ब्रह्मपुत्र भी हैस पड़ा—नीरदता को बिरकर प्रयागवासीन राज की किरणों का आलिंगन करके जैसे शठ-यादु, सेतुहीन ब्रह्मपुत्र जामोश निगाहों में बोला—नीरद वहीं नहीं जायगा।

# छियालीस



जिस दिन शिकारी गाँव के लोग विसर्पमुक्त से वापस लौटे, नारायण ने उन्हें जाने के आवाते में बुलाकर बहुत धमकाया। उस छोटा सापेना अभिनतराम देर तक प्रमात् और मुकून को पुचकाया रहा; उसका विचार था कि वे देवकान्त का पता बता देंगे, पर वे साफ़ हम्कार करते रहे।

नारायण को यह पता चल गया था कि जिस रात शिकारी गाँव का यामा जलाया गया, उस रात देवकान्त रंजन के बॉल-कुंज में मन्थान पर सेटा हुआ था। जब नारायण को यह सुरता मिला और वह रंजन के बॉल-कुंज में पहुँचा, तो वह मन्थान लाठी पका था। पंखी पहले ही उड़ गया था। पहले तो वह रंजन को पुचकाया रहा, वह साफ़-साफ़ बता दे कि पंखी उड़कर किधर को गया है, फिर जब आन्विरि पार रंजन को शिकारी गाँव के बड़े हुए जाने के आवाते में बुलाया गया, और यहाँ भी उस ने अन पर हाथ धर कर यही कहा—‘महाप्रभु। मैं तो छठ महीने से देवकान्त की शक्त भी नहीं देखी’, तो नारायण को बहुत खेप आया और उस ने सब के नामने रंजन को एक पेड़ के साथ बाँधकर उस के सिर पर अपने भारी-भरकम बूट की ठोकें लगाईं।

रंजन की बीन्नों से शिकारी गाँव के गाँव-बूढ़ा मणिसर का हृदय भीतर-ही-भीतर रो उठा। वह इस सोच में पड़ गया कि रंजन की मरह कैसे की जाए, कैसे उसे बचाया जाए।

मुकल और प्रभात को अलग बिठाकर छोटा दारोसा अविम्वराम पुनःकार रहा था, “बेटा यो, बेटो ! तुम्हें कुछ भी नहीं कहा जायगा । मैं बड़े दारोसा की सं तुम्हें माफ़ी दिला दूँगा । उन का बूट तुम्हारे छिर पर नहीं पड़ेगा, जैसे रंजन के छिर पर पड़ रहा है ।”

आबू पर से भाग गया था । पुलिस का क्यास था कि अन्धा दिव्यास सब जानता है कि आबू कहाँ गया है । “आबू झुकर देयकान्त के पास गया होगा ।” नारायण विस्मया रहा था । इस बहाने अन्धे दिव्यास को लूट धीटा गया । आबू की बहन पठनली पर हाथ ठठाने से भी नारायण ने संकोच न किया । और-तो और, कताय मीठी की बेटो मोदी को धाने के अहाते में बुलाकर आबू के बारे में पूछा गया; वह बेबारी क्या बोलती, कुपचाय कपड़ लाती रही ।

“करो शिकारी गाँव की राधा ।” अविम्वराम ने गोपी के पास आकर पुनःकार, “तुम्हारा वह कान्ध-कन्धैया भागकर कहाँ गया है ।”

गोपी रोटी रही । उस के होठ न हिले । उस ने निराकुल न बताया कि आबू फिर गया है ।

रंजन के छिर पर बूट की एक और ठोकर लगाकर नारायण ने कहा, “सरकार के इरमन का कर में रक्कड़ पाकने का मक्का बल ले, इरामी फिल्ले ! धान तेरी कोपड़ी दूट कर रहेगी ।”

धाने के अहाते के पास बहुत मीक अमा हो गई थी । रंजन की एक-एक चीन्हा पर गाँव वालों के निरुद्ध आते थे । उन के हाथ ठठाना चाहते थे, पर वे मन्कूर थे ।

एक पेड़ के छाया प्रभात और मुकल को भी बाँध दिया गया था । अपने गाँव के इन बीरों पर आस्थाघार होता देखकर शिकारी गाँव वालों का मूल खोलने लगा ।

गोपी को एक भोपड़ी में बन्द कर दिया गया, जो उन्हीं दिन तैयार की गई थी । कहाँ उसे बहुत धीटा गया । उस के बाका मोचे गये । उसकी चीन्हे दूर तक सूँझती रही ।



नारायण बीच-बीच में बूट की ओकरें बन्द कर देता था ।

“बता, लाले !” नारायण गुराया, “कहाँ है देवकान्त ? कहीं है जानू ?” फिर उस में जोर से ठोकर लगाई, पर रंजन तो पहले ही बेहोश हो गया था ।

रात के अन्धकार में एक बुलान्ठ सँभार हो रहा था । इसका सज्जदार था नारायण । अब रंजन नीलू न सकता था । अब मुल्लु एक हाथ पर लकी थी ।

उपर मसिबर के घर में समा हो रही थी । वहाँ कुछ नवयुवक इस पक्ष में थे कि उसी रात नारायण का अन्त कर दिया जाय, पर मसिबर ने कहा, “हम चलकर प्यारी नारायण से कहेंगे कि वह रंजन को इस्पताल में ले जाये । वह मान गया तो ठीक है, नहीं तो उसे ठिकाने लगाने से मैं किसी को न रोक्कूँगा ।”

## सैंतालीस



गाँव वालों की बात नारायण की समझ में आते  
 डेर न लगी। उसने अचिन्तराम को बुलाकर कहा,  
 “तुरन्त एक गाव का प्रस्थ करो।” ठठका स्त्रोत्र  
 शान्त हो गया था। कुछ क्षणों की आत्मोशी के  
 बाद उस ने अपनी बात होहारई, “छप्पी गाव  
 चाहिए।”

“छप्पी सो, करकार।” अचिन्तराम उन्हीं पैरों झूट गया।

माझुली का बड़ा हस्तताल वहाँ से छावरी दूर था। नारायण ने यही  
 प्रेरणा लिया कि रंजन की दिहाँगमुल से जाय, वहाँ किसी ने इन्हीं दिनों  
 एक हस्तताल कोला था।

रंजन का सिन्धु बुरी तरह फट गया था। नारायण ने एक-आम  
 ठोकर और लगा दी होती, तो रंजन के प्राण-पण्येक सदा के लिए उड़  
 गये होते।

थोड़ी दूर बाद अचिन्तराम बकरावा हुआ आया। उस ने वही  
 विविध लखर सुनाई :

“गोपी माग गई।”

“कैसे माग गई गोपी।” नारायण गुर्जया, “भाग गई, या उसे कोई  
 भगा ले गया।”

यह पता चलते दूर न लगी कि गोपी को जाबू भगा ले गया, उसी  
 का पर चाहत हो सकता था कि आन्यकार की बनी बादर में मुँह लगे

झाकर थाने की मोंपड़ी की पिछली बीवार लोहकर गोपी को साफ निकाल ले जाने । गोंब वाले हाथ जोड़कर क्षमा माँगते रहे । मन्थिवर ने बीच-बचाव करते हुए कहा, “सरकार, मैं दो दिन के अन्दर-अन्दर गोपी और जादू को हाथिर कर दूँगा ।”

“गोपी भाग गई तो परबाह नहीं ।” नारायण ने वस्तुस्थिति को काम में रखने का कस किया, “पहले नाव तैयार करो । रंजन का इलाज करना जरूरी है । जादू और गोपी को तो फिर भी ठीक किया जा सकता है ।” फिर उठ ने मन्थिवर के कंधे पर हाथ रखकर कहा, “अच्छा तो नाव लेने के लिए कौन-कौन-से दो नावरिया मेरे समेत हों ?”

“प्रभात और मुकन ही जायेंगे ।” मन्थिवर मट कट उठा । नारायण ने सोचा, मैं भी अच्छा हुआ कि आज प्रभात और मुकन की मरम्मत नहीं की गई । उठ ने जैसे झोप को बूझते हुए कहा, “मुझे गुस्ता का गया था । गुस्ता बहुत बड़ा मूठ है ।”

मन्थिवर बोला, “फिर भी भगवान् का धन्यवाद है, सरकार ! समय पर आप का गुस्ता ठबड़ा हो गया ।”

“रंजन को दिव्यमुरुख से जाना होगा, तिली के इस्तेमाल में ।” नारायण ने शान्तिपूर्वक कहा, “फरारियों नहीं । रंजन ठीक हो जायगा ।”

“हाँ, सरकार ।” मन्थिवर ने जैसे लज की ओर से कहा ।

अतुर्दिक् अन्धकार था । मुकन बोला, “इस गहरी, काली रात में ब्रह्मपुत्र में नाव लेना संकट से लाली नहीं, सरकार ।”

“मुकन ठीक कह रहा है ।” प्रभात ने डंकार लगाई, “रात बीतने दीविए । दिन में चला जाय ।”

“लाल संकट हो अभी चलमा होगा,” नारायण ने दोनों मुकनों की पीठ ठोकते हुए कहा, “रंजन के प्राण बनाने का सवाल है । यह न हो कि कल सबेर का तूरज रंजन के मुँद पर मासु की द्वाप देने । जफरी करो, रंजन को जमी से जाना होगा ।”

“हाँ, सरकार ।” मन्थिवर ने जामह किया, “जमी से जाइए रंजन

को ! बेचारे को कुछ हो न जाय ।”

एक घाट पर डालकर रंजन को जहाज के किनारे ले जाया गया । प्रमात और मुकन को हुक्म दिया गया कि वे फौरन सिपाहियों के साथ घाट पर पहुँचें ।

“हमें भी साथ ही चलना चाहिये, सरकार !” अचिन्तराम बोला, “नृत्यी नाच तैयार करने में बीम-सी देर लगती है ।”

“हुम्दारे जाने की जरूरत नहीं ।” नारायण गुराया ।

घाट पर पहुँचकर मणिवर बोला, “सरकार, आप दिर्गोन्मुख जाने का कद न करें । मैं चला जाता हूँ । रंजन का इलाज हो जायगा । सिली के नाम आप पिंडी लिल रहे ।”

पर नारायण तो स्वयं ही रंजन को दिर्गोन्मुख से जाने का पैसला कर चुका था । गँव वालों को यह देखकर संतोष हुआ कि नारायण का दिल अब इतना पिपल गया है ।

बड़े अराम से रंजन को नाव में डाला गया । नारायण ने उस के तिर पर हाथ फैकर पुनकारा, “मुझे माफ़ कर दो, दादा ! तुम सब गये । नहीं तो तुम्हें कुछ हो जाता तो मैं कहीं का न रहता । सरकार मुझे फौसी पर लटका देती ।”

रंजन ने कुछ कहने का सब किया, पर वह बोल न सका । अब मुकन और प्रमात थप्पू और डॉह लेकर नाव में जा बैठे, तो मणिवर ने अपने हाथ से नाव खोखले हुए सब गँव वालों की ओर से कहा, “ममबान् मला करें ।”

“ममबान् ने चाहा, तो हम परसों तक लौट आयेगे ।” नारायण ने मरारें हुए आवाज़ में कहा, “ममबान् अबस्य मला करेंगे ।”

“रंजन का बाल बौका नहीं होगा ।” अचिन्तराम ने घाट पर लड़े लड़े कहा, “सिली की डॉसरी की भी फीजा हो जायगी । रंजन के प्राण बचाने का यह सिली को मिलकर रहेगा ।”

नाव धीरे-धीरे जहाज की बेगवती धारा की ओर बढ़ने लगी ।

“आराम से नाव को ले जाना !” मणिबर ने चिन्ताकर कहा,  
 “मुन, रे मुकन ! और प्रभात, तू भी मुन रहा है न ! आज तो उखी तरह  
 नाव जैसा जैसे भगवान् कृष्ण ने कुच्छेत्र में रख चलाया था !”

“तुम बिन्ता मत करो, काका !” प्रभात और मुकन एक स्वर से  
 बोले ।

नाव आगे-ही आगे बढ़ी जा रही थी । घना अन्धकार ही मयभीत  
 करने के लिए काफ़ी था । कभी-कभी बिजली चमकती, तो लगता कि  
 ब्रह्मपुत्र शान्त रूप मुलाकर अत्यन्त विकराल हो उठा है ।

“अभी तो मौका है, सरकार !” प्रभात ने थपू चलाते-चलाते कहा,  
 “फिर आगे जाकर नाव पीछे मोकने को कहोगे, तो कठिन होगा !”

“हाँ, सरकार !” मुकन ने हामी भरी, “प्रभात ठीक कह रहा है !”

“बाहे लारी रात लग जाय !” मारायण ने शक्तिपूर्वक कहा,  
 “आराम से नाव लेते-लेते कल सुबे सुब निचलने से पहले ही  
 बिसौगमुल के घाट पर नाव लग जाय, तो हमारा काम बन जायगा ।  
 बिसौगमुल-निवासियों के आगने से पूर्व ही हमें सिस्ती के इत्यतास में  
 पहुँच जामा चाहिए !”

ब्रह्मपुत्र में इस समय नाव जैसा सधमुप संकट मोल लेने से कम  
 न था । विकराल लहरें, घना अन्धकार, बादल बरसने को तैयार, बिजली  
 की चमक—ये सब इस भयानक नाव-यात्रा को संकटमय बना रहे थे ।

चलते-चलते वे कमलिया सापरी जा पहुँच । रंजन को बुलाने का  
 शान्त पक्ष करने पर भी उस में मुँह न मोला । जब बिजली चमकती,  
 तो रंजन का चेहरा सब को दिखाई दे जाता ।

“तुम नाव को बढ़ा ले जलो !” मारायण ने पुनःकारा, “देर करना  
 ठीक नहीं !”

प्रभात ने थपू चलाते-चलाते कहा, “हमारी नाव यहाँ रुक जाय, तो  
 फिर भगवान् ही मासिक है !”

“वैसे मरना तो एक दिन सभी को है !” मारायण ने ज्ञान बभार,

“एक दिन आये, या दो दिन पीछे, सभी को मृत्यु के अंजल से बचना है।—यह बात मैं आउनिपायी सब के महाप्रभु के शीतल में मी कर बार मुन बुका हूँ।”

तूफान का कोर बढ़ रहा था। पानी की आवाज़ संकट का पता दे रही थी। प्रभात ने कहा, “कोई मछलियों से पूछे, तो वे तो यही कहेंगी कि हमारी नाव यहीं डूब जाय।”

आधी रात उस पार थी, आधी रात इस पार। कमलिना सापरी से थोका दिर्गन्मुख की तरफ नाव में पानी भरने लगा। अब बाहरी भर भरकर पानी निकालते रहना व्यर्थ था।

रंजन के चिस्ताने का तो प्रश्न ही नहीं उठ सकता था। मारामर बहुत चिस्ताया, जैसे उसे सब का गया हो कि पार की नाव भरकर डूबती है।

आखिर नाव डूब गई।

थोड़ी दूर तक तो मारामर, प्रभात और मुकून साथ-साथ रहे। रंजन बेचारा तो बड़प्प से पानी में डूब गया था। प्रभात और मुकून ने मारामर को सहारा देना चाहा, पर वह उन के बल का रोम न था।

प्रभात और मुकून ब्रह्मपुत्र की बारा के साथ-साथ दिर्गन्मुख की तरफ बढ़ चले, जैसे आज उम के तेरने की अन्तिम परीक्षा हो रही हो।

विजली चमकी तो नारामर भी हाथ मारता नकर आया, पर शीम ही तिर अन्धकार हो गया। दोबारा विजली चमकी, तो प्रभात और मुकून को नारामर दिखाई न दिया।

“हाथ बेचारा रंजन।” प्रभात ने तेरते-तेरते कहा, “नारामर के डूबने का तो मुझे कुछ नहीं।”

“नारामर के डूबने का भी कुछ किसे होगा।” मुकून ने मंद उत्तर दिया, “जित में हमारे घर जलाने, आदमिय को भूग डाला, रंजन को मार-मारकर अधमुखा कर दिया—उस राखत के डूबने का भी मसा किसी को कुछ हो सकता है।”

## अदृतालीस



ब्रह्मपुत्र बड़े-बड़े कगार निगलकर भी बराबर भूला नज़र आ रहा था। यह देखकर तो यही कहा जा सकता था कि ब्रह्मपुत्र देकता नहीं, खानब दे। “इस पर नारियल बहाओ जाहे दूध-भरा सोने का कणस [” राखाल ने बड़ी-बड़ी धरातों की ओर संकेत करते हुए कहा, “आब यह भूमि भी कर जायगी। फिरंगी का आत्माचार अस्मा बंद गया है। पता नहीं कामेस वाला खराब कब जायगा [”

“इस बार तो सगठा है कि बिठासिवा के समान ही आलीसीमा भी बंद जायगा [” नीलमणि ने मर्राई हुई आवाज़ में कहा, “हम कहीं के भी नहीं रहेंगे। हम मर जायेंगे, तो फिर क्या अन्तर पकटा है। फिरंगी का खत्म रहे, जाहे याँची बाबा देहा की यही पर बैठ जायें [”

राखाल काका कहते बसे गये, “शिकारी गोंब में अब धामा नहीं बनेगा, और अगर बनेगा भी तो फिर से बला डाला जायगा [” लेकिन नीलमणि की समझ में यह बात बिलकुल न आई। वह खुले शब्दों में काका की बात काटने को तैयार हो गया, “फिरंगी भी कच्ची गोसिरी खेसकर बका नहीं हुआ, दादा। उसके पास नारायण जैता दारोगा है [”

“नारायण कुछ नहीं कर सकता [” राखाल ने बड़ी हदता से कहा, “उसे तो मुँह की लानी पड़ेगी। उसका मुकाबला एक देवकान्त

से होता, तो धीर बात थी। वहाँ मामुली में तो कई बेवकान्त पैदा हो गये। ठहर मामुली जान ठठी है, इधर हम भी कब खो रहे हैं। अब हमें मामुली वास्ता को अबूझ धीर ठगवू करके उनका उपहास करने की आदत छोड़ देनी चाहिए।”

“तो हम क्या करें।”

“क्या करें। यह भी थोड़ा पूछने की बात है। आदमी अपना धर्म पहचाने।”

“अच्छा तो मेरा धर्म बुझे बताओ।”

“धर्म बतावा नहीं जाता, इसे समझकर इस पर चला जाता है।”

“फिर भी कुछ तो कहो।”

“तुम दुरन्त गौड़-बूढ़ा का पद छोड़ दो।”

“मैं गौड़-बूढ़ा नहीं रहूँगा, तो कोई और रहेगा। फिरंगी के लिए तो कुछ अन्तर नहीं पकता।”

“यह हम देख लेंगे।”

“तो तुम भी खोकर दिखाओ फिरंगी की फेन्चन, तब तुम्हारी बात हमारी समझ में आ सक्ती है।”

“तबका फ़ैसला मैं कर चुका हूँ।”

मीलमस्ति के लिए यह बात निराकुल नहीं थी। एक बार फ़ैसला करके रास्तात पीछे इतने बाका आदमी नहीं था। रास्तात सामने लका या उसकी झोंखों में नहीं चमक थी, जैसे वह दिव्यगुप्त की नई सम्भावनाओं का प्रतीक बन गया हो।

“फेन्चन खोकर तो तुम्हें क्या होगा।” मीलमस्ति ने जैसे रास्तात की परीक्षा लेनी चाही।

“अरे कपड़े के लिए ही तो बना है यह शरीर।” रास्तात मुस्कराता, “गौड़-बूढ़ी मैं हमारे जर्मन साहब कहा करते थे—पहले तो बकर फ़ैसला करो, फिर उस फैसले से पीछे न हटो।”

“तो यह तुम्हारा अन्तिम फ़ैसला है।”



“और नहीं तो ।”

“पर इस से क्या लाभ होगा ?”

“जाम की नहीं, यह तो चुनौती की बात है चुनौती हमेशा अपने से भारम्भ होती है । जॉर्ज-जूनी में हमारे नार्मन साहब कहा करते थे—आपकी बात का दूसरे पर तमी असर होगा, जब पहले आप कुछ करने दिखायें ।”

बातें करते-करते वे बनसिंह की बुझाव पर पहुँच गये । रामाल ने पेशान छोड़ दी, यह स्वर पहले ही बनसिंह तक आ पहुँची थी । उस ने झूटते ही पूछा, “क्या यह सच है काका, कि आप ने फिरंगी की पेशान पर साठ मार दी ? हम ने तो यही सुना है ।”

“सुना तो हम ने भी है ।” रामाल ने हँसकर कहा, “यह छेससा तो मुझे बहुत पहले ही कर सेना चाहिए था । मैं करता हूँ—अब शिकारी गाँव में खोबारा बनाना नहीं बनेगा ।”

एन भी आकर इस गोष्ठी में सम्मिलित हो गया । नीलमणि ने गम्भीर होकर कहा, “रामाल का यह विचार मेरी समझ में तो नहीं आता कि शिकारी गाँव में खोबारा बनाना नहीं बनेगा ।”

“न बने तो अच्छा है”, बनसिंह बोला, “माझुली को फिरंगी की गुलामी नहीं चाहिए ।”

“फिरंगी की गुलामी तो हमें भी नहीं चाहिए ।” रामाल की आवाज में दृढ़ता थी ।

“तो क्या हम भी दिसॉमसुल का धाना जसा डालें ?” एन ने कहा दिया, “क्यों, काका ? बोलो, हम क्या करें ?”

“तुम क्या करोगे ?” रामाल ने पसटकर कहा, “तुम चाहो तो कम-से-कम दारोगा मोरीमाय की मुफ्त इनामत बनाना ही छोड़ सकते हो ।”

“तुम करते हो तो छोड़ सकता हूँ । पर इस से क्या लाभ होगा, काका ? मैं नहीं तो कोई दूसरा माफित दारोगा की इनामत करने के लिए किसी-उत्तरा लेकर पहुँच जायगा उनके डेरे पर ।”

भनसिंह की आंख बिक रही थी। मालूम होता था कि अब तक उसका बाहु ब्रह्मपुत्र झालीसीमा को निगल नहीं लेता, भनसिंह की आंख इसी तरह बिकठी रहेगी और इस तरह की हान-गोष्ठी भी आवश्यक जमती रहेगी।

आप पीछे-पीछे रास्ता की कल्पना में उस लम्बे कुलूस का दृश्य घूम गया, जो उस दिन दिसईंगपुर से चलकर शिवसमार में कमिन्तर साहब के बंगले पर पहुँचा था। कमिन्तर साहब ने कितने आग्रह से यह मामला कलियपुर ले जाने की कलाह दे डाली थी। शिकारी गँव के बुझान्त की शिकायत अब तक तो कलियपुर का पहुँची होगी। काश, शिवसागर के कमिन्तर साहब चाँद-हूँ की मार्जन साहब जैसे होते। बोखों अग्रेसर हैं। एक कितना बड़ा देवता है, दूसरा कितना बड़ा दानव। इस दानव द्वारा डेपुटेशन का अपमान हमारे लिए असह्य था। हम ने कभी इस की कल्पना भी न की थी। वहीं कमिन्तर साहब की छोटी के सामने कने-खड़े में मैं प्रैचला कर लिया था कि किरंगी के हाथों मिलने वाली डेपुशन पर लाख मार डूँगा। आप का खाली विश्वास नीचे रखते हुए रास्ता में कहा, "अपनी परती, अपना नाम; बोका चाँद ब्यादा, कितना मैं मिल जाऊँ। अब मैं अपनी परती के हान से ही हो बल पेट भरकर रह जाऊँगा। किरंगी की डेपुशन नहीं लूँगा, नहीं लूँगा, नहीं लूँगा।"

भनसिंह ने रास्ता की बात अनसुनी करते हुए कहा, "कहते हैं शिकारी गँव का गँव-बूढ़ा रंजन बहुत बहादुर निकला। उसने देव कान्त को छिपाने में मदद की। नारायण की पता लग गया। वह रंजन के पास पहुँचा। रंजन ने चाक इन्कार कर दिया। नारायण को गुस्सा आ गया, और—"

"नारायण के गुस्से को कीम नहीं जामता।" रल कर उठा, "शिकारी गँव का प्रमात बतल रहा था कि नारायण ने रंजन को अपने बूट की ठोकटों से अकम्पुष्ट कर दिया।"

इतने में कल्याण मगत भी आ निघले ।

“क्या जान-बर्बा हो रही है ?” मगत भी मुस्कराने ।

“सीसरी गाँव के गाँव-बूढ़ा रंजन को नारायण बाबोरा ने किस तरह अपमानित किया बूढ़ की ठोकरों से—वही बात हो रही थी ।” नीलमणि भी आवाज मराई हुई थी ।

“अधमुप रंजन को माथ में डालकर नारायण दिसाईमुख भी और आ रहा था ।” बनसिंह चुप न रह सका, “वह रंजन का हस्ताक्षर करना चाहता था इस्पताल में लाकर । उसे पीरते हैं, फिर इलाज करने की इच्छा है । किन्तु विविध हैं छिरंगी के छिड़ । कमलिना सापरी के पाठ नाब बूझ गई । छिरंगी गाँव के प्रमात और मुकन नाब से रहे थे । उन्होंने तैरकर जान बर्बाई ।”

“तुम्हें किस ने बताया ?” राखाल की आवाज मराई हुई थी ।

“प्रमात और मुकन आज सबेर वहाँ पहुँचे ।” बनसिंह ने कहा, “पुलित के डर से वे बड़ी क्षिप गये होंगे ।”

“मात्यन्ध और रंजन की लार्से सब क्यों मिलेंगी ?” नीलमणि ने आग्रहपूर्वक कहा, “तलाश तो करनी ही चाहिए । जैसे लार्से मिल भी गई तो क्या होगा ?”

“यह सब तो अद्यपुत्र बाबा की इच्छा पर है ।” कल्याण मगत ने हाथ ठड्काकर कहा, “कोई क्या बोल सकता है ? एक राक्षस और एक देवता साथ-साथ बूझ गये । मछलियों के लिए तो कोई अन्तर नहीं । उन के लिए तो सब मांस बराबर है । पर सन्ध्या वैष्णव बड़ी है, जो मांस को मुँह नहीं लगाता ।”

“तो क्या मगत भी का विचार है कि कभी अद्यपुत्र की मछलियों भी वैष्णव बन सकती हैं ?” रान ने हँसी की फुलझड़ी छोड़ी ।

“हरि नाम की आश्र छोड़कर पाठ करो, पैदा रान ।” कल्याण मगत ने जैसे आगत-अनागत की सीमा-रेखा पर लफे होकर कहा, “मद कसिपुत्र है, और प्रतीत होता है कि अद्यपुत्र बाबा भी वैष्णव धर्म का

परिमल करने पर तुल गये हैं। नाम डूबने की इतनी घुपझपाई पहली तो नहीं होती थी। पहले इतनी बाद भी नहीं आती होगी—सतयुग, त्राम और नेता में। 'तभी तो मैं कहता हूँ, हरि नाम की बादर ओढ़कर कलियुग से पार पा लो।'

"तो क्या आपका विचार है कि बनसिंह के पाप ही निहसे-से-निहसे बर्ष की बाद में हमारे दिवंगमूल की चितालिया बस्ती को ले डूबे थे?" रत्न ने बोले की।

"हरि नाम। हरि नाम।" मगल की बोले "बढ़ दिक्कतारी। बढ़ दिक्कतारी।"

"बेचारी चितालिया।" बनसिंह ने मगल हुई आपाह में कहा, "अब तो चितालिया का नाम ही रोप रह गया है। वहाँ तो अब ब्रह्मपुत्र और दिवंगम के संगम का आँविल फैल गया है। वहाँ कभी हमारा घर था, वहाँ अब पानी-ही-पानी है। और वहाँ अब बड़ी मछलियाँ छोटी मछलियों को मछों से खाती होंगी।"

"अब यह तो स्वार्थ की चरम सीमा है।" रत्न ने व्यंग्य फला, "तुम्हारे स्वार्थ का यही हाल रहा बनसिंह, तो देख लेना, ब्रह्मपुत्र बाबा एक दिन हमारे इस आलीशानी को भी बहा ले जायेंगे। लैर छोड़ो। नर पक्षी बालक केतली में चाप लगात करो। आज तुम्हारी चाप में मज्जा ही नहीं आ रहा।

अतुल, जो अब तक न जाने क्या सोचकर चुप था, अट कद उठा, "नर पक्षी बालक चाप बनाने की बात तो राम ने मेरे ओठों से झीम ली। बनसिंह माई, नर पक्षी बालक चाप का रंग बौंध हो।"

राजाल कहता पला गया, "ब्रह्मपुत्र बाबा का हाथ रोहने वाला अभी तक पैदा नहीं हुआ। यह तुम्हारा फिरंगी चितनी भी जीते क्यों न मरे, क्या यह आज तक ब्रह्मपुत्र पर पुल बना सका है।"

"और बाढ़ रोहने की शक्ति तो फिरंगी के बापू में भी नहीं होगी।" अतुल ने हठपूर्वक कहा, "यह तो ब्रह्मपुत्र को खुद ही हम पर तरस

आ जाता है, जो वह ऊँचा उठकर भी फिर नीचे उतर जाता है।”

“हरि नाम ! हरि नाम ! बड़ डिकडारी ! बड़ डिकडारी !” भगत जी ने अपनी ही शॉकी, “इसीलिए तो मैं करता हूँ कि हरि नाम की यादर ओढ़ो। अण्डी या मूगा की यादर ओढ़कर कलियुग से पार पाना सहज नहीं। फिरंगी को तो हम बूधा बोप देते हैं। वह तो हमारा मला चाहता है। इसीलिए उस ने बाने बनाये, कचहरियों बनाई।”

“बाह बाह !” अशुष ने जैसे बिदकर कहा, “इसीलिए फिरंगी ने बाने बनाये, कचहरियों बनाई। मैं करता हूँ, फिरंगी बिलकुल नहीं चाहता कि हमारे आपस के मगने मिट जायें। वह तो हमारे मगनों को हवा देता है। उसका कानून ही ऐसा है। फिरंगी के राज्य में अभी तो मुकदमे और बढ़ेंगे। डेलते नहीं, शिबसागर में पहले से कहीं अधिक हो गये हैं बकीस, प्लीडर और ऐडवोकेट। उनका काम ही यह है कि सब को झूठ बनाकर दिला दें कचहरी में, और झूठ को सब सिद्ध कर दें। छोको, भाद ! मैं अकेला इस में क्या बोल सकता हूँ। फिरंगी का मुका बला तो हम मिलकर ही कर सकते हैं।”

“हरि नाम ! हरि नाम ! बड़ डिकडारी ! बड़ डिकडारी !” भगत जी ने रट लगाई।

इतने में आखी मागती हुई आई। उसका खँस बढ़ा हुआ था। माछूम होता था, वह नाब-बाद से सरपट मागती आई है। उस ने सँमलकर कहा, “बाद पर वो लारों आ लगी है।”

सब उठकर नाब-बाद की ओर चल पड़े।

## उनचास



उस हवा बस रही थी। आकाश पर मेघ देवदर लगता था कि किसी भी समय पता की मनी बारम्ब हो सकती है।

कमलिया सारी की ओर से बहकर झट्टी लम्बा की पक्षे प्रमान्धी ने ही देखा था, अप वह मछली मारने जा रहा था। उस ने बस फँककर

इन लारों को काटू में बर लिया था।

दिर्घांगुल के नाम-वाट पर देखते-देखते भीड़ जमा हो गई। एक लार की ओरले बन्द थी, वृत्ती की कुली।

कुली झँल्लो वाली साध नाचक की बी; बन्द झँल्लो वाला वा रंजन, जिस के शरीर पर जोरों के निहान साह्र मन्नर आ रहे थे।

भीड़ में से किसी की आवाज आई, "अरे यह बन्द झँल्लो वाला ही बेचारी गल्ल का गल्ल-बूढ़ा माहूम होता है।"

"और यह कुली झँल्लो वाला है नाचक वारोता।" वृत्ती आवाज आई, "बेटा जो को क्या माहूम था कि एक दिन ब्रह्मपुत्र में डूबकर मरना होगा।"

उर-उर के बोल सुनाई देने लगे :

"एक देव था, तो वृत्तरा बामन।"

"वही ही मनुहस मूल्य पार्थ बेचारी म।"

"तब अयबाब का खेला है।"

था जाता है, जो वह ठेंबा उठकर भी फिर नीचे उतर जाता है ।”

“हरि नाम ! हरि नाम ! बड़ डिक्कारी ! बड़ डिक्कारी !” भगत जी ने अपनी ही हॉकी, “इसीलिए तो मैं कहता हूँ कि हरि नाम की यादर छोड़ो । अण्डी या मूगा की यादर छोड़कर कलियुग से पार पाना चाहें नहीं । किरंगी को तो हम घृणा खोप बैठे हैं । वह तो हमारा मला चाहता है । इसीलिए उस ने थाने बनाये, कचहरियाँ बनाई ।”

“बाह बाह !” अग्रुल ने जैसे चिदकर कहा, “इसीलिए किरंगी ने थाने बनाये, कचहरियाँ बनाई । मैं कहता हूँ, किरंगी बिलकुल नहीं चाहता कि हमारे छाप्स के अंगड़े मिट जायें । वह तो हमारे अंगड़ों को हवा देता है । उसका कानून ही ऐसा है । किरंगी के राज्य में अमी तो मुकदमे और बढ़ेंगे । बेसठे नहीं, शिबसागर में पहले से ज़री अधिक हो गये हैं बकील, प्लीडर और ऐडवोकेट । उनका काम ही यह है कि तब को झूठ बनाकर दिखा दें कचहरी में, और झूठ को तब सिद्ध कर दें । दौको, भाइ ! मैं अजबेसा इस में क्या बोला सकता हूँ । किरंगी का मुकाबला तो हम मिलकर ही कर सकते हैं ।”

“हरि नाम ! हरि नाम ! बड़ डिक्कारी ! बड़ डिक्कारी !” भगत जी ने रट लगाई ।

इसने मैं झारती भागती हुई आई । उसका सौत बढ़ा हुआ था । माहूम होता था, वह नाव-याद से सरपट भागती आई है । उस ने संभलकर कहा, “याद पर दो सारों आ लयी है ।”

सब उठकर नाव-याद की ओर चल पड़े ।

## उनचास



ठेक हवा चल रही थी। आकाश पर मेघ हँसकर लगता था कि किसी भी समय बरस भी सकती आरम्भ हो सकती है।

कमलिया चापरी की ओर से बहकर आती लारों को पक्षों बमानन्ती ने ही देखा था, जब वह मछली मारने जा रहा था। उस ने खाल बँकड़

इन लारों को काबू में कर लिया था।  
दिव्यगुप्त के नाव-पाट पर बैठते-बैठते मीक जमा हो गई। एक लार की झल्लें बन्द थीं, वृत्ती की कुली।

कुली झल्ला वाली लार नारायण की थी; बन्द झल्लों वाला था रजन, जिस के शरीर पर पोटी के निशान साफ़ गहरा रहे थे।  
मीक में से किसी की आवाज़ आई, "और यह बन्द झल्लों वाला तो

बेचारी गाँव का गति-बूढ़ा माहूम होता है।"  
"और यह कुली झल्लों वाला है नारायण दारोगा।" वृत्ती आवाज़ आई, "बेटा की को क्या मालूम था कि एक दिन महापुत्र भी बहकर

तल-तल के बोले सुनाई देने लगे।

"एक देव था, तो वृत्त बानव।"

"बकी ही मनहूत मूल्य पार्स बेचारी ने।"

"सब भगवान् का लेल है।"

महापुत्र।



अम्बुल कादिर ने मुँहलाकर कहा, “अरे धर्मानन्दी, क्यों बड़-बड़कर ब्रह्मण्य बसा रहे हो ? घर में इतनी बड़ी लकड़ी हो गई हयिनी जैसी । उस के ब्याह की तो तुम्हें कभी चिन्ता नहीं सटाती । ‘लो बह आ गई आरती मी । किस तरह कुदकके मारती आ रही है राखाल काका और कल्याण भग्न के सामने । अरे बह तो नीलमणि, मनसिंह, रत्न और अम्बुल मी घसे आ रहे हैं ।”

गौव-बूढ़ा नीलमणि ने गोपीनाथ दारोगा के पास आकर कहा, “ब्रह्म-पुत्र बाबा ने तो अपनी सीला दिला दी । अब इन लम्यों को ठिकाने लगाने में क्या हैर है ?”

“दोनों लारों पोस्ट माटम के लिए शिबसागर आवेंगी ।” गोपीनाथ ने शान्त भाव से कहा, “हमें कुछ बन्दी है । आरती को मेरा बा । तुम्हारा ही इन्तज़ार था ।”

## पचास



अम्बुलकादिर अपना घर एक हज़ार से कम में बेचने पर राज़ी न था, जबकि चित्ताप्रसाद इसे अपने 'अस्सी मूंग सहकारी संस्थान' के लिए पाँच साठ सौ में ही पटा लेना चाहता था।

चित्ताप्रसाद ने दूरी-कूटी मछोपड़ी की तरफ़ ठँगसी ठठाकर कहा, "इस मछोपड़ी का नहीं, मोल

तो इस ज़मीन का है।"

"ज़मीन का मोल ही तो माँग रहा हूँ।" अम्बुलकादिर की आँखें चमक उठीं और फिर जैसे एकाएक यह चमक विद्युत हो गई, "एक जी चाहता है—यह सीढ़ा न करूँ, बाप-बाबा की मिशानी इसी तरह बनी रहने दें। फिर सोचता हूँ कि जब अपनी कोई औलाद ही नहीं, तो फिर किस के लिए बचाकर रखूँ यह जायदाद? आज नहीं तो कल, एक दिन इस घर को भी ब्रह्मपुत्र निगल जायेगा, जैसे मेरी ज़मीन चली गई ब्रह्मपुत्र के मुँह में।"

"दिसे बोल मुँह से न निकालो।" चित्ताप्रसाद ने बाग़डोर संभाली, "ब्रह्मपुत्र यह अस्माभार नहीं करेगा।"

अम्बुलकादिर पहले तो क्षामोच हो गया, फिर आवेश में आकर बोला, "अरे मैया, इस बस्ती का तो नाम ही आशीसीगा है। इतका तो यही इतिहास है। न जाने कितनी बार दूरी यह आती, जो रिज सागर से यहाँ आकर ब्रह्मपुत्र के किनारे-किनारे स्टीमर-घाट तक चली गई

है। जानते हो, कमी दिसाँगमुल के नाब-भाट और शिबसागर का मील का कासला था। फिर यह कासला बख्ते-बख्ते सगह-भटारह रह गया, और अब तो यह कासला तेरह मील का भी नहीं है। छोटी-सी ठम में ही बसपुत्र हमारी पौंच मील जमीन मिगल गया ये घोड़ी करके।”

चिन्ताप्रसाद ने प्रसंग बदलकर कहा, “हमारे ‘अपकी मूगा लख संस्थान’ का आदर्श कही है—अच्छी तरह जीने से पहले हमें जीना चाहिए।”

“अच्छी तरह जीने का इशारा तो इस्लाम में भी दिया गया है। अल्लाह से हुआ मॉगने से पहले हम हमेशा यह मानकर चलते हैं ‘अल्लाह हमारी गरदन की गल से भी हमारे ब्यादा नज़दीक है’ क्या यह नहीं मानते?”

“मानते क्यों नहीं, मिर्चों अय्युल कादिर।” चिन्ताप्रसाद ने ऊँची वृत्तिका से चिन-सा अंकित करते हुए कहा, “मसबान् बुद्ध भी कहते हैं कि हर आदमी बुद्ध हो सकता है, अर्थात् ज्ञान का प्रकाश सब लिए है। सिली को ही देख लो—”

“हाँ हाँ, अमेक की लकड़ी होकर भी दिसाँगमुल की फिटनी सेवा करती है।” अय्युल कादिर ने जैसे चिन्ताप्रसाद के शब्द छीन लिये।

“सिली का इन्पुलाक इस बात का प्रमाण है कि सेवा के काम देखी और बिदेसी का मेद भाव नहीं रह सकता।” चिन्ताप्रसाद की आँखें चमक उठीं, “ईसा के शब्दों में सिली यह मानकर चलती है कि ‘मसबान् का राज्य तुम्हारे भीतर है।’”

“कमी-कमी में सोचता हूँ कि दिसाँगमुल कोदकर मैंने अच्छा नहीं किया।”

“सिली भी तुम्हारे बारे में अक्सर पूछती रहती है। हम फिर से दिसाँगमुल में ही रहने का विचार बना लो, तो हम तुम्हारा घर करीबने का विचार छोड़ देते हैं।”

“तुम लिली से मिलकर बात करोगा।”

“लिली भी इस पक्ष में तो बिलकुल गरीब हैं कि किसी के बन्-बारा की इन्तिम निशानी इनारा संस्थान लौटेंगे।”

“दिल्ली बार में एक दिन के लिए विसर्गिमुख आया था तो कुकाम में क्या सेने लिली के इत्यताल गया था।” सम्मुख कारिर मुत्कराया, ‘लिली ने छुटते ही कहा—‘तुम बीबी-बम्पों के मॉन्ड से मुक्त हो, मयों जी ! तो फिर तुम शिबतगर में झूनी गलाहियाँ दे-देकर क्यों बहनामी क्याते हो ?’ मैं ने साफ-साफ कह दिया—‘दिलो, मैं साहब ! किसी ने झूठ-झूठ बहका दिया है मेरे बारे में ! मैं तो यह गुमाह खुद करता हूँ न किसी को इतनी छलाह देता हूँ।’ इस पर मैं ने देखा कि लिली की ठपल्ली हो गई।”

“और क्या कहा था लिली ने ?”

“नीरद की बहुत प्रशंसा कर रही थी कि वह एक ऐसी पोथी लिखने में लगा है, जो सब देशों के सामने ब्रह्मपुत्र की सम्पत्ती तबकीर लैगा। कर रही थी—नीरद अब से विसर्गिमुख से बाहर खला गया है, उसका एक-एक पल अपनी पोथी के लिए मुनासिब सामग्री जुटाने में ही बीत रहा है। नीरद की कथा करते हुए लिली की धार्मिक कुद-कुद मींग गई। बोली—‘नीरद की थिड़ी बहुत देर से आती है। मैं ने कहा, ‘नीरद बहुत निर्मोही है, जैसा यह हमारा ब्रह्मपुत्र है।’ मेरी बात बदलकर वह बोली—‘नीरद की पोथी के पहले भाग की सब मे कभी छपहमा की है।’ हों तो मेरा विश्वासनाद, मेरे देखते-देखते लिली असमानी से नीरद की पोथी निकाल लाई और एक जगह से पढ़कर मुनाने लगी।”

बातें करते-करते वे विश्वासनाद की बैठक में चले आये थे। विश्वासनाद अपनी असमानी से मूट उस पोथी का प्रथम खण्ड निकाल लाया। पहले उस ने पोथी खोलकर नीरद के आगे हाथ के सिक्के हुए शब्द दिखाये, जो उस ने यह पुस्तक विश्वासनाद को भेंट करते हुए लिखे

ब्रह्मपुत्र।

विदेशों में बहुत महंगे दामों बिक्रमा देते हैं। खेती-खेती की कसर निकसते बहुत देर नहीं लगेगी।

जाम की बुछड़ी मरते-मरते उस की इष्टि समाचार-पत्र की एक सुर्ती पर पकी—‘ब्रह्मपुत्र की सहायक नदियों में बाढ़’। जाम का कप समाप्त करते उस ने पढ़ना आरम्भ किया :

“डिब्रूगढ़, २० जुलाई। यहाँ अस्थिर रूप से प्राप्त समाचार के अनुसार ब्रह्मपुत्र की सहायक नदियों बूढ़ी दिहोंग और दिहोंग में मयानक बाढ़ आ गई है। डिब्रूगढ़ सब विवीजन का विस्तृत क्षेत्र जलमग्न हो गया है। अधिक नहीं, तो इसका प्रभाव एक लाख व्यक्तियों पर तो निश्चय ही पड़ा है।

“दिहोंग के किनारों पर बनाये गये बाँध अनेक स्थानों पर क्षतिग्रस्त हो चुके हैं। तौगानेठ और डिब्रूगढ़ तथा माहरकेटिया और मुराने के बीच की सड़कें स्थान-स्थान पर टूट-फूट गई हैं। बाढ़ में अनेक पशु बह गये। कई गाँवों के मकान छीन-छीन फुट पानी में हैं।

“कुछ स्थानों का सम्बन्ध देश के अन्य क्षेत्रों से बिलकुल टूट गया है। इस के फलस्वरूप सहायता-कार्यों में विलम्ब हो रहा है। सरकार ने कई स्थानों पर आवश्यक सहायता-कार्य आरम्भ कर दिया है और बाढ़ पीड़ित लोगों को बाढ़ वाले प्रदेश से निकाला जा रहा है।”

“अरे मर्द एक कप चाय और बाहिए।” उस ने आवाज दी, और वह सोचकर कुछ क्षणिक भी हुआ कि लोग बाढ़ में डूब रहे हैं और यहाँ चाय के कप में लक्ष्मण आ रहा है। चाय का कप आया तो उस ने सोचा कि इसे बिलकुल न उठाया जाय। शीघ्र ही चाय की बुछड़ी मरते मरते वह सोचमें लगा—कब-कागद की माया बाढ़ का पारलभिक चित्र कहीं लौंघ लफ्फी है ? इन्हीं तो लुकर छापने से मतलब। यहाँ दिहोंगपुत्र में भी तो ब्रह्मपुत्र का पानी हमारे आलीसीमा से डेढ़ मील भी नहीं रह गया और कीमत जामे कब हमारे घर में पानी में डूब जायें। फिर तो ब्रह्मपुत्र कादिर वाला घर भी पानी में डूब जायगा।

बसो यह छोटा हो गया, यह अम्बुल हुआ। हमारे संस्कार के लिए यह शुभ हो, मंगलमय हो।

चिबसवार की अदास्त में अम्बुल कादिर के घर की रस्सी का हथुड़ा उठकर कम्पना में लू गया। ली-ली के दस मोट अम्बुल कादिर ने कितने मझे से मेरे हाथ से ले लिये थे। पूरा बाब ही तो है अम्बुल कादिर। अब ये मोट उस के पास चला रहेंगे।

उस ने एक यही सॉट लौ—पडे ने ली-ली के दस मोट मार लिये। हथ से आकर तो उसे उबार बनना चाहिए था। यह उल्टा और भी बालची बन गया। मैं कहता हूँ, उस ने हथ नहीं किया होगा। वो ही रास्ते से लौट आया होगा। हाजी क्या ऐसे होते हैं। मैं ने क्या हाजी नहीं देखे। हाजी तो बहुत उदार होते हैं। अम्बुल कादिर का क्या है। वह स्वयं भी तो कहता है—हम-का-हम, न बीसा न ताम। फिर वह बात ली मैं क्यों न माना। और अधिक सेता, तो छाठ ली मैं राखी हो जाना चाहिए था। बाप रे बाप। पूरे एक हजार में राखी हुआ एक पाई कम पर भी न माना। अच्छा बेग, तुम कुछ रहो। तुम ने वह न सोचा कि बिचामबाद पर पूरी चरपी का मार है। कहीं तो निबाह होना पड़ना ही रहा है। ऊपर से सिझाझा बनाने रखना पड़ता है। बचत ली होती ही नहीं। लार्ज पर लार्ज। बाप रे। लार्ज तो यी जाता है जैसे वेहरे के आसपास मच्छर मेंहराता है।

ये दिन उस की कम्पना में बूम गये, जब वह वहाँ के स्कूल में अपना पक बनकर आया था। किस तरह गर्बि-बूढ़ा नीलमखि ने उसे स्कूल से निकलवाया, किस तरह उस ने विपत्ति के दिन काटे, किस तरह हटसन साहब की छाया से यह 'अबही यूना चरकारी लम्बान' लका किया, फिर तो लैकनी कम्पे आये और गये पिल्ले आयेक बपों में—वह लम्बी मधानी है। नीलमखि से मैं अभी तक बदला नहीं ले सका। नीलमखि के स्थान पर ताबन मीरी को गर्बि-बूढ़ा बनवाने का मेरा विचार अभी तक पूरा नहीं हुआ। मैं ने नीलमखि से बदला न लिया, तो वह भी क्या

पाए करेगा ।”

उस ने उठकर स्नान किया, फिर धुली हुई भोली-भमीक पहनी । विशालकाय बर्षा के सामने लड़े होकर बालों में खंभी थी । नई चप्पल पहनकर वह बाहर जाने के लिए तैयार हुआ । फिर उसे विचार आया— क्या और बाद के दिन हैं नई चप्पल तो खराब हो जायगी, पैरों की भी नहीं रहेगी ।

फिर से पुरानी चप्पल पहनकर वह उस तरफ़ निकल पड़ा, जहाँ ब्रह्मपुत्र के किनारे कड़ी-कड़ी बरारें पड़ गई थीं । एक क्षण के लिए उसे उन लोगों का विचार आया जिन के पशु ब्रह्मपुत्र में बह गये थे या जिन के घरों में हो-हो फूट पानी आ गया था । इस तरह तो लोग दरिद्र और कंगाल बन जायेंगे, उन्हें दरिद्र मारामण कहा जायगा; सुनने में यह नाम कितना ही मक्का क्यों न लगे मछलियों के मुँह से, पर दरिद्र और कंगाल होना तो बहुत कष्टदायक है । “चलते-चलते वहाँ पहुँच गया जहाँ बहुत से लोग एकत्र हो चुके थे और जहाँ बरारें मुँह बाये नहर आ रही थीं ।

कोई कह रहा था, “वह तो ऐसे हैं जैसे हवन करते हुए किसी के हाथ जल जायें ।”

“हाँ माई, हम लोग ब्रह्मपुत्र पर नारियल चढ़ाते नहीं सकते, फिर भी इस का फ़ैसल वूर नहीं होता ।”

“हरि हण्डा । बड़ ठिक्काठी । बड़ ठिक्काठी ।”

“सरकार स्वान-स्वान पर सहायता तो कर रही है, पर वह आटे में मक्का से भी कम है ।”

“अरे माई, सरकार भी क्या करे !”

“निदेशी सरकार है न । अपनी सरकार होती तो बे-मन से बोके ही करती सहायता ।”

जन-जन की बहुत मुद्रा देखकर चित्ताग्रसाह ने भी बेसी ही मुद्रा बना ली । वह सोचने लगा—इस बाढ़ से कैसे ज़ाय मिलेगा । उस का मन

स्नान में डोलने वाली माव के समान असमंजस में पड़ गया। यह सब नियति की विदम्वना है। पर लोगों को बाढ़ से बचाने के लिए सरकार कुछ कम सहायता तो नहीं कर रही। फिर भी लोग सरकार को दोष देते नहीं सकते, सरकार को 'विदेशी' कहकर असहयोग की धमकी देते हैं।

लोग एकटक ब्रह्मपुत्र को देख रहे थे। असमिया, मीठी, नेपाली—सभी लोग एकाग्रित थे। किसान, मछुने और नागरिया आसो और बुझान वार। किसी ने कहा, “हमारे आसोसीमा को डुबोते ब्रह्मपुत्र को उतनी देर भी नहीं लगेगी जितनी भाद्व दिवस पर ब्राह्मण के सम्मुख बैसो का पचा रत्नकर मोहन परोसने और उसके आचमन करने में लगती है।” यह कल्याण भगत की आवाज थी।

“ऐसा मत कहो, भगत जी।” चित्ताप्रसाद ने पाठ आकर भर्राई हुई आवाज में कहा, “विलम्बित से ब्रह्मपुत्र का कोई बैर तो नहीं है।”

इतने में आसोसीमा की तरफ से अम्बुल कादिर आता दिखाई दिया।

“कहिए, हाजी साहब।” चित्ताप्रसाद ने आसो कहकर अम्बुल कादिर का स्वागत किया। वह उस का बाजू सोंचकर भगत जी के पास से गया और बोला, “हाजी मियाँ से पूछो भगत जी, कि अपने घर के बरसे इतनी बड़ी रकम उन्हें कैसे हज़म होगी।”

“एक हज़ार भी कोई मोल होता है अपने बाप-बादा के घर का।” अम्बुल कादिर मुस्कुराया, “मैं ही मैं ने अपना घर बेच दिया, फिर भी आम्र सबेरे शिवसागर में बैठे-बैठे सोचा, चलकर देखें कि कहीं दरारें हमारे घर के बिलकुल पास तो नहीं आ गई।”

“यह कहो कि एक हज़ार लेकर भी घर से मोह नहीं दूँ।”



## वाचन



अग्रज देर तक वह श्लोक गुनगुनाता रहा, जो एक बार उस ने अपने ससुर कल्याण भगत से सुनकर कहठर्य किया था। इस में मामो भगत जी की आत्म-कथा बोल उठी थी। उसका ध्यान बार-बार भगत जी की अघड़ी की यादर की ओर खसा जाता, जिस से अनेक बरों से सैमास-

कर भोड़ते आने थे।

वह पर के बानीये में लड़ा कभी बसलों और हसों की किसकरिबों सुनते सुनता, कभी उसका ध्यान अपने बेटे विक्रम की ओर खसा जाता, जो अब आठ वर्ष का हो गया था और इस समय बसलों के पीछे भाग रहा था।

फिर अग्रज को ध्यान आया कि वह पार बच्चों का पिता है। पहला अतिथि तो विक्रम ही था। फिर एक-एक करके तीन बच्चाएँ आईं। जूट तारा की रूप-रूपा पर जैसे बार बच्चों की यों होम का तनिक भी प्रमाण न पड़ा हो। विक्रम के बाद पहले नीरजा आई, फिर पद्मिनी और फिर हेमपतिमा।

वह सोचने लगा—किस प्रकार मैं सर्वप्रथम जूटतारा की ओर आकर्षित हुआ था जूटतारा भी तो मेरी ओर आकर्षित हुई होगी। रत्न-पुष्प का परस्पर आकर्षण तो फिर-सब है। जूटतारा सुहासिनी है, पवित्रवत्तमा है, कल्याणी है। हमारा निधन नष्ट होकर महाप्रतापशाली

बनेगा। नीरजा पाँच बरस की होने आई, पछमिया हो बरस की है और हेमप्रतिमा तो मुस्लिम से सात मास की होगी।

नीरजा मिलाहरी के पीछे भाग रही थी, पछमिया माँ की बगल में लो रही थी, मन्दी हेमप्रतिमा माँ का हूब थी रही थी। वह सोचने लगा— हमारा घर बिलकुल नहीं बचला; हाँ, पेड़ बचे हो गये। मारिपल के पेड़ तो आकाश को छू रहे हैं। पोस्तर वैसा ही है, जैसा पहले था। दिसांग मुल के लोगों में बिद्याप्रसाद ने ही सब से अधिक बस कमाया है अब तो उस ने अपने संरक्षान के लिए बाम्पुल कादिर बाला घर में क्रीद सिमा। इहसन साहब का रीब बटा है, पर तिली का सेवा माव दलकन तो बिद्याप्रसाद की बम्बीरी बम्पदी लगती है न इहसन साहब का रीब। नीरज बहुत दिनों से बाहर बला मया। राजाल काका का समय अब मनसिह की बुकाम पर ही बीठता है। हमारा हाट बाजार ब्यापूँ लगता है वैसे ही बीक्री पिछती है और क्रीदी बासी है। बहुत कम अन्तर पका है, बहुत ही कम। पठार में ब्यापूँ बाम उगसा-बकता है, वैसे ही मधुमन्त्रिबी मधु कुपसी है फुल-फुल से रस लाकर। बापू अब पल्ले से अधिक बीर, गम्भीर और शान्त प्रतीत हो रहे हैं। शायद बापू मेरी बात मान जायें; शायद वे त्रिरंगी की पराधीनता का त्रिक्ता उदार करें। मैं तो बरस बार खलाह दे चुका हूँ—‘बापू, तुम गाँधि-बूढ़ा का पर छोड़ दो।’ अब तो राजाल काका भी वह खलाह दे रहे हैं।

वह गुनगुनाते लगा—

अब पट्टे में फिरंगमूक प्रियामहायँ अनुकपीवन।

अर्धकरिष्यत्य पुत्रपौत्रकान मयाधुमा पुत्रपदेव धामते॥

मूलतत्ता में पास होकर पूछा, “वह कैसा पाठ कर रहे हो?”

“ब्रह्मवारा, बरा ही मंगलमय श्लोक है। कवि कहता है—‘दो पितामह आदि न इस बरस के बीकम का उपमोय किया, यही बरस मेरे पिता के अगों का मूप्स रहा, अब यही बरस मेरे पुत्र-पौत्रों के अग सुरो मित करेगा इसलिए मैं इसे पुत्र के समान बारख किया हूँ।’ कवि

बाखी की वन्दना करो, बल्लभारा ।”

“इतना पुराना होमे पर भी वह वस्त्र फटा क्यों नहीं ?” बल्लभारा हँस पड़ी ।

हँसते समय बल्लभारा के हाँथ थमक उठे जैसे आँख से अनेक वर्ष पूर्व जमक उठे थे, अब वह सर्वप्रथम अशुल के सम्पर्क में आई थी । हँसते-हँसते वह पंरे को झूम गई । अशुल फिर विचारधारा में बह गया—दिसॉगमुल के मुखमण्डल पर तनिक भी खींचता नहीं आई । यथापूर्व अतिथि का आदर-सत्कार होता है । यथापूर्व बोहाम बिहू नाचते हैं, और माघ बिहू की ‘मैत्री’ ठापते हैं । यथापूर्व गाँव की पंचायत में पंच परमेश्वर की आवाज़ सुनते हैं । जा धूर्त हैं, वे धूर्तता नहीं खोजते, पर पंच-परमेश्वर बार-बार कहते हैं—‘धूर्तता तो लौंगरी-लूनी वस्तु है, पर सचार्थ छपने पेशों से आसती है ।’

विजय मरानर वस्त्रों के पीछे माग रहा था । बास्वकास भी कैसा स्वस्थमुग होता है । अशुल फिर विचारधारा में बह गया—छाबन मीरी वैसे ही बापू से झपकता है । मैं जानता हूँ, बापू ने गाँव-बूढ़ा का पद छोड़ दिया तो साबन के घर पी के दीये जलेंगे । फिरंगी से हाथ मिलाकर वह भट्ट दिसॉगमुल का गाँव-बूढ़ा बन जाएगा । जब से उस ने सुना है कि बापू गाँव-बूढ़ा के पद से मुक्त होने की सोच रहे हैं, वह ऊपरी मन से बापू का निष्ठास्थ मित्र बन रहा है । शिकारी गाँव का बच्चा अपनी मेढरी गोपी के साथ भागकर यहाँ आया, तो बापू ने उन्हें अपने बहाँ साभय दिया ठलका विवाह कराने में बापू के साथ छाबन ने भी हाथ बटाया, पर बाद में फिरंगी के पास आकर साबन ने यही रिपोर्ट की—‘दिसॉगमुल के गाँव-बूढ़ा ने शिकारी गाँव का बाना बल्लाने वाले अपराधी के विवाह में योगदान दिया ।’ छाबन तो दिसॉगमुल की फिरंगी का गुलाम बनाये रखना चाहता है । फिरंगी के आगे जार टपकाना ही वह भेषस्वर समझता है । अजम ! पामर ! वह क्या साकर बापू का मुकाबला करेगा ? बापू तो दिसॉगमुल के द्विचिन्तक हैं ।

एकदम उस के फगना-दिति पर समानन्दा का सदा उभरा ।  
 उस ने सोचा—‘उस दिन जब समानन्दी ने आकर कहा—‘कहो, गाँव  
 बूढ़ा सी ! आरती को नीलकण्ठ से ब्याह दें, या कहो तो शिकारी गाँव के  
 मुकुन्द या प्रमत्त में से एक को घर चुन लें ?’ बानू बोले—‘आरती को  
 क्या राय है ?’ समानन्दी ने साफ़-साफ़ कहा—‘आरती तो मन हो-  
 मन देवकान्त का घर कर चुकी है । बानू बोले—‘दिर तुम चिन्ता  
 छोड़ो । समय आने पर देवकान्त के साथ ही आरती का विवाह होगा ।’  
 मैं ने पाठ से कहा—‘देवकान्त की मी इच्छा होगी, तब न ।’ अरे  
 हों ही । बानू ने तम्मीर मुत्रा बनाकर कहा, ‘दिसाँगमुल में तो सदा से  
 यदा होता आया है । घर और कन्या की परस्पर स्वीकृति के बिना कब  
 कोई विवाह सम्भव हुआ ?’ अरे बहरी आरती तुम क्या हो ! कब से  
 बेटी देवकान्त की प्रतीक्षा कर रही हो । तुम्हारा विवाह हो गया होता, तो  
 तुम भी चार बच्चों की माँ बन गई होती ! चार बच्चों की माँ !  
 अम्न इस बिचार पर बह हँस पड़ा ।

भूलतारा ने पाठ आकर कहा “किन बात पर हँसी आ गई !”

“सोच रहा था, न आगती का विवाह हुआ । म वह चार बच्चों की  
 माँ बनी !” अमुल फिर हँस पड़ा ।

“आरती तो देवकान्त से ही विवाह करेगी ।” भूलतारा ने सरल  
 भाव से कहा, “वह पूछ रही थी—कुछ देवकान्त का भी पता है ? तुम  
 तो जानते होगे ।”

“देवकान्त मामुली से आकर शायद आरती को पहचाने भी नहीं, वह  
 पूछना तो असमय था कि तेरे मुँह में कितने दाँत हैं । आरती से कहना—  
 क्यों मिया अम्न में आयु गँवा रही है ? दिसाँगमुल में उसकी ओर  
 का महुआ मिलना अग्नि क्यों न हो, असम्भव तो नहीं ।”

“गोरी कह रही थी, देवकान्त तो मेधावी वीर है और वह आरती  
 को भूला नहीं होगा ।”

“ये शर्तियाँ भी कितनी मूल होती हैं ।”

“ये लकड़े कितने आशिष्ट होते हैं, मगरमच्छ के समान !”

आतुल ने बस्तुनिबन्ध पर काबू पाते हुए कहा, “देखो मर्द, लकड़े मत । आगली की क्या आगु होगी ?”

“शौचैस की तो होगी !” बलतारा मुस्कराई, “मिथमी मैं हूँ, उठनी समझे । आगली कहती है—देवकान्त जैसे लकड़े सारे हिन्दुस्तान में कम ही होंगे !”

“दिनाल !” आतुल ने खंखर कहा, “देवकान्त की इतनी तारीफ़ कर रही थी । उस से कहना—बिस्ली के भान्ने से यह झींका टूटने का नहीं !”

“मेरी सहेली को दिनाल कहते हो ! तुम्हारी तो यह बात है—ब्रह्मपुत्र में बिलमा बाँध लगाओ, उसका और भी बढ़ने लगता है !”

“ब्रह्मपुत्र तो हर साल बढ़ता है । कोई ऐसा साल भी जाता है, जब यह बढ़ता न हो ! ज़ेद, छोको ! आगली क्या ब्रह्मपुत्र तोषती है कि देवकान्त से उसका विवाह होगा !”

बलतारा मुँहझाकर बोली, “आगली वृष-पीसी बन्धी नहीं है कि ठपक का रनह कामे बिना हकर से पीने की वाली सँजो दे !”

“आगली और देवकान्त का विवाह हो भी जाय, तो कितना बड़ा काममेज जोका बनगा । बबू मज्जसियों की बार्ते करीपी, तो बर महाउप कान्ति-बबा में सलामन रहिये !”

बलतारा ने बिमपर्यंक कहा, “आगली पर तो तुम्हें क्या आमी आदिए !”

“क्या क्या ?” आतुल हँस पड़ा ।

बलतारा ने मिथ्याकर कहा, “सुना नहीं—कमी ब्रह्मपुत्र की गाब बैलगाड़ी पर, तो कमी बैलगाड़ी ब्रह्मपुत्र की गाब पर । वृषों की बिस्ली उकामे से पहले योग-समय लो कि कोई हयारा भी उफ़्फ़ बमा सकता है !”

“अच्छा, अच्छा !”

जलतमा गम्भीर मुद्रा बनाकर रखोड़ की तरफ़ खसी गई। अतुल बैचे-का-बैठा बासीवे में लका रहा। विजय यथापूर्व बचलों के पीछे भाग रहा था। उस के जी में तो धामा कि उस से कहे—इधर का काओ बैठा, तुम भक गये होगे। पर वह अनमने भाव से लका रहा।

ब्रह्मपुत्र की ओर से पानी से भीगी हवा आ रही थी। अतुल के काले मेघ सिरे हुए थे। कभी-कभी श्यामल मेघदल पर क्षमिनी क्षीपी बौंधी छाप दिखाना लगी थी।

बाहर से फाटक उठाकर नीलमणि ने बासीवे में प्रवेश किया और झुट्टे की आवाज़ लगाई, “किधर हो, अतुल बैठा ?”

“आया, बापू !” कहते हुए अतुल आगे बढ़ा।

“तुम्हारे लिए कुछ समाचार है। मैं किरंभी को गाँव-बूढ़ा की पदवी सौंप आया।”

“यह तो बहुत अच्छा किता, बापू !” अतुल ने प्रशंसापूर्वक कहा, “अब उस पुगलतोर की बन आयेगी। परबाह नहीं, आब दिखानेमुल के भाग आगे। मैं कहता हूँ बापू, अब आनन्द आयेगा। विरंभीमुख में वो गाँव-बूढ़ा होये जन-जन की ओर से हुज होगे बापू, और किरंभी की ओर से होगा लायन मीरो। अब किरंभी से हमारी लड़ाई चलेगी।”

नीलमणि ने अपने कन्ध पर आदमी की जादर डुबसा करते हुए कहा, “ब्रह्मपुत्र बढ़ा आ रहा है, और लोगों को दिखाने के लिए किरंभी लड़ाकता का माटक लेल रहा है। मैं देखकर आ रहा हूँ। बड़ी-बड़ी दरारें फड़ गइ हैं किनारे-किनारे।”

“अब तो बाँध बाँधने की आवाज़ लयामी होमी, बापू !”

अतुल और नीलमणि फाटक उठाकर बाहर निकल गये।

# तिरपन



बिद्याप्रसाद ने अण्णुस कादिर बासे पर भी पूरी तरह सम्मत् कराते से पहले ही उर्ध्वरी की एक कूची निरवाकर इस में अपने निवास का प्रवेश कर लिया ।

पहला घर, जो इस घर से बिलकुल सटा हुआ था, वहाँ उस ने अपने निवास के अतिरिक्त 'असह्य-मृगा सहकारी संस्थान' का केन्द्र रख लिया था, अब नये प्रबन्ध के अनुसार संस्थान के केन्द्र के लिए ही प्रयोग में लाने का फैसला किया गया ।

अण्णुस काद का नाम गाये जा रहा था, तैराकों को कुनौली देता, किमियों को परिधि फैलाता जैसे कोई सातवीं सेठ अपना व्यापार बढ़ाता है । बिद्याप्रसाद को लगा कि जिससे उस-पन्द्रह वर्षों में विरोध कम से कम के सम्मान में जैसे ही प्रगति की है, जैसे अण्णुस का पाठ पहले से चौड़ा हो गया था ।

रात का समय था, घर बाँसे की गंध थी ।

बिद्याप्रसाद जैम्स के प्रकाश में बैठा कुछ पढ़ रहा था । पुस्तक से नज़र हटाकर वह आकाश की ओर देखने लगता । मेघाच्छन्न आकाश पर एक भी तारा दिखाई नहीं देता था । जिसली चमक जाती थी । अपनी निद्रा पर वह मग-ही-मग पुलकित हो उठा—अण्णुस कादिर का घर गिर जाने से संस्थान का रीब बह गया । इस का मोल इतना अधिक देने का कारण यही था कि वह जगह संस्थान के केन्द्र से बड़ी हुई

थी। उस की कल्पना में सम्पूर्ण कादिर की छवि उभरी—‘सन्नाम, हाथी  
 सार्व’। उस ने मन-ही-मन कहा—मेरे जीवन पर तो भ्रम की छाया  
 है। मेरे पथ में यह ओसम आये। तुम्हें क्या याद नहीं, भीलमणि ने  
 स्कूल से मेरी नोकरी छुड़वा दी थी। फिर भी क्या मैंने पराजय  
 स्वीकार की।’

सहसा जोर की बिजली कड़की। चित्ताप्रसाद की पत्नी उठकर दीदी  
 दीदी आर धौर बोली, “तुम सोते क्यों नहीं ?”

“तो जाऊँगा। तुम जाकर सो रहो।” कहकर चित्ताप्रसाद फिर  
 पुस्तक खोलकर बैठ गया।

आरने कह से पत्नी ने फिर आवाज़ दी, “बिजली कड़क रही है।  
 मुझे डर लगता है।”

“डरने की क्या बात है।” चित्ताप्रसाद ने भी बिजली के समान  
 कड़ककर कहा।

वह पढ़ने लगा।

‘जैसे लता हृद से लिपट जाती है, वैसे ही तुम मुझ से लिपट  
 जाओ।’ तुम मेरे बर मे ला जाओ, मैं मनु से भी अधिक मधुर  
 हूँ। ‘जैसे हवा जखी पर पात को हिला देती है, वैसे ही मैं तुम्हारे मन  
 को हिला दूँ कि तुम मुझसे प्रेम करो।’

अथर्व वेद में वर्णित प्रेम-सम्बन्धी दृष्टिकोण का यह सुन्दर उल्लेख  
 देखकर उस की कल्पना में अपना सम्पूर्ण दाम्पत्य-जीवन घूम गया। वह  
 सोचने लगा—जीवन की मंजिल तो बहुत लम्बी है। जीवन में लता और  
 हृद के परस्पर आलिंगन की बात ही होती, तो फिर वह इतना ‘अपनी-  
 युगा लहकरी संस्वाम’ अम्म न होता। हवा बात को जखी पर हिला  
 देती है। उस पर तो कुछ कर्ष नहीं होता। पर पत्नी को बर में रखने  
 के लिए क्या केवल ‘मधु से भी अधिक मधुर’ बनकर ही गुजर होनी  
 सम्भव है। पर मैं पैसा न हो, लव ओपट हो जाता है। बही स्त्री, जो  
 क्या तक मुस्कुराती प्रथिमा थी, पर के कर्ष के लिए पैसा न मिलने पर



बिहारील डाइन मन जाती है ।

वह उठकर अपनी पत्नी के कक्ष में गया । वह बैसुप सो रही थी । दूसरे कक्ष में बच्चे सो रहे थे ।

वह फिर आकर अपनी बगह पर बैठ गया । उस ने सोचा—आज नींद क्यों नहीं आ रही ?

अब मूलसाधार क्या आरम्भ हो गई थी । हवा की पमाचौकड़ी, बिजली की कड़क, दूर से ब्रह्मपुत्र की बाढ़ का झकझ-धूँ स्वर !—यह तो बनी भीमक घुसगुमि थी । जैसे वह प्रलय की रात हो, जैसे आज सब वह जाने वाला हो ।

बिद्याप्रसाद लोभन लगा—अब ही अम्युल कादिर को एक हज़ार के नोट दिवें । रिशॉयमुल का तो खान्त आ गया । अब नहीं बच लकठा । अब कोई आशा नहीं । उस ने अपने मन में कहा—बेटा, कैसे पार करोगे बैतरिखी नदी ? किस गांव की पूँछ पामकर लेतेगे ? माव मी हुनेमी और तुम मी नहीं बच पाओगे ।

उस ने उठकर अपनी पत्नी को अगाया । बच्चे उसी तरह सो रहे थे । सहसा बिजली कड़की । पत्नी ने मयमीत होकर पति को जकड़ लिया । बिद्याप्रसाद को लगा—मैं हूँ हूँ, लकठा मुझ से लिपट गई है । वे देर तक मयमीत-से बैठे रहे बाँलों की नींद जाने क्यों विवृण्ट हो गई थी ।

“वह कर हमारे लिए शुभ प्रतीत नहीं होता ।”

“वह क्यों कह रही हो ? इस में अशुभ क्या है ? अम्युल कादिर तो हाजी है; बीस दीवियों से उस के पुरजा जली रहे । व सब मेक इन्साम थ । हमारे हाजी साइब भी तो कम मेक नहीं ।”

“बहुत देसे हैं हाजी और तीब-बाजी । जुँह में राम, बगल में हुरी । अरे आज का मैं तो रिशॉयमुल को हुनीकर ही लोकांग ।”

“तुम तो कर्ब ही कर रही हो ।”

अचानक बिजली कड़की । बिद्याप्रसाद की पत्नी पति के घुमापास

से निकलकर बच्चों के कक्ष में चली गई। विद्यापसाद सोने का पान करने लगा।

सहसा बिजली कड़की। विद्यापसाद की पत्नी चौंकर उठी। बिजली तो पास ही गिरी थी, बहुत पास, ठीक इसी घर की छत को छेदती हुई, ठीक उसी जगह गिरी थी, जहाँ विद्यापसाद लेटा हुआ था।

“हाय ! पतिदेव !” विद्यापसाद की पत्नी ने चीख मरी और फिर वह बच्चों को छाती से लगाने लगी, जो इस दुस्सांस् से बुरी तरह मयमौत हो गये थे।

## चौवन



सुर्गे के बाँस देने के बरसा-भर बाद लोप आने आरम्भ हुए। किसी के हाथ में कुदाल थी, किसी के हाथ में डोकरी। देखते-देखते धारा बिसर्गामुल आकर लका हो गया।

हाथ-पर-हाथ घेर बैठे खड़े बरखा नारिबल या दूध का मका ब्रह्मपुत्र पर चढ़ाकर ही उस का कोप शान्त करने का पुण्य समाप्त हो गया था। क्या मीरी, क्या असमिषा, क्या नेपाली हिन्दू-मुठ्ठलमान, पुष्प और स्त्रियों, पुष्प और दूध, सभी इद प्रविष्ट थे—अपने हाथों के परिणाम से हम ऐसा बाँस तैयार करेंगे, जिस के सामने ब्रह्मपुत्र धुत्ने डेक देगा इस सामूहिक कार्य द्वारा तो हम फिरंगी के मन पर भी अपनी छाप लगा देंगे।

और तो और, देवकान्त की माँ भी डोकरी उठाये आ पहुँची। रास्ताब काका ने उसे बहुत रोका, पर उस ने एक न मानी। “हम बिसर्गामुल का मया नकशा बनाने आ रहे हैं।” उस ने डोकरी उठाते हुए कहा।

“हमें बहुत बाद में आकलन आई।” रास्ताब ने कहा, “धलो आई तो सही।”

कुदालें चल रही थीं, डोकरियाँ उठ रही थीं। मिट्टी की लम्बी और मोटी दीवार उठाने का शुभ संकल्प बना रहा था कि जनशक्ति का यत्न फिफर है।

देवकान्त की माँ को पुत्र के आशातलाश का इतना कुल न था

जितना बिजली गिरने से चित्ताप्रसाद के मरने का । मिट्टी दोते-मोते वह सोचने लगी—झोर से बिजली गिरने की आवाज था, तो फिर मे सोना होगा कि किस का परवाना कर गया । बेबारा चित्ताप्रसाद ! लोग कहते हैं कि वह दिसांगमुख का ठग था, मेरा तो बही जाता था । भावान् उस की छाया को शान्ति है ।

किसी ने आवाज देकर कहा, “जल्दी-जल्दी हाथ बलाओ । यह बेमार नहीं, फिर हाथ धीरे-धीरे क्यों जलें ?”

हाथ पहले से तेज जलने लगे । छद्-छद् की आवाजें आ रही थी

“बाद उठार पर है । प्रद्युम्न में ही नहीं, दिर्मास में भी पानी कम हो गया ।”

“धान की लकीरें कतलें तो नष्ट हो गई ।”

“सुनवे हैं, माण्डिपुर काय बागान को बाद से मारी मुकतान पहुँचा है ।”

“सड़क के आठ मील लम्बे भाग में बाद का पानी मर गया था । सुना है, अभी तक पानी नहीं ठहरा ।”

“दुम तो खबर-कागज लोखाने बने गये । टोकरी उठाओ, टोकरी ।”

“असम टुक रोड के कर भागा में पानी मरा रहा हो सप्ताह तक । पर सूँ नहीं है ।”

“धीरे धीरे लहर हो, तो उसे भी धीरे धीरे दो मिट्टी के छान । लहर कतार में वह हमारी लहर नहीं छुपगी ।”

“कौम-ली लहर ।”

“यही कि दिसांगमुख में बहुत बड़ा बाँध बाँधा गया ।”

“पहले तैयार तो जाय । लहर होनी चाहिए सम्झी, फिर उसका ढोल बजता है ।”

“बिजली गिरने से दिसांगमुख के सैठ चित्ताप्रसाद मर गये, वह लहर भी तो दूरी होगी ।”

“तुरा आइमी तो नहीं या विद्याप्रसाद !”

“मार्ह, अब तो बह मर गया । अब उस की तुराई क्यों की जाय ?”

“बेचारे की परबासी की माँग का सिमर पुँछ गया, जैसे मरुपुत्र  
पि की बहा कर ले जाता है ।”

किस्ती का मुँह निस्तेज न था । वे शोग मी, किम्होन आरम्भ में  
पि की योजना की ‘किस्ती के गले में धूसर द्वारा प्यरी बाँधने’ की संज्ञा  
ले की, पूरी तरह आस्थावान थे ।

ऐसे लोग मी थे, जो सुनकर भी इन बातों को अनसुनी रहे थे । वे  
स मिट्टी खोद रहे थे, मिट्टी खाल रहे थे । निर्निमिष दृष्टि से वे आकाश  
के ओर देखने लगते, जैसे कह रहे हों—इसी तरह बिना बरों के एक  
गस और बीस काम, फिर यह बाँध तैयार हो जायगा ।

“अरे बाह रे पछे, कमाल कर दिया ।”

“दिसौगमुल का इतना मोह न होता, तो हम वहाँ से भाग स्ने  
तेते !”

“इस मन्कर गति से काम चला, तो तीन मास में भी बाँध नहीं बन  
पायगा ।”

“रेम-रेम से ज्वानी फूटी पकती है, और हाय चला रहा है मरि  
गल की तरह !”

बाँध बनते कह दिन हो गये थे मुझों के बगि देने के ककड़ा-मर बाध  
नार्म आरम्भ हो जाता था । हवा में बड़ी ताकगी की धूप सलून से कुसे  
पीछे के समान पारदर्शक; आकाश नीलकण्ठ । एक सप्ताह से निरन्तर  
दिसौगमुल का बाताबरख ऐसा ही था ।

अम्मुल कादिर भी आकर मिट्टी ढोने वालों में सम्मिलित हो गया  
था । उसे देखकर एक तरह सेलते बच्चे जमाजीकरी मचाने लगे ।

“अस्ताह मियाँ कहते हैं कि बच्चे तो बहिरत के फूल हैं !” अम्मुल  
कादिर बोला, “दिसौगमुल बासों के सिर पर बिठने वाला है, उठने लाल  
की उल्ल अस्ताह मियाँ दिसौगमुल के इन बच्चों को बल्ले !”

बच्चों में अम्बुल कादिर के मुँह से यह प्यारा-सा बोस सुना, तो उस में से एक ने मारा लगाया, "हाजी साहब—" दूसरे बच्चे बोल उठे, "हिन्दाबाद !"

"आमाज़ पूरी नहीं निकली !" अम्बुल कादिर ने ठट्ठा किया, "निकली कैसे ! उठना भी तो नहीं आते, जितना गुगा चिकिया के बच्चे के मुँह में जाता है । जब हम बच्चे थे, तो दिन-दिन घर बरते रहते थे ।"

बच्चे हँस पड़े और चिल्लाकरियों मारते अम्बुल कादिर के पारों और नाखने लगे ।

"तुम्हें तुम से यही आशा थी, अम्बुल कादिर !" रास्ताल काका ने पाठ आकर कहा, "क्या हुआ, अगर तुम्हारा घर बिक गया, दिसमामुल के साथ तो तुम अब भी कुंसे हुए हो ।"

अम्बुल कादिर ने आकाश की तरफ हाथ उठाकर कहा, "जहाँ का अन्न-जल मेरी कुटी में मिला हुआ है, क्या मैं उसे भुला सकता हूँ ? तुम्हें किराये के मकान में ही क्यों न रहना पड़े, मैं दिसमामुल में ही रहूँगा । मेरा घर लूरीवने वाला भी तो बिजली का शिकार हो गया । हाथ बेचारा बिचापसाह !"

"ढग बिधा में कुशल था बिचापसाह !" रास्ताल ने बिबेचनामक स्वर में कहा, "फिर भी बेकान्त की मौँ को नगते समझ बोका हाथ रोक लेता था ।"

"अरे मिर्ची, कोई आठा है, कोई आठा है !" अम्बुल कादिर ने पुष्पा के अन्दाज में हाथ उठाये, "जीवन की नाव तो चलती ही जाती है । हमारी तो बीस पुस्तें नहीं बीती, यही दिसमामुल में, वहीं ब्रह्मपुत्र के किनारे । अब यह बाँध तैयार हो गया, तो दिसमामुल बच जायगा अनेक पुस्तें तक !" यह कहते-कहते अम्बुल कादिर की मर्छई हुई आवाज़ में वेदना और भी तीव्र हो गई, जैसे उसे लुनाल आ गया हो—मेरी तो कोई सन्तान नहीं, फिर मेरी पुत्र कैसे आगे बढ़ेगी !

रास्ताल बोला, "हमारी और हमारे बच्चों की रक्षा करेगा वह

बाँध। मियाँ बी, आने वाली पीढ़ियाँ हमें सम्मानपूर्वक याद करेंगी। इस बाँध के बनने की कहानी का उत्प्रेषण तो लोरियों में भी होगा। माधव सिंह की 'मेरी' गाते समय जब कोई गॉथ-बूढ़ा ब्रह्मपुत्र और माधुली के बीच चलने वाली समूरपल्ली नाव की कथा सुनाने बैठेगा, तो अन्त में इस बाँध का नाम भी जोड़ दिया करेगा।”

“समूरपल्ली नाव की कथा में देवकान्त का प्रसंग भी तो कुछ जायगा, जिसकी बाढ़ जोहते एक मछुए की बेटी ने जब तक ब्याह नहीं कराया।” अम्बुल कादिर का सिर नारियल की तरह झोल रहा था, “रानी गुहडासो अभी तक फिरंगी की कैद में है। उस ने नागा पहानियों में कान्ति का भण्डा लूँचा किया था। फिरंगी ने उसे पकड़कर कैद कर लिया। कई साल से वह कैद है। उसका भी तो कोई प्रेमी होगा, जैसे हमारी आरती का प्रेमी है देवकान्त।”

राखाल ने झुमकर कहा, “जब तक फिरंगी का पता नहीं काढ दिया जाता, न रानी गुहडासो जेल से छूट सकती है और न देवकान्त ही दिसाँगमुल लौट सकता है। जब रानी गुहडासो और देवकान्त के बाल एक आवेंगे, दाँत मज्ज आवेंगे, अगर उस समय फिरंगी का बिस्तर नहीं से गोल हुआ भी, तो उन बेचारों का क्या बनेगा।”

पास से फिरी ने कहा, “देवकान्त और रानी गुहडासो का जोका कैसा रहेगा।” और वह लिललिलाकर हँस पड़ा।

“कान्तिधारियों की लिहली उड़ाना पाप है।” दूसरे ने बढ़ावा दिया।

राखाल काका अपनी ही कहते थले गये, “मैं भी बाल-बच्चे वाला आदमी नहीं हूँ, अम्बुल कादिर। पर दिसाँगमुल के सभी बच्चे अपने ही बच्चे तो हैं। उन की मायी मुसीबतों का हल है यह बाँध, जो हम बाँध रहे हैं। यह हमारा उपहार होगा आने वाली पीढ़ियों के लिए। धोने का दगन, या बट्टहार, या नीलम की झँगूटी ॥ उपहार होता हो, यह बात नहीं।”

“हाँ, हाँ।” अम्बुल कादिर की कल्पना शक्ति सज्ज हो उठी,  
 “अगर हम ने यह बाँध तैयार करने में खील की होती, तो ब्रह्मपुत्र को  
 निर्माणपुत्र को निगल जाता, जैसे वह मेरी ज़मीन को इकट्ठा गया था।”  
 उस की आँखों में आँसू आ गये, और उस ने बन्धे की तरफ बिलम्बते हुए  
 कहा, “मैं ने करना घर बेचकर गुनाह किया। आम्लाह मिर्ची मुझे कभी  
 माफ नहीं करेंगे।”

रासाल ने उस विलासा देते हुए कहा, “हजार के मोट तो तुम ने  
 सैमासकर रख छोड़े होंगे न। हम उसी मोल पर तुम्हारा घर बापल  
 दिला देंगे।”

अम्बुल कादिर फिर विस्तारने लगा, “मेरा घर अब मुझे नहीं  
 मिलेगा।”

जहाँ दरारें पड़ गई थीं, वहाँ से आधा पत्ताझ गाँव की तरफ हटकर  
 बाँध बाँध का रहा था। अम्बुल तेज़ी से काम हाँ रहा था, जैसे मिट्टी  
 झलमि लगाकर बाँध की दीवार पर जा रही हो। छत्त झलमि में सत्त  
 टोफरी मिट्टी बाँध पर पहुँच जाती, जैसे बाँध वाली मिट्टी नीचे वाली  
 मिट्टी से ऊपर जा रही हो—तुम भी ऊपर आ जाओ लौ गड़ नीचे पड़ी रहने  
 से तो कहीं अच्छा है कि लौ गड़ ऊपर वाली आओ।

एक तरफ बन्धे बाँध कर रहे थे :

“कल हाट बाजार है, बाँध का काम बन्द रहेगा।”

“अब हम सेमनजुम सरीदेंगे। पुरन बाला पुरन बेबेमा, आवाज  
 लया-लयाकर—मात हजम, मिट्टी हजम, बत्तल हजम, पत्तर हजम।”

“सेमनजुम की लाटरी। सेमनजुम की लाटरी। सटमिडे सेमन  
 जूम। नुँह में पाजी, आँसू में सुरमैनाजी।”

“और हम सेमनजुम सरीदेंगे—शिबठागर के बने हुए नहीं, गोहाटी  
 के बने हुए।”

एक तरफ जूनठारा और भारली मिट्टी हो रही थीं। भारली ने  
 अबसर पाकर कहा, “जूनठारा, आज वह भी नहीं होता, तो फिटना



आपका सगला ।”

“किसी कान्तिकारी को दिल वैसा से तो नहीं आच्छा है, बैठकर प्याज के छिलके गिनती रहो ।” बलतारा हँस पड़ी ।

आरती के चेहरे पर एक शान्त, स्निग्ध आभा थी, उस की आँखों में एक मधुर की लकड़ी की-सी भूँतता तो माम को भी न थी । चेहरे का रंग, जैसे लगा हुआ ठोंबा । उस की आँखें बता रही थी कि देवकान्त के लिए वह अन्तिम सब तक मर्तिवा करती रहेगी ।

“क्या तुम्हें विश्वास है कि देवकान्त की प्रेमिका रानी गुहडासो नहीं, आरती है ?” बलतारा ने मस्तक के स्वर में कहा, “तुम्हें मनुषियों की पहचान तो है, आवमी की पहचान बिलकुल नहीं ।”

आरती ने बड़ी रितम्बता से कहा, “अभी तो मामुसी में उसका काम खत्म होगा, अभी तो वह दिशंगमुख आयेगा । वह एक बार आवे तो सही, मैं उसे बग में कर लूँगी ।” और फिर उसमें ठबड़ी आह मरकर कहा, “शायद मगवान् ने यही शिक्ष दिया हो आरती के माये पर कि वह अपने निर्मोही की बाट जोहते-जोहते मर जायेगी ।”

“वह बात तुम आज सोच रही हो ?” बलतारा ने व्यस्य कहा, “अभी तो सौ-सौ डोकरी मिट्टी होने का काम सामने है, फिर नहीं छुट्टी मिलेगी ।”

वे फिर मिट्टी होने लगी ।

## पंचपन



बॉय को तैयार होते पाह मास लग गये । दूसरे तीसरे दिन सिसी भी वहीं जा निकलती थी वह भी डोकरी उठाने की हथ्था प्रकट करती । अतुल हमेशा यही कहता, “रोग के बिकर हस्पताल भी तो एक बॉय है, जो पहले ही तैयार कर रखा है आपने !” सिसी पुनश्च दो उठती और हस्पताल

में आकर रोमियों की देखभाल और दवा-दवाक में अपना समय बिताने लगती ।

इसपर वह कुछ दिनों से उदास रहने लगी थी । मीरद का कोई पत्र नहीं आया था । उसके पिता को उसका भाग पसन्द न था । वे तो यही चाहते थे कि वह सरकारी नौकरी करे और अपने बंधन की लपेट बड़ाये, पर सिसी के मन पर तो ईसा के संवाक्य की छान थी ।

एक दिन सहा सिसी को एक लिफाफा मिला । लीसकर देखा, तो मीरद का पत्र था

प्रिय सिसी,

इतने दिनों से तुम्हें कोई पत्र नहीं लिखा, पर श्वेत कमलिनी के समान तुम्हारा अपूर्ण रूप मेरे मामलरोवर में बराबर भिजता हुआ है ।

इसपर मैंने एक कविता लिखी है । तुम भी उस से देखो । यह मेरी पहली कविता है । अभ्यास न रहने के कारण कहीं-कहीं शुद्ध-भंग हुआ होगा निश्चय ही बीच-बीच में लय भी टूटी होगी; पर यदि तुम न इसे

घोषचारिक कलौटी पर परलने की बजाय इस का रस लेने की चेष्टा की,  
तो मुझे सन्तोष होगा :

वर्तमान का अन्त हो चला,  
अन्धता ली अब विदा,  
उठाओ डण्डा जोली,  
रथान करो काली ।

बह देखो भविष्य-गाहुना  
मंगल-सुख सँभारे,  
आ गया हमारे द्वारे ।  
बोल अरी ओ मोली,  
अब तो आ गई जोली;  
चार पहार,  
सबे तैयार ।

विद्यापति की कविता से अपना मन लाठा है मेरा—

‘जनम अरुणि हम रूप नेहारिनु,  
नचन न तिरपित मेस ।’  
चरणीदास की कविता से लो सील,  
अरी ओ स्वप्नमयी, यह मिथ्या आनाकानी :  
‘एमन पीरिति कमू देखी नाइ सुनि,  
पराने परान बोध आपना आपनि ।’

इस वातायन से मैं देख रहा हूँ—  
कोई एकाकिनि, चिर-सुमाधिधि, सेवाग्रत-वारिधि,  
बमामीटर लिये हाथ में सोच रही है—

एवर बहुत अधिक है,  
देना होगा कोनिन-मिक्कधर ।  
रंग आ गया मैं भी लिखते-लिखते अपना यह ‘ब्रह्मपुत्र’  
जाने कब होया पूरा ।

मैं भी गदर में हूँ, जो सेवान्वय-चारिणी ।  
 सोचा था, मैं कभी नहीं लूँगा कड़वी बोनीन ।  
 बलप्रसे में कहे तुम्हारे शब्द आज भी गूँज रहे मेरे कानों में—  
 'लौह-बली बोनिन-गोली तो दरपोंकों के लिए बनी है ।  
 छारे मूक, खोखो वाँ जब तक लौह नुसैगी,  
 उस में पहले कड़वी बोनिन-गोली अपना घर करेगी !'  
 आज तो मैं भी पी छकता हूँ कड़वा बोनिन-मिस्रसर ।  
 लिखे हाथ में मंगल-सूत्र, मैं दे छकता हूँ  
 सच्चा लैकचर ।  
 अन्य तुम्हारा अस्पताल, है सेवान्वय चारिणि ।  
 अन्य यह मेरा चिर अपूर्ण अन्य 'ब्रह्मपुत्र', है मन्दाकिनि ।  
 लिखी, तुम श्वेत कमलिनी,  
 छोर मैं नीरव कन्दारा मेघ ।  
 आज क्यों स्वीकार मेरी पात्नी,  
 संबोधो बीबा-बाटी ।  
 सच जानो तो मैं कहता हूँ,—  
 जैसा कि लिखता है एक शायर—  
 'हाल परत के बाद शायर  
 हासिल हो उसके जर्बों को कुम्बट,  
 बिछसे वह कर लके बपान  
 बदबाव का छत्रमान  
 असहाय की है क्या मजाल कि कुछ करें बलान,  
 अजानी की पादों का दर्द  
 कि बिलका होता आका इम्तिहान ।  
 इस की तो है एक मित्ताल—  
 ठेंगे एक पहाक पर  
 मात में एक बार

आती है मन्दी-मुष्ठी चिकिया  
 और बसी जाती है करके तेज अपनी धोंज  
 चिकिया की इस कोशिश से,  
 सोचो तो कितनी मुद्दत बाद  
 वह पहाड़ बिस-बिसकर हो जायेगा शायद !  
 उठनी ही मुद्दत बरकार  
 कि शायद अपने लपटों में कर सके बराम  
 अपने दिल के ब्रह्मपुत्र का झौटनाक स्फाग !  
 कि बस एक आहें सब के सिवा,  
 कि बस एक आरुके गर्म के सिवा,  
 इस सिलसिले में और कुछ करना नहीं आसान !'

पुनश्च

मेरी इस दुष्कनन्दी पर हँसना मत ।

तुम्हारा

नीरद ।

इस चिट्ठी को पढ़ करके अमी कुछ सोच ही रही थी कि फिरी ने  
 आकर कहा, "राजाल काका देवकाम्य की माँ को लाये हैं । उसे तेज  
 बुकार है ।"

सिली मूढ़ उठकर लकी हो गई ।

## छापन



वहाँ कमी छौंसेजों ने लक्षप्रथम दिवसिमुल के नाव  
घाट पर उतरने के पश्चात् बाँधों का जैस बनाया  
था, और वहाँ से उठकर जेल के शिवसागर बसे  
जाने पर जेल-गाँव की बस्ती बस गए थी, वहाँ  
शिवसागर-दिवसिमुल सड़क के किनारे लिखी ने  
बाँधों का अस्पताल खोस रखा था। असमिया

बाँधों ने इस प्रदेश में मिलन वाली बाँधों से ही अस्पताल के बाह्र स्तरे  
किसे थे बाँधों से ही लिखी ने अपने रहने के लिए स्टाट बनवाया था।

अब तो और इस अस्पताल को सरकारी सहायता भी मिलने लगी  
थी, पर लिखी का जवाब था कि अस्पताल जैसी संस्था को अन्य धातु  
निर्मा संस्थाओं के समान चलाना ठीक नहीं। जिस दिशा से भी रुद्ध  
यथा जाने, ठीक है; सरकार से, तो ठीक है। मिश्रण वाली अपने प्रत्यक्ष से  
रुद्धा है, तो ठीक, या शिवसागर, बिहार्गढ़ और गोहाटी के घनी-भासी  
व्यक्तियों से बना लिखा जाय, या दिवसिमुल और आठपास के गाँवों  
के लाते-झिंठे लोग अपनी श्रद्धा से हाथ बढ़ायें; जैसे भी हो काम चलना  
आदि। यह सोचते-सोचते वह देवकान्त की माँ के पास पहुँची, जिसे  
सर्वे का जलपान दिया जा रहा था।

“कैसे तबीयत रही रात-भर। नींद आए।”

“नींद दो-तीन बार दूटी, हाथ-पैर सुख होने लगते हैं।”

लिखी जानती थी कि देवकान्त की माँ खून की कमी से पीड़ित है, उस

के अनुसार इलाज शुरू कर दिया था। "तुम बिलकुल ठीक हो जाओगी।" लिखी मुल्कियाई और वृद्ध बीमारों को देखने के लिए आगे बढ़ गई।

गांधी जी के किसी व्याख्यान की रिपोर्ट में लिखी ने पढ़ा था कि ये इस देश के प्रत्येक गाँव को आत्म-निर्भर बनाना चाहते हैं। 'हमारा हर गाँव एक उद्योगशाला बनना चाहिए।' ये शब्द तो ठीक ही हैं। इन के पीछे सच्चाई भ्रमरझी है। हमारा अस्पताल भी तो किसी उद्योगशाला से कम नहीं।

सबरे के 'राउन्ड' के पश्चात् लिखी अपने क्वार्टर के बरामदे में दूरसे बाह्यर बैठ गई और जेब से निकालकर नीरब का पत्र पढ़ने लगी। इस पत्र को वह सातवीं बार पढ़ रही थी।

कुछ समय में नहीं जाता कि नीरब कहना क्या चाहता है। उस ने सोचा—'उठाओ डबडा डोली।' वर्तमान को सम्बोधित करते हुए कवि ने दूर को कीकी हुई जाने की कोशिश की है। 'वह मन-ही मन हँस पड़ी—'पोइटी' का जूझ जालीस सात की उम्र के बाद अजीब लगता है। ये तो फिजूल ही लाइनें हैं, उलझी-उलझी बे-सिर-पैर फिर भी अन्त में सिहरन-ही हुई।'।

मोटर जाकर उस ने दर्पण में चेहरा देखा—छोटे-छोटे बिस्सोरी चोंच बालों की धूँधर वाली लठें हाँठों पर लिपस्टिक का हल्का-सा रंग। सट्टेद स्कर्ट को ध्याम से देखा कमर पर बँधी लाल पेटी को थोड़ा कस लिया। जी में धाया, ब्रह्मपुत्र की ओर घूमने जाता था।

वह हर रोज ब्रह्मपुत्र पर घूमने जाता करती थी। किसी-किसी दिन रात को वह रसीमर-बाद पर अपने डेढ़ी और मम्मी के साथ भी रात गुजारने जाती जाती, पर जब से डेढ़ी ने साफ़-साफ़ कह दिया, 'नीरब से तुम कोई रीकोशन न रखो', उस का मन कुछ फट गया था। उस ने अपने मन को समझाया—अच्छी नहीं, मैं हर रोज की तरह शाम को ही तैर को निकलूँगी।

सम्पन्न समय लिखी निर्निमेष दृष्टि से ब्रह्मपुत्र को देखती रही, जिस

पर डूबते सूरज की चिरियों नाटकीय ढंग से भिलमिली-सी झंझि कर रही थीं। वह सोचने लगी—मीरद इसी ब्रह्मपुत्र पर विविध-सी पोथी लिख रहा है। मानुमती के निशारे की तरह वह इधर उधर से गुड़ाइ हुई बातें किसी-न-किसी तरह सजा-नैयामकर भर देना चाहता है। शायद उस इस बात की परवाह नहीं कि पुस्तक का पूरा धार एकाकी 'इपैक्ट' क्या होगा। वह परद्राहया के लिये मांग रहा है। शायद उस के सामने कोई 'लान' नहीं। इसीलिए उसकी गांधी बीच-बीच में रुक जाती है। अधिक पन्न ही पुस्तक का बढ़ा नहीं बनाते। उसनी बात लिखी जाय, त्रितनी पूरी तरह महसूस की जाय। फिर तो शेरफ नोबल प्राइज भी पा सकता है।

‘वहीं ब्रह्मपुत्र के किनारे लड़-लड़ मैंने ये बातें मीरद से कही थीं। मैंने उस की तरफ मुस्त्राज्ज देखा था। उस ने हँसकर कहा था—‘लिली, तुम क्यों मेनका नहीं हो कि मेरी तरफा मंग कर सको।’ मुझे बहुत गुस्सा आया। जो हुआ कि साष्ट-साष्ट कह दूँ—मेनका के बच्चे, यहाँ से हट जाओ। पर हँसकर बात टाल दी। पिछे हुए वर्षों के समान पसन्द था मीरद का चेहरा। लिखना कोई हूमन्तर नहीं लिखना तो सच्चा चाहता है, अनुमन चाहता है, लगन चाहता है, लाली माया के दम पर नहीं हो सकता। इस के लिए लेखक का दृष्टिकोण चाहिए, विवेक चाहिए, पुराने धार नये साहित्य का अध्ययन चाहिए।’

उसकी कल्पना में डेढ़ी का चेहरा उभरा। डेढ़ी ठीक सोचते हैं कि मैं ऐसे आदमी से ‘मेरेक’ कहूँ जो इज्जत वाला हो और जो उन की लड़की की लाइफ सबाह न करे।’

कई मायें आ-जा रही थीं। नाथ-चाठ से नाबरियों और मनुष्या की आवाजें सुनकर लिली को लगा कि इन में उसके लिए कोई आवाज नहीं। मुझे मीरद पसन्द है, तो डेढ़ी को बीच में बोलने का क्या ‘राहद’ है? मम्मी पर मल्ले ही डेढ़ी हुक्म चलाया करें, मल्ले ही राह चलते लोगों पर रोब गाँड़ें, रबीन्द्र-बाट पर काम करने वालों को मल्ले ही डिस्प्लान की पमची दिया करें, मैं तो डरने वाली नहीं हूँ। मुझे मैं आकर डेढ़ी पर



को सिर पर उठा लेते हैं। पर मैं तो पर की तरह रहना चाहिये, पर को मद्धुरी बाजार तो नहीं बमागा चाहिये। और वह सोचने लगी—वह विशाल बसबारा अपने भीतर कोई मरकर तूफान छिपाये बह रही है। ‘आब डेही मेरे और नीरव के मामले में बोलते हैं, कल अस्पताल के मामले में टॉग आयाँगे।’

नाब-बाद से सौटते हुए सिली को रास्ते में गलतारा मिली जो कलसा उठाये पानी-बाद से पानी सामने आ रही थी। “देखकान्त की माँ का बुलार कुछ उतरा, बॉक्यनी थी?” गलतारा ने पूछ लिया।

“वह जंगी हो आयगी।” सिली मुस्कराई।

“एक बात कहूँ,” गलतारा ने समीप होकर कहा, “जब मैं विवाह हुआ, तो मैं ने अपनी माँ के सिन्दूर से थोका-सा तुम्हारे सिर पर लगा दिया था—”

“तुम्हें बाध है।” सिली हँस पड़ी।

“उस सिन्दूर ने अरु कबो नहीं दिलाया।” गलतारा मुस्कराई और फिर सँमलकर बोली, “नीरव बाबू कब आयेंगे? उन्हें बुला लो न।”

“बुला लेंगे।” सिली ने बिना भँसि उत्तर दिया।

सिली अस्पताल लौटी, तो नीरव के पत्र का ब्याव सिलने बैठ गई, पर कुछ सिला ही नहीं आ रहा था। उसे बाध आया कि नीरव उसे कलकत्ता से शक्ति-मिशनर बुलाकर लाया था, जहाँ से उस ने एक चित्र खरीदा था, जो अब तक उस के पास था।

दिनर पर बैठे-बैठे उसे लगा कि नीरव अब कसूरी आयेगा और आकर अपनी दुलना रेशम के कीड़े से करेगा—“जैसे रेशम का कीड़ा रेशम काटता है, मैं यह पोथी सिल रहा हूँ। इस एक शर्ट पर ‘साइफ पार्देनर’ बन सकते हैं कि तुम अस्पताल चलाओ और मैं सेलनी चलाऊँ।” वह मन-ही-मन हँसी—वह कैसी शर्ट है।

‘स्कर्ट’ उठारकर उस ने ‘नाइट गाउन’ पहना और नीकर को आवाक दी, “दिनर में क्या हैर है।”

## सत्तावन



भारती ने कमरारी बाँचें नीले अम्बर की ओर उठारें। लड़े-लड़े उस में झँगड़ाई ली। एकदम निवृत्तिनी, जो कभी मछली-सी चंचल थी। आज तो वह गम्भीर प्रतीत हो रही थी—मयादा में बैठी, परम्परा से जुड़ी। अब वह पच्चीसवें वर्ष में पचापण कर रही थी।

वो दिन से वह बराबर कमलिया चापरी पर आ रही थी देवकान्त की बात बोलकर वापस विसर्गमुक्त वाली जाती। आज तीसरा दिन था आज फिर वह बापू से कहाना करके आई थी।

आ रे आ, अब आ जा रे।—वह मन-ही-मन कह रही थी। कल सँ का मुँह आधी खूँ की समान अर्ध गोलाकार बनाता दूर निकल पा। भारती का उठनछू मन भी कलाईसँ के साथ ही उठ जाता, पर—से तो देवकान्त की प्रतीक्षा थी।

उस ने लक-लकें फिर झँगड़ाई ली—सोग क्या सोचते होंगे? किसी और मनुष्य की कैदी तो इतने दिन बिन-भ्याही नहीं बैठी रही। प्रथम कास्तुन या उस दिन, जब मैं ने मन-ही-मन देवकान्त को बर लिखा था। मरारी है मरारी—वह हमारा देवकान्त। अपने मोहों से कान्ति का गोला निकालकर हवा में क्या उछासा, नेह लगाने की छुप ही बितर गई। ऐसा भी करते हैं।

जैसे वह सदियों से देवकान्त से स्नेह करने लगी थी। वह शिकारी मछलपुत्र।

गाँव की दिशा में देखने लगी, तबसे देवकान्त के जाने की आशा थी।

उसका सिर चकर काटने लगा—क्या देवकान्त आज भी नहीं आयेगा ? पास से सरगोशों की खोड़ी सिर से खँची पास की ओर जाती पगडबड़ी की तरफ सिर पर पैर रखकर मांगी। मुझ से तो ये सरगोश भी अच्छे हैं !

उसमें मन-ही-मन कहा—देवकान्त का शायद यह विचार हो कि ब्रह्मपुत्र की मदहसी, ब्रह्मपुत्र में ही भली। मुझ से बात करने के लिए उस अवकाश नहीं। होता, तो वह कभी अवश्य मिलता। वह शिकारी गाँव की दिशा में निर्निमेष दृष्टि से देख रही थी।

स्नेह तो सनतन है—वह सोचने लगी—प्रतिदिन नूतन वन आता है स्नेह। और फिर जैसे भीतर से आवाज़ आह—ओ री ओ, मिठभिल्ली, मैं आऊँगा, अवश्य आऊँगा। उसका हृदय पुलकित हो उठा। 'आज मैं उस से कहूँगी—बाहुत हो ली कान्ति। अब घर में रहो। तुम्हारी कान्ति से तो कुछ आता-जाता नहीं। पुलिस का दपबदा लो हंस घर में कम नहीं हुआ। नाब-बाट पर गोपीनाथ दारोता का मामूली सिपाही भी पहुँच आता है, तो हर नागरिका और मनुष्या मन से क्षमने लगता है। तुम विसर्गमुल आकर वहीं रहने लगे, तो अब गोपीनाथ दारोता तुम्हें हाथ नहीं लगायेगा। तुम्हें लो वीर्यहीन भी मिल सकती है। स्थिर-बाट पर कम्पनी को एक आरामी चाहिए। स्कूल में भी एक मास्टर की जगह लाजी है। पुलिस से लड़कर तो पाटा-ही-पाटा है। गाँव बूढ़ा जीसमधि ने अपनी पदवी खोख ली, तो क्या सरकार को दूसरा गाँव बूढ़ा नहीं मिलता ! अब साधन भीरी गाँव-बूढ़ा बसा बैठा है। धर्म ही उस दिन बुझूँ निकाला। उस से क्या होता है ? शिली ने हस्पताल भोलकर विसर्गमुल को शाम पहुँचाया। अतुल में भी कुछ तो किया; उसी में लो ब्रह्मपुत्र का बाँध बाँधने के लिए लोगों को ललकारा था। उस दिन नाब-बाट पर लका अम्बुल काबिर बापू से मछली खरीदते समय कह रहा था—'आज्ञाही अज्ञाहीन के विराता से नहीं आ सकती, एक

दिन में।' देवकान्त क्या इतना भी नहीं समझता ? राखाल काका बापू से अपनी ही कहते रहते हैं—'एक देश के लोग दूसरे देश के लोगों पर कभी तक हुकूमत कर सकते हैं, जब तक गुलाम देश गुलामी के लिए राजी हो।' वह फिर शिकारी गाँव की दिशा में देखने लगी—अब तो देवकान्त को आ जाना चाहिए।

हाँ ह ऊपर उठाकर उस ने शिकारी गाँव की दिशा में देखा। कोई नाब नहीं आ रही, एक भी नहीं। मैं देवकान्त से कहूँगी—घटुल की बात मानकर दिसाँगमुख में रहो। तुम्हारे परित्रवान होने में तो मुझे सन्देह नहीं। तुम अच्छे हो, तुम्हारा स्वभाव अच्छा है, तुम्हारा रूप अच्छा है। बस एक बात मान जाओ। दिसाँगमुख में रहो, वहीं से काम बलाओ। लावन मीठी को भी अपने हाथ में कर लो। ऐसी स्थिति लाओ कि फिरंगी को पीया लेकर डूबने से भी गाँव-बूढ़ा न मिले। मैं कहूँगी—पर का मुस बही पीत है। तुम अब दिसाँगमुख में ही रुककर रहने का संकल्प करो। मेरे प्रति तुम्हारा कर्तव्य कभी शुरू होगा, जब हमारा विवाह होगा। पर मैं के प्रति क्या तुम्हारा कोई कर्तव्य नहीं ? मैं की सेवा क्या देश-सेवा से अलग है ? मैं को कुछ हो गया, तो तुम हमेशा के लिए कर्तव्य हो जाओगे।

वह एक बार चाहती थी, अपना घर, पिता का घर नहीं, पति का घर, वहाँ वह स्वतन्त्रता से रह सके, अपने मन की कर सके। फिरंगी के हाथों दिसाँगमुख की स्वाधीनता से कहीं पहले, वह अपने पिता के हाथों स्वाधीन होना चाहती थी। वहाँ बापू मेरी राह देख रहे होंगे।—उसे प्यार आया—परवाह नहीं। मैं बापू के माम लिली दूर तो नहीं हूँ। मैं ने अपना जीवन किसी के हाथ गिरवी नहीं रखा। अपने जीवन का भाका मैं खुद चुकाऊँगी।

दूर से कसईलों की तिरछी पाँत गगन-पथ से आर और शिकारी-गाँव की ओर निकल गई। आरती सोचने लगी—घटुल ने झूठ तो नहीं बताया होगा कि एक दिन इसी कमलिया सापरी पर उसकी देवकान्त

से मेंट हुई थी। वह तो कह रहा था—देवकान्त स्वयं तुम से मिसने को उल्लुफ है कमलिया सापरी पर। वह आये तो सही, मुझ से कहे तो सही—ब्रह्मपुत्र की मछली ब्रह्मपुत्र में ही मछी। मैं कर्तूंगी—प्यार करो, प्यार को ही लक्ष्य बनाओ। प्यार की पालकी में बैठो। प्यार का इतिहास लिखो। मैं तो मछुए की लकड़ी हूँ। मैं तो मछली पकड़कर गुजर करना जानती हूँ। मैं तुम्हें भी यह काम सिखा दूँगी, अगर तुम मानोगे। नहीं तो, जो भी करो, बस दिखाँगपुत्र में आकर रहो मेरे साथ। मैं तुम्हें अपनी आँखा पर बिठाऊँगी, पलकों की चिक डालकर क्षिपा दूँगी, ताकि तुम्हें नज़र न लग जाय।

सौम्य उठर रही थी। शिकारी गाँव की ओर से कोई नाव आती दिखाई न दी। “अच्छी बात है,” उसने मम-ही-मन कहा, “न आने देवकान्त। अब तो नाव कोलनी चाहिए।” और वह नाव में बैठकर चप्पू चसाने लगी।

ब्रह्मपुत्र शान्त गम्भीर गति से बह रहा था। आँके में ब्रह्मपुत्र का पही रूप रहता था। आरती ने खोजा, ब्रह्मपुत्र ने रखी मँगने वाली बिल्ली के समान अपनी आवाज़ बघल ली। अन्धकार घना हो गया था। आरती जल्दी-जल्दी चप्पू चसा रही थी। वह जानती थी कि पीछे से एक नाव आ रही है। वह इस नाव से आगे रहने की चेष्टा करने लगी।

पीछे से आवाज़ आई, “आरती।”

उस ने चौंकर पीछे देखा। बौसने वाले का चेहरा नज़र न आया।

पीछे की नाव समीप आ गई। फिर आवाज़ आई, “आरती।”

आरती की नाव रुक गई। “देवकान्त, तुम ? अच्छा तो तुम आ गये।”

## अट्टावन



दोनों नारें साथ-साथ जा रही थीं। एक में आरती चप्पू जला रही थी, दूसरी में देवकान्त। “मैं वस आधा बरस देर से पहुँचा।” देवकान्त बोला, “तुम तक पहुँचने के लिए मुझे बहुत पैसा चप्पू खाना पड़ा। मेरे लो हाथ रह गये।”

“एक बरस देर से पहुँचे होते, तो तुम मुझे न मिल सकते।” आरती ने उत्तरना दिया, “तो तुम लौट क्यों न गये।”

“कैसे लौट जाता।”

“कैसे लौट जाता है, और कैसे।”

“तुम्हारे दिल में गुस्सा है। इस गुस्से से तुम अपनी रखाँ करो, जैसे आनकल मासुली फिरगी से अपनी रखाँ कर रही है।”

“तुम्हें उपदेश नहीं चाहिए।”

“मोटा विचार करो, मैं मजबूर था।”

“अब यह सचार्ह नहीं चाहिए। जिस की कपनी और करनी में फटी और पाताल का अम्तर हो, उसे उपदेशक तो निम्नकुल नहीं बनना चाहिए।”

“तो मैं क्या करता।”

“समय पर आते।”

“तुम ने थोड़ा और देख लिया होता, और गुस्से की बजाय संयम से काम लिया होता।”

“फिर उपदेश शुरू कर दिया।”

“एक बात तो साफ है। प्रेम ही मेरे लिए जीवन का सर्वस्व नहीं है। मैं माफूसी में काम कर रहा हूँ।”

“विधवा मुझ को मूल गये। जानते हो, तुम्हारी मौ अस्पताल में है।”

“जानता हूँ।”

“तुम तो मौ को भी मूल गये, फिर मैं क्या शिकायत करूँ।”

“पुलिस मेरा पीछा कर रही है, मैं भयभीत हूँ।”

“यह सफ़ाई तो बहुत हो ली।”

बातें हो रही थीं। दोनों मातेँ साथ-साथ आ रही थीं। रात साफ़ थी। ब्रह्मपुत्र शान्त और गम्भीर था, चाहे के गगन पर तारे ठिठुर रहे थे। किनारे की तरफ़ कहीं किसी मछली के समीप आग जल रही थी। जैसे कोई अग्निकांड हुआ हो। दूध टपक रहा हो।

“यह रात कितनी काली है।”

“उठनी काली तो नहीं, किन्तु काली तुम्हारे सामने है।”

“यह आपछुसी मित्रसिंह।”

“अच्छा तो छोड़ो, क्यों न हम मिलकर ब्रह्मपुत्र का गुरुगान करें। कितना पवित्र है ब्रह्मपुत्र।”

आखिरी कुछ न बोली और बच्चा बहाती रही। कुछ घंटा की कामोशी के बाद देवकान्त ने कहा, “तुम्हारा गुस्सा अभी तक ठंडा नहीं हुआ। मेरी रिश्ते को समझो। पुलिस मेरे पीछे पड़ी है। मेरे हाथ में जो काम है, उस में मैं अपनी आत्मा को उतारे बिना नहीं रह सकता।”

“तुम मिट्टरी के समान एक रोंग आकाश की ओर उठाकर सोते हो कि कहीं आकाश गिर न पड़े।” यह कहकर आरती बिलबिलाने लगी पड़ी, जैसे उठका गुस्सा ठंडा हो गया हो।

भारती को हँसते देखकर देवकान्त भी हँस पड़ा दोनों माँओं के चप्पू हँस पड़े, ब्रह्मपुत्र भी हँस पड़ा ।

देवकान्त ने सँभलकर कहा, “मैं आब मों से ऊँकर मिलूँगा ।” और वह गुनगुमाने लगा—स रे ग म प ध नी ।

भारती बोली, “पुलिस के हाथ पक गये तो ?” और जैसे वह अपने मय को सरगम में बाँधने लगी, “स नी ब प, स नी ब प ।”

“म ग रे स ।” देवकान्त बोला । जैसे कह रहा हो—परवाह नहीं ।

जब दोनों नावें दिसाँगमुल के नाव-घाट पर पहुँचीं, तो भारती के हाथ मना करने पर भी देवकान्त पीछे लौटने के लिए तैयार न हुआ ।

नावें घाट से बाँधकर वे नाव पर बनी मछोपड़ी की ओर चले पड़े ।

भारती ने दस्तक देकर कहा, “बापू, बापू, फ़ियाड लोलो ! देखो कीन आवे हैं ।”

हार लोलकर धर्मानन्दी बाहर आया तो वह देवकान्त को इस रूप में देखकर विलकुल न पहचान सका ।

भारती ने बापू के कान में कुछ कहा और वह अन्दर चली गई ।

धर्मानन्दी ने देवकान्त के सिर पर हाथ पेटा, उसे गले से लगाया, “कन्व मारा हमारे, ओ पाहुन घर पचारे ।” धर्मानन्दी पूछा नहीं समा रहा था, “मीटर बसो, केदा ! तुम बहुत थक गये होगे । कब चले थे ?”

मीटर बाहर फ़ियाड बन्द करते हुए पहले भारती ने आग जलाइ, फिर बापू को सम्बोधित करते हुए बोली, “तुम लाग्ना गर्म करो; मैं बाहर जलुस को हुला लाऊँ ।”

धर्मानन्दी झूठा रह गया, “तुम बैठो, मैं जाता हूँ ।” पर भारती शीघ्रता से बाहर निकल गई ।



## उनसठ



एक का चेहरा सपावट, वृत्ते के चेहरे पर पाँच अंगुल दाढ़ी। वे बिलकुल सठकर खड़े बा रहे थे, जैसे दोमों एक बोरे में गुंथे हों।

अस्पताल के फाटक पर पहुँचकर दरबान को बगाना पड़ा।

“वह बुढ़िया है न—वह देवकान्त की माँ।”

अटुल ने कहा, “वे उठ से मिलेंगे। बिजुगद से आये हैं। उठ के सम्बन्धी हैं। कल सबेरे ही इन्हें यहाँ से चले जाना है।”

“कह डिक्करी।” दरबान के मुँह से निकल गया।

“बुढ़िया से मिले बिना तो चले ही नहीं सकता इन का काम। कहो तो डाक्टरजी से पूछ आइएँ।”

“डाक्टरजी का नाम सुनकर दरबान मान गया। भीतर आकर वह उन्हीं पैरों बापस आ गया। बोला, “वह बुढ़िया तो खो रही है, कह डिक्करी।”

“वे तो बुढ़िया के चरवा चुकर ही चले आयेगे।”

“हरी हप्का।” कहते हुए दरबान ठम्हें बुढ़िया की खाट के पास ले गया और बोला, “आप बैठकर थोड़ा आराम कर लें। बुढ़िया की आँख खुल जाय, तो मिल लेगा। मैं चलता हूँ।”

बाँठ की लग्गनों से सँवार किये अस्पताल के इस कमरे में बीया बल रहा था। अटुल ने धीरे से माँ को आवाज़ दी, “माँ। माँ। ऐस्तो

झीन आये हैं ?”

मौं दहकड़ाकर जाग गई, “झीन !”

“मैं अतुल हूँ, मौं !”

“झीर यह वृत्तरा ?” मौं भीबकसी-सी देखती रह गई ।

देवकान्त ने मौं के घरख झूकर कहा, “मुझे नहीं पहचाना ?”

“झीन ! तुम । अथ्छा, अथ्छा । मैं समझ गई । तुम क्यों आये ?”

“ओ क्रिया तो बला आया ।” देवकान्त ने मौं के घरखों पर स्तिर रखकर कहा, “अब बेसी तबीयत है ?”

“पहले से अच्छी है ।” मौं ने लॉसकर कहा, “तुम क्यों आये ? तुम पहले जाओ । जाना ही गैक है ।”

“इसे मत । मैं बला जाऊँगा ।”

“विद्याप्रसाद बेकारा बिजली गिरने से मर गया, तुना ही होगा तुम ने ।” मौं लॉस-लॉसकर बेहाल हो गई ।

देवकान्त मौं के घरख दबा रहा था अतुल ने मौं का स्तिर धाम लिया । करी सँभलकर मौं बोली, “तुम्हारा काम ठीक चल रहा है ?”

“जैसे करवे पर येम तुमते हैं, बीसे ही हम नया जीवन तुमने बा रहे हैं, मौं !” देवकान्त कहता बला गया, “जैसे करवे पर काफ़ा तुमते-तुमते नये-नये नमूने काइते हैं, बीसे ही हम नये नमूने काइँगे, मौं ! ब्रह्मपुत्र की पाद के सामने हम बाँध बन जावेंगे । ब्रह्मपुत्र एक है, हम अनेक हैं । ब्रह्मपुत्र से हमारा मुकादसा है । हम बडे रहेंगे । ब्रह्मपुत्र पर इट बाकगा उसे इटकर ही कहना पड़ेगा ।”

“ब्रह्मपुत्र देखता ।” मौं ने ठरही लॉस भरकर कहा, “अतुल का नाम तो दिर्छगिमुल मैं अमर हो गया । अतुल न होता, तो दिर्छगिमुल मैं ब्रह्मपुत्र का बाँध भी न होता ।”

“अतुल दिर्छगिमुल का बीर है ।”

“मैं तो हठमी प्रचंडा का पात्र नहीं ।” अतुल भी चुप न रह सका, “अब हम नया आम्बोलम बलाना चाहते हैं ।”

“कौन-सा आन्दोलन ?” देवकान्त ने झट पूछ लिया ।

“ब्रह्मपुत्र में बहकर आई हुई लकड़ी को घर लाने से पहले हमें सरकार को टेक्स देना पड़ता है । ब्रह्मपुत्र हमारा है, तो उस में बहकर आई हुई लकड़ी भी हमारी है । इस टेक्स के विरोध में चलेगा हमारा आन्दोलन ।”

“कौन-कौन तुम्हारे साथ हैं ?”

“सभी । बस, गौन-बूढ़ा साधन मीरी ही हमारा साथ नहीं देगा ।”

मौ बोली, “ब्रह्मपुत्र वीर है ।”

“वह मुग तो कमी का लव गया, मौ ! जब एक-दो वीर काम चला सकते थे ।” ब्रह्मपुत्र कहता चला गया, “अब तो सब को मिलकर आगे बढ़ना होगा । मिलकर हमने बौध बौधा, मिलकर ही हम ब्रह्मपुत्र में बहकर आई हुई लकड़ी को तुरन्त घर लाने के आन्दोलन में उद्यत होकर दिखायेंगे ।”

बाहर से फिटी के कदमों की आवाज सुनाई दी । मौ डर गई—कहीं पुलिस तो नहीं आ गई । वह बोली, “तुम जाओ, बस्ती जाओ । मेरी चिन्ता न करना । तुम्हें पाकर तो मेरी बोख बन्द हुई । मैं मर भी गई, तो यही आशीर्वाद देकर जाऊँगी कि दिसांगमुक्त मैं मेरे लाख जैसे के जन्म लें ।”

“अब चलना चाहिए ।” ब्रह्मपुत्र ने देवकान्त का कन्धा भँसोका, “अब डेर करना ठीक नहीं ।”

उठने से पहले देवकान्त ने मौ के चरखों पर छिर रक्कड़ प्रक्षाल किया । छिर के दोनों बाहर निकल गये ।

मौ उन्हें पड़ी-पड़ी आँखों से देखती रह गई ।

## साठ



आईवादी नाटक के सफाई के सामाजिक इहसन साहब आग-बबूला हो उठे। आखिर किसी ने अपनी मनमानी करके छोड़ी। मीरब के साथ किसी का जोड़ा उन्हें भावसम्पद या किसी ने एक न मुनी, शिवसागर जाकर विवाह के रजिस्टर पर इस्ताखर कर दिया।

जब किसी बुलाने आइ, तो ममी शायद मान भी जाती, पर डेढ़ी के नाच इन्कार करने पर किसी अपना-सा मुँह लेकर चली गई। विवाह हो चुका नहीं सकता था।

“किसी तो पागल हो गई है। ‘मेरेज’ की एक ‘बेक्याउपड’ होती है, एक ‘अद्वैतस्टैंडिंग’। मेरी समझ में मीरब को शिशिग का आदमी भी नहीं है।”

“उसे ‘एक्स्टक्यूज’ कर दो।” मिसेज इहसन मातृमुखाभ स्नेह को दिया न सकी।

“जिस ने हमारी ‘मैरिज’ को बुझोया, उसे ‘एक्स्टक्यूज’ कर दें।”

“सीपी-सी बात है। किसी की ‘मेरेज’ तो होनी ही थी एक-न-एक दिन। शायद यही ‘डेस्टिनी’ का तकाजा था किसी के लिए। मैं तो मीरब को बुरा नहीं समझती।”

“मीरब के साथ ‘मेरेज’ करने से तो अच्छा था कि किसी ब्रह्मपुत्र में डूबकर ‘सुरसाइड’ कर लेती।”

मिसेज हडसन को अपने पति के मुँह से यह बात बहुत अलसी । उस की कल्पना में वे दिन घूम गये, जब कलकत्ता से रिसॉयमुल जाते हुए रास्ते में इसी रोज़मर पर ही लिली का जन्म हुआ था । उसे उन दिनों बहुत कष्ट रहा करता था । उसका पति हमेशा यही कहा करता था, " 'प्रेगनेन्स' होकर 'चार्ल्ड' की 'बर्थ' तक यह सब मुश्किल-ही-मुश्किल है, फिर एकदम 'रिलीज' हो जाएगा ।" उसे याद था कि लिली का जन्म होने पर वह तीस दिन तक बेहोश रही थी । लिली स्वस्थ थी । उस का अपना स्वास्थ्य ही ठीक नहीं था । वह मरते-मरते बची थी । उस ने जोर देकर कहा, "नीरद इतना बुरा तो नहीं ।"

हडसन की सज्जि उसी तरह चदी रही । वह कुछ न बोला ।

मिसेज हडसन जानती थी कि लिली और नीरद की अपनी-अपनी कल्पना और अनुमति है, अपने-अपने दृष्टिकोण हैं, फिर भी उसका क्या था कि दोनों एक अच्छे उद्देश्य की पूर्ति में संलग्न रह सकें । उसका विश्वास था कि जब हडसन का गुस्सा उबड़ा हो जाएगा और पर शान्त मन से सोचेगा, तो वह भी इसी परिणाम पर पहुँचेगा । विवाह को वह बहुत बड़ी घटना मानती थी—आग में से गुजरने के बराबर, कूड़ा की ढेर पर सीना नहीं । इसलिए लकड़े-लकड़ी का एक-दूसरे को जानना-समझना जरूरी था । उसका विश्वास था कि बितना समय लिली और नीरद को एक-दूसरे को जानने-समझने को मिला, इतना बहुत कम लकड़े-लकड़ियों को मिला होगा ।

"मैं कम्पनी के बड़े इफ्तार को लिली रहा हूँ कि यहाँ से मेरी बरती कर दी जाय ।"

"इस से क्या 'डिपेन्स' पड़ेगा ।"

"न लिली सामने होगी, न मुझे गुस्सा आयेगा ।"

"गुस्सा तो घुम यहाँ रहते भी उबड़ा कर सकते हो, डारलिंग । नीरद अच्छा लड़का है । वह टिप्पट गया था यहाँ उसके माँ-बाप रहते हैं ।"

"वेसे ही गप्प हॉक रहा होगा ।"

“वह तो कह रहा था कि उसका बाप बहुत साल पहले ‘केलकटा’ से लड़ाका चला गया था।”

“बड़ा गप्पी है।”

“मुझे भी, बारसिंग। नीरव का बाप ‘केलकटा’ के एक होटल के इस बरतन से नाराज था कि ‘इंगलिशमैन’ अपने ‘डाग’ को तो भीतर से जा सकता है, पर एक ‘इण्डियन’ के लिए उस होटल में ‘एन्ट्रेन्स’ मिलना ‘इन्वासिबल’ है—”

“नामसेन्स।”

“नीरव कह रहा था कि उस क बाप ने यह ‘ओप’ ली थी कि वह ऐसे ‘स्लेव क्वटरी’ में रहेगा ही नहीं, और लड़ाका से उस बच्चे लौटकर आयेगा, जब यह ‘स्लेव क्वटरी’ ‘इविडफेरेन्ट क्वटरी’ बन जायगा।”

“बट ए रोम। इस ‘क्वटरी’ को ‘इविडफेरेन्ट’ बनते बी साल लगेंगे। वह ‘टाइम’ भी थोड़ा है—”

“मेरा तो दिमा कहता है कि ‘इविडवा’ अब अधिक दिन ‘रौब’ नहीं रह सकता।”

“लिसी ने यह सब जानत हुए भी कि नीरव एक ऐसे आदमी का लकड़ा है जिसे ‘इंगलिशमैन’ का ‘इविडवा’ में रहना पसन्द नहीं, एक ‘इविडमन’ से ‘मैरेज’ कर ली। मैं समझ चुंगा कि लिसी नाम की मैरी बोस ‘डाटर’ की ही नहीं।”

मिसेज इडसन को अपने पति का यह बड़ा अफ़्फ़ा न लगा। वह कुछ न बोली।

इडसन ने प्रसंग बदलकर बितापसाह की चन्दा आरम्भ कर दी। बिबली गिरने से बितापसाह की मृत्यु होने की कुत्सद भटना से उन्हें दुःख हुआ था। ‘अपट्टी मूगा सहकारी सत्यान’ का काम अब बिधा प्रसाद के बच्चे सड़के ने सँभाल लिया था। “बेदा बाप का मुकाबला तो नहीं कर सकता, फिर भी मैं सुझा हूँ कि भ्रा ‘रोपर’ पहले की तरह ही ‘सेफ’ है।” इडसन की आवाज़ में कुछ गर्मी आ गई।

मिसेज हडसन ने गहरी ठपेका से पति की बात समझनी कर ली। उसने उठकर ब्रायोपेन पर बीयोबिन की सातवीं सिम्पनी का रिकार्ड लगा दिया।

हडसन को इस समय अपनी पत्नी की यह हरकत बहुत बुरी लगी। "बन्द करो यह रिकार्ड।" उस ने मुँह बनाकर कहा, "डारलिंग, इस रिकार्ड में देखी क्या बात है? मैं जानता हूँ, किसी को यह बहुत पसन्द है।"

मिसेज हडसन मुस्करा ली, जैसे वह कहना चाहती हो—संगीत से गहरी कोई चीज नहीं। रिकार्ड बजता रहा। मिसेज हडसन की मुद्रा अद्भुत थी, एकदम अमृतपूर्व जैसे आत्म पहली बार वह इस सिम्पनी को समझने में सफल हुई हो।

ब्रह्मपुत्र मुस्करा रहा था, और ब्रह्मपुत्र का बाँध दिसौनामुख वालों की मिस्री-मुली मेहनत का प्रतीक प्रतीत हो रहा था। यमन-यम पर सारसों और कलहंतों की खेलियाँ जैसे दिसौनामुख का यशोगान करती निकल जाती। रडोमर-वाड का शोर बता रहा था कि अमी-अमी किसी चाय बागान से एक टुक आया है। टुक से चाय की पेटियाँ उठाती आ रही थीं।

ब्रह्मपुत्र की जलधारा पर लहरों की सिकवटें बड़ी सुन्दर लग रही थीं। रिकार्ड बन्द हुआ तो फिर से इसे ही लगा दिया गया। हडसन को यह बात बड़ी विचित्र-ली लगी।

"मुझे तो यह सिम्पनी बिलकुल 'दब' नहीं करती।"

"बाहर बजने वाली सिम्पनी पहले हमारे अन्दर बजे, तब बाहर की सिम्पनी भी अच्छी लगती है, डारलिंग।"

"मैं सोचता हूँ, यह बाँध नहीं बंधेगा, ब्रह्मपुत्र इसे 'बाध अर्थ' करके ले जाएगा।"

"तुम्हारा क्या मत है, इन लोगों ने बेकार ही बनाया यह बाँध। पानी इन्सान अपने 'रिफ्लेक्स' की कोशिश न करे।"

नीचे से पाकट बत्तलों की आवाज़ें आ रही थीं। रिकार्ड बन्द हो गया था। मिसेज हडसन अजमनी-सी बैठी रही। हडसन आराम

झुंझी पर पैर फैलाये बैठा सिगरेट के कश लगाता रहा ।

“ ‘पलट’ आता है तो ‘बाटर’-ही ‘बाटर’ हो जाता है । सबको गाँव में डूब जाते हैं, जैसे ‘कई’ में ‘छाहट’ के डुबने । फिर भी ये लोग ‘ब्रह्मपुत्र’ से ‘लव’ करते हैं, डारसिंग !”

“ ‘ब्रह्मपुत्र’ से ‘लव’ न करने का तो खवाल ही नहीं उठता ! बट्टर प्रेट रिपर !”

कहीं-कहीं नावें आ-आ रही थीं । ब्रह्मपुत्र के बलमार्ग पर मानव का शासन था, जैसे मगल-ही-मगल हो । किसी नाव के चलने से ऐसी आवाज आती, जैसे शिशु माँ के स्तन को मुँह में लेकर चूसता है ; किसी से ऐसी आवाज आती, जैसे बड़ी मछली छोटी मछली को खाकर डकार लेती है । मिसेज हडसन सोच-सोचकर बोली, “यहाँ रहते हमें कितना ‘डाइम’ हो गया, पर इन लोगों के साथ हम ‘टैमिस्सियर’ नहीं हो पाये । हम इन्हें ‘स्लेब’ क्यों समझते हैं ?”

“ये हैं ही ‘स्लेब’ !” हडसन और से हँस पका, “फिर हम इन्हें ‘स्लेब’ समझते हैं तो क्या ‘मिस्टेक’ करते हैं ?”

“चाप की पेटियों ‘लोड’ करा-कराकर हम बुझते हो गये !”

“इसी काम की तो तुम्हें ‘पि’ मिलती है !”

“सारा-सारा दिन ‘बोटल’ आती-जाती हैं । ये लोग अपना काम करते हैं । व तो किसी से ‘पि’ नहीं लेते । ‘ब्रह्मपुत्र’ में ‘फिरा’ की कमी नहीं । ‘फिरा-मैन’ मछों से ‘पिघा’ पकड़ने निकलते हैं । ब्रह्मपुत्र उन्हें ‘फिरा’ देता है और वे इसे बेचकर पेट पासते हैं वे किसी की ‘पि’ के मोहताब नहीं ।”

“फिर भी ये लोग हमारे ‘स्लेब’ हैं ।”

“इन के अपने ‘हाउस’ हैं, अपने ‘मिसेज’ हैं, अपना ‘ब्रह्मपुत्र’ है । इन्हें ‘अक्सरस्टैडिंग’ हो रही है । ये बहुत दिन ‘स्लेब’ नहीं रह सकेंगे, डारसिंग !”

“हम के बाप को भी हमारा ‘स्लेब’ खाना होगा ।”



“इन के अपने ‘पर्स’ हैं, जहाँ ‘पैडी’ होती है अपने ‘स्पिन’ यही है, जिन पर वे घर के पाले रेशम के कीड़ों का पैयार किया रेशम ‘स्पिन’ करते हैं अपने ‘हैंडलूम’ हैं, जिन पर वे घर के कपड़े रेशम कपड़ा ‘बीब’ करते हैं। कपड़ा भी ऐसा, जो बड़ी-बड़ी मिलों के कपड़े के ‘डिप्टिट’ देता है।”

“वह तो ठीक है। ‘दे आर वण्डरफुल स्पिनर्स एवड बीबर्स’।”

“मैं कहती हूँ, वे लोग बहुत दिन हमारे ‘स्लेब’ नहीं रह सकते।”

चाय की पेटियाँ उतारकर टुक फिर से शिबसागर की ओर जाने के लिए मुका तो ओर से उसका हॉर्न बज उठा। मिसेज़ हडसन ने बेइयासी से अपने पति की ओर देखा, जैसे कह रही हो—अधपुत्र के शास्त्र, मनु गान के साथ इस हॉर्न का करा भी मेल नहीं।

इतने में फिटी ने भीचे से आकर कहा, “शिली और नीरद आ रहे हैं।”

हडसन ने आँखों-ही-आँखा में अपनी पत्नी को बताया—मैं उन के बिसकुल बात नहीं करूँगा।

“शिली फिर भी तुम्हारी ‘डायर’ है। उस का ‘हार्ट बेक’ न करना अब तो उस ने ‘भैरेब’ कर ही ली।” और अगले ही क्षण शिली और नीरद के मुत्कड़ाते चेहरे देखकर वह बोली, “अब आन, शिली। अब आन, नीरद। आब हम तुम्हें बहुत ‘रिमेम्बर’ कर रहे थे। बैठो, नीरद तुम्हारे मॉन्वाप की कोई ‘लैटर आई लाहासा’ से। बहुत अच्छा ‘कवर्ट्री’ है ‘टिम्बर’, हमारे ‘अधपुत्र’ का ‘बर्नप्लेस’। आब वो ‘अधपुत्र’ के ‘बर्नप्लेस’ की बातें ज़रूर सुनाओ।”

“अकर, अकर।” हडसन भी थुप न रह सका।

मैं ने उठकर बेटी के लिए ग्रामोफोन पर बीथोविन की सातवें सिम्फनी वाला रिकार्ड लगा दिया।

## इकसठ



“बंगाल में प्रवेश करने के कई रास्ते हैं, मिस्सन का एक भी रास्ता नहीं है।” सबरे की बाय पीठे पीठे लिखी कई बार कई चुकी थी। ये शब्द उस ने कलकत्ता की इम्पीरियल लाइब्रेरी में किसी पुस्तक में पढ़े थे उसी लाइब्रेरी में नीरद से प्रथम परिचय हुआ था, तब वह क्या जानती थी कि यह परिचय

एक दिन विवाह का रूप धारण कर लेगा।

एक दिन लिखी बोली, “हमारी ‘मैरेज’ को सात महीने हो गये, फिर भी डरती हूँ, डेढ़ी इंचर आकर गाली न दें लगें; उन्हें बहुत गुस्सा आता है, डारलिंग।”

नीरद ने हँसकर कहा, “ब्रह्मपुत्र में बाढ़ आती है अक्सर, पर हमेशा तो बाढ़ नहीं रहती। जो बात बंगाल के बारे में सही है, वह असम देश पर भी ठीक उतरती है।”

“बंगाल तो ‘ब्लैक मैजक’ के लिए ‘प्रेमस’ है।” लिखी हँस-हँसकर दोहरी सं गढ़, “कहते हैं टाका की स्त्रियाँ आदमी को मँगा बनाकर घर में छिपा लेती हैं।”

“यह तो सब गप्पबाजी है।” नीरद ने गम्भीर मुद्रा में कहा।

“गप्पबाजी कैसे है? मैं कहती हूँ, टाका की स्त्रियाँ ‘मैजक’ जानती होंगी, तो क्या यहाँ के पुरुष वह बिधा नहीं जानते होंगे?”

“अरे हॉ, डारलिंग।” नीरद को भी हँसी आ गइ, “जानते हैं,

कर जानते हैं म जानते होते, तो क्या इसन साहब की बेटी विपन गुप्त के बेटे नीरव से विवाह कराती ? जावू वह जो सिर खड़कर बोले । निकलुल टीक । बंगाल में प्रवेश करने के कई रास्ते हैं, निकलने का एक भी रास्ता नहीं ।” और फिर उस ने गम्भीर होकर कहा, “और जो एक बार असम पहुँच गया, वह भी वापस नहीं जाता, जाता भी है, तो बहुत खर्च शौट जाता है ।”

“तुम तो देर से जाते !” लिखी हँस पड़ी ।

“अपने डेढ़ी को भी अब यहीं के समझे ।”

“मेरे डेढ़ी तो इंग्लैंड लौट जाने का ‘प्रिम’ देखते हैं दिन-रात ।”

“असम देश को छोड़ सकना अब उनके लिए सभव नहीं । अब तो चिसौंगमुल में ही उनका जीवन बीतेगा ।”

“वह क्योस्टिप बिद्या कब से चील की ?” लिखी हँस पड़ी और उस ने टेबल पर सक्कन लगाकर नीरव के हाथ में बमाले हुए कहा, “डेढ़ी को चिसौंगमुल बहुत पसन्द नहीं, नौकरी के चिसखिले में वह बर्त रहे कर रहे हैं ।”

“असम का इतना सुन्दर दृश्य असम देश में है और कहीं नहीं, और फिर मामुली वहाँ से इतनी नज़दीक है । जानते हो बुनिया-भर की मदियों में और किसी भी नदी में इतना बड़ा द्वीप नहीं है । बीस मील लम्बी है, मामुली और सात-आठ मील चौड़ी ।”

“मैं ने तो देखी नहीं मामुली । दिखाकर लाओ तो मारूँ ।”

“अरे बिना लामेंगे, डारलिंग ।” करते हुए नीरव उठकर मीटर से वह सुन्दर एलकम उठा लाया, जिस में उस ने अपनी हाथ की तिन्कत मात्रा के फटे लगा रखे थे ।

लिखी ने फटे देखती रही । नीरव बीच-बीच में लिखी के चेहरे की ओर निहार लेता । उसे अपने उस पत्र की याद आई, जिस में उस ने लहासा में बैठकर लिखी हुई एक कविता भी लिखी को भेजी थी ।

“डारलिंग, मैं ने अपने पिता की से साफ-साफ पूछ लिया था—‘क्या

आप यह पक्कद भी करेंगे कि जिन धोबियों के अमर व्यपहार के कारण आप अपनी जन्मभूमि को छोड़कर स्थाया में आ गये, मैं उन्हीं के कुल में जन्मी एक भद्र कुमारी से विवाह कर लूँ ।”

“उन्होंने क्या जवाब दिया ।” सिली ने उत्सुकता से पूछ लिया ।

“उन्हें गुरु में यह बात बिलिख-सी लगी थी, पर वह कुछ बोल नहीं सके थे । पास में मैं बोल उठी थी—‘घरे बैठा, तू विवाह करा तो सही, चाहे मैं से ही करा ।’ याद है न, विवाह के पश्चात् यहाँ से अपना और तुम्हारा एकठाया विचवाया हुआ पोछो मैं को भेजा था, तो उस ने अस्फुट स्तुष्ट होकर लिखा था—‘ऐसी चाँद-सी कुलदन तो इरेक को मिले ।’”

उस पोछो की एक प्रति नीरद ने इस एलबम में भी लगा रखी थी । यह शिवसगर के एक स्टूडियो में लिया गया था । इस एलबम में तो विवाह के उपरान्त लिख गये और भी कई पोछो लगाये हुए थे । सिली इस समय उन्हें ध्यान से देख रही थी । मन-ही-मन वह सोच रही थी—यह कर नहीं सकता है ।

“तुम्हारा यह पोछो ही सब से अच्छा है ।” नीरद ने उस पोछो की ओर संकेत किया, जिस की एक प्रति मैं को भिजवाए गए थी ।

सिली की दृष्टि एक और पोछो पर जमी थी, जिस में वह अपने स्कट की बजाय ठेठ असमिया बेर में नज़र आ रही थी—वही मैलखा, बादर और धँसिया । उसे याद था कि यह मैलखा देवकान्त की मैं ने अपने हाथ से तैयार करके दी थी । कमचीली मुगहरी रेशमी मैलखा उस ने अभी तक अपने धुड़-बेस में रेंगाकाकर रक्त छोड़ी थी । पोछो में उस ने सुन्दर डिजाइन वाला ‘रहा’ भी तो अपनी कमर पर मैलखा में एक ओर खोस रखा था ।

“इस ‘रहा’ ने मुगहरी मैलखा की शोभा बढ़ा दी ।” नीरद ने जैसे सिली के मन की बात कह दी ।

“तुम भी तो पूरे असमिया ‘ब्रा-डमू’ नज़र आ रहे हो ।” सिली

कोई-कोई मुनक धान तक अन्नल के विरोध में करता, "साधन का क्या विगड़ा ! उस की तो पाँचों सेंगलियों की में हैं ।" कोई कहता, "हाँ माई, इस में तो अन्नल की मूलता ही सिद्ध होती है ।" फिर भी जानते थे, साधन अन्नल से ज्यादा लम्बा सलाम ठीक कर विरोध करता है गोपीनाथ बारोगा को देखते हैं। उस के मुँह से यह सिलीने की तरह निकल जाता है—बुद्ध, माई बाप ! गाँव के लोको से कोई चिन्ता नहीं ।

"दिल्लर के साथ फिरंगी की लड़ाई हो रही है, तो क्या इस कुत्ता सब से ज्यादा दिर्घायु के सिर ही पड़ेगा, धनसिंह भाई अन्नल ने शाम की चाय की चुस्की मरते हुए कहा, "कभी पुलिस मदद से, कभी शिवसागर के किसी मजिस्ट्रेट के रौम से, कितनी बन्दा जमा किया जायगा ! हम लोगों का काम फिरंगी के लिए जमा करना ही रह गया है ।"

दिर्घायु का स्कूल-मास्टर अमिराम फूफन बैठा समाचार सुनाने लगा । एक ही सॉस में उस ने बता दिया कि वहाँ भी दिल्लर जीत चुका, वहाँ भी दिल्लर का ही पलका मारी रहा, और वहाँ भी ही स्वयंसेवक से उठते हुए मजिस्ट्रेट बैठा के समान बख्तर से भी गति से देश-के-देश अपने सामने खरी खाने बिना करता सरकार के मँ में आगे निकल गया ।

अन्नल बोला, "और वो बन्दा ! फिरंगी को बचाओ ।"

"किसी ने सोचा भी न था कि दिल्लर ऐसा मक्का चला रहा है ।" धनसिंह ने तान आसानी ।

"सोचा क्यों नहीं था !" पास से रत्न कह उठा, "भूत और वो एक ही बात है । बन्दे पर बन्दा जमा किया जा रहा है । देश बद गया । इसे बार-बार बचन दिया गया, शिवसागर से रेलवे ला दिर्घायु आयेगी । आज तक वो फिरंगी ने बचन पूरा नहीं किया तो लम्बे लो, हम में सोचा था, अन्नल सोचा था, कोई दिल्लर का

फिरंगी का गकड़कमासा बन्द करे।”

हनुमन्-मास्टर अभिराम फूकन ने गिगरेट का बुझा उठाते हुए कहा, “दिल्लर तो दुनिया का मक्या बकल रहा है। जब यह गुरु गुरु हुआ तो फिरंगी ने हिन्दुस्तान को भी इस गुरु में फँसेलना चाहा। गांधी जी ने कहा—देला नहीं होता।”

रालास बोला, “गांधी जी तो हमारे रूप से बने नेता हैं। जैसे कांग्रेस के चार आना देने वाले मेम्बर भी नहीं हैं, फिर भी कांग्रेस उन्हें बूढ़े बिना कोई काम नहीं लगाती।”

अभिराम फूकन ने खान बयारा, “सा की एक बात है। हिन्दुस्तान के जिन प्रान्तों में कांग्रेस मन्त्रिमण्डल काम कर रही है, सब ने स्वागत दे दिये। फिर असम का कांग्रेस मन्त्रिमण्डल ही जैसे कुर्सी पर जमकर बैठा रहता। वह भी बाहर आ गया।”

फिरी की आवाज आई, “मैं बल खान तक यही नहीं खेप सका, स्वागत देकर उन्होंने मकार की या बुराई।”

रज ने हँसकर कहा, “लाला कपड़ा डेलकर खींच डरता है। उन्होंने फिरंगी को लाल कपड़ा दिला दिया।”

मि ने यह आपत्ति की की, उस की आवाज आई, “फिरंगी की सरकार तो जैसे ही खल रही है। टेकल और बड़ गमे गुरु के नाम पर। मार, हम तो चम्का देते दग आ गये।”

अभिराम फूकन ने लखर-कायक पर रखकर आँसों से देनक उतारी, और शीरो साफ करते हुए कहा, “फिरंगी को जामा पड़ेगा।”

“कहाँ जामा पड़ेगा।” पास से आवाज आई, “मूठी बात है, फिरंगी यही रहेगा। हम देश-सेवा की भावना से बहुत दूर जा चुके हैं। फिरंगी यही रहेगा।”

अभिराम फूकन बोले, “बिलिंगमुल को हीनो। मीरी समझते हैं, यहाँ उनका बहुमत है। दूसरे लोग उन से दबकर रहें। साधन मीरी पर वे अपना अधिकार समझते हैं। साधन तो फिरी का मित्र नहीं। मीरी लोग

कोई-कोई मुक्क ब्रह्म तक ब्रह्मल के विरोध में कहता, “साधन मीरी का क्या बिगड़ा ? उस की तो पाँचों ठेंगलियों की में हैं ।” कोई कहता, “हाँ माई, इस में तो ब्रह्मल की मूलता ही सिद्ध होती है ।” फिर भी सभी जानते थे, साधन अकुरुत से ज्यादा लम्बा सलाम ठोक कर फिरंगी को कुच करता है गोपीनाथ बारोगा को देखते ही उस के मुँह से रक्क के सिलौने की छद् निक्क जाता है—हुस्सु, माई बाप ! गोंब की तो उसे कोई चिन्ता नहीं ।

“हिटर के साथ फिरंगी की लड़ाई हो रही है, तो क्या इत का कुमाना सब से ज्यादा दिसाँगमुल के सिर ही पड़ेगा, धनसिंह भाई !” ब्रह्मल ने शाम की चाय की चुस्की मरते हुए कहा, “कभी पुलिस की मदद से, कभी शिषसागर के किसी मजिस्ट्रेट के रौन से, कितनी बार चन्दा जमा किया जायगा ? इन लोगों का काम फिरंगी के लिए चन्दा जमा करना ही रह गया है !”

दिसाँगमुल का स्कूल-मास्टर कमिराम फूकन बैठा समाचार-पत्र सुनाने लगा । एक ही सॉल में उस ने बठा दिया कि बहाँ मी हिटर की बीत हुए, बहाँ मी हिटर का ही पलका मारी रहा, और बहाँ मी हिटर ही स्वगल्लोक से उठे हुए मन्त्रसिद्ध देवता के समान बबबर स भी तेज गति स देश-के-देश अपने सामने पारों खाने बिच करता लकाई के मैदान में आगे निकल गया ।

ब्रह्मल बोला, “धीर हो चन्दा । फिरंगी को बचाओ !”

“किसी ने सोचा भी न था कि हिटर ऐसा मक्का चला सकता है ।” धनसिंह ने हान अलापी ।

“सोचा क्यों नहीं था ?” पास से रल कह उठा, “भूट और पाप तो एक ही बात है । चन्दे पर चन्दा जमा किया जा रहा है । टेकल भी बढ़ गया । इसे बार-बार बचन दिया गया, शिषसागर से रेलवे लाइन निर्माणमुल आयेगी । आज तक तो फिरंगी ने बचन पूरा नहीं किया । तो समझ लो, हम ने सोचा था, अकुरु सोचा था, कोई हिटर आकर

फिरंगी का गकबड़माला बन्द करे।”

स्कूल-मास्टर अभिराम फूकन ने सिगरेट का बुझा उठाते हुए कहा, “रिटर्नर तो बुनिया का मक्का बरस रहा है। अब यह युद्ध शुरू हुआ तो फिरंगी ने हिन्दुस्तान को भी इस युद्ध में फँसेलना चाहा। गांधी जी ने कहा—देखा नहीं होगा।”

रत्नाल बोला, “गांधी जी तो हमारे लव से बड़े बूढ़ा हैं। कैसे कांग्रेस के चार आना बेंने वाले मेम्बर भी नहीं हैं, फिर भी कांग्रेस उन्हें पूछे बिना कोई कदम नहीं उठाती।”

अभिराम फूकन ने हाथ बपारा, “सो की एक बात है। हिन्दुस्तान के जिन प्रांतों में कांग्रेस मन्त्रिमण्डल काम कर रहे थे, सब ने स्वागपत्र दे दिने। फिर असम का कांग्रेस मन्त्रिमण्डल ही कैसे कुर्सी पर जमकर बैठा रहता। वह भी बाहर आ गया।”

किशो की आवाज आई, “मैं बस आज तक यही नहीं सोच सका, स्वागपत्र देकर उन्होंने मलाई की या बुराई।”

रत्न ने हठकर कहा “आज कपड़ा देलकर सॉर डरता है। उन्होंने फिरंगी को आह कपड़ा दिला दिया।”

मिस ने यह आपत्ति की थी, उस की आवाज आई, “फिरंगी की सरकार तो बैसे ही चला रही है। टैक्स और बढ़ गये युद्ध के नाम पर। माइ, हम तो चन्दा देते दग आ गये।”

अभिराम फूकन ने खबर-कागज पर रखकर आँखों से देनक-छिटारी, और शीशे साक करते हुए कहा, “फिरंगी को जाना पड़ेगा।”

“क्यों जाना पड़ेगा।” पास से आवाज आई, “झूठी बयान है फिरंगी यही रहेगा। हम देश-सेवा की भावना से बहुत दूर जो गये हैं। फिरंगी यही रहेगा।”

( ५५ )

अभिराम फूकन बोले, “दिसॉगमुस को हीणो। मीरी समझते हैं, यहाँ उनका बहुमत है। दूसरे लोग उन से दबकर रहें। साबन मीरी पर बे अपना अधिकार समझते हैं। साबन तो किसी का मित्र नहीं। मीरी लोग



बस इसी पर बगलें बजाते हैं कि असमिया गाँव-बूढ़ा नहीं रहा, और कोई नेपाली भी गाँव-बूढ़ा नहीं बन सका।”

बनसिंह भी लामोश न रह सका, “किसी नेपाली को दिसाँगमुल का गाँव-बूढ़ा बनने का तो शान्द कभी अवसर नहीं मिलेगा। हम बाहर से आये, वहाँ आकर हमने मेहनत की। मेहनत करना तो पाप नहीं। हमने मेहनत की और पैसा बनाया। वृष का सारा काम हमारे हाथ में आता गया। हम में से कुछ लोगों ने खमीन भी करीब ली। अब सीरी लोग कहते हैं, नेपाली लोग एक दिन दिसाँगमुल की सारी खमीन करीब कर वहाँ के स्वपति बन जाएंगे। दिसाँगमुल का गाँव-बूढ़ा कोई नेपाली बना दिया जाय, तो इन लोगों को आग लग जाय।”

अमिराम फूकन ने ठबित अवसर देखकर कहा, “भैरा मन करता है कि आपसी भेद-भाव मिटाने के लिए हमें एक-दूसरे के राखी बाँधनी चाहिए। रक्षा-बन्धन का इतिहास तो बहुत पुराना है। प्रसंग तो यह है कि—”

“हाँ हाँ,” राखाल ने गम्भीर होकर कहा, “जब वैशाख संक्रान्ति में वैशाखों के राजा इन्द्र बारह साल तक लड़ते रहने पर भी असुरों को नहीं हरा सके, तो इन्द्राणी ने पूजा-पाठ के पन्थात अपने पति के हाथ में राखी बाँधकर हरि से प्रार्थना की कि यह युद्ध वैशाखों के पक्ष में समाप्त हो जाय।”

अमिराम फूकन ने बात को आगे बढ़ाया, “हाँ, हाँ! और आधुनिक काल में बंगाल में रक्षा-बन्धन का एकदम मूलन प्रयोग किया गया। शिरंगी ने बंगाल के को लपट कर डाले, तो सारा बंगाल एक साथ लड़ा हो गया।”

“और अब तारे दिसाँगमुल को एक साथ लड़ा हो जाना चाहिए।” राज एक हाथ की इधेसी पर दूसरे हाथ की रेंगली ठस्तरे की तरह टैक करते हुए बोला, “बीते रहो, मास्टर जी! बहुत अच्छा प्रसंग है।”

“हाँ, तो मैं कह रहा था,” अमिराम फूकन गम्भीर मुद्रा में कहा

बसा गया, “सारा बंगाल एक साथ लड़ा हो गया था। एक ने दूसरे के हाथ में, दूसरे ने पहले के हाथ में और इस तरह सब ने एक-दूसरे के हाथ में राखी बाँधकर छिरंगी को बसा दिया, सब बंगाली भाई-भाह हैं। और छिरंगी को मरक मारकर अपना पैसला बदलना पड़ा।”

आज वह गोप्टी दर तक बसी रही। सब लोग बड़-बड़कर बोलते रहे। अटुल क्षामोश बैठा सुनता रहा।

“तुम क्यों चुन हो, अटुल।” बनसिंह ने चिन्ति-सा होकर कहा, और इस से पहले कि अटुल कुछ कहे, वह स्वयं ही बड़ उठा, “अटुल को बिसौगमुल की चिन्ता सता रही है।”

सब ने अनुरोधपूर्वक अटुल से कुछ बोलने को कहा, तो उस के फुट से पही स्वर निकला, “अब मौका है, हम छिरंगी को चुनौती दें। ब्रह्मपुत्र हमारा है, तो उस में बहकर अस्ती लकड़ी भी हमारी है।”

अमिराम फूकन ने समाचार-पत्र पर नसरेँ गाड़ते हुए गम्भीर मुद्रा बना ली और कहा, “अभी वह अवसर नहीं आया।”

राल ने तान ली, “अटुल ठीक करता है, मास्टर जी।”

“छोहा गरम हो, तो थोड़ करने से थूकना मूल्यता है।” बनसिंह भी चुन न रह सका।

रालास ने मानो किसी हाथी पर अंकुश लगाया, “अरे सरा आगे भी फटम उठा, बिसौगमुल। मर तो न बन। जब बिसौगमुल ऐसे काम को हाथ में लेगा, जिस में सब को लाभ हो, तो मीरी, अस्मिया और नेपाली के भेद-साध खुद ही मिट जायेंगे।”

अमिराम फूकन ने डेक लगाए, “क्यों न हम एक-दूसरे के राखी बाँधें। हमारा एक संकल्प होना चाहिए।”

सारी गोप्टी मन्त्रमुग्ध-सी मरकर आने लगी। अटुल कुछ न बोला। सब उसी के मुल की ओर देखते रह गये।

## तिरसठ



साधन मीरी में धर-धर घूमकर यह कहना शुरू कर दिया—“सरकार को टैक्स दिये बिना ब्रह्मपुत्र में बहकर जाती लकड़ी को उठाकर घर लाने का विचार मीटर से थोपा है।”

एक दिन उस ने भरी पंचायत में यहाँ तक कह दिया, “ऐसी थोरी लकड़ी पर तो मैं बूझता हूँ।”

गोपीनाथ बारोगा ने गाँव के लोगों को पाने में बुलाकर भमकाया, “लकड़हार, अगर किसी ने ब्राह्मण के पीछे जागकर ब्रह्मपुत्र से मुक्त लकड़ी लाने की बात भी सोची।” और पीछे उस ने पुष्पकारा, “टैक्स दिये बिना तो कोई सरकार नहीं चल सकती।”

ब्राह्मण ने निडर माथ से कहा, “बारोगा जी, सरकार को यह तो ऐलान चाहिए कि वह लोगों को टैक्स देने योग्य बना रही है या नहीं। हम पहले से कहीं अधिक निधन हो गये हैं। बाद हमारा कच्चा मकान है। सरकार हमारी सहायता करती भी है, तो केवल नाममात्र के लिए। फिर यदि वही ब्रह्मपुत्र, जो हमें मद्य करता है, हमारे लिए उपहार-स्वरूप लकड़ी ही बहाकर लाता है, तो वह लकड़ी हमारे लिए कर-मुक्त क्यों न हो?”

गोपीनाथ बारोगा ने मन-ही-मन ब्राह्मण के तर्क की प्रशंसा की, पर प्रशंसा रूप से उस ने सरकार का दबाव समझते हुए कहा, “यह तो सरकार के सम्मान का प्रश्न है। विदेशी सरकार हो चाहे देशी, कर

तो वह लगायेगी ही। क्या देखी सरकार कर लगाये बिना ही काम चलायेगी ?”

अटुल के भी में तो आवा, अभी उठकर उस दिन की घोषणा कर दे जब यह आन्दोलन आरम्भ होगा; पर वह चुप बैठा रहा। अभी अगली ही दिन अलतारा ने उसे बताया की थी, “तुम पहले घर को देखो, फिर बाहर को। निर्गुण से लोहा सेना बेल नहीं। बापू की गाँव-बूढ़ा की पदवी छुड़ाकर तुम ने पहली भूल की। अब तुम यह दूसरी भूल करने जा रहे हो। या तो पहले मेरा गला घोट डालो, बच्चों को डगाकर ब्रह्मपुत्र में फेंक आओ, या फिर बौत से रहो और घर के लिए काम करो।” इस के उत्तर में उस ने कहा था, “तुम तो तुम जानती हो। मैं कोई गलत फ़ैसल नहीं उठाता। घर की देखने से पहले मैं सदा बाहर को देखता हूँ। बाहर को देखे बिना घर को देखते रहना त्पार्य है।” पर अलतारा का तर्क तो दूसरा ही था, “तुम चार बच्चों के बाप हो, वह मत मूल आओ।” उस समय अटुल को लगा था कि अलतारा भी साधन के चकर में आ गई।

गोपीनाथ आवा पकड़े तक ब्याख्या करता रहा, अमेरिका राज्य के आसगत आने से हिन्दुस्तान को किससे लाभ पहुँचे उस के कल्पानुसार अमेरिका न आते तो न टाकसर बनते, न रेलें चलती, न इचार्ज अक्षय नकर आते, न रेडियो बकता। अटुल को चुप देखकर उस ने कहा, “तुम नहीं जानते अटुल कि मैं ने कितनी बार तुम्हारा बाल्य करते करते बचाया। अब भक्तान् के लिए लोगों में सरकार के विरुद्ध प्रचार करना खोके हो।”

अटुल ने पहले तो गोपीनाथ का कल्पवाद किया, फिर साफ-साफ कह दिया, “सच्चाई किसी के रोके बकन की नहीं, बायेगा थी। दिर्गामुल को तो ब्रह्मपुत्र भी नहीं हरा-सका; ब्रह्मपुत्र से बड़ा हम किसी को नहीं समझते।”

यद कहकर वह चुप हो गया। उसे याद आवा कि किस तरह अलतारा

ने उस रात घर में कुहराम मचा दिया था। उस ने यहाँ तक धमकी दे डाली थी, “बहि तुम्हारा नारस्त मिक्स गया, तो मैं इस घर में नहीं रहूँगी।” सामने से कस्बावा भगत आ निकले थे और आभी रात तक बैठे अटुल को समझाते रहे थे। ‘किरंगी से टक्कर लेना मूलतः है।’—उमका यही मत था।

गाँव की रिपति यह थी कि साधन में सब मीरियों को सरकार के पक्ष में कर लिया था। राजास के सिवाय एक भी मीरी नसर नहीं आता था, जो अटुल के सुझावे हुए रास्ते पर चल सके। बल्कि कुछ असमिया और नेपाली लोगों को भी सरकार ने खरीद लिया था। अटुल ने घाने के बाठावरण की परवाह न करते हुए कहा, “सरकार कम तक हमें बरीमूठ करती रहेगी।”

गोपीनाथ ने पुनःकार, “सरकार तो दिल से दिर्घांगुल का मला चाहती है। आप लोग भी ऐसा काम न करें, जिस से सरकार का काम टप होने का मय हो।”

अटुल की अन्तरात्मा सिहर उठी। वह बुलकर कहना चाहता था—अपना काम तो हम करेंगे ही करके ही झोड़ेंगे अपना काम; उस से तो हमें मरपुत्र भी नहीं रोक सकता।

गोपीनाथ बारोगा का प्यान खींचते हुए अटुल ने ठठकर कहा, “कह बार मैं अपने लेठ की मिछी मुछी में मर कर नाक के पत लाता हूँ। इस की सोंधी-सोंधी सुगन्ध मुझे बहुत मली लगती है। मैं सोचता हूँ, दिर्घांगुल की माटी दिर्घांगुल वालों को एकता के सूत्र में क्यों नहीं बाँध सकती।”

“बेटो, बेटो।” गोपीनाथ मुस्कराया, “यह तो तुम ठीक ही कह रहे हो। सरकार भी कम चाहती है, दिर्घांगुल की एकता आती रहे।”

घाने से सौंठते समय साधन ने खाना दिया, “इसकी ही पेंट है, वो कम ही शुरू कर के दिलाओ अपना सत्याग्रह।”

वह घर पहुँचा तो राजास ने भी उसे बहुत समझाया कि सत्याग्रह के

लिए यह उचित समय नहीं है। वे मारियस के पैरों की ओर देखते रहे,  
जिन के पीछे से पूनम का बाँद झोंक रहा था।

अतुल बैठ गया और सोचने लगा—सुलतान गर्भवती न होती,  
तो शावद मैं उस से बिना पूछे ही मैदान में कूद पड़ता। आठवाँ मास  
आरम्भ हो गया। सुलतान को वहाँ कुछ हो न जाय। नया शिशु आ  
रहा है नबाँदुर के समान मृम-मृम उठेगा नया शिशु। बाँद-सा तुल  
मगडल शरीर केले के समान गंठा हुआ। वह काम ऐसे है जो बापू न  
कर सका, मैं ने कर डाले। कुछ काम जो मैं न कर सकूँगा, मेरा बेटा  
करेगा। जो वह भी नहीं कर सकेगा, वह कोह और करेगा। तुम्हें सुलतान  
का दिल नहीं बुझाना चाहिए। तुम्हें कुछ दिन रुक जाना चाहिए।

अतुल को हृद-यतिक देलकर रास्ताल ने कहा, “जैसे तो मैं अब भी  
यही सलाह दूँगा अतुल कि अभी यह कदम न उठाओ; पर अगर तुम  
यह सत्याग्रह शुरू करोगे तो मैं पीछे नहीं रहूँगा। हमारे नार्मन साहब  
कहा करते थे—या तो आदमी सोचे नहीं कि एक काम करना है, सोचे  
तो पीछे न हटे।”

# चौंसठ



वर्षा ऋतु में ही लफ्फी बहकर छाती थी। बहकर छाती लफ्फी उठाकर सामे की तो कोई मनाही न थी अहोम राजाओं के समय से ऐसा ही होता आया था। अहोम राजाओं से पहले के राजाओं ने भी तो कभी इस की मनाही नहीं की होगी। मनाही तो वहाँ शुरू होती थी, वहाँ कोई इसे किनारे

जाने के बाद सरकार को कर दिये बिना घर ले जाय। अहोम राजाओं के हाथ से असम का राज्य फ्रिंजी के हाथ में आया, तो वही पुराना कामूल कामम रहा।

राम्बास ने ब्रह्मपुत्र के किनारे लड़े-लड़े अटुल की आँखों में झोंककर कहा :

“और कोई नहीं आया, परबाह नहीं।”

“परबाह नहीं।” अटुल मुस्कुराया, “तुम मेरे साथ हो काका, तो सारा विसौगमुल मेरे साथ है।”

“तुम्हें तो इस बात पर आश्चर्य होता है कि कुछ वर्ष पूर्व, जब हिटलर ने ओर पकड़कर लवार्हें लेक ली थी, असम में कांग्रेस मन्त्रिमण्डल कामम हुआ, तो उस में भी इस कामूल पर धाप लगा ली। कांग्रेस मन्त्रिमण्डल के स्वागत के दिने के परचात् कामूल बेसे-का-बैसा रहा।”

“हम इसे बदलकर विसावेंगे, काका।” उसका स्वर स्थिर था।

सुशोष से पहले ही वे नाव लेकर ब्रह्मपुत्र में उतर गये। उम का प्रश्न

या कि सूर्य ब्रह्मपुत्र के बीच जाने पर उदय हो। सूर्योदय के प्रकाश में ब्रह्मपुत्र में बहकर आते नके-नके विद्यालकाय दृश्य होते, तो ब्रह्मल तन्मय हो गया; उस के हाथ चप्पू चलाते रहे।

“क्या सोचने लगे ?” राजाल मुस्कराया, “गुरुतारा अब क बैठे को जन्म देगी। मेरा मुँह मीठा करामा होगा।”

ब्रह्मल ने मन की बात स्पष्ट करते हुए कहा, “मैं सोच रहा था कि और तीसरा आदमी भी हमारे साथ होता।”

राजाल हँस पड़ा, “कौन होता वह तीसरा आदमी ? देवकान्त ?”

“देवकान्त का तो इस सत्समाह में विश्वास नहीं।”

“तो और कौन होता वह तीसरा आदमी ?”

ब्रह्मल चप्पू चलाता रहा। सूर्य का रक्तम गोला धीरे धीरे मुनहला होता गया। ब्रह्मल चप्पू चलाता रहा। उसे नीरद का ध्यान आया। दो-तीन अलमारियों में रखी हुई उस की बेशी-बद्ध पुस्तकें ठम की क्षणता में घूम गई। वह काका से कहना चाहता था, नीरद जैसे लोग तो पुस्तकों के बीचों-बीच बस कर ही रह जाते हैं। परन्तु स्पष्ट शब्दों में उस ने नहीं कहा, “काका, नीरद को भी हम कुछ क्यों करें ? धनसिंह कभी-कभी हँसकर कहता है—‘पढ़ा नीरद मजे कर रहा है। जिली की कमाई में कमी नहीं, और नीरद की महाराज की पुस्तक कमी समाप्त नहीं होगी। बाद रे नीरद, छिन्ने जाओ, सिस्ते जाओ, कमी तो पुस्तक समाप्त हो ही जायगी।’ पर मैं तो नीरद पर व्यर्थ नहीं कर रहा।”

राजाल ने गम्भीर होकर कहा, “दूरतों पर टीका-टिप्पणी करना उचित है। धनसिंह यह देखे कि वह स्वयं क्या कर रहा है।”

ब्रह्मल हँसकर बोला, “ठीक है, काका। नार्मन साहब भी नहीं करते हैं।”

नार्मन साहब का माम मुनकर राजाल मुस्कराया। उसे खौद-झुकी का जगल याद आ गया। बोला, “हाथियों का संग छोड़कर मैं ने अच्छा नहीं किया। मैं सोचता हूँ, नार्मन साहब को भी अक्षरब हाथियों की याद उठती



होगी ।”

ब्रह्मपुत्र में नार्वे आ-आ रही थीं; आकाश पर मेघ छा रहे थे । एक नाव में एक की मटकियाँ रखी थीं । ब्रह्मपुत्र में बहते एक विशालकाय बृद्ध पर मजबूत रखे की फौंस फेंककर उस बृद्ध को काबू कर लिया गया । इस भाव से साठहूर एक स्थान पर बहुत बड़ा पैड़ा आ रहा था, जो अनेक गहों को जोड़कर बनाया गया था । एक और विशालकाय बृद्ध को बहते देखकर इस बड़े नावों ने फौंस लिया ।

“ये लोग टेक्स मरेंगे इस लकड़ी पर, जैसे सदा से होता आया है ।” अतुल ने गम्भीर होकर कहा, “पर यदि हमारा सत्साम्रह सफल रहा, तो बहती लकड़ी पर से टेक्स हट जायगा ।”

“पहले कमलिबा सापरी तो पहुँच जा ।” रालाल ने धीरे से कहा, “हमारा सत्साम्रह तो वहीं से शुरू होगा । कमलिबा सापरी के साथ गगन नावरिया की क्या जुड़ी हुई है । निस्तब्ध रात्रि में कमलिबा सापरी के पास तुम ने भी कभी सुना है गगन नावरिया का गान ? मैं ने तो सुना है ।”

“मैं ने भी सुना है ।” अतुल की मुल-मुला गम्भीर थी, “गगन मरा नहीं, अपने गान में आज भी जीवित है । गगन ने कमलिबा सापरी पर झेंपकी बनाई थी । वह ब्रह्मपुत्र से उरता नहीं था । लोगों ने लाल कहा, कमलिबा सापरी तो कई बार बनी और कई बार डूबी, तुम नहीं झेंपकी न बनाओ, नहीं तो डूब जाओगे वह न माना । वह उस का सत्साम्रह था । इस में वह सफल हुआ । वह मरकर भी नहीं मरा, काका ।”

“नीरव रात्रि में गगन का गान ब्रह्मपुत्र की लहरों पर फैला है, तो यही सिद्ध होता है । हमारे नार्मन साहब कहा करते थे—सच्चाई को कोई छली पर भी कभी न खड़ा है, सच्चाई कभी नहीं मरती ।”

नार्मन साहब का बलान करते-करते वह चुप हो गया । कुछ क्षणों को मौन के पश्चात् उस ने कहा, “हमिनी को देखकर ही बता देते थे नार्मन साहब कि उस के पेट में कितने महीने का बच्चा है ।”

“जैसे जान लेते थे ।”

“सहज-मुक्ति और लम्बे अनुभव से। तुम भी चाहो तो यह सब प्राप्त सकते हो।”

रत्नालाल का मन विमोह हो गया। एक अलगविध के समान निद्रा के बर्णन की कल्पना में धूम मये, जिन में शमै-शमै- उस ने हाथियों के सम्बन्ध ॥ गहरा अनुभव और ज्ञान प्राप्त किया था। उसे इस बात का दुःख था कि हाथियों से उस का संग कभी का छूट गया अब तो उस की पेशान हो चुकी थी। फेशन उस न छोड़ दी थी। उस ने फिरंगी का विरोध करना आवश्यक समझा। उसे यह भी याद था कि जब पहले पहल फिरंगी की पेशान होकरने के परचात् उस ने नामन साहब के घर के पत पर पत्र लिखवाकर इस पढ़ना की सुचना दी थी, तो लौट्यो बाक से ही नामन साहब का उत्तर आया था। वह पत्र पढ़वाने के लिए इइसन साहब के पास गया था। इइसन साहब ने बताया था कि इस पत्र में नामन साहब ने इइसन साहब को भी प्यार लिखा था। इइसन साहब ने बताया था कि नामन साहब ने यह बात पसन्द नहीं की कि उसने साल बॉइ-जूरी के जंगल में हाथियों की नौकरी करने के बाद रत्नालाल ने अपनी फेशन से हाथ धो लिये। इइसन साहब ने बहुत समझाया था, वह चाहे, तो अभी समय है; उस की फेशन फिर से बहाल करवाई जा सकती है। पर रत्नालाल को कोई कैसे ठसदी पट्टी पड़ा सकता था। उस ने यह सलाह मानने से साफ इन्कार कर दिया था। अब तक उस का यही विश्वास था, नामन साहब ने अबश्य उसे उस के इस शुभ मिश्रण पर बर्बाद दी होगी यह सिर्फ इइसन साहब की आशाकी थी, वह झूठ-भूट नामन साहब के कन्वे पर रखकर बन्दूक चलाता आइता था।

“नीरद मूर्तिबत् बैठा होगा अपनी पुस्तकें वाली अलमारी के सामने फुरसी डाले।” अशुभ ने रत्नालाल का ध्यान खींचा, “सच है, काका। नीरद की वह पोथी कभी समाप्त नहीं होगी। वह अब बैठा लिख रहा होगा। मैं सोचता हूँ, इतना लिखने से क्या होता है।”

“जैसे तुम धान उगाते हो, यह सिफता है। सिलसमा क्या धर्म का काम है।”

“अच्छा होता यदि वह भी इस सत्याग्रह में हमारे साथ रहता।”

“यह तो अपनी इच्छा की बात है, कोई ज़ोर-जबरदस्ती तो है नहीं।”

“ब्रह्मान्त मामूली में है।”

“उसका रास्ता बुरा है। अपना अपना रास्ता है। श्वराग्रो मत, अतुल। मैं अफ़ेला ही काफी हूँ। हमारे नार्मन साहब कहा करते थे—अफ़ेला आदमी इस हाथियों बितनी बुद्धि रखता है।”

अतुल इतकतापूबक मुत्कराया। जल के प्रवाह के विपरीत नाव चलाते हुए उसे काफी ज़ोर लगाना पड़ रहा था। बर्षा ऋतु के कारण ब्रह्मपुत्र अपने सामान्य तल से ऊँचा उठ गया था।

“हाँ, तो मैं क्या रहा था, तीस साल तक चाँद-झुकी के जंगल में, वहाँ मैं श्रीर नामन साहब साथ-साथ रहे, हाथी ही हमारे सब से बड़े मित्र रहे।”

“तुम्हें हाथिया पर इतना अधिक विश्वास था, काका! श्रीर अब हम पर विश्वास करने को मन नहीं। यह हाथी पुराण खोलकर क्यों बैठ गये! आज तो हम सत्याग्रह करने निकले हैं।”

राखाल सोचने लगा—शायद इस सत्याग्रह की सूचना तक किसी कुम्बर-काड़ा में नहीं निकलेगी। निकले तो नार्मन साहब भी अपने देश में बैठे-बैठे पढ़ सकें, दिर्घामुल में राखाल का क्या तीर-सरीका है; वहाँ बैठे-बैठे वे देख सकें, दिर्घामुल क्रान्ति की ओर बढ़ रहा है, जैसा कोई हाथी अपनी मजिल की ओर बड़े बेग से चलता है।

अब वे कमलिया खापी के किनारे पहुँच गये थे। बड़े धाराम से माव से उतरे और इसे किनारे से बाँधकर कुली घाँलों से ब्रह्मपुत्र का दरम देवने लगे। पिशाककाय और लपुकाय सभी प्रकार के बूढ़ बड़ से उलझकर अयाह जल-प्रवाह में बहते आ रहे थे। यह सब ब्रह्मपुत्र का ऊहरार था। जैसे ब्रह्मपुत्र बढ़ रहा हो—यह सब तुम्हारे लिए है, मेरे

मिष्ट पसने वालों ! यह मेरी मेंग है तुम्हारे लिए इस अनुकम्पा के लिए मैं धन्यवाद का एक मी शब्द नहीं चाहता ।

वे यह भी जानते थे कि बहते बूझ को चौंसते-मात्र से ही उनका सत्याग्रह चारम्भ नहीं हो जाता हमकी तो सभी को खुली हुरी थी । कानून की पकड़ तो वहाँ चारम्भ होती थी, जहाँ बोर पठते बूझ को चौंसतर पर ले आये और पर सामं से पहले सरकार को टेकत न बुझाये ।

शीघ्र ही वे नाम में बैठ गये । ऊपर से एक बूझ बरता आ रहा था । अतुल ने कापरी की चरती पर लकड़-लकड़ ही इस बसि लिपा था । अब वह बूझ नाम के माय-साय चला जा रहा था और अब उन के अधिकार में था ।

दिसॉगमुल के माय-चाट के थोड़े इधर ही उन्हें नीरद की नाम में बैठे जकड़ी लकड़ी चप्पू चलाता मिल गया ।

“तुम कैसे आये, नीरद बाबू ?” रास्ताल चिल्लाया ।

“बेचकर सेलानी चलाते ?” अतुल ने श्रृंग्य कहा, “सत्याग्रह का ध्यान तो तुम्हें आने से रहा ।”

“क्यों ? मैं क्या दिसॉगमुल में नहीं रहता ? मैं भी आप लोगों के साथ हूँ ।”

“खोबकर बात करना !” रास्ताल ने गम्भीर होकर कहा, “बाद करो उस बूझ की बात, जिस में तुम हमारे साथ थे । तब जेल में नहीं मेका था फिरंगी नै; अब वह नहीं चूकेगा । साधारण-सा हुमाना करके ही नहीं छोड़ेगा ।”

“हुमाना किया तो नहीं मरेंगे ?” नीरद की आँखें चमक उठीं ।

“सिली से पूछ आये हाँ ?” अतुल ने हँसते हँसते अपनी नाब नीरद की नाब के साथ मिका दी ।

दोनों नामें अब दिसॉगमुल की ओर आ रही थीं । अतुल ने संकेत किया, “सिली का भग नहीं है, तो माओ परिस उस पेड़ को ।”

नीरद बोला, “रस्ता तो वहीं साया ।”

“झोड़ो यह बल्लका, नीरद बाबू !” रास्तास ने सलाह दी, “तुम मत पड़ो दस सत्याग्रह में ।”

अतुल ने नीरद की माग में एक रस्ता पेंकते हुए कहा, “कैसे लगे रहे हो, काका ! हम नीरद को अपने साथ रखेंगे ।”

नीरद ने आगले ही दस ठस दूध को फेंस लिया और अब दोनों नावा के साथ-साथ एक-एक दूध भी खसता नखर आने लगा ।

अब वे नाव-भाट पर पहुँचे, तो साधन मीरी पहली से विरोध के लिए तैयार था उस के बाह और गोपीनाथ धारोना भी लड़ा था ।

“नीरद बाबू, आप भी बेल-बाबा करेंगे ?” साधन मीरी ने गँव नूदा के अन्दाज में कहा, ‘लिली से पूछ आये हो ! अब भी समय है, पूछ आओ चौइकर ।’

“कोई सत्याग्रह नहीं होगा !’ गोपीनाथ ने हँसकर कहा, “साधन, तुम तो मूर्ख हो ! दूध फेंस लाजा तो अपराध नहीं । सरकार टेक्स कमल करेगी । फिर वे दूध इन लोगों के हो जायेंगे ।”

“हम टेक्स नहीं देंगे ।” अतुल ने बड़ी हदता से कहा, “सरकार का इन दूधों पर हम कोई अधिकार नहीं सम्भलते ।”

“अतुल ठीक कह रहा है ।” रास्तास ने भी अपना स्वर जोड़ दिया ।

“तुम क्यों चुप हो, नीरद बाबू ?” गोपीनाथ ने पुनःकार, ‘टेक्स देने का इरादा हो, तो सरकार तुम्हें कुछ नहीं करेगी ।’

“मैं भी टेक्स नहीं दूँगा ।” नीरद ने हदतापूर्वक कहा ।

“तो आप तीनों मिरपतार हैं ।”

“हमें कोई आपत्ति नहीं !’ तीनों एक स्वर होकर बोले, “अब ब्रह्मपुत्र । अब दिसौगमुल ।”



एक-एक करके दिर्लिंगमुल के दिन बीतत गये । नीलमणि आकर बनसिंह की दुकान पर मूर्ति के समान बैठा पड़ा ।

बनसिंह समझाता, “यह तो ठीक है कि सिल्ली चीनों की सम्मान देने को बेघार थी, और यह भी ठीक है कि बुझाने से ही चीनों का निम्नारा हो सकता था । पर क्या यह दिर्लिंगमुल के बीरों को शोभा देता ?”

अनुल, रामलाल और नीरद को छ-छ मास की लड़ा हो चुकी थी । नीलमणि के लिए एक-एक घड़ी लम्बी हो रही थी । अनुल के बिना उसका संसार सूना हो गया था । उसका झुरझरा शरीर मानो और भी दुबला-पतला हो गया । आँखों की दृष्टि भी कमजोर होने लगी । उस के मुल पर उदैव विषाद की रेखाएँ गहरा आती ।

कन्याश भग्न बही करते, “देवकान्त न अनुल को भी खराब किया ।”

अमिराम कुहन कभी-कभी कुहर-कागज की बात झोंककर बनसिंह की दुकान पर दिर्लिंगमुल के बीरों का अभिनमन करने लगता । उस की आँखों में एक प्रकार का विजयी प्रकाश नजर आता ।

बनसिंह कहता, “मास्तर जी, मुना है देवकान्त का और मामुली में बहुत बग गया है ।”

“बढ़ेगा कैसे नहीं ?” अमिराम कुहन उत्तर देता, “ब्रह्मपुत्र की

प्रेरणा स्पर्ध नहीं जाती । ब्रह्मपुत्र की वाद से लड़ने वालों में अब कोई भीर कम होता है, वो वह ऐसा-वैसा भीर नहीं होता ।”

दिसौगमुल वाले अतुल की प्रशंसा करते नहीं सकते थे । दिसौगमुल में ब्रह्मपुत्र का तट-बन्ध अतुल के साहस और परिश्रम का प्रतीक था । ब्रह्मपुत्र का इतिहास तो लोगों को मालूम नहीं था । इस तट-बन्ध का तो इतिहास था, अतुल ने ही इस के लिए सब से पहले आघात उठाई थी । ब्रह्मपुत्र के किनारे हवालोरी करता अमिराम फूकन तट-बन्ध की ओर देखा और सोचता—काश, मैं न इस बंध को बनते हुए देखा होता ! जिस समय वह तट-बंध बनाया गया, अमिराम फूकन किसी वृक्षी जगह पड़ाता था । गाँव के एक प्रतिष्ठित मठ पुख के समान वह मन-ही-मन करता—शाबाश अतुल ! तुम्हारा नाम तो इस तट-बन्ध के साथ सदा के लिए जुड़ गया । ब्रह्मपुत्र के विस्तृत प्रवाह के समान है तुम्हारा जीवन । अरे तुम तो यह मुनकर भी अडोल रहे कि सूततारा के मरा हुआ बच्चा जन्मा है । अरे शाबाश अतुल, तुम ने केवल इसी बात से संतोष नहीं किया कि इस तट-बन्ध पर तुम्हारा नाम अक्षर्य अक्षरों में लिखा हुआ है । अब से वह बंध बाँधा गया, ब्रह्मपुत्र में गाँव पर बदौर् नहीं थी । अब तो ऐसा लगता है, मानो ब्रह्मपुत्र ने दिसौगमुल का प्रहरी बनना स्वीकार कर लिया है ।

गाँव के साधारण नर-नारी अपना स्वाभाविक जीवन बिता रहे थे । इस पठार में धान की कमी न थी, मूँस की कमी न थी बाद के कारण बहुत-सी मूँस किसी सीमा तक परती का रूप धारण करती चली गई थी, पर इस से कोई विशेष अन्तर नहीं पड़ता था; यहाँ का विस्तृत पठार प्रचुर मात्रा में, और वह भी थोड़े से परिश्रम से ही, जाल छपकाता था । जैसे तो हल चलाए बिना कोई उपाय न था पर बरतुत यहाँ का पठार इतना ठहरा था कि यदि जैसे ही बीज पेंक जाओ, और फिर जाकर देखो भी नहीं कि बीज का क्या बगा, तो पसल के बिनो में जाकर पतल काट दो । जैसे रोपा वाला धान तो रोपने वालों का भ्रम मँगता था । उन के

भ्रम के बहने परती उन्हें सुनहरी छत्रल से मातामाल कर देती ।

ब्रह्मपुत्र में बहकर आते बूखों को करमुक्त कराने के सत्याग्रह का कोर विशेष महत्त्व है, यह बात बहूतों की समझ से परे थी । अतुल, रामलाल और नीरद का जेल जाना दुःखद विषय था, पर बहूतों का फी बिचार था कि सरकार अपना अधिकार नहीं छोड़ सकती ।

कोर कहता, "अरे बाबा, सरकार से टक्कर लेना तो ऐसा है जैसे एक छोटी-सी नाव बाढ़ के पानी से होकर लेना चाहे ।" दूसरा कहता, "तुम नहीं से सकते हो, तो उन को तो न रोको जो होक से सकते हैं ।"

बहूतों का बिचार था कि जैसे ब्रह्मपुत्र द्रुतगामी है, वैसे ही सरकार का कानून भी द्रुतगामी है । लकड़ों की लहरों में उन के कान में पड़ती रहती थी । यह भी सुनने में आया था कि नेता जी सुभाषचन्द्र बोस आपान जा पहुँचे । जर्मनी का नया शिष्य था आपान । जर्मनी का शिष्य तो बैसे इटली में था, पर आपान बहुत कोर मार रहा था । बनसिंह की दुकान पर ड्राइ बेटी का रेडियो सेट इन्हीं दिनों आया था । बैसे तो रेडियो की लहरों में बिडलर की बहुत बुराई की जाती थी, पर मासूम होता था, रिटलर को रोकने वाला अभी तक पैदा नहीं हुआ । कोर कहता, "तुम्हारी होगा बिडलर ।" कोर कहता, "बता, फिरंगी पड़े । अब बोल अपने इस बापू के सामने ।" कोर कहता, "फिरंगी का दावा था यह अजेय है । आया था हमारी सहायता को, हमारा घर-घर संभाल बैठे, हमें ठगलू बनाकर ।" कोर कहता, "बिड का आरम्भ है, ठग का अन्त भी अब नहीं टिक सकता फिरंगी ।"

फिस्ती-न-फिस्ती तरह लोग अतुल, रामलाल और नीरद के सत्याग्रह का महत्त्व समझने का सस्य करत । वे सोचने लगे कि फिरंगी का अन्त आवश्यकताभी है ।

नीलमणि बराबर दिन गिनता रहता । यह और लोगों के समान यह नहीं सोचता था कि कुछ ही दिनों में रिटलर अपने पैर दिम्बुन्दान तक पसार लेगा, और शिवशायर जेल के दरवाजे लोखकर कैदियों को



मुक्त करने का प्रयत्न भी उसी को मिलेगा। दिसाँगमुख में मुक्त-सुविधा भी तो कमी न थी, पर धर में अतुल्य की कमी नीलमणि को सब से अधिक आवश्यक थी।

वैसे ही ठपा के रंग फैलते वैसे ही खूब उगाता वैसे ही खूब डूबता वैसे ही कर्म और विवाह के दिन आते वैसे ही नाचें चलतीं वैसे ही मनुष्य मनुषियों पकड़ते। दिसाँगमुख की शोभा में तो कोई अन्तर नहीं आया था। वैसे ही बनसिंह की प्यास बिकटती वैसे ही राज नाथि की दुकान पर लोगों के बाल बनाये जाते, 'शेव' की जाती। मीरी, अरमिया और नेपाली का मगका वैसे-का-वैसा बना हुआ था।

साधन के बिना यह काम आ गया था कि वह लोगों को हिटलर के पक्ष में होने से रोके। वह कहता फिरता था, "हिटलर क पैर धमी दूर हैं फिरंगी उसे बाल कपका दिखाकर रहेगा। नये मित्र से पुराना मित्र साल दबे अच्छा होता है। हिटलर का सर्वनाश! फिरंगी की बच!"

लोग हँसने लगते। कोई कहता, "यह बसालो साधन, फिरंगी को मीद मी जाती है वा नहीं?" कोई कहता, "अपने पाप भूल गया फिरंगी! हमारे असम देश में आकर उस ने आरम्भ में किस तरह राब वंश के लोगों को समाप्त किया, किस तरह निरपराधियों को खूनी कर लटकाया था मणिपुर में। वह अब मूख गया फिरंगी!" कोई कहता, "फिरंगी की व्यवस्था समाप्त होगी, ब्रह्मपुत्र इसी तरह बहेगा।" इस पर सब हँस पड़ते, और साधन अयमा-सा मुँह लेकर रह जाता।

गोपीनाथ से कहकर साधन किस-किस का मुँह बन्द करा सकता था। कई बार वह उन्हें चेतावनी देता—फिरंगी से डरो। पर वे समझ चुके थे, फिरंगी को जाना पड़गा।

गोपीनाथ लोगों को जाने में बुलाकर समझाता, "अंग्रेज के राज्य में सूर्य कमी अस्त नहीं होता। हिटलर को मुँह की लामी पड़ेगी। आप लोग दिसाँगमुख की रक्षा के लिए तैयार रहें। ये युद्ध के दिन हैं। किसी भी क्षण हमारे ऊपर बम-बपा हो सकती है।"

बम बग की बात सब क लिए मर थी । आकाश पर इबार यहाँ  
 बैठा सब मयमीत हो जाते, जैसे वह टहने पर बम-बग करने  
 आता हो ।”

दय्याय धात की एक ही रर थी “बक दिक्कारी ! हरि नाम की  
 चादर छोड़ लो । उसी में मर्बनाश का अन्त है । मद्धसी-भास त्यागो,  
 शुद्ध, सादिक, बध्वाय मोटन ग्रहण करो । जीवन का उद्देश्य है त्याग,  
 विनाश नहीं ।”

लोगों का ममन में वह बात नहीं आती थी कि त्याग और विनाश  
 की शक्ति का कारण है दिव्यर का अन्त हुआ है ।

कनो की कहता, “एक घोर से हमें ब्रह्मपुत्र दया रहा है हमी घोर  
 से निर्दोष । हम फिर क्यों ? इधर या उधर ?

देवकान्त माझुनी में था पुलित उसे पड़क नहीं सही थी । अमुल,  
 राखाल और नीरव शिवसागर बल में थे शिदसागर के म्याद-धीन की  
 विज्जो-मुनदी बाँटे थी उन्हें ठम के नगा से नहीं हटा मरी थी । अन्त में  
 सब यही सोचने लाते—देवकान्त की सब मुक्त-भाव से दिक्कारी-मुक्त आने  
 का अवसर मिलेगा ! अमुल, राखाल और नीरव के लुम्बे म किन दिन  
 रह गये ?

देवकान्त की आगमन-तिथि को अग्रदिश्य का कोहरा टों रहा था  
 पर अमुल, राखाल और नीरव के लुम्बे आन का दिन समीर का  
 रहा था ।

जैसे मोर ध्वनित होती, बेने मण्णाह और अग्रराह मी कटता रहता;  
 जैसे ही रात के फटे शीत होते रहते । दिक्कारी-मुल में जीवन-वारा बैठी-  
 की-बैसी पलती रही । देवकान्त के बीच जैसे ही पाले का रहे थे । जैसे ही  
 कपड़े पर पड़ती और मृगा के आन मुने का रहे थे । बेने ही हाट-बाजार  
 सगला था जैसे ही बुर-बुर के धारों की मारें आकर दिक्कारी-मुल के बाट  
 पर लाती थी । जैसे ही मद्धसिनी पड़की और यैषी जाती थी ।  
 दिक्कारी-मुल होमा तो दिक्कारी-मुल म सीसा ही म था । यहाँ ब्रह्मपुत्र

भी त्पिर-अर्चन था; दिसौगमुख भी काल-नदी के समान प्रवहमान था ।

धीरे धीरे समय कटता गया । जूय, पल, घड़ियाँ, दिन, छप्ताई, मास । अब तो लगता था कि अतुल, राखाल और नीरद के स्वागत के लिए सभी अभीर हो उठे हैं ।

नीलमणि के मुख पर भी मुस्कान लौट आई थी । वनसिंह कड़ा, “अब तो चोहे-से हिम रह गये ।” नीलमणि उत्तर देता, “ये भी गमतीत हो जायेंगे ।”

दिसौगमुख का अतलस्थलों सौन्दर्य-बोध और पूजा-पर्व का इयोत्साह जैसे फिर से जौट रहा था । रात को निशुब्द आकाश-गंगा भी मानो उसी आनन्द-वेला की बन्दनवार बम आती, जिसे दिसौगमुख अपने वीरों के लिए आलीखीना के बाजार के सिरे पर लगाने का विचार कर रहा था । निस्तम्ब अन्धकार में बहता ब्रह्मपुत्र भी मानो पूछने लगता—कब छूट कर आयेंगे दिसौगमुख के वीर ।

अब तो माहूम होता था कि दिसौगमुख वाले इस बात पर सन्निहित हैं कि वे सब मिलकर सत्याग्रह में गन्मिस्तित क्यों नहीं हुए । सब को छ-छः मास की कमी कैद ही हो जाती न बस ! और तो कोई दरद न मिलता । जेल से बाहर आगले वर्ष वे फिर सत्याग्रह करते । फिरगी कब तक उन्हें पकड़ता चला जाता ? चलो इस बार सही । अतुल, राखाल और नीरद को आ जाने दो । हम उन्हें बचन देंगे, हम उनके साथ हैं । फिरगी हमें सूझी पर तो बदामे स रहा । वह सत्याग्रह हमें नये अधिकार देगा, हमारी पराधीनता को समाप्त करेगा । हम कहेंगे, हम में कोई दोष छुटि नहीं है, हम तुम्हारे नेतृत्व में काम करेंगे, अतुल !

लगता था दिसौगमुख को विश्वास हो गया, स्वाधीनता की ऐसी यथासम्भ यथास्थान प्रवेश करती है । बहुत पीछे से आ रहा था ब्रह्मपुत्र, बहुत आगे आ रहा था; अतीत में मविष्य की ओर आ रहा था बीचम का विरामहीन पथ । धिक्ता पथ कर गया, कितना रोप है, यह प्रश्न तो अनन्त काल से पूछा जा रहा था ।

विलुप्त कर महीनों में कई बार दिसांगमुख को भूकम्प के झटके लगे, पर भूकम्प से कुछ गिरा नहीं। यहाँ की भोंपड़ियों को बनाकर भूकम्प के झटकों के अनुरूप ही तो निर्मित की गई थी। भुव-भुग से दिसांगमुख में ये भोंपड़ियाँ यमती आती थीं, जो भूकम्प के बड़-स-बड़ झटके को भी खा लेती थीं।

एक दिन भूकम्प का सम्झन आधी रात के समय आया। जनार्दन की दुकान का बोर्ड गिर पड़ा। झीर फिंसी का कुछ नुकसान न हुआ।

मधेरे-मधेरे बह्मदास मगत में आकर कहा, “बोका अनुष्ठान कराओ। बड़ डिकड़ाही ! बड़ डिकड़ाही !”

नीलमणि भी आ निकला। वह बोला, “घरती का दिल बड़कता है तो भूकम्प होता है।”

“बड़ हेमो, बीम आ रहे हैं ! रत्न मारित एक हाथ की हथेली पर दूसरे हाथ का डँगली उल्टा ठेक करने के आम्दास में चलाने लगा।

सब की धौलें सन्क की तरफ उठ गईं। आग-आगे रामदास था, पीछे अतुल और नीरव बौह-म-बौह वाले।

सब मास मानो रात-बी-रात में कट गये।

# छियासठ



देखने में एकदम गुरु-शिष्य परम्परा का प्रतीक दानी मूँह और सिर के बाल कड़े हुए जैसे मामुली को ठसका यही रूप पसन्द है। सिर पर गमछा डाले रहता है।

कभी वह सोचता है, सारा दिसौगमुल एक साथ उठकर लफा हो जाय तो मैं मामुली छोड़कर दिसौग-मुल चला जाऊँ। पर अभी इस की कोई सम्भावना नहीं।

अनुल, राखाल और जीरद के सत्साग्रह का समाचार उमन पर मिल गया था। मिस्र दिन वे जेल से छूटकर दिसौगमुल पहुँचे, वह समाचार भी अपने विशेष साधनों द्वारा उसे मिल गया।

इस प्रकार तो स्वतन्त्रता आते ही सात सग जायेंगे।—वह मन-ही-मन कहता है, ये लोग कान्ति का 'क क' भी नहीं जानते।

इस बीच वह एक बार परशुराम कुयड की यात्रा कर आया है। अभी तक पुलिस ठठ पर हाथ नहीं डाल सकी। इस पर स्वयं उसे भी आश्चर्य होता है।

मामुली बाले मरते मर जायेंगे, पर मुझे कभी मूसकर भी पुलिस के हवासे नहीं करेंगे।—उस ने मन-ही-मन कहा, मामुली बाग उठी। मामुली का पास अब ठसटा नहीं पक सकता। जैसे 'गुरु जी' सम्बोधन सुनते-सुनते कान पक गये। फिर भी शिष्यों का कमाल इसे ही करते हैं कि सिकारी गोंध से सरकार को घाना ठठा लेना पका। अन्य हो, मामुली।

तेरी धरती पर फिरंगी के पैर कम ही पड़ते हैं। घर बप से छोड़ कमिशनर  
भी दौरे पर नहीं आया।

सावित्रिदासी में भी मामुली पीछे नहीं। कितना चाहो वृष रियो  
कितना चाहो मक्कन खाओ। वे स्वयं मृग हैं, जो मामुली को मूत्रों की  
भूमि भरते हैं। मामुली को भी मुहुदि आयेगी, इस की आशा बहुत कम  
लोगों को थी। शिक्षारी यदि मैं पाना बनाने दिया जाता तो फिरंगी  
में मामुली में पात्र पर पाना बना दिया होता। गुरु तो निमित्त  
मात्र है, कार्य तो शिष्यों को करना पड़ता है। पस तेरे की ' सात लमुद्र  
तेरह नदियाँ पार करके तू यहाँ क्यों बला आया—यहाँ हमारे असम देश  
में ? मामुली मानो मन-ही-मन करती है—कम-से-कम मुझे तो धरने पैरों  
के छत्र मत छोड़ो। मैं तो ब्रह्मपुत्र के जल से सम्प्री, धादर-यन से मैं मे  
बाधनता की मावना को प्रभय दिया।

देवकान्त को लगता, मानो स्वयं मामुली कर रही हैं—गुरु जी,  
बाधनता के अनुष्ठान में और क्या चाहिए ? धाम तो नारियल की  
पर और गुरु का उद्देश्य साहज गाय का एक सर वृष भी पीना होगा।  
उत्ते लाता, मानो मामुली एक नारी है—बड़ी-बड़ी धाँतों, माथ

पर बन्दन का नहीं, भद्रा और आस्था का तिलक बड़ी-बड़ी धाँतों में  
ब्रह्मपुत्र की मूक माया। मानो मामुली की बड़ी-बड़ी धाँतों आम्बय स  
और बड़ी हो जाती हैं, और उस आम्ब से लैकड़ों-दसाओं वर पूज का  
बह पुण्य दिवस स्मरण हो आता है, जब ब्रह्मपुत्र की विशाल भद्रा  
स उस का जन्म हुआ। जैस मुह में धाँतल दबाकर हँसती है  
कोर बड़ी-बड़ी धाँतों वाली मायी, ठीक बैस ही तो हँसती है मामुली।

कोर यह न पूछ मामुली से, उस की आयु क्या है। बननी आयु तो  
उसे स्वयं भी ज्ञात नहीं। कभी-कभी तो लगता है, मानो मामुली कभी  
पौवनाबिबदा है एक नव-विवाहिता बधू, सिर पर भूँचट फलीझटी हुए  
बधू। मानो उस की शिक्षापत्र यही हो, रात को मन्दिर बहुत काटते हैं  
मन्दिरदानी के बिना तो गुमारा नहीं। मुल-कमल प्रसन्नता से खिलता

ब्रह्मपुत्र।

हुआ। कभी लगता है, मानो मामुली स्वप्न-सी छाड़ी कुछ सोच रही है कभी लगता है, कभी लिललिलाकर हँस पड़ेगी। कभी लगता है, मामुली बिराट शून्य में देखती हुई किसी घरन का उधर झूँक रही है; आँखों में काजल-रेखा, झूठे में रमनीयता के फूल। महापुरुष से मामुली का जन्म हुआ, विराट जलधारा से जन्म हुआ, इसलिए उसकी निष्ठा अस्थिर नहीं। अविचल माध से वह किस बात का अध्यान कर रही है ? 'वह सोचकर 'गुरु जी' विभोर हो जाते हैं।

पर सच पूछो तो 'गुरु जी' का मन जब मामुली से टूटा हो गया है। मामुली कदाचित् इस बात का रहस्य जाना चाहती है कि 'गुरु जी' का मन टूटा क्यों हो गया। मामुली इस बात को लेकर हँस भी सकती है। उस की हँसी से तो विग्नान्त गूँघ उठते हैं। बिहल इष्टि से मामुली 'गुरु जी' की ओर देखती है—मन टूटा क्यों हो गया ? जलपान का कष्ट है, न मोहन का फिर मन टूटा क्यों हो गया ? 'वही सोचकर तो 'गुरु जी' स्तब्ध उठते हैं—क्या मैं यहाँ केवल जलपान अपना मोहन के कालच से आया ?

किसी ठाल पर भूम रही है मामुली। यह ठाल तो बहुत पुराना है। कितनी गहरी है उस की कुदृष्ट-मरी इष्टि, निराश्रु-सी आँखें, मानो अभी अभी नींद से जाग उठी हो। मामुली तो कई बार सोई, कई बार आती। इस से पहले भी इसे जगाने के लिए कई 'गुरु जी' आये।

बाँसुरी बजती है तो गीत जन्म लेता है, यह जानती है मामुली यह भी जानती है कि जूबना ही हो तो मन्दे नासे की अपेक्षा ब्रह्मपुत्र में क्यों न डूबा जाय। मामुली वह भी समझ गई है कि समय से पहले तो आदमी मर ही नहीं सकता।

किन के भाग्य में डूबकर मरना सिखा है, वह बलकर रात क्यों होने लगा ? ब्रह्मपुत्र के किनारे रहने वालों को मकलिया की क्या कमी ? ब्रह्मपुत्र पर नाव चलाते समय ब्रह्मपुत्र का पाणी ही तो पीने को मिलेगा। अपने अपने अनुभव से मामुली वह भी समझ गई है, जपू से नहीं,

नाब तो मस्तिष्क से जलती है ।

ब्रह्मपुत्र में गिरकर ही सब नदियों की मुक्ति है, पर मामुली ज्ञान सत्ये ज्ञानमय से जान गई है, आदमी की मुक्ति ब्रह्मपुत्र में डूबने पर नहीं है । आदमी की मुक्ति तो ब्रह्मपुत्र के विशाल बड़ स्थल पर तैरने में है ।

उक्त के बिम शाय से धरती को दबाने का देवताओं ने यत्न किया था, आदमी ने उसे बरदान में बदलने का हठ-सकल्य कर लिया है । मामुली यह जान गई है ।

लाख 'गुरु जी' का मन उधाड़ हो, मामुली के हृदय में जो आग पड़ चुकी है, यह तो अब निद्रा में बदलने से रही । मामुली की चेतना कभी अक्षय्य नहीं हो सकती । बौन-सा शुभ मुहूर्त रहा होगा अब सबप्रयत्न मामुली की अक्षय्य देह में चेतना का संचार हुआ ? 'गुरु जी' के मन में यह प्रश्न बार-बार उठता है ।

आजू, प्रभाव और मुकुम हृदय में मामुली में रहते हैं, वे 'गुरु जी' के पद शिष्य हैं, पुलिस से बचने के लिए उग्राने भी और और नाम रख लिये हैं । गुरु शिष्य की परम्परा भी बन्म है । गुरु जी, प्रखाम ! प्रत्येक शिष्य के छोटी पर यह बोल फिर उठता है । माँ-बाप, माह-बहन, पति पानी, सास-बहू—ये सब छो जीवन के रास्ते-बाट हैं । मामुली सब जानती है । गुरु-शिष्य परम्परा को भी इन्हीं में से एक बाट सम्मिलित । गगन पर कलहों की दंष्ट्रि फैलकर मानो मामुली भी अपने पक्ष पसारने लगती है । 'गुरु जी' सब समझते हैं । मामुली तक भी सकती है, मामुली में बड़ी शक्ति है—यह बात वह प्रत्येक शिष्य से कहते रहते हैं ! सबप्रयत्न अब मामुली का नामवरण हुआ था ! बौंस की बंतिपि से मिलता है मामुली का स्वर । मामुली की अपनी परम्परा है; इस परम्परा का एक अंग-मात्र है राजनीति, अब कुछ तो नहीं । अब यहाँ 'गुरु जी' भूल कर आते हैं कदाचित् । इसीलिए उनके मन यहाँ से उधाड़ हो जाता है । मामुली के गान में राजनीति का एकाकी स्वर ही कैसे रवाना पा सकता है ? गान कभी एक ही स्वर से नहीं बनता गान के तो कई रास्ते-बाट



होते हैं ।

जैसे हमी पर धौंगुली से थाप देते हुए गाता है मायक, ऐसे ही गाती है मामुली । गाते-गाते वह कई युग पार कर आई ।

“मामुली का भविष्य उम्भल है, गुद बी ।”

“वह कहना अभी कठिन है ।”

“वह संशय क्यों, गुद बी ।”

“मामुली के कान कुछ-कुछ बुरी ओर लगे हैं ।”

सगता है, मामुली हँस पकी, मानो वह रही हो, मेरा ध्यान तो दुम्हारी ओर भी है, गुद बी । मामुली मानो कहती है—ब्रह्मपुत्र का जल हाथ में लेकर ही मैं बठा सकती हूँ, कितने मछड़े की गति से जल बह रहा है ।

मामुली अपना परम कर्तव्य जानती है । मामुली कृतसंकल्प है । जैसे चाँदी का सम्रा हाथ में बांधवा कमीन पर बजाकर हठकी ठंकार से लरे-लोटे की पहचान की जाती है, ऐसे ही मामुली भी अपने संकल्प की परीक्षा कर चुकी है । ‘गुद बी’ की आवाज़ भी उस ने पही सक्य रखकर सुनी उस में नई स्फूर्ति आई, पर जीवन के अग्य सभी कर्तव्य भुलाकर ‘गुद बी’ के एकाकी स्वर पर ही सारा ध्यान केन्द्रित कर दिया जाय, वह तो कठिन है ।

“गुद बी, आप सिमन-से क्यों हैं आनकल ।”

देवकान्त के मन पर अतुल, नीरव और राखाल के कार्य की याप पड़ रही है । वह सहसा बोल उठता है, “बसो अतुल ने कुछ कार्य तो किया; पर इस प्रकार तो स्वतन्त्रता आने में सी साल लग जायेंगे ।”

## सरसठ



इस कुछ दिनों से गौनाथ दमोदा मी बनसिंह की दुकान पर आ बैठता है, और वर्यों मन्तर करता रहता है।

उस से पहले दिवंगमनुख स्तूल के अग्रिम फूजन न हो यह बात सुन्ना, गौनाथ अब पहले जैसा जी-बुझ नहीं रहा। उन्मत्त न इस

का समर्पण दिया।

अनुल बोला, “बड़ शिकड़ाई।”

“तुम मी बूनों के सनात बालने लये, अनुल।” बनसिंह ने व्यंग्य कहा। फिर वह गम्भीर होकर बोला, “बातावरण आदमी को बदल सकता है।”

अमिराम फूजन के समय में लहर-झाड़ था, जिस में मोटे अक्षरों में बम्बर की लहर छनी थी। “सवा लाख की लहर है।” उस ने आँसु नचाकर झोर बनसिंह की बेंच पर धौलियाँ बजाकर कहा, “न गौनाथ के सामने मत कह देना यह बात। जैसे उस्तरी कैसी नहीं बन सकता, वै कहता हूँ, कोई जी-बुझ कभी देशमन्त्र नहीं बन सकता।”

“सवा लाख की तो यह बात है।” अनुल ने शान बधारा, “बम्बर की लहर तो यहाँ तक पहुँचते-पहुँचते कुछ कमजोर पड़ सकती है, जैसे दूर पहुँचने पर लहर की गति धीमी होती जाती है।”

“न इस लहर में यहाँ पहुँचकर बेग आना चाहिए।” अमिराम फूजन

ने लखर-कागज पर मंतर जमाते हुए कहा, "ताका रतगुस्से से कभी मुँह कड़वा हुआ है ?"

प्रसंग था 'भारत छोड़ो' प्रस्ताव, जो कांग्रेस कार्यकारिणी ने बम्बई की एक सभा में पास कर दिया था। अब लखर-कागज में तो यह भी लिखा था, गांधीजी समेत बड़े-बड़े मता पकड़ लिये गये।

अभी ये बातें हो ही रही थी कि गोपीनाथ बारोगा दूर से आते दिखाई दिये। वे लोग सहम गये। बनसिंह ने कहा, "अब ऐसी-वैसी बात मुँह से न निकालें।"

"बैठिये, बारोगा जी!" बटुल ने बड़े प्रेम से कहा और उसने अन्त मीटर से निकालकर एक कुर्सी ला रखी।

"क्या समाचार है ?" गोपीनाथ ने मुस्कराया।

"अमिराम फुलन ने लखर-कागज गोपीनाथ की ओर बढ़ाते हुए कहा, "पढ़ लीजिए।"

गोपीनाथ ने लखर-कागज ले लिया, इस की मोटी मुर्ती पर एक सचयी सी नज़र डाली, और ठलकी-ठलकी-सी आवाज़ में कहा, "देश का क्या बनेगा ?"

सब खुर हो गये एक-दूसरे का मुँह देखने लगे। अब गोपीनाथ को सभी विशेष सम्येह की दृष्टि से देख रहे थे। फुटकर बातों का समय नहीं, यह सभी जानते थे। गोपीनाथ के एकएक आ जाने से सभी को एक विचित्र-सा संकोच अनुभव हुआ। अन्य दिनों की तरह कोई भी मुँह में आद बात कहने की चेष्टा नहीं कर रहा था, जैसे सभी को छन्द-मय का मय हो।

गोपीनाथ को यह समझत देर न लगी। उस का विचार था, निकले कुछ दिनों के मेल मिश्राप से लोग उसे जी-दुजुद समझने का बल छोड़ते जा रहे हैं, पर उस का विचार गलत निकला। वह ठठकर जाने को तैयार हुआ तो राणाजी ने हाथ पकड़कर कहा, "बैठो, बारोगा जी ! हम से क्या नाराज़गी ?"

गोपीनाथ जाने की हिद करता रहा। उस न मौन लिया था, आन सच-कुछ पहले की तरह नहीं चल रहा। आश्चर्य। उस ने मन-ही-मन कहा और हाथ छुड़ाने लगा।

अब तो बनसिंह को भी कहना पड़ा, “दारोगा जी, बैठिये। चाय आ रही है। जाना ही हो, तो चाय पीकर जाइयें।”

“मैं आन लोगों की आजादी में रोका नहीं बनूंगा।” गोपीनाथ बोला, “मैं जाऊंगा।”

अब तो अमिराम फूकन को भी ठन्कर गोपीनाथ को रोक्ना पड़ा। दूरी तरह से अनुस न उसका हाथ पकड़कर कहा, “बेटो जी, दारोगा जी। मैं यह मानकर चलता हूँ कि अब सच-कुछ बदल रहा है, आन भी बरल सकते हैं।”

“आश्चर्य।” गोपीनाथ ने मन की बात मुँह पर लाते हुए कहा।

“बेटो, दारोगा जी।” बनसिंह बोला, “मेरी चाय में तो कोई रोग नहीं। आन फिर भी हमारे दारोगा हैं।”

गोपीनाथ बैठ गया। अनेकावृत्त स्वरूप मस्तिष्क से सोचने पर उसे लगा, यदि मन में ठन्कर चले जाने का विचार ही लामा था, तो फिर यहाँ आया ही क्यों था; ये सब तो अपने बन्धु-बान्धव हैं। बात समुद्र और तरह नदियाँ पार से आने वाला फिरंगी तो बन्धु-बान्धव होने से रहा।

“ब्रह्मपुत्र में बहकर आती लकड़ी को पर जाने पर रैक्त नहीं लगना चाहिए।” गोपीनाथ ने कहा, “अब मेरी भी यही राय है।”

सब आश्चर्य से गोपीनाथ को ओर देखने लगे।

## अदसठ



माथ में एक ही सवारी थी। भारती ने तेजी से खप्पू चलाते हुए कहा, “बसो, किसी तरह मामुली में आपका काम तो समाप्त हुआ, गुद जी।”

“यही समझ लो।”

भारती को लगा, ‘गुद जी’ सम्बोधन में बड़ा बे-मेल है। मन को शान्त करने के लिए उस ने जेब से गुद का तिलकुट निकाला और एक ठुकका बढाते हुए कहा, “सैगे, गुद जी।”

“तुम जाओ। अपनी इच्छा नहीं इस समय।”

इस ठहर में भी भारती को कोई अपनत्व न लगा, जैसा वह देवकान्त, जो उस का अपना था, जो उस के सपनों का राजा था, कोई और था, और वह ‘गुद जी’ कोई और। पहली बात तो यह थी, ‘गुद जी’ का सम्बोधन करते हैं भारती को लगा, जो प्राप्त था वह भी अमर हो गया, हाथ से निकल गया। जैसे हाथ में आई बैली का मुँह बन्द हो और इसे खोलने की आशा न हो। वह अममनी-सी खप्पू चलाती रही।

‘गुद जी’ कुछ सोचने लगते हैं। स्थिति को समझना चाहते हैं। इतने दिन मामुली में रहे ‘गुद जी’ बनकर, अब दिर्राँगमुख का रहे हैं। स्वयं भारती सेने आई। कोई और भी आ सकता था, पर दिर्राँगमुख वालों में स्नेह की जाब रली। स्नेह बड़ी वस्तु है। खोल पीठकर स्नेह नहीं किया जाता। भारती मेरे मीन को अस्नेह की लंका दे सकती

है। वह मते ही यह सोचे। करने सामन तो अभी दूसरा काम है।  
 रितागमुन तो पहुँचें, वहाँ की स्थिति को समझें। देर क्या होता  
 है।

वह आरती की ओर देखने लगा। आरती के हाथ खण्डू पला रहे  
 थे उस की आँखें गगन पर टिकी थी, मानो वह उस विशाल पट पर किसी  
 देवकान्त की मुल-दृष्टि निहार रही है।

“तो यह सच है, गोपीनाथ हमारी तरफ आ गया ?”

“तब सोसह आने सच है।”

ब्रह्मपुत्र की लहरें भी मानो खण्डू से टकराकर यही कह उठीं—  
 तब सोसह आने सच है।

“अबुल कैसा है ?”

“अच्छा है।”

“रास्ताल काका ?”

“काका भी अच्छे हैं।”

“वमानन्दी काका ?”

“अच्छे हैं।”

“अच्छे ?” की रक आरती को बहुत अच्छी न लगी। सब की बात  
 पूछ रहे हैं ‘गुरु जी’। मैं सामने बैठी खण्डू पला रही हूँ। मेरी बात क्यों  
 नहीं पूछते मुझ से ? उसे लगा, ‘गुरु जी’ का काम तो कभी समाप्त ही  
 नहीं होगा, कभी मामुली का काम, कभी रितागमुन का; मेरे साथ बात  
 करने का तो उन्हें अवकाश ही नहीं मिलेगा। यही सोचकर उस ने तिर  
 को एक मटका दिया और बे-मन से खण्डू पलाने लगी। मैं न जानती  
 थी, ‘गुरु जी’ का रंग-रौंग ही बदल गया। सब नीरस लगता है। देश  
 सेवा की बात करते हैं आदमी पाहे प्यासी जमीन की तरह सूखा ही  
 अनुभव करता रहे। ‘गुरु जी’ के सामने तो बड़े-बड़े काम हैं मुझ से  
 यह क्यों बात करने लगे ?

चौदनी रात। ब्रह्मपुत्र में नाव-यात्रा। गगन पर मेघ छा रहे हैं। कभी

बाँव बाहर निकल आता है, कभी मेघ उसे घोंप लेता है। बाँवनी हो चाहे गहन अन्धकार, क्या अन्तर पड़ता है ? आरती सोच रही है—मेरे सिम्रे एक काम सौंपा गया। मैं यह काम कर रही हूँ। 'गुरु जी' पर तो कोई अहसान नहीं। कृतकारा सब कबूती है, देव-सेवा करने वाले त्वेह को क्या जानें ?

“बनसिंह कैसा है ?”

“अच्छा है ।”

“रत्न !”

“अच्छा ।”

“नीरव ?”

“अच्छा है ।” कबूते-कबूते आरती को लगा, नीरव बाबू तो मर लोक हैं, उन के लिए तो ‘अच्छे हैं’ कहा ठचित होगा। फिर वह सोचने लगी। अब इस आदमी को ही लो। ‘गुरु जी’ बन गया। कैसे पूछूँ—कीम-तो मछली लाने में अच्छी लगती है। बरे में तो मछुने की बेटी हूँ। आदमी से अधिक मछली को ही जानती हूँ। हर मछली का रंग-रस और स्वभाव जानती हूँ। किस का कैसा स्वाद है, वह भी जानती हूँ। एक प्रकार से बेकूँ, तो मैं ने भूस भी, जो अब तक कुँवारी बेठी रही। ‘गुरु जी’ के मन में शावर मेरी कोई छवि ही न हो। होती छे मुझ से कुछ तो कबूते। पर पहले तो ऐसे नहीं वे ‘गुरु जी’।

आशा-आरांका, उद्देग-उत्कण्ठा में डूबती-तेरती वह चप्पू चलावे जा रही है। वह, कस को आमती है—कस, जो बीत गया या फिर आब, जो बीत रहा है। आगामी कस के बारे में उसे अधिक चिन्ता नहीं।

‘गुरु जी’ के सामने अपनी बात कैसे बतार्के ? मामुली का काम समाप्त हुआ, तो विसर्गमुख का काम आरम्भ हो जायगा। हर समय क्या काम की बात ही सोची जाती है ? सोचा जा, इस आदमी के साथ परिसी बनकर रहूँगी। पर इस का तो काम ही समाप्त होने में नहीं आता। मेरे साथ की पौंज-पौंज कच्ची की माटाएँ बम गरें, मैं ही पद

गई। वे मुझ पर हँसती हैं, मुझे निपट मूर्ख समझती हैं। मेरी मुविषा असुविषा की 'गुरु जी' को क्या चिन्ता ! सारा ब्रह्माण्ड क्यों न बदल जाय, उन्हें मेरी चिन्ता नहीं होगी। अधिक-से अधिक बस-बारह बप ठगर हो गये, या थोड़ा और भी बस रही न ! मैं तो आज भी किसी पोढ़री से कम नहीं हूँ उस जैसी निबुद्धि मझे ही नहीं रही। मला-बुरा परल सफ़ती हूँ थोड़ा सोचमा भी आ गया है। ब्रह्मपुत्र का रंग देखकर कह सकती हूँ, बाद कितनी बूरी पर आ रही है। मछलियाँ कित्त अगाह अधिक निलती है, कहाँ बास पकने से ठीक होगा—यही समझते-बूझते आसु बीत गई। फिर भी मैं कहती हूँ, 'गुरु जी' चाहें तो मैं अनुगामिनी बन जाऊँ—एकदम सही साबित्री, पर वह ऐसा चाहें, तब न।—

स्नेहातुर आरती कुछ कह भी तो नहीं सकती। अब वह पोढ़री ही है, अब तो मला-बुरा पहचानती है। क्या उचित है और क्या नुचित है, वह लूब समझती है। अन्त-शब्द कैसे बोल है अपने न की बात ! पुक्ति-ठक से तोलना होया संसार उपहास न करे, बही गम करना होगा। आरती का ऐसा-वैसा मन नहीं है। मन पर पूछ अधिकार है। सुरामद से कुछ मिला, तो सर्वनाश ! बड़ बिकझारी ! उस बर्य पूर्व तो वह 'बड़ बिकझारी !' उस क होंठों पर नहीं आया या।

थोड़ा समन बीत गया, थोड़ा और बीत जायगा। जैसे समय में एक बहुत बड़ा बाल है, जो किसी मछुवे ने मछलियाँ पकड़ने के लिए डाल रखा है। आरती को लगता है, वह भी एक मछुसी है। वह बाल उसे पकड़ कर रहेगा। बाल ब्रह्मपुत्र से बाहर निकलेगा, तो वह उस बाल में कैस खुकी होगी बचना सख्त नहीं।—वह फिर गेचने लयती है—कृष्ण-कान का उदय तो ठीक है, बुरा नहीं। थोड़ा ति गया, थोड़ा और बीत जायगा। क्या यह सब किसी नाटक का मुन्दर अथवा असुन्दर दृश्य मात्र है ! सब अमिनय है ! मामुसी का काम दिसौगमुत्र का काम और फिर शिवसामर, बिब्रूगद और पोढ़री का काम ! सब अमिनय है ! मैं ने तो सोचा था, स्नेह



ही मूलभूत है। स्नेह क्या पयास नहीं ? स्नेह क्या स्वतन्त्र-सम्पूज नहीं ? 'गुरु जी' मुझ से बात तो करें, स्नेह का स्वर छेड़ें तो सही, बाँस की बाँसुरी में निश्चय ही गान बनम होगा। 'गुरु जी' कुछ कहें तो सही, मैं उन के वचन को बेद-बानस समझूँगी। पर 'गुरु जी' पर तो कार्य का दबाव है हर समय कार्य, कार्य, कार्य। हमारी नाब ब्रह्मपुत्र में जा रही है। वह क्या कार्य नहीं ? ब्रह्मपुत्र किस की छाँदी दे रहा है ? ब्रह्मपुत्र क्या कार्य नहीं कर रहा ? तिमिर की मागसरोवर भील से निकलने पर तो बहुत झोटा-सा रहा होगा। इसे इतना बड़ा किस ने बताया ?—कार्य ने। वह क्या क्या अकेले ब्रह्मपुत्र ने किया ? रास्ते में कितनी ही नदियाँ ब्रह्मपुत्र में मिलती रहीं और ब्रह्मपुत्र विराज बनता गया। नदियों का मिलन क्या व्यर्थ है ? नारी और पुरुष के मिलन में क्या इसनी भी सार्वक्या नहीं ? 'गुरु जी' तो टस-से-मस नहीं होते।

“क्या सोच रही हो, आरती।”

“कुछ नहीं।”

‘कल जब अतुल ने मेरी समा में कहा, देवकाम्य को तो आरती ही ला सकती है, तो लाख के कारण मेरी पलकें मुक गई थीं। मैं क्या जानती थी, मेरे जिस प्रेम का तारे दिसांगमुख ने सम्मान दिया, और वह आधमी को मेरे प्रेम का आधार है, मेरी अचहेलना करेगा। वह विचार आते ही आरती ने गहरा निश्वास लिया; अस्सों ठपर ठठा ठठ ने ध्यान-मग्न देवकाम्य को देखा। फिर मन की बात मन की तरी में समेटकर वह झोर-झोर से खप्पू खसाने लगी।

रात आधी से छपर का चुकी थी, जब नाब दिसांगमुख घाट पर बाहर लगी।

# उनहत्तर



यह रात देवकान्त ने घमानन्दी की भोंगड़ी में ही बिताई। उग से पहले ही ठठकर माह पर बनी इस भोंगड़ी की भिक्की में बह दोनों कुरनियों देकर लड़ा हो गया।

बह ब्रह्मपुत्र का प्रवाह देखता रहा। कभी कभी पीढ़ मुड़कर बह बटार पर खोटी धारती

को देख लेता।

घमानन्दी ने सधे ही गम बाप बनाकर उसे दिना की की धीन स्वयं ब्रह्मपुत्र के किनारे बाल पीलाकर इसकी मरम्मत करने बैठ गया था।

बह घमानन्दी के पास जाकर लड़ा हो गया, और बोला, “बहुत पुराना हो गया तुम्हारा बाल, काका।”

“जपा बाल क्यों स लाऊंगा ?” घमानन्दी ने लौंछकर कहा, “मरम्मत करते-करते मेरे हाथ रह गये।”

निर बारत आकर देवकान्त खिड़की से ब्रह्मपुत्र का दरप देखते सोचने लगा—यह तुरुर दिग्गठ से आता है और घडावद की मील की यात्रा करके समुद्र तक पहुँचता है।

उसे दसक की आवाज सुनाई दी यह अश्व सेती बत्तन की आवाज थी। उस ने ऊपर जाकर देखा। बपा से बवाब के लिए बत्तन के ऊपर बकबे के समान फूट का हड़प्पर बाल दिया गया था।

बचल की आवाज सुनकर भारती भी जाग उठी। वह लपककर बचल के पास पड़ी गई। देवकान्त मुस्कराया। अचानक से एक धूँआ निकल आया था। भारती लजा गई। कोई और समय होता तो वह बचल के मुँह पर प्यार से हाथ फेरती और धूँआ को उठाकर छाती से लगा लेती।

नीने से बापू की आवाज आई, “हेलो कीन आये हैं।”

देवकान्त और भारती लपक कर नीने आ गये। राजाल, नीलमणि, अतुल, मीरब और बनसिंह—सभी बारी-बारी देवकान्त से गले लगाकर मिले।

“मैं अब गोपीनाथ से मिलने आऊँगा।” देवकान्त ने निश्चयपूर्वक कहा।

“तुम मत जाओ।” भारती ने अपना कतब पहचानते हुए छत्राई दी, “अतुल जाकर यह समाचार दे सकता है।”

“तुम डरती हो, कहीं गोपीनाथ उस पकड़ न ले।” अतुल हँस पड़ा, “हम ऐसा नहीं होने देंगे।”

इतने में दूर से गोपीनाथ भी इधर आता दिखाई दिया।

वह भी आकर देवकान्त से छिपट गया। देवकान्त हँसकर बोला, “अब मैं चाहो तो तुम्हें गिरफ्तार करके इनाम पा सकते हो।”

“तुम्हें नहीं चाहिए ऐसा इनाम।” गोपीनाथ ने गम्भीर होकर कहा, “तुम स्वयं मेरा इनाम हो।” वह कहते-कहते वह बक गया, और देवकान्त की ओर देखने लगा, फिर सँभलकर बोला, “तुम मेरे पर बलो।”

भारती डर रही थी, मामो गोपीनाथ आलाफी से देवकान्त को ले आकर गिरफ्तार करने की सोच रहा हो।

ब्रह्मपुत्र के किनारे समा का दृश्य नजर आने लगा। बहुत से नाबरिया, महुँवे और किताब देखते-देखते जमा हो गये। गोपीनाथ ने सब को समझाया, “नीति से काम लेना ठीक होगा। अभी यह हवा

बाहर नहीं निकलनी चाहिए कि देवकान्त दिलगिस्तान में है। बाकी मैं  
सँभाल दूँगा।”

“देखा ही होगा।” अगुल ने सब की ओर से कहा।

“अच्छा तो अब मैं बसता हूँ।” गोपीनाथ ने कहा, “भीखी का  
मामला है।”

देवकान्त की मौँ खरों बलकर बेटे से मिलान आईं। उन ने यह  
शिकायत न की कि वह रात को ही घर क्यों नहीं बसा आया था। इस  
समय भी उन ने यह आग्रह न किया कि वह घर चले। स्थिति ही ऐसी थी।  
उस ने तीन बार देवकान्त को गले लगाया। तीनों बार मौँ का प्यार  
आई बलकर डपक पड़ा।

लोग बड़ी घनिष्ठता से देवकान्त को देख रहे थे। इस मीढ़-मड़कड़े  
में आरती को लया, उस का देवकान्त उस से छिन गया।

एक-एक करके सब चले गये, और केवल अगुल ही खड़ा रह गया,  
छाछी हँसकर बोली, “ऊपर बसो मोंरकी में, तुम्हें नया जमा शिशु  
दिनायें।”

“किस का शिशु? केसा शिशु?” अगुल ईश पड़ा, “अच्छा बसो।  
देन्ते।”

ऊपर से आकर आरती ने बल्लू का खूबा उठाकर दिनाया। छोटी  
छोटी आईं, झोमक देह, बड़ा ही मुकुमार खूबा था।

चाय बनाकर आरती ने एक-एक मिलात देवकान्त और अगुल के  
सामने रख दिया। बोली, “मद्र लोक जैसी चाय पीत हैं, वैसी नहीं है,  
फिर भी ग्रहण करें।”

“अभय!” अगुल बोला, “ठठाओ चाय का मिलात, देवकान्त।  
लगाओ मुँह से, पाहे होंट जल आयें।”

दोनों के होंट जल गये। चाय बहुत गरम थी। आरती खामा पकाने  
बैठ गए।

“मैं तो मछली नहीं खाता।” अगुल ने गम्भीर होकर कहा, “हमारे

‘गुरु जी’ से भी पूछ लो। शायद वह भी वैष्णव जनों के समान ही निरामिय भोजन पसन्द करें।”

“मधुबे के घर में निरामिय भोजन।” आरती ईस पड़ी, “अच्छा बाबा ! ‘गुरु जी’ के आगमन की खुशी में आज हम सभी निरामिय भोजन करेंगे।”

भोजन के पश्चात् अतुल क्षीर देवकान्त सेतों की ओर चल दिये, जहाँ धान के सुनहले पौधे फटने की तैयार लगे थे।

“माटी बया के कारण फलस नहीं काटी जा सक्ती।” अतुल बोला, “नहीं तो अब तक तो कच्कर पर आ जाता है धान। अब यही सोच रहे हैं, जो पाँच-दस बार बया और होती है हो ले फिर थोड़ी भूप पक जाय तो फलस काटेंगे।”

देवकान्त अनमना-सा धान के सेतों की ओर देख रहा था।

“मैं तो किसान का बेटा हूँ।” अतुल कहता चला गया, “इस पत्तार की माटी कमी-कमी छोटे में भी मेरा पीछा करती है, पर तुम्हें शायद मेरी बात पर विश्वास नहीं होगा, देवकान्त।”

“कैसे नहीं होगा विश्वास ?”

“यही पठार हमारी जानबाब है। बसंत में धान हो, फिर कुछ नहीं चाहिए। गांव दूध बेती रहे। केले के पेड़ फलते रहें। ताम्बूल पान की भी कमी न रहे। फिर कुछ नहीं चाहिए।” कहते-कहते अतुल रुक गया और देवकान्त की ओर देखने लगा।

देवकान्त ने कुछ उत्तर न दिया।

“शेराब के बीड़े शेराब तैयार करते रहें हमारे लिए।” अतुल ने फिर कहना आरम्भ किया, “हमारे करघे चलते रहें एण्डी और मूगा के धान बुनती रहें हमारी कम्पारें। और क्या ? तुम्हीं बताओ और क्या ?”

“क्षीर क्या ?” देवकान्त ने स्वमित्त-सा होकर कहा, “तुम कहोगे, मधुसिधों फेंकती रहें। पर नहीं, हम फ़ैसला कर चुके हैं। वह मधुबा, जो सात समुद्र क्षीर छेहरा मदिर्गो पार करके ब्रह्मपुत्र में जास डालने

आया, उसे अब यहाँ से जाना होगा।”

दोनों मित्र एक-दूसरे को देखने लगे। मधुबे का प्रतीक आज सचमुच नये ही अर्थ में उद्घाटित गया था। वे धीरे धीरे खले जा रहे थे बहुत कुछ तोपों के रूप में, किसी एक दिशा पर झँगुली रखने के ठसुक।

“अब रिमरिम पानी बरसता है, तो धान के पीछे किस प्रकार लहलहाते लगते हैं।” अतुल कहता चला गया, “मेरी आयु तो धान उगाते पीछी मैं तो न राखाल काका की तरह हाथियों को जानता हूँ, न चमानन्दी काका की तरह मछलियों से ही मेरा अधिक परिचय हुआ। मैं तो इस पठार की माटी में जन्मा, जो सपनों में भी मेरा पीछा करती है। यह पठार कितना विशाल है। दूर, बहुत दूर, जहाँ गगनरेखा पठार से मिलती है, वहाँ तक चला गया है यह हमारा पठार। तुम्हारी ओर नीरव बाध की तरह मैं ने पदार्थ-सिन्धार्थ नहीं की। इस चलाता हूँ, बीज बोता हूँ, और फल काटता हूँ।” कहते-कहते बककर वह देवकान्त की ओर देखने लगा।

“फल का क्या कार्यक्रम है।” देवकान्त ने अतुल की भावावेशमयी माया को एकदम अनसुना कर दिया।

“यह तो तुम बताओगे। विचार करना होगा।” अतुल ने सहज भाव से कहा।

और वे जल्दी-जल्दी कदम उठाने लगे।

## सत्तर



गोपीनाथ धारोसा से एक मूल हुई। अच्छा होता कि साधन मीरी को बुलाकर समझ दिला होता। उसे अपनी ओर मिलाने की विशेष चेष्टा करने की गोपीनाथ ने कोई आवश्यकता न समझी।

साधन मीरी जब शिवसागर जाने लगा, तो उस के घर वालों ने उसे रोका, क्योंकि वे समझ गये

वे कि दास में कुछ कासा है। साधन ने घर से चलते हुए कहा, 'मुझे कोई सालची मले ही समझे, थोका-बहुत ठग भी हो सकता हूँ, बापों और चार सौ बीस भी हूँ किसी सीमा तक, पर मैं देशद्रोही बिलकुल नहीं हूँ।'

घर वालों ने समझा वह ठीक कहता होगा, और किसी दूसरे काम से शिवसागर जा रहा होगा।

इसके कुछ दिनों से शिवसागर से बिसांगमुक्त तक बस चलने लगी थी। वह बस में जा बैठा और सोचने लगा—बस चलने में अभी देर है, न जाने कब तक मरेगी पूरी बस। वह चाहता था कि उड़कर शिवसागर जा पहुँचे, और गोपीनाथ को मज्जा चखा दे। "यह तो देशद्रोह नहीं!" उस ने मन-ही-मन कहा, "ठीक समय पर बुद्धि से काम लेने को कोई देशद्रोह कहता है तो कहता रहे, मैं क्या करूँ?" फिर उसे ध्यान आया—जब मोटर चलेगी, तो धूल उड़ेगी ही; दोनों ओर की दुकानों पर बैठे दुकानदार धूल से बचने के लिए मुँह पर कमाल डालते हुए

मन ही-मन बस के झाँखर और कण्ठबदर तक वो मोटी-सी गासी दे डालेंगे। देखना तो यह है कि बस आराम देने वाली थीक है या नहीं।" इसी बीच पार-गोन सरारियाँ आ बैठी थीं।

इतने में अन्धे सुरदास ने आकर गाना शुरू किया

मुनोर देशोर मादि छोह मुनोर देशोर मादि

ए मादि ते पराने मोर ल्हाऊँ दिने राति।

सुरदास एकतारे पर गा रहा था। यह उसका प्रिय गान था। सहस्र बार गाया हुआ गान। उस के इस गान का बहुत मूल्य पड़ता रहा था। आज भी उसकी मुड़ी पैरों से मरने लगी।

छापन की जेब से पैसा निकलकर बाहर न आया, सुरदास की मुड़ी में जाना तो दूर रहा। उसे याद था कि पहले उसे भी यह गान अच्छा लगता था और सुरदास की मुड़ी में उसकी गॉन का पैसा भी कद बार चला गया था। आज उस ने सुरदास को घुणापूँक देखा—इस की और छोह माटी नहीं। इस के लिए यही मील मँगना रह गया है। अब देखो मील मँगता रहता है।

वह सोचने लगा—इस से अच्छा तो सुरदास का वह गान है जिस में कहा गया है—गलन पर राजहँसों का एक बोका उड़ गया। वह गान भी बुरा नहीं जिस में कहा गया है—ब्रह्मपुत्र के किनारे रेत पर कटुबी निल-पिनकर अरहे हे रही है। उस के भी में आया कि सुरदास से वह गान सुनाने को कहे, जिस में कोई प्रेमी भुग्घा प्रेयसी का हाथ छपने हाथ में लिमे हुए दिर्गम नदी के बीच से होता हुआ उस पार चला जाता है। "प्रेम का मशा जो भी करा जाले थोड़ा है।" उस ने मन ही-मन कहा, "पर इसी प्रकार वो प्रेमी हाथ-में-हाथ लिमे हुए ब्रह्मपुत्र के उस पार मामुसी में तो पहुँचने से रहे। मामुसी की यात्रा तो माब में ही हो सकती है। एकाएक उसे आरती का प्याम आया, जो अपनी माव

---

१ लोने की है रस देरा की मछी, लोने की रस देरा की मछी। रस मछी में जग रहत है मेरा बाल दिन-रात।



में ईशकान्त को धामुली से लेती आई थी। "मैं सबसे मझा बसालूँगा।" उस ने मन-ही-मन कहा।

अब सूरदास अपने एकतारे पर वृक्षों गान गा रहा था  
 देखोते लागिलो बुर्र ओ बान्धोई,  
 देखोते लागिलो बुर्र ।  
 रेल ना पावो लोई,  
 सोन ना लावो लोई,  
 कानि नाइ लवो लोई गात ।<sup>१</sup>

साधन ने देखा, सूरदास की मुझी पैरों से भर गई। उसकी अपनी देह से एक भी पैसा न निकला। इस गान में किरंगी राज को कोटा जा रहा था।

फिरी ने कहा, "सूरदास बाबा, बदन का गान सुनाओ न आब।"

और सूरदास नाच-नाचकर, और बीच-बीच में सिसकियाँ भरने तथा घबरा के पोकर में झुबने की मंमिमा का प्रदर्शन करते हुए एक सफल लोक-गायक के समान गाने लगा।

साधन अपनी सीट पर बैठे-बैठे उन दिनों की बात सोचने लगा, जब असम देश के एक कुपुत्र ने अपने देश के राजा से प्रतिशोध लेने के लिए बर्मियों को आमन्त्रित किया था। एक चलाचित्र के समान इतिहास का वह रक्त-रंजित पृष्ठ उस की कल्पना में ब्रूम गया। किस प्रकार बर्मों सेना आगे बढ़ी और पहले असम देश को अपने पैरों तले कुचला, किस प्रकार मिहलों को मौत के घाट उतारा और फिर किस प्रकार किरंगी की सेना का सामना करना पड़ा, बर्मी हार गये, और उन की हार के परचास असम देश भी किरंगी का गुलाम बनने पर विवश हुआ। उस के जी में तो आया कि अभी बर से नीचे उतर जाय, क्योंकि वह आज वृक्षों

१. देश में भय लग गई जो कपु, देश में भय लग गई। लड़ने को ठेक परी मिलता जाने को बमक बारी मिलता गान खीपने को बर नहीं मिलता।

बदन नहीं बनना चाहता था । पर अगले ही क्षण पान का पलका मारी होने लगा, और वह कुन्धाप बैठा रहा ।

सुदाम ने बदन का गान बाबारा आरम्भ किया

बदन तपि आमिली मान, ओ बदन तपि आनिली मान  
पने हेम अमपा आई रे कुकूत, सेसेर हागिली हान  
पुष्पादिर पिलि पेयोर पुष्पाति, गङ्ग थोइ आसिली लारा  
आधि रे कालिकि आचोरि हुष्पाली, ललात बोई पुरिली बुदा  
बरनइ रंगा बोई लओर लोट पुष्पाति, देश लल निपाति मान  
गङ्ग रे तेजे रे प्रतिमा पुष्पाति, पुष्पाति गोसाई रे धान  
जममे जनमे जगते शक्ति, पावि कुने काशे जान ।<sup>१</sup>

गान समाप्त हुआ, तो बस चल पड़ी । बस हुति गति से चली जा रही थी पूरी सवारियों शिबसागर की ही थीं ।

शिबसागर में बस से उतरकर मी साधन के जी में एक बार यह विचार आया, उसे हर्गिज दूसरा बदन नहीं बनना चाहिए पर पान की प्रेरणा पुष्प की प्रेरणा पर विजयी हुई, और वह पुलिस सुमिप्टेन्डेन्ट के बैम्पले की ओर चल पड़ा ।

---

१ बदन, तुम मे गर्म-कालित्री को आममित्र किया, ओ रे बदन तुम मे गर्म-वर्तियों को आममित्र किया । वेतो लिम्पमा के कलेजे मे तुम मे कटार लोच ही । कम्होने गर्म-वर्ती मारियों के बेट और बाले, रिगुओं की बलि दे दी । कुपतियों को बचपा लक्ष्मण पर, जमाक-बूक का कतर लक्ष्मण भीसे से आग मला दी । बरगई की जलपाट रण से लात हो पई देश मे बर्मियों को आममित्र किया । गल के रक्त से प्रतिम्याओं को पुष्पाति, कसी से देश-लक्ष्मों को पुष्पाति । जग जगान्तर तक देश तुम्हें जमिराव बैठा रहेक किम काल मे मित्रमा तुम्हें बदन ।

जरा सँभलकर वह सोचने लगा—शायद कुछ भी नहीं होगा। शायद वह स्पेशल आफसर ही जाकर समझा देगा, वैवकान्त के दिर्गममुख में होने की अप्रत्याश राशत है।

उसे याद आ रहा था नीरद ने अपनी पुस्तक में लिखा था : वहाँ अब हिमालय पर्वत खड़ा है, वहाँ आब से लाखों करोड़ों वर्ष पूर्व कभी अनन्त पारावार ठाँठें मारता था अभी उस समय तक आदमी नहीं जन्मा था। नीरद ने बड़े-बड़े वैज्ञानिकों के अनुमान सुनाते हुए वह बलव्य दिया था कि उस युग में उत्तर से जो पक्षिणी अँधी आठी थी उस के कारण वह असम्भव था कि किसी प्राणी का जन्म हो सके। कैलाश था वह अतीत, वह अज्ञात युग, जब मूक्य आवा और धरती की काना में आमूल परिवर्तन हो गये बल के स्थान पर बल ही गया, बल के स्थान पर बल और सभी प्रकृति के माया-बल ने कुछ ऐसा रूप मरा कि वहाँ की धरती ऊपर उठती चली गई और हिमालय को जन्म देकर ही रही। महाकवि कालिदास का उत्प्रेषण करते हुए नीरद ने लिखा था : दोनों ओर सागर में बुबोये हिमालय पृथ्वी नापने वाले मापदण्ड के सङ्ग्रहित हैं। इस के इली प्राचीन महिमामय रूप को लक्ष्य करके ही तो इसे देवायमा कहा गया था। गोपीनाथ ने सोचा, अब मझा तो यह है कि हम मनुष्य भी देवायमा बनें, और हो सके तो देश-यौम को मापने वाले मापदण्ड बनकर दिखानें। उस की कल्पना में नीरद द्वारा अंकित मानसरोवर का चित्र उभरा। कैलाश का रचित शिखर किस प्रकार मानसरोवर के नील और पीठ कमलों से घेरे दृश्य पर प्रतिबिम्बित होता था, वह पढ़ते-पढ़ते उस के बी में आया था, एक बार लम्बी छुई कोकर तिम्बत की बाधा की आय। नीरद से पूछ-पूछकर उस ने यह माहूम कर रखा था कि कालिपीग की ओर से तिम्बत कितने दिन में पहुँचा का चकता है, और रास्ते के लिए क्या-क्या सामान साथ रहना होगा। मानो ब्रह्मपुत्र कह रहा था—हिमालय न होता तो उत्तर की ओर से आने वाली वर्षाणी अँधी भी कब तक पाठी हिमालय न होता तो

इस देश में मानसून हवाएँ भी सागर से उठकर कैसे उस से टकरातीं, कैसे साल-बे-साल नियमित षण् ऋतु का कार्यक्रम चल सकता ? क्या मन्सून कभी नास्ता हो जाय; मानसून हवाएँ सीधी सागर से उठकर ठीक ऋतु में हिमालय से टकराती हैं, और मूसलाधार वर्षा आरम्भ हो जाती है। गोपीनाथ सोचने लगा—यह कहना तो सत्य है कि प्रकृति एक अन्वी शक्ति है। जब प्रकृति के नियम हटने लगे और बरे हैं, तो आदमी भी सच्चा और सदा क्यों न बने ? इसमें देश की यह माटी इसी ब्रह्मपुत्र की देन है। यह पठार बनने में लाखों वर्ष लगे होंगे। जब भी ब्रह्मपुत्र अपनी बाढ़ के साथ बहाकर लाई हुई माटी से इस पठार को उपजाऊ बनाये रखने का दायित्व बराबर निभा रहा है। फिर आदमी का क्या कोर दायित्व नहीं है ? उसे लगा कि ब्रह्मपुत्र कह रहा है— मैं ने अपना मार्ग स्वयं चुना, विशालकाय बहानों को पकड़ता, उच्च शिखर पहातों की सृष्टि करता, प्रत्येक विप्लव-बाधा को टिनके के समान फूँक मारकर उड़ाता, मैं कहाँ-से-कहाँ जा पहुँचा; और अभी तो रास्ता बहुत लम्बा है। उसे यह भी याद था कि नीरद ने अपनी पुस्तक में ब्रह्मपुत्र और पद्मा के संगम का विषय प्रस्तुत करते हुए किसी अन्य लेखक के हवाले से लिखा था : जिस प्रकार विजयी सेना लड़ी लड़ी विस्तार जाती है और विजय से विभोर सैनिक हजर ठहर बैठते हैं, गोपालन्दो के समीप जहाँ ब्रह्मपुत्र और पद्मा का संगम है, अनेक नदियाँ अनेक मुक्त बनाकर सागर में गिरती हैं। 'तो क्या आदमी सारी आयु फिरंगी की गुलामी ही करता रहेगा ? मैं हर्निक देवकान्त को पुस्तक सुपरिन्टेंडेन्ट के हवाले नहीं करूँगा।

सारी रात रतजने में बीठी। सबेरे-सबेरे गोपीनाथ थाने में पहुँचा, जहाँ अद्वैत, नीरद, रास्ताल और अमिराम धूमन उस से आकर मिले। नीरद ने फिर यह सुझाव रखा, देवकान्त दोबारा मामुल्ती चला जाय।

“आप लोग निश्चिन्त होकर जायें। कुछ नहीं होया। डरने का

कोई कारवा नहीं ।” गोपीनाथ ने निश्चयपूर्वक कहा ।

×

×

×

दयापूर्वक आठ हाट-बाजार लगा । दिन-भर आराम से सुन्नर गया । हथियारबन्द सिपाही हाट-बाजार में पहरा दे रहे थे । संकट की पूर्वज्ञापा-सी नजर आ रही थी । वहाँ देवकान्त को छिपाया गया था, वह स्थान बनसिंह की दुकान के पास ही था । गोपीनाथ ने देवकान्त की सुरक्षा के लिए पूरा प्रयत्न कर दिया था । ‘गुरु जी’ के वेष में होते हुए भी देवकान्त पूरी तरह हथियारबन्द था ।

अदुल ने बनसिंह को पुकारकर कहा, “यह कैसा शोर है, बाबा !” लोग भाग-भागकर दूधर को आने लगे ।

“लगता है मिलिट्री आ पहुँची ।” अदुल ने बकराकर कहा ।

मामूली से ही नहीं, आठ-पाठ के बानों से भी कुछ सिपाही भाग कर वहाँ आ गये थे सधेरे-सधेरे । रत्न ने कहा, “गोपीनाथ होथियार आदमी है । यह रख उसी के हाथ रहेगा ।”

बनसिंह ने कहा, “शाब्द हमारा अन्त आ गया ।”

“गोपीनाथ ने मोरबा बना रखा है ।” रत्न बोला, “डरते क्यों हो ?”

गोलियाँ चलने की आवाजें आने लगीं । ‘गुरु जी’ बाहर आ गये । बाहर से आये हुए लोग नाच-माट की ओर भाग रहे थे । गोलीबों चलने की आवाजें समीप आती गईं ।

‘गुरु जी’ बोले, “हमारे लिए तो बनसिंह की दुकान ही मोरबा बनेगी ।”

“ओ इच्छा, ‘गुरु जी’ ।”

गोलियाँ कंधमाके बानों के पर्दे हिला रहे थे । फिर किसी ने आकर कहा, “गोपीनाथ मारा गया ।”

‘गुरु जी’ ने सिंठोला में कारखूस भरते हुए कहा, “वह बीर गति को प्राप्त हुआ । हम पीछे रह गये ।”

## बहत्तर



एक साथी ने दूसरे साथी को अपनी पीठ पर ठठा रखा था। नीचे वाले की दाईं मुखा में गोली लगी थी मुखा को कसकर बाँध लिया था। ऊपर वाले की दोनों टँगों में गोलियाँ लगी थीं। नीचे वाले की मुखा से दूधमा रक्त नहीं निकलता था, जिसना ऊपर वाले की टँगों से।

मौसम बहुत खराब था। बरफ़ हो रही थी। फिर भी बार-बार जिस सत्ता, गिरदा-गड़वा, नीचे वाला साथी ऊपर वाले साथी को लिये चलता जा रहा था। यह खण्डमि से पीठ दिखाकर भागने वाली बात न थी जीवन को बचाकर रखने का प्रयत्न था। नीचे वाले की छाँट पड़ने लगती, तो वह बक जाता। ऊपर वाले को कोई होश न था। पीछे से गोलियाँ चलने की आवाजें आ रही थीं।

इन्हें माल-भार तक पहुँचाना था। एक स्थान पर रुककर नीचे वाले ने ऊपर वाले को नीचे लिटा दिया। ऊपर वाले ने झोंकें न खोलीं। सीने पर हाथ रखकर बैठा। मुख पर हाथ पेश। नीचे वाला फिर से उसे उठाकर चलने लगा। साथी को बचा सका, तो मैं अपनी सीमायें मर्हूंगा।—उस ने मन-ही-मन कहा।

ऊपर वाले को होश आ रहा था। “मैं क्यों हूँ ?” उसकी आवाज आर।

“तुम रहो।” नीचे वाले ने कहा, “तुम रहना ही अच्छा है। बोलने

से शक्ति पट्टी है।”

वर्षा उन्हें निरन्तर भिगो रही थी। गीन्ने वाले को छपर वाले पर श्रेष्ठ आ रहा था—देवकान्त कैसे गोपीनाथ की बातों में आ गया। स्वयं भी गोपीनाथ ने ज्ञान से हाथ धोये। जो काम सारा विसर्गामुक्त मिलकर ही कर सकता था, वह अकेला गोपीनाथ और वह भी थोड़ी-सी बन्धुकों से कैसे कर सकता था।

रास्ते में कई जगह घुटनों तक पानी में गुजरना पड़ा। अतुल ने सोच रखा था, देवकान्त को भमानन्दी की झोंपड़ी में पहुँचाकर ही हम लोग।

भमानन्दी झोंपड़ी में न था। वहाँ आरती ही मिली। देवकान्त को घबरा देकर वह पकरा गई। उस ने सँभलकर तुरन्त देवकान्त के कपड़े बदलवाये। फिर बोली, “अतुल, तुम भी बापू के बस्त्र उठाकर पहन सकते हो।”

लासटेन के प्रकार में देवकान्त के मुक्त पर मुस्कान दीड गई। सिड्डी बन्द कर दी गई थी।

अतुल बहुत थक गया था। उसकी झल्ल लग गई।

आरती देवकान्त पर झुक गई।

देवकान्त की वरिष्ठ अन्धरी न थी, वह ठीक से मोछ नहीं सकता था।

आरती समझ गई कि देवकान्त का बचपना तो कठिन है। फिर भी उस ने आग बलार्ह ज्ञान के लिए पानी रखा।

“मुझे ब्रह्मपुत्र को—” कहते-कहते देवकान्त रुक गया।

आरती चौककर आई। पर देवकान्त केवल अपना वाक्य ही पूरा कर पाया, “सौंप जाना।”

अतुल लरटे मर रहा था। बाहर से बपा की आवाज आ रही थी, जिस में ब्रह्मपुत्र की आवाज दब गई थी।

देवकान्त में मोलने की शक्ति न थी। आरती ने मुश्किल से ज्ञान

की दो-बार बूँदें उस के मुँह में डपकाइ, और वह उस के सिर पर हाथ फेरती बोली, "हम इन्हें मछलियों पकड़ने जाया करेंगे।"

देवकान्त के होठों पर अन्तिम मुस्कान उमरी। बाहर बादल खोल से गरबा, बिजली कड़की। भारती सहम गर।

भारती घायल लिये लकी थी। उस में देवकान्त के सीमे पर सिर रख दिया। उस के मुँह से चीख निकल गई।

अनुल उठ बैठा। उस ने देवकान्त का हाथ देखा। मर चुका था।

भारती ने दोबारा चीख मारी।

देवकान्त की आँखें बन्द थीं। भारती ने मन-ही-मन कहा, "पंछी उड़ गया।" देवकान्त की अन्तिम इच्छा का उसे प्याम था।

अनुल भी स्त्रियों के समान रोने लगा।

भारती ने नैमलकर कहा, "मैं देवकान्त की अन्तिम इच्छा अक्षर्य पूरी करूँगी।"

क्या कष्ट हो चुकी थी। रात आधी से ज्यादा बीत गई थी। भारती बोली, "हम देवकान्त को नीचे ले चलें।"

अनुल भूल गया कि उस की मुखा में गोली लग चुकी है। उस ने भारती के साथ मिलकर देवकान्त को नीचे ले जाकर नाव में डाल दिया।

"मैं कमलिया लापरी तक जाऊँगी।" भारती ने हाथ में चप्पू सेते हुए कहा, "ब्रह्मपुत्र को सौंपकर आ जाऊँगी। तुम यहीं रहना।"

मुखा पर गोली न लगी होती, तो अनुल ने नाकरिया को सेबाई अर्पित की होती।

×

×

×

अनुल लिङ्गकी में लड़ा सोच रहा था, ब्रह्मपुत्र जानता है चप्पू फिटना गहरा जाता है, तो यह भी जानता होगा किसँगमुल पर क्या बीती।

भमानन्दी मोंपकी के कोने में मारी-मरकम बाल पर धरना दिये बैठा था। उसे यहाँ आये आरथ बसता हुआ होगा। अनुल ने सिक्क-सिक्क



ने शक्ति पट्टी है।”

क्या ठहरे मिरमिर भिगो रही थी। नीचे बाहों को ऊपर बासे पर घेब आ रहा था—देवकान्त कैसे गोपीनाथ की बातों में आ गया। स्वर्ग की गोपीनाथ ने जान से हाथ धोये। जो काम सारा दिछोंगमुल मिलकर ही कर सकता था, वह अकेला गोपीनाथ और वह भी थोड़ी-थोड़ी बन्तूकों से कैसे कर सकता था।

रास्ते में कई जगह छुटनों तक पानी में गुजरना पड़ा। अट्टल ने सोच रखा था, देवकान्त को धर्मानन्दी की मोंपकी में पहुँचाकर ही हम लोग।

धर्मानन्दी मोंपकी में न था। वहाँ आरती ही मिली। देवकान्त को पास रखकर वह प्यार गाई। उस ने सँभलकर तुरन्त देवकान्त के कन्धे बहलवाये। फिर बोली, “अट्टल, तुम भी बापू के बरत उठाकर पहन सकते हो।”

लासटेन के प्रकाश में देवकान्त के मुल पर मुस्काम बौढ़ गई। लिहकी बन्द कर दी गई थी।

अट्टल बहुत लज गया था। उसकी आँख लम गई।

आरती देवकान्त पर झुक गई।

देवकान्त की वनिकत अच्छी न थी, वह ठीक से बोल नहीं सकता था।

आरती समझ गई कि देवकान्त का बचना तो कठिन है। फिर भी उस ने आग जलाई चाय के लिए पानी रखा।

“तुम्हें ब्रह्मपुत्र को—” कहते-कहते देवकान्त रुक गया।

आरती बौढ़कर आई। पर देवकान्त केवल अपना बाक्य ही पूरा कर पाया, “तौय आना।”

अट्टल लरोटे भर रहा था। बाहर से क्या की आवाज आ रही थी, जिस में ब्रह्मपुत्र की आवाज दब गई थी।

देवकान्त में बोलने की शक्ति न थी। आरती ने मुश्किल से चाय

की दो-चार बूँदें उस के मुँह में टपकाईं, चीर बढ़ उस के सिर पर हाथ पेशती बोली, “हम हबड़े मछलियों पकड़ने जाया करेंगे।”

देवकान्त के होठों पर अन्तिम मुस्काह उभरी। बाहर बादल खोर से गरबा, बिजली कड़की। भारती सहम गई।

भारती वाप लिये लड़ी थी। उस में देवकान्त के सीने पर सिर रक्क दिया। उस के मुँह से चील निकल गई।

अनुस उठ बैठा। उस ने देवकान्त का हाथ देखा गन्ध कन्द थी। भारती ने दोबारा चील मारी।

देवकान्त की आँखें कन्द थी। भारती ने मन ही-मन कहा, “पक्षी डक गया।” देवकान्त की अन्तिम इच्छा का उसे प्यास था।

अनुस भी त्रियों के समान रोने लगा।

भारती ने सँमलकर कहा, “मैं देवकान्त की अन्तिम इच्छा अवश्य पूरी करूँगी।”

क्या कन्द हो चुकी थी। रात आधी से बराबरा बीत गई थी। भारती बोली, “हम देवकान्त को नीचे ले चलें।”

अनुस भूल गया कि उस की मुखा में गोली लग चुकी है। उस ने भारती के साथ मिलकर देवकान्त को नीचे ले बाहर मात में डाल दिया।

“मैं कमलिया सापटी तक आऊँगी।” भारती ने हाथ में थप्पू लैते हुए कहा, “ब्रह्मपुत्र को सौंपकर आ आऊँगी। हम यहीं रहना।”

मुखा पर गोली न लगी होती, तो अनुस ने मावरिका को सेबाई अर्पित की होती।

×

×

×

अनुस सिङ्गड़ी में लड़ा खोब रहा था, ब्रह्मपुत्र जानता है थप्पू किसका महारा जाया है, तो यह भी जानता होगा दिखोगमुस पर क्या बीती।

ध्यानम्ही भोंपड़ी के कोने में मारी-मरकम जाल पर धरना दिये बैठा था। उसे यहाँ आये आप कबड़ा हुआ होगा। अनुस ने सिक्क-सिक्क

ब्रह्मपुत्र।

इसे कुदृष्ट न बोली, जैसे वह सब को पहचानती हो। गले से पूनमाणा  
 तार कर यह गमी से इसे हाथ में लिये लड़ी थी, जैसे किसी मूर्तिकार  
 एक ऊँचा मदान स सरासर इस मूर्ति को यहाँ लटका कर दिया हो।  
 गनी गोइडालो की आँखें बमक रही थीं। सैदरे पर लम्बे अनुभव का  
 जाला था, जैसे देखते-देखते उठका कर ऊँचा उठ गया हो।

लोग मान गये और दिलने लगे। चलने से पहले उन्होंने फिर  
 गारा लगाया

“रामी गोइडालो की बर !”

नाब घाट क इस तरे पर अब अतुल, नीरद और राखाल रह गये।  
 गनी गोइडालो के घरों में घमान्दी ठसी तरह बैठा था। आरती परे  
 टीटी भाग में फूँके मार रही थी। हवा ब्रह्मपुत्र की लहरों से अठनेलियाँ  
 कर रही थी। आरती के तिर के बाल उक-उक जाते थे।

घमान्दी ने अपनी ही हाँकी, “हम तो मनुष्य हैं। हमारा काम बही  
 है—बाल फेंके, मनुषियों पकड़े आप लायें, दुष्टों को सिलायें। अन्य  
 है ब्रह्मपुत्र। अन्य हैं ब्रह्मपुत्र की मनुषियों। देश गुलाम था, तो भी  
 मनुषियों बाल में फँसती रहीं। अब देश आजाद है, तो भी बराबर  
 बाल में फँस रही हैं मनुषियों।”

नीरद बोला, “इसीलिए तो हमारे राखाल काका इस आकाशी को  
 अपनी कल्पना की आकाशी नहीं मानते।”

“मानें कैसे !” राखाल भी चुन न रह सका, “बैसे ही ब्रह्मपुत्र में  
 बहकर आती लकड़ी पर टैक लगा हुआ है। बैसे ही पुलिस चौक बमाली  
 है; बैसे ही हमारे नेता हमें कबल मोड़ लेने के समय ही याद करते हैं।”

रामी गोइडालो मुस्कुराई, जैसे वह कहना चाहती हो कि यही बात  
 तो याद रखने की है।

“हमें इतनी सख्त अपनी आकाशी से असन्तुष्ट नहीं होना चाहिए।”  
 अतुल ने सहज बुद्धि का प्रयास दिया, “नीरद बाबू मेरे साथ सहमत  
 होंगे कि सात समुद्र और तेरह नदियों पार से आकर फिरंगी ने हमारे

कम्बों पर गुलामी का झुआ रखा, हमें अपने हल के नील बनाया । लम्बी गुलामी के कारण हम में बहुत-सी बुराइयाँ आ गई । अब ये बुराइयाँ समय पाकर ही तो निकलेंगी ।”

“अब तो समझोता हुआ ।” रास्ताल काका ने झुँझलाकर कहा, “तुम गौन-बूढ़ा हो । तुम्हारी आँखों पर सरकारी ऐनक है । इसे उतारकर बात करो । तुम्हारे मुँह से सरकार बोल रही है । मैं कभी तुम्हारी यह सलाह नहीं मान सकता कि अपनी पेशान फिर से पालू कराने के लिए अपने आजाद देश की आजाद सरकार को प्रार्थना-पत्र भेजूँ । हमारे मार्मन साहब कहा करते थे, आजादी ऊपर से उठकर लोगों तक नहीं पहुँचती, लोगों को ही जैने उठकर आजादी तक पहुँचना होता है ।”

रानी गोइबालो एक बार फिर मुस्कराई, जैसे रास्ताल काका ने ठीक उठ के मन की बात कह दी हो ।

“रानी जी, सब पृष्ठो तो मल्लुका जम्म का आजाद है ।” फर्मानम्बी ने अपनी ही हँसी, “मल्लुके की बुरमनी न फिरंगी से थी, न अब देश की सरकार से है । मल्लुके की बुरमनी मल्लुसियों से भी नहीं है । यह पापी पेट न होता, तो मैं मल्लुसियों न फकड़ता । मेरी इस बात से तो देवकान्त ने भी कभी इनकार नहीं किया था ।”

रास्ताल बोला, “मैं तो अपनी पेशान के लिए प्रार्थना-पत्र भेजने से रहा । अन्धे मन्ना हुआ है । न रिजत समाप्त हुई है, न सिद्धारिछों का जोर कम हुआ है । बिया बलाकर हँद देखो । न्याय नाम की चीज नहीं मिलती ।”

रानी गोइबालो कुछ न बोली । पर वह बहुत गम्भीर नजर आ रही थी । जैसे वह कहना चाहती हो, मले ही अभी लोगों की कल्पना की आजादी नहीं आई, पर उम की आजाद पर अब उतसे बन्धन तो नहीं रहे, अब तो वे आजादी से अपनी सरकार की आलोचना कर सकते हैं; यह सब आजादी की देन ही तो थी । वह बिचार उसे सम्योप दे रहा था कि अब सच्ची आजादी के पैर भी जमीने ।

“मनुष्य मरने के लिए पैदा होता है।” नीरव ने शम बभारा,  
 “पर वह जीने के लिए मरता है। इसलिए मैं कहता हूँ, जीवन से डरो,  
 मृत्यु से नहीं। और फिर वह भी ध्यान रहे, मनुष्य कोई कुकुर-मुत्ता तो  
 है नहीं, क्योंकि वह एक ही रात में नहीं उगता।”

“हबना ही हा तो किली मही-माली की कापेदा ब्रह्मपुत्र में क्यों न  
 डूबा जाय।” ब्रह्म ने विरवातपूर्वक कहा, “देवकान्त का यह बोला मैं  
 क्यों नहीं भूल सकता।”

रानी गोहदासो की छुल्ल-मुल्ला और भी गम्भीर हो गई।

उन की कल्पना कई भागों में बँट गई थी। मन के एक कोने में  
 छातीव की मृषि बीखा के स्पर्श के समान संकलित हो ठठली थी, तो  
 किसी दूसरे कोने में गाँव के विनाश का दृश्य उजागर हो जाता। मन  
 के एक कोने में विह्वले साधियों का बिज्र सिर ठठाता, तो दूसरे कोने में  
 गाँव की नई बस्ती का जगमग-जगमग कम एक सड़ साया को कम  
 होता। ब्रह्म ब्रह्मपुत्र बहुत गम्भीर था। जैसे वह सारे संसार का प्रेम  
 छुटाकर दिवंगमूल के चरबी में निछाना चाहता हो।

सभी गम्भीर थे। किसी में भी इस मीन की ठोकरों का साहस न था।  
 छहटा धमानन्दी ने ब्रह्मपुत्र को बुरकर कहा, “प्यारे, हम तो अब भी  
 मछलियों पकड़ेंगे। यौन तो फिर से आबाद हो चुका है। तेरी मछलियाँ  
 क्यों बाँगीं।”

रानी गोहदासो जैसे उन के बीच होती हुई भी उन से दूर थी। वह  
 देवकान्त के बारे में सोच रही थी।

“ब्रह्मपुत्र से क्यों डरने लगा दिवंगमूल।” ब्रह्म भी चुप न रह  
 सका, “देवकान्त कहा करता था—ब्रह्म, असमिया, ब्रह्मपुत्र। यह त्रिमूर्ति  
 तो साथ-साथ रहेगी। देवकान्त वह भी कहा करता था—ब्रह्मपुत्र की  
 सातवीं अहर सौभाग्यवती होती है, मछलियों के लिए भी और मनुष्यों के  
 लिए भी। न जाने उस का क्या भाव था। यह तो सभी समझ सकते हैं,  
 किसी के लिए देवता है ब्रह्मपुत्र, किसी के लिए दानव। मछलियों की

जीवित रहना चाहती हैं और मझुवा भी। हमारे नामन चाहत कहा करते थे, मझुवा भी किसी के लिए मझुली है।”

धर्मानन्दी ने पेट पर एक हाथ से बाप लगाकर कहा, “हर रोज़ भूख लगती है। पेट ही गुलामी कराता है, पेट ही आजादी माँगता है।”

रानी गोइबाखो इन लोगों की बातें सुन रही थी और ब्रह्मपुत्र की ओर देख रही थी।

इतने में आरती ने उठकर धर्मानन्दी का कन्धा मँसोरा और सहज भाव से कहा, “देवकान्त अभी तक क्यों नहीं आया, बापू! और देवकान्त ने यह क्यों कहा था बापू कि तुलाहन के बरत छीने वाली कन्या दैर तक कुँवारी रहती है! ” वह हँस पड़ी, और दूर भाग गई।

धर्मानन्दी बोला, “अच्छा होता कि आरती ने देवकान्त के साथ ही बल-समाधि ले ली होती। आरती की जो अवस्था अब है, वह तो अच्छी नहीं। देवकान्त जीवित रहता, तो मैं अपनी आरती का विवाह उसी से करता। मझे ही वह पर-अमाई बनकर मेरी इच्छा के अनुसार हमारे साथ रहना स्वीकार न करता।”

रानी गोइबाखो कुछ न बोली। वह ब्रह्मपुत्र के किनारे की रेत पर बैठ गई। संकेत से उस ने बताया कि वह यहीं रात गुसारेगी।

धर्मानन्दी ने जाल फेंकने के आदेश में हाथ चलाकर लड़े-लड़क कहा :

“जब तक सरकार है न मझुली से टेकत हटेगा, न ब्रह्मपुत्र में बहकर आती सफ़ी से। जब मैं जाल फेंकता हूँ तो कहता हूँ—ठाकमान, मझुलियो।”

अन्धकार की आबर में लिपटे वे ब्रह्मपुत्र के किनारे बैठे थे। भौं-गुरी और मेढकों के स्वर मानो एक ही ताल पर बज रहे हों। ब्रह्मपुत्र मानो अपने गम्भीर स्वर में कह रहा था—तुम मेरी प्रजा हो मेरी आशा आर्काद्या, मान-मपावा, सब तुम्हारे लिए है। और दूर से आरती का गीत सुनाई दे रहा था :

ब्रह्मपुत्र कानो ले, सरहमपूरी मूनी,  
 ब्यामी नरा लोरा माह  
 ऊदूबाह मीनीवा ब्रह्मपुत्र देवता  
 तामोल दी मानोठा माह ।<sup>१</sup>

ब्रह्मपुत्र के किजते हैं सरहमपूरी माह उहाँ हम इकल लेये जते हैं । इसे लीला  
 मन लेता ब्रह्मपुत्र देवता । हमारी राजनी भी काना नहीं कि बटे सुपारी से हो  
 जाता दर्शन हो ।  
 ब्रह्मपुत्र ।

# सतहृत्तर



अब धर्मानन्दी ब्रह्मपुत्र के किनारे बैठा रहता है। वह कभी काल उठाकर चेंका करता था; भारतीय भाष पकाया करती थी, मनुषियों देखकर वह नाच रोके तिका करती थी। अब तो उसे काल को हाथ लगावे बहुत दिन हो गये। छप की आबाद से उस का भारी-भरकम काल किस प्रकार ब्रह्मपुत्र में गिरता था, अब तो वह आबाद उस की पाद में लगे गई उस की एक हलकी-सी पूँव रह गई।

ब्रह्मपुत्र की लौक बहुत प्यारी है। उस से भी प्यारे हैं वे बच्चे, जो वहाँ उड़ल-कूद मचाते हैं। कभी मैदानों के समान छाने लगते हैं, कभी मनुषियों का खेल खेलने लगते हैं, जिस का आकार है एक लोक-कथा। मनुषियों की समा होती है। उन की शिकायत है कि सिर पर काल उठाने मनुष्य का बन्ध हुआ, और अब उस का काल मनुषियों का शत्रु है, मनुष्य के विरुद्ध प्रताप पास करने के पश्चात् मनुष्यों अपने अगले काव पर विचार करने लगती हैं कि मनुष्य के कदमों की आबाद सुनाई दे जाती है। छप की आबाद होती है। तिरुके के दुकाने बज उठते हैं। मनुषियों इन के मारे किमारों से मारने लगती हैं। बच्चों की मातल और मटमट भाव-अंगियों में यह खेल खेलते-देखते बड़े धर्मानन्दी को अपने काल का रमरस हो जाता है, अपनी बलिष्ठ मुजाबों का ध्यान आ जाता है। तिरुके के छोटे-छोटे, मिश्रित दुकाने उस की बूरी ओलों



के सामने बिरक टटते हैं। वह आस कभी का छूट गया। अब तो वह बहुत बूढ़ा हो गया। अब तो वह अपनी तरह थक फिर भी नहीं सकता पर आस डालने की क्षम की आवाज और सिकके के मिलमिल टुकड़ों की आर अब भी मानो उस के मन में छटकी रह गई है।

अब सूर्य देखा अपने रंग को परिष्कृत दिशा में मोड़ते-मोड़ते आस से खोसल हो जाते हैं, बूढ़ा अमानन्धी अपनी कल्पना में फिर से शिशु बन जाता है, बच्चों के साथ बच्चा बनकर वह भी उलटपाटियों लगाता है।

वह कल्पना तो बीच ही में टूटती है। सरा सँभलकर वह अपने लम्बे अनुभव पर विचार करता है। जो कोपहर को कोप में लास-पीसा होता है, वह सौम्य को शान्त भी होता है। कोप ही जीवन नहीं। जीवन में तो कोमलता और विनम्रता चाहिए, सुन्दरता, शान्ति और समीप चाहिए। इन्हीं गुणों से जीवन में महानता आती है। जो मन के भीतर है, उठी भी प्रकट है मन के बाहर। अपना कोई आग्रह हो, जिस के लिए मर मिटे, हर प्रकार की विपदा भोगने के लिए तैयार रहे। सोम मुझे अकलङ्क और मगझासू समझते रहे, निरखर और उच्छु मनुष्य ही समझते रहे। इस में मेरा क्या दोष कि एक मनुष्य के घर गया हुआ? अन्त तक ठोकरें आने के पश्चात् बुद्धि आती है। असस बुद्धिमान तो वह है, जो अन्त आने से पहले ही रास्ता पा ले। मृत्यु कभी भौंभोरकर कहती है—आओ मेरे साथ। यह माटक समझ हुआ जब दूसरा माटक आरम्भ होता है। और फिर ज्ञप की आवाज, मानो आस अस्तुत्र में दास दिया हो। सरा सँभलकर वह सोचता है—आस तो कभी का छूट गया।

अस्तुत्र के किनारे रात धीरे-धीरे उतरती है। बच्चे दीकते हुए आते हैं, और बड़े कर्मागम्यी के गिरद चक्कर लगाकर बैठ जाते हैं। अमानन्धी की निगाहें बुर पसी जाती हैं। वह देखता है, आली उसे बुलाने आ रही है, भोजन तैयार कर लिया होगा। इस बात का उसे खन्तोप है कि

भारती की अवस्था कुछ-कुछ सुधर गई है। पास आकर वह भी बम्बों में मिटाकर बैठ जाती है। अँधों-ही अँधों में बच्चे करते हैं—बाबा ! क्या मुनायों !

भारती की अँधों कुटी से नाच उठती हैं, जैसे बाबा देवकान्त की क्या मुनायों !

बाबा गुडगुसी पर कण लगाकर मेघ-गम्भीर स्वर में कहना आरम्भ करता है :

जब ब्रह्मपुत्र ! जब जल वैश्या ! सावधान, मछलियों ! बहुत पहले की बात है, जब संसार की रचना हो रही थी। देवताओं ने देखा कि जॉद है, सूरज है, और जॉद-सूरज की जोड़ी के साथ अनगिनत तारे हैं। फिर देवताओं ने बरती को कम बिना, बरती पर पर्वत बनाये, बड़े-बड़े पेड़ लगाये। पेड़ों पर फूल लिले, फल लगे। देवताओं ने पशु बनाये, पक्षी बनाये। किसी वस्तु की कमी फिर भी बरकती ही रही। यही सोचकर देवताओं ने मनुष्य की रचना की, और उसे इस ब्रह्मपुत्र का कम बिना, और फिर

